िल्ड्रन्स 6
ॉलिज बैंक

LDREN'S KNOWLEDGE BANK VI



पुस्तक महल, दिल्ली

Today Twinkle Star | madhya pradesh chronicle | WRITER AND ILLUSTRATOR — QUARTERLY JOURNAL OF THE ASSOCIATION OF WRITERS AND ILLUSTRATORS FOR CHILDREN | पाटलिपुत्र टाइम्स | The Pioneer | children's world | Evening News | दैनिक नवज्योति | पंजाब केसरी

"...The language of these books is very lucid and attracts a common reader. These books are profusely illustrated. The sketches and diagrams add additional charm to the subject matter. The collection and compilation of so much material for these books speaks volumes of to make this venture worth-while."—**Madhya Pradesh Chronicle, Bhopal**

"....विषय-वस्तु, साज-सज्जा और छपाई की दृष्टि से निश्चय ही ये पुस्तकें बालकों के ज्ञानवर्धन में बहुत सहायक होंगी। इस प्रयास के लिए आप हार्दिक बधाई स्वीकार करें।"—**नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली**

"This is an encyclopaedia in six volumes which children will find most informative. The knowledge imparted in it is most authentic..."—**Indian Book Industry, New Delhi.**

"....यह सुगठित, सुसंतुलित और आकर्षक साज-सज्जा से युक्त एक ऐसी पुस्तकमाला है, जो ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न शाखा-प्रशाखाओं का कार्य-कारणयुक्त रोचक विश्लेषण तो बाल-पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करती ही है, साथ-साथ ऐसी दुर्लभ संदर्भ सामग्री भी सुलभ कराती है, जिसकी जरूरत हर माता-पिता एवं अध्यापक समय-समय पर महसूस करता रहता है।"—**नवज्योति, अजमेर**

"चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक" में ज्ञान-विज्ञान के बारे में [illegible] —**नूतन सवेरा, दिल्ली**

"....इस पुस्तक की सामग्री एवं उसके उच्च स्तर को देखते हुए यह विश्वास सहज ही उत्पन्न होता है कि इस ग्रंथमाला के लेखकों-लेखिकाओं एवं प्रकाशकों ने इसके प्रकाशन में न केवल अथक परिश्रम किया है अपितु पुस्तकों को आकर्षक एवं उपयोगी बनाने के लिए समुचित साधन भी संजोये हैं।"—**नवभारत, भोपाल**

"....चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक की उपादेयता का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि मूल रूप से हिन्दी में लिखित यह ग्रंथमाला अब धीरे-धीरे अंग्रेजी के अतिरिक्त भारत की अन्य भाषाओं में भी प्रकाशित हो रही है।"—**दैनिक भास्कर, भोपाल**

"....इस पुस्तक को ग्रंथालयों में, व्यक्तिगत-पारिवारिक ग्रंथ संग्रह में भी स्थान मिलना चाहिए, विशेषकर स्कूलों के ग्रंथालयों में। केवल बच्चे ही नहीं वयस्क भी इस प्रकाशन से लाभान्वित होंगे।"—**नई दुनिया, इन्दौर**

"The project of CHILDREN'S KNOWLEDGE BANK is not the result of individual efforts but is the product of collective wisdom of specialists in different fields.... These useful books are of encyclopaedic importance with illuminating illustrations so that the child may grasp the matter easily."—**The Hitvad Twinkle, Nagpur**

"The books written are in lucid and simple language, are profusely illustrated and can be grasped by children easily, discuss the various topics pertaining to universe, social life, geography and science. They are full of information and child can acquire more and more intelligence by reading them."—**Mangal (Tamil), Madras**

"....इस ग्रंथमाला की उपयोगिता स्वयंसिद्ध है। प्रत्येक घर में इस पुस्तक के रहने से जहां बच्चों को अपनी स्कूली पढ़ाई में मदद मिलेगी, वहीं खाली समय में उनका मनोरंजन भी होगा तथा उनकी जिज्ञासा तो शांत होगी ही...."—**स्वतंत्र भारत, लखनऊ**

"....इसे तुम बुद्धि का मनोरंजन कहो तो अच्छा लगेगा।"—**पराग, दिल्ली**

"....ज्ञान-विज्ञान की विविध शाखाओं से संबंधित जानकारी अनेक ग्रंथों-संदर्भों में बिखरी होती है। उस तक पहुंचना हर बच्चे के लिए संभव नहीं होता। इस तरह की सामग्री को एक सुपाठ्य पुस्तकमाला के रूप में सुलभ कर देना अत्यंत महत्त्व की सेवा है। "चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक" के प्रकाशक तथा लेखकों ने यही शैक्षिक सेवा की है।"—**सन्मार्ग, कलकत्ता**

"....मोटे टाइप में छपे इन छहों खंडों में बच्चों-किशोरों के लिए उपयोगी, ज्ञानवर्धक जानकारी है। चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक का हर खंड अपने आप में पूर्ण व प्रामाणिक है और पठनीय, संग्रहणीय और उपहार में देने योग्य है।"—**वामा, नई दिल्ली**

"....पुस्तक बच्चों से लेकर बूढ़ों तक के ज्ञानवर्धन के लिए लाभदायक और उपयोगी है।"—**पंजाब केसरी, दिल्ली**

"THE PUSTAK MAHAL, Delhi deserves to be congratulated on their laudable venture of publishing the reference book of CHILDREN'S KNOWLEDGE BANK. It will no doubt fill in the gap caused by the paucity of simply written and illustrated books to explain the common and uncommon phenomenon around us."—**Science Reporter, New Delhi**

"....I consider it as an excellent contribution to children. Not only text, but also the illustrations are praiseworthy."—**N.C.E.R.T., New Delhi**

"....For a curious and inquisitive child, the six volumes are a treasure house of knowledge."—**Children's World, New Delhi**

Science Reporter | वामा | madhya pradesh chronicle | नव भारत | स्वतंत्र भारत | THE SUNDAY TRIBUNE | सन्मार्ग | नईदुनिया | हिन्दुस्तान | राष्ट्रदूत

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

VOL. VI



आभार

'चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक' की योजना किसी एक व्यक्ति के बजाय, ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के एक विशेषज्ञ मण्डल की सामूहिक सूझबूझ एवं अनुभवों का परिणाम है। इस योजना के लेखन-सम्पादन एवं चित्रांकन के दौरान कई-कई स्तरों से गुजरना पड़ा है। तथ्यों एवं संदर्भों को निर्दोष एवं प्रामाणिक बनाने के लिए कई-कई बार अधिकृत सूत्रों एवं संदर्भ ग्रंथों से चेकिंग तथा क्रॉस-चेकिंग करनी पड़ी है। यह 'मैराथन' अभी आगे भी चलेगी।

'चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक' की तैयारी में विश्व एवं राष्ट्रीय महत्त्व के जिन मानक संदर्भ ग्रंथों, विश्वकोशों आदि से सहायता ली गई है, उनमें से सबका उल्लेख तो सम्भव नहीं है, जिनसे हमारे काम में विशेष रूप से सहायता मिलती है, उनका उल्लेख करते हुए हम संबंधित संस्थानों व व्यक्तियों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं।

References

ENGLISH:

1. The Giant Book of What do You Know, *The Hamlyn Publishing, London.*
2. 365 Things to Know, *The Hamlyn Publishing, London.*
3. Knowledge, in 10 volumes, *G. Britain.*
4. The World Atlas of Mysteries, by *Francis Hitching Collins, London.*
5. Natural Wonders of the world, *P.J. Banyard.*
6. Collins Children's Encyclopaedia, Nature, by *Kenneth Bailey.*
7. Junior Science Encyclopaedia, *The Hamlyn Publishing, London.*
8. A New Answer Book, 2 volumes, by *Marg Elting and Rose Wyler.*
9. Questions and Answers, *World International Publishing Ltd., Manchester.*
10. Tell me the Answer, by *Andrea Bonanni.*
11. Charlie Browns Cyclopaedia, 20 volumes, *Funk and Wagnalls Inc. New York.*
12. The Children's Book of Questions and Answers, by *Anthony Addison.*
13. The Answer Book About You, by *Marg Elting and Rose Wyler.*
14. The Science Library, 6 volumes, by *Robert Scharff.*
15. The Illustrated Reference Book of Modern Technology, by *James Mitchell.*
16. Encyclopaedia Britainnica (Micropaedia), 10 volumes *Encyclopaedia Britainnica Inc. London.*
17. Encyclopaedia Britainnica (Micropaedia), 20 volumes.
18. The Raintree Illustrated Science Encyclopaedia, 20 volumes.
19. The Marshall Cavendish Illustrated Encyclopaedia of Knowledge, *Marshall Cavendish Books, London.*
20. Tell Me Why, 6 volumes, by Arkady Leokum, *The Hamlyn Publishing, London.*
21. How and Why in Science, 5 volumes by *R.G. Lagu, Homi Bhabha Centre, Bombay.*
22. Reader's Digest Library of Modern Knowledge, in 3 volumes.
23. Science Reporter, *A CSIR Publication, Rafi Marg, New Delhi.*
24. The New Illustrated Encyclopaedia of World History, 2 volumes, *William L. Langer.*
25. The New Junior World Encyclopaedia, 20 volumes.
26. The University Desk Encyclopaedia, *Dutton, Elsevier.*
27. The Penguin Encyclopaedia of Places, *W.G. Moore.*
28. You and Your Health, 3 volumes, *Shryock, Swartout.*
29. Joy of Knowledge, in 14 volumes, *James Mitchell.*
30. 'Finding Out' Magzine, *Purnell & Sons Ltd., London.*
31. Understanding Science Magzine, *UK Publication.*
32. McGraw-Hill Encyclopaedia of Science and Technology, 15 volumes, *McGraw-Hill Co., USA.*
33. Von Nostrands Scientific Encyclopaedia.
34. The Family Encyclopaedia of Science, *Windward*
35. Asimov's Biographical Encyclopaedia of Science and Technology, by *Isaac Asimov.*
36. Scientific American magazines.
37. Guinness Book of World Records.
38. Guinness Facts & Feats Series.

हिन्दी

1. हिन्दी विश्वकोश खण्ड 1 से 12 (नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी)
2. हिन्दी विश्वभारती भाग 1 से 4; जिल्द 6; सं. श्री नारायण चतुर्वेदी, कृ.व. द्विवेदी
3. सचित्र विश्वकोश भाग 1 से 10 (राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली)
4. भारत के पक्षी : सालिम अली
5. भारतीय पक्षी : कुंवर सुरेश सिह
6. भारत का वन्य जीव : ई.पी.जी., अनु. विराज, एम.ए.
7. वन्य जीव का संसार : रामेश बेदी
8. शल्य चिकित्सा के वरदान : डा. आत्मप्रकाश एवं कैलाश साह
9. भारतीय सेना तथा युद्ध कला : कर्नल गौतम शर्मा
10. विश्व के प्रमुख खेल तथा खिलाड़ी : योगराज थानी
11. विज्ञान प्रगति (सी.एस.आई.आर. प्रकाशन, पी.आई.डी. बिल्डिंग, नई दिल्ली)

उपर्युक्त संदर्भ ग्रंथों के अतिरिक्त अंग्रेजी, हिन्दी की अनेकानेक पुस्तकों, लगभग सभी स्तरीय शब्दकोशों, शासकीय पारिभाषिक शब्द संग्रहों से भी सहायता ली गई है।

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

(Volume VI)

लेखक

डा. सुनीता गुप्ता Ph. D. (Phy. Chemistry)

डा. नीना अग्रवाल M.B.B.S.

परामर्शदाता मंडल

डा. सी. एल. गर्ग M. Sc., Ph. D.

वैज्ञानिक, डिफेन्स साइंस सेंटर,

रक्षा मंत्रालय, भारत सरकार

(मुख्य परामर्शदाता)

डा. पदम् गुप्त M.B.B.S.

आर. के. गुप्त M. Sc.. (Mathematics)

एम. एल. अग्रवाल M. Tech.

पुस्तक महल®

खारी बावली, दिल्ली-110006

नया शो रूम : 10-B, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002

प्रकाशक
पुस्तक महल, दिल्ली-110006

संबद्ध संस्था
हिन्द पुस्तक भण्डार, दिल्ली-110006

विक्रय केन्द्र
• 6686, खारी बावली, दिल्ली-110006..........................फोन: 239314, 2911979
• 10-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002...फोन: 3268292-93, 3279900

प्रशासनिक कार्यालय
एफ-2/16, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
फोन: 3276539, 3272783, 3272784
Telex: 031–78090 SBP IN * Fax: 91–11–2924673

शाखाएं
• 23-25, जाओबा वाडी, ठाकुरद्वार, बंबई-400002 फोन: 2010941
• 22/2, मिशन रोड (शामा राव कम्पाउंड), बंगलोर-560027 फोन:-234025
• खेमका हाउस, वूमेन्स हॉस्पिटल के सामने, अशोक राजपथ, पटना-800004 फोन: 653644

मूल्य:
पेपर बैक संस्करण: 40/-
सजिल्द लायब्रेरी संस्करण: 60/-

7वां संस्करण: अक्टूबर, 1993

मुद्रक: कलर प्रिंट्स, विश्वास नगर, शाहदरा-110032

प्रकाशकीय

छः भागों में विभाजित ''चिल्ड्रन्स नॉलेज बैंक' एक विश्वकोशीय महत्त्व (Encyclopaedic Importance) की बालोपयोगी पुस्तकमाला है। इसकी शुरूआत 1980 में की गई थी और उस समय इसे चार भार भागों में निकालने का निश्चय किया गया था। पाठकों द्वारा निरन्तर मांग बनाए रखने के कारण हमें इसके दो भाग और बढ़ाने पड़े। सन् 1986 में इसके छहों भागों का प्रकाशन पूर्ण हो पाया। अब स्थिति यह है कि पाठक इसके सातवें भाग को भी प्रकाशित करने की मांग कर रहे हैं।

अपने आप में पूर्ण इसके प्रत्येक भाग में सामान्य-ज्ञान, आधुनिक विज्ञान, पेड़-पौधे और जीव-जंतु, मानव-शरीर, आविष्कार और आविष्कारक, खेल-खिलाड़ी आदि विषयों से संबंधित सैकड़ों प्रश्नों के उत्तर सरल तथा रोचक भाषा-शैली में प्रस्तुत किए गए हैं। प्रश्नों का चयन करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि प्रश्न ऐसे हों जो बच्चों की लगभग हर ''क्यों'' और ''कैसे'' किस्म की ज़िज्ञासामूलक समस्या का समाधान कर सकें।

हमारा संपादन तथा कला विभाग इस बात के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहा है कि विषय की प्रामाणिकता तथ्यों की विश्वसनीयता, भाषा-शैली की रोचकता, चित्रों के समुचित चयन तथा साज-सज्जा में किसी प्रकार की कोई भी कमी न रह जाए। इस बात को ध्यान में रखते हुए पाठ्य-सामग्री के लेखन में विश्व के सभी उच्चस्तरीय मानक संदर्भ-गन्थों की सहायता ली गई है। इसके अतिरिक्त जब भी इस पुस्तकमाला के किसी भी भाग का नया संस्करण प्रकाशित होता है तो उसमें नवीनतम जानकारियों को समाहित कर दिया जाता है। इससे इस पुस्तकमाला की सामयिकता तो बनी ही रहती है, साथ ही प्रत्येक नए संस्करण के साथ इसकी गुणवत्ता में भी उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है।

हमें प्रसन्नता है कि हमारे इस विनम्र एवं प्रामाणिक प्रयास का सर्वत्र स्वागत हुआ। पत्र-पत्रिकाओं के समीक्षात्मक कॉलमों में इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा हुई, विभिन्न क्षेत्रों के विद्वानों तथा वैज्ञानिकों ने हमें सराहनाभरे पत्र लिखे तथा शिक्षण संस्थानों ने बच्चों का बौद्धिक स्तर बढ़ाने के लिए इस पुस्तकमाला को पढ़ने की पुरजोर सिफारिश की।

आज स्थिति यह है कि यह पुस्तकमाला मानो बच्चे के प्रति माता-पिता का स्नेह एवं दुलार का प्रतीक बन गई है। हर पढ़े-लिखे मां-बाप की यह चेष्टा रहती है कि वे अपने बच्चे को ''चिल्ड्रन्स नॉलेज बैंक'' का सेट भेंट में दें। इस बात को दृष्टिगत रखते हुए अब यह सम्पूर्ण सेट एक आकर्षक ''गिफ्ट पेक'' में भी उपलब्ध कराया गया है। पूरा सेट लेने पर ''गिफ्ट बॉक्स'' मुफ्त दिया जाता है। पहले इस पुस्तकमाला के छः भागों के कवर अलग-अलग डिजाइन के थे। अब इन्हें एक कर दिया गया है, जिससे पुस्तकमाला की साज-सज्जा एकदम विश्वकोशीय हो उठी है।

चिल्ड्रन्स नॉलेज बैंक की कुछ विशेषताएं:

- कुल 1050 से भी अधिक **''क्यों''** और **''कैसे''** किस्म के प्रश्नों के उत्तर
- 5,00,000 शब्दों की प्रामाणिक पाठ्य-सामग्री
- 1100 से अधिक मनोहारी चित्र
- बड़े आकार के 1300 से भी अधिक पृष्ठ
- 50 लाख से भी अधिक पाठकों की पसंद
- अंग्रेजी के अतिरिक्त 8 भारतीय भाषाओं में भी प्रकाशित

(जो भाग प्रकाशित हो चुके हैं वे ☑ चिन्हित हैं)

भाग	अंग्रेजी	हिंदी	बंगाली	तेलुगु	कन्नड़	तमिल	मलयालम	मराठी	गुजराती
एक	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓
दो	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	प्रेस में
तीन	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	प्रेस में	प्रेस में
चार	✓	✓	✓	✓	✓	प्रेस में	प्रेस में	प्रेस में	प्रेस में
पांच	✓	✓	✓	✓	✓	प्रेस में	प्रेस में	प्रेस में	प्रेस में
छः	✓	✓	✓	✓	✓	प्रेस में	प्रेस में	प्रेस में	प्रेस में

प्रथम भाग के प्रश्नों की झलक

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

सामान्य ज्ञान, आधुनिक विज्ञान, पेड़-पौधे और जीव-जन्तु, मानव शरीर, आविष्कार और आविष्कारक तथा खेल-खिलाड़ी नामक छः प्रखण्डों में विभाजित

- ☐ जीभ स्वाद कैसे बताती है?
- ☐ उल्लू को अंधेरे में कैसे दिखाई देता है?
- ☐ क्या चींटियों के भी साम्राज्य होते हैं
- ☐ क्या भूत-प्रेत वास्तव में होते हैं?
- ☐ प्लास्टिक सर्जरी क्या है?
- ☐ जानवर हमारी तरह बात क्यों नहीं कर सकते?
- ☐ महिलाओं के दाढ़ी क्यों नहीं होती?
- ☐ रेगिस्तान में जानवर और पौधे कैसे जीवित रहते हैं?
- ☐ इंद्रधनुष कैसे बनता है?
- ☐ हमारे कटे हाथ पैर दोबारा क्यों नहीं उग पाते?
- ☐ बिना खाये कितने दिन रहा जा सकता है?
- ☐ नींद में हमारे शरीर में क्या होता है?
- ☐ कुछ जानवरों की आंखें रात में क्यों चमकती हैं?
- ☐ कंगारू लम्बी छलांग कैसे लगा लेता है?
- ☐ प्रिज्म से इंद्रधनुषीय प्रकाश कैसे निकलता है?
- ☐ क्या धूल भी उपयोगी है?
- ☐ लोग गंजे क्यों होते हैं?
- ☐ क्या हर पदार्थ के अणु गतिशील होते हैं?
- ☐ घड़ियों के माणिक क्या होते हैं?
- ☐ उदय और अस्त के समय सूर्य लाल क्यों दिखाई देता है?
- ☐ विज्ञापन कब शुरू हुए?
- ☐ नोबल पुरस्कार क्या है?
- ☐ चीन की महान दीवार क्यों बनाई गई?
- ☐ समाचार-पत्र कब शुरू हुए?
- ☐ दलदल (Quick-sand) क्या है?
- ☐ ओस कैसे बनती है?
- ☐ गर्म चीजों को छूने से जलन क्यों हो जाती है?
- ☐ तरल पदार्थ भाप में कैसे बदलते हैं?
- ☐ तांबा हमारे लिए किस प्रकार उपयोगी है?
- ☐ डाक-व्यवस्था कब और कैसे शुरू हुई?
- ☐ रबर क्या है?
- ☐ मोती कैसे बनते हैं?
- ☐ सुई का विकास कैसे हुआ?
- ☐ कैलेंडर की शुरूआत कैसे हुई?
- ☐ विश्व के सात आश्चर्य कहां गए?
- ☐ विश्व मेलों की शुरुआत कैसे हुई?
- ☐ पक्षी चोंच से पंख क्यों संवारते हैं?
- ☐ लोग डाक-टिकट क्यों संग्रह करते हैं?
- ☐ विभिन्न धर्मों की शुरुआत कैसे हुई?
- ☐ पैन का आविष्कार कैसे हुआ?
- ☐ पेन्सिल का आविष्कार कब हुआ?
- ☐ झंडे की शुरुआत कैसे हुई?
- ☐ गुफाएं
- ☐ विश्वकोश कैसे तैयार हुआ?
- ☐ पृथ्वी कितनी पुरानी है?
- ☐ पृथ्वी के भीतर क्या है?
- ☐ जलवायु कितने प्रकार की होती है।
- ☐ ऋतुएं कैसे बदलती हैं?
- ☐ रेगिस्तान कैसे बनते हैं?
- ☐ वायुमण्डल क्या है?
- ☐ क्या हवा में भार होता है?
- ☐ वर्षा कैसे होती है?
- ☐ मानसून
- ☐ आंधी और तूफान क्यों आते हैं?
- ☐ ओले कैसे बनते हैं?
- ☐ कोहरा कैसे बनता है?
- ☐ पहाड़ कैसे बनते हैं?
- ☐ ज्वालामुखी कैसे बनते हैं?
- ☐ भूकम्प क्यों आते हैं?
- ☐ नदियां कैसे बनी?
- ☐ झीलें कैसे बनती हैं?
- ☐ झरने कैसे बनते हैं?
- ☐ जलप्रपात (Waterfalls) कैसे बनते हैं?
- ☐ ग्लेशियर क्या होते हैं?
- ☐ ब्रह्मांड कैसे अस्तित्त्व में आया?
- ☐ आकाश गंगा क्या है?
- ☐ उल्काएं क्या हैं?
- ☐ तारे कैसे बनते हैं?
- ☐ पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण बल क्या है?
- ☐ सूर्य के धब्बे क्या हैं?
- ☐ क्या सूर्य का कभी अंत होगा?
- ☐ शनि-ग्रह के छल्ले क्या हैं?
- ☐ चन्द्रग्रहण कैसे होता है?
- ☐ राशि-चक्र क्या है?
- ☐ सौरमंडल का जन्म कैसे हुआ?
- ☐ सौर परिवार क्या है?
- ☐ सूर्य में कितनी गर्मी है?
- ☐ सूर्य ग्रहण क्या है?
- ☐ हमारी पृथ्वी क्या है?
- ☐ बिजली का आविष्कार कैसे हुआ?
- ☐ साइकिल का आविष्कार कैसे हुआ?
- ☐ रेलगाड़ी का आविष्कार कैसे हुआ?
- ☐ पनडुब्बी का आविष्कार कैसे हुआ?
- ☐ गुब्बारे कैसे उड़ते हैं?
- ☐ रेडियो का विकास कैसे हुआ?
- ☐ चलचित्रों की शुरुआत कैसे हुई?
- ☐ टेलीविज़न में चित्र और आवाज कैसे आती है?
- ☐ टाइपराइटर का विकास कैसे हुआ?

बड़े आकार के 232 पृष्ठ **पूर्णतया सचित्र**

द्वितीय भाग के प्रश्नों की झलक

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

मानव शरीर, सामान्य ज्ञान, पेड़-पौधे और जीव-जन्तु जगत, ब्रह्मांड व अंतरिक्ष तथा खेल एवं खिलाड़ी नामक पांच प्रखण्डों में विभाजित

- ☐ क्या कोई पदार्थ ऐसा भी है जो आग में नहीं जलता ?
- ☐ डबलरोटी में छेद क्यों होते हैं ?
- ☐ दूध का रंग सफेद क्यों दिखता है ?
- ☐ आकाश नीला क्यों दिखाई देता है ?
- ☐ काली बिल्ली को अशुभ क्यों माना जाता है ?
- ☐ क्या संसार में नरभक्षी लोग भी रहते हैं ?
- ☐ पीसा की मीनार झुकी हुई क्यों है ?
- ☐ धुआं क्या है ?
- ☐ आग क्या है ?
- ☐ आवाज एक स्थान से दूसरे स्थान तक कैसे पहुंचती है ?
- ☐ पान खाने से मुंह लाल क्यों हो जाता है ?
- ☐ क्या कोई धातु तरल भी होती है ?
- ☐ जमीन से लोहा कैसे प्राप्त होता है ?
- ☐ एल्युमिनियम धरती से कैसे प्राप्त होता है ?
- ☐ मरीचिका या मृग तृष्णा क्या है ?
- ☐ सूक्ष्मदर्शी से छोटी वस्तुयें बड़ी कैसे दिखती हैं ?
- ☐ कांच कैसे बनाया जाता है ?
- ☐ हीरा क्या है ?
- ☐ सुकरात कौन थे ?
- ☐ कुछ ही तत्वों से लाखों पदार्थ कैसे बन जाते हैं ?
- ☐ विज्ञापन पट्ट कैसे चमकते हैं ?
- ☐ बिजली के बल्ब से प्रकाश कैसे पैदा होता है ?
- ☐ बिजली कैसे पैदा की जाती है ?
- ☐ महिलाओं की आवाज सुरीली क्यों होती है ?
- ☐ हमें भूख क्यों लगती है ?
- ☐ रोने में आंसू क्यों निकलते हैं ?
- ☐ हम पक्षियों की तरह क्यों नहीं उड़ पाते ?
- ☐ हमारा शरीर गर्म क्यों रहता है ?
- ☐ हमें छींक क्यों आती है ?
- ☐ बच्चों को पोलियो कैसे हो जाता है ?
- ☐ पेट में कीड़े क्यों हो जाते हैं ?
- ☐ डायलेसिस क्या है ?
- ☐ हमारे शरीर में भोजन कैसे पचता है ?
- ☐ मनुष्य की त्वचा का रंग अलग-अलग क्यों होता है ?
- ☐ स्तनधारी मादा के शरीर में दूध कैसे बनता है ?
- ☐ हम सांस क्यों लेते हैं ?
- ☐ आंखें कैसे देखती हैं ?
- ☐ आदमी बहरा क्यों हो जाता है ?
- ☐ आदमी अंधा क्यों हो जाता है ?
- ☐ हम नमक क्यों खाते हैं ?
- ☐ कुछ लोग खब्बू क्यों होते हैं ?
- ☐ मूत्र हमारे शरीर में कैसे बनता है ?
- ☐ सिर में दर्द क्यों होता है ?
- ☐ हम थक क्यों जाते हैं ?
- ☐ धरती पर जीवन कैसे प्रारम्भ हुआ ?
- ☐ क्या कोई पक्षी पत्थर भी खाता है ?
- ☐ छिपकली अपनी पूंछ कैसे छोड़कर भाग जाती है ?
- ☐ लोग बिल्ली को शेर की मौसी क्यों कहते हैं ?
- ☐ जानवरों से हमें कौन-कौन सी दवायें प्राप्त होती हैं ?
- ☐ कोयल बसन्त ऋतु में ही क्यों गाती है ?
- ☐ ठंडे और गर्म रक्त वाले प्राणी कौन-कौन से हैं ?
- ☐ जानवर कितनी तेज दौड़ सकते हैं ?
- ☐ जानवर कितने दिन जिन्दा रह सकते हैं ?
- ☐ क्या सभी सांप जहरीले होते हैं ?
- ☐ सांप के काटने पर शरीर में जहर कैसे फैलता है ?
- ☐ स्तनधारी जानवर कौन से हैं ?
- ☐ चमगादड़ पक्षियों से किस प्रकार विचित्र है ?
- ☐ शेर को जंगल का राजा क्यों कहते हैं ?
- ☐ क्या जानवर भी रंग पहचान सकते हैं ?
- ☐ मछलियां पानी में सांस कैसे लेती हैं ?
- ☐ क्या बिजली पैदा करने वाली मछलियां भी होती हैं ?
- ☐ छुई-मुई का पौधा छूने से क्यों मुरझा जाता है ?
- ☐ हाथी के सूंड क्यों होती है ?
- ☐ ऊंट की पीठ पर कूबड़ क्यों होता है ?
- ☐ काटने वाले कीड़े शरीर में कीटाणु कैसे भेजते हैं ?
- ☐ समुद्र की गहराई कैसे मापते हैं ?
- ☐ समुद्र में ज्वार क्यों आते हैं ?
- ☐ क्या समुद्रों में भी नदियां बहती हैं ?
- ☐ समुद्र में दिशाओं का पता कैसे लगाया जाता है ?
- ☐ समुद्र की गहराइयों में आदमी कैसे उतरता है ?
- ☐ हवा में नमी कहां से आती है ?
- ☐ आने वाले मौसम का पता कैसे लगाते हैं ?
- ☐ नौ ग्रहों के अतिरिक्त अन्य छोटे ग्रह क्या हैं ?
- ☐ क्या सभी ग्रहों के उपग्रह हैं ?
- ☐ तारापुंज क्या है ?
- ☐ नीहारिकाएं क्या हैं ?
- ☐ ब्रह्माण्ड के सभी पिण्ड गोल क्यों हैं ?
- ☐ तारे क्यों टिमटिमाते हैं ?
- ☐ प्रकाश वर्ष क्या है ?
- ☐ गैलिलियो को महान वैज्ञानिक क्यों कहा जाता है ?
- ☐ न्यूटन को भौतिकी का जन्मदाता क्यों कहते हैं ?
- ☐ ताश खेलना कब शुरू हुआ ?
- ☐ टेनिस का प्रारम्भ कैसे हुआ ?
- ☐ कुश्ती के खेल की शुरुआत कब हुई ?
- ☐ क्या शतरंज का खेल भारत में आरम्भ हुआ था ?
- ☐ क्या ब्रेडमेन रन बनाने की मशीन था ?
- ☐ पेले को फुटबाल का काला हीरा क्यों कहते हैं ?
- ☐ क्या ऐतिहासिक दौड़क नुरमी कभी ठेला चलाता था ?

बड़े आकार के 240 पृष्ठ **पूर्णतया सचित्र**

तृतीय भाग के प्रश्नों की झलक

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

पेड़-पौधे और जीव-जन्तु, आविष्कार तथा विकास, सामान्य ज्ञान, आधुनिक विज्ञान, मानव शरीर तथा खेल-खिलाड़ी नामक छः प्रखण्डों में विभाजित

- ☐ पिकासो कौन थे?
- ☐ जिप्सी कहां से आए?
- ☐ डायनोसोर (Dinosaurs) क्या थे?
- ☐ अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय कहां है?
- ☐ कैलोरी (Calorie) क्या है और इसे कैसे मापते हैं?
- ☐ संसार की किस भाषा में सबसे अधिक शब्द हैं?
- ☐ संसार का कौन सा हवाई अड्डा अधिक व्यस्त रहता है?
- ☐ बरमूडा ट्राइऐंगल को रहस्यमय क्यों माना जाता है?
- ☐ एफिल मीनार (Eiffel Tower) क्यों बनाई गई?
- ☐ हालैण्ड में अधिक पवन-चक्कियां क्यों हैं?
- ☐ मोना लिसा (Mona Lisa) आज कहां है?
- ☐ फासिल क्या हैं?
- ☐ एक्यूपंक्चर चिकित्सा प्रणाली क्या है?
- ☐ गंगा नदी को पवित्र क्यों माना जाता है?
- ☐ घर्षण बल (Force of Friction) क्या है?
- ☐ विश्व का सबसे बड़ा मंदिर एंगकोर वाट कहां है?
- ☐ भारत की प्रमुख नृत्य शैलियां कौन सी हैं?
- ☐ विश्व बैंक कहां है?
- ☐ सुपर सोनिक उड़ान क्या है?
- ☐ अक्षांश और देशांतर रेखाएं क्या हैं?
- ☐ डेथ वैली क्या है?
- ☐ प्रदूषण क्या है?
- ☐ मुर्दा पानी पर क्यों तैरता है?
- ☐ सभी की उंगलियों के निशान एक से क्यों नहीं होते?
- ☐ सभी देशों में एक से सिक्के क्यों नहीं हैं?
- ☐ रोम का पतन कैसे हुआ?
- ☐ पहली अप्रैल को 'फूल्स डे' (Fools Day) क्यों कहते हैं?
- ☐ समुद्रों का पानी सूखता क्यों नहीं?
- ☐ धरती पर महाद्वीपों का जन्म कैसे हुआ?
- ☐ वायु का दबाव कैसे मापते हैं?
- ☐ कस्तूरी मृग (Musk Deer) कहां पाया जाता है?
- ☐ किस प्राणी के तीन हृदय होते हैं?
- ☐ डोडो पक्षी कहां गायब हो गए?
- ☐ सांप अपनी केंचुली (Skin) क्यों बदलते हैं?
- ☐ उड़ने वाली लोमड़ी क्या है?
- ☐ उड़ने वाली गिलहरी क्या है?
- ☐ पहाड़ों की चोटियों पर पेड़-पौधे क्यों नहीं उगते?
- ☐ लेमिंग हज़ारों की संख्या में आत्महत्या क्यों करते हैं?
- ☐ क्या कोई चमगादड़ आदमी का खून भी पी सकता है?
- ☐ कुत्तों की सूंघने की क्षमता मनुष्य से अधिक क्यों होती है?
- ☐ खरगोश के कान बड़े क्यों होते हैं?
- ☐ मूंगा क्या है?
- ☐ ऐसा कौन सा सांप है जो सुअर, हिरण तक को खा जाता है?
- ☐ कौन सा जीव जीवन भर बिना पानी के रह सकता है?
- ☐ शादियों की शुरुआत कैसे हुई?
- ☐ आस्ट्रेलिया (Australia) की खोज किसने की?
- ☐ सर्कस की शुरुआत कब हुई?
- ☐ स्टेथेस्कोप का आविष्कार कब हुआ?
- ☐ शार्टहैण्ड का आविष्कार किसने किया?
- ☐ ज्यामिती या रेखागणित का आविष्कार कैसे हुआ?
- ☐ अस्त्र-शस्त्रों का विकास कैसे हुआ?
- ☐ विस्फोटकों का विकास कैसे हुआ?
- ☐ प्रजातंत्र की शुरुआत कहां हुई?
- ☐ किंडर गार्टन शिक्षा प्रणाली का आरम्भ किसने किया?
- ☐ संग्रहालयों की शुरुआत कब हुई?
- ☐ सल्फा औषधियां क्या हैं?
- ☐ आइसोटोप क्या हैं?
- ☐ चंद्रमा पर उतरने वाला पहला व्यक्ति कौन था?
- ☐ सीमेंट कैसे बनाया जाता है?
- ☐ संचार उपग्रह कैसे काम करते हैं?
- ☐ टेस्ट ट्यूब बेबी क्या है?
- ☐ कागज़ कैसे बनाया जाता है?
- ☐ लेसर किरणें क्या हैं?
- ☐ शुद्ध घी की पहचान कैसे की जाती है?
- ☐ क्या हवा को तरल अवस्था में बदला जा सकता है?
- ☐ साबुन से कपड़े साफ कैसे हो जाते हैं?
- ☐ लीवर कैसे काम करते हैं?
- ☐ क्या एक तत्त्व को दूसरे तत्त्व में बदला जा सकता है?
- ☐ फोटोस्टेट मशीन कैसे काम करती है?
- ☐ सूर्य के प्रकाश से बिजली कैसे बनाई जाती है?
- ☐ हमारा शरीर किससे बना है?
- ☐ आंखें अलग-अलग रंगों की पहचान कैसे करती हैं?
- ☐ हमें जुकाम (Common Cold) क्यों हो जाता है?
- ☐ कट जाने पर थोड़ी देर में खून बहना बंद क्यों हो जाता है?
- ☐ गले के टांसिल (Tonsils) क्या काम करते हैं?
- ☐ सभी की आंखों का रंग एक जैसा क्यों नहीं होता?
- ☐ हार्मोन क्या हैं?
- ☐ कुछ लोग विशेष स्थितियों से डरते क्यों हैं?
- ☐ हमारे दांत क्या हैं?
- ☐ दिल का दौरा क्यों पड़ जाता है?
- ☐ हमारे शरीर में कौन-कौन से तत्त्व हैं?
- ☐ त्वचा हमारे शरीर के लिए क्यों जरूरी है?
- ☐ विश्व का सबसे पुराना खेल कौन सा है?
- ☐ बास्केटबाल (Basketball) का खेल कहां जन्मा?
- ☐ मैराथन दौड़ क्या है?
- ☐ नौका दौड़ की शुरुआत कैसे हुई?
- ☐ भारत में कौन-कौन से प्रमुख खिलाड़ी हुए?
- ☐ भारत के प्रमुख खेल कौन-कौन से हैं?

बड़े आकार के 204 पृष्ठ **पूर्णतया सचित्र**

चतुर्थ भाग के प्रश्नों की झलक

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

सामान्य ज्ञान, भूगोल, ब्रह्मांड तथा आविष्कार नामक चार प्रखण्डों में विभाजित

- ☐ समुद्री गोताखोर कैसे काम करते हैं?
- ☐ पहाड़ों पर चढ़ना उतरने से कठिन क्यों होता है?
- ☐ कन्फ्यूसियस कौन थे?
- ☐ लिटमस पेपर क्या होता है?
- ☐ सांची के स्तूप कब बनाए गए?
- ☐ विभिन्न देशों के नाम कैसे पड़े?
- ☐ बहुमूल्य पत्थर कौन-कौन से हैं?
- ☐ क्या जमीन के नीचे नदियां बहती हैं?
- ☐ कालिदास कौन थे?
- ☐ सूरज की गर्मी से पेड़ों की पत्तियां गर्म क्यों नहीं होतीं?
- ☐ मीट्रिक प्रणाली क्या है?
- ☐ अरस्तू (Aristotle) कौन थे?
- ☐ ए. एम. और पी. एम. (A. M. & P. M.) क्या हैं?
- ☐ इलैक्ट्रिक फ्यूज़ क्यों लगाया जाता है?
- ☐ मिस्र के लोग ममी कैसे सुरक्षित रखते हैं?
- ☐ उड़ते हुए वायुयान की ऊंचाई कैसे ज्ञात करते हैं?
- ☐ जलयान का वेग किस इकाई में मापते हैं?
- ☐ स्फिक्स का रहस्य क्या है?
- ☐ क्या सांड केवल लाल कपड़े से ही भड़कता है?
- ☐ संसार का सबसे बड़ा स्वर्णभंडार कहां है?
- ☐ बहुरूपदर्शी (Kaleidoscope) क्या है?
- ☐ पराबैंगनी किरणें (Ultraviolet Rays) क्या हैं?
- ☐ कार या बस का वेग कैसे मापा जाता है?
- ☐ पेरिस्कोप (Periscope) क्या है?
- ☐ नाटो (N.A.T.O.) क्या है?
- ☐ हालीवुड (Holywood) क्यों प्रसिद्ध है?
- ☐ सिक्ख धर्म के जन्मदाता कौन थे?
- ☐ औद्योगिक क्रांति कब शुरू हुई?
- ☐ नेपोलियन बोनापार्ट कौन था?
- ☐ विभिन्न धातुएं कैसे वैल्ड की जाती हैं?
- ☐ 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत कैसे हुई?
- ☐ पनामा नहर क्यों प्रसिद्ध है?
- ☐ भारत में राष्ट्रपति को कैसे चुना जाता है?
- ☐ संयुक्त राष्ट्र संघ क्या है?
- ☐ क्वाक क्या हैं?
- ☐ ब्लैक होल क्या हैं?
- ☐ रेल का इंजन कैसे काम करता है?
- ☐ क्वासर (Quasars) क्या है?
- ☐ परमाणु घड़ी क्या हैं?
- ☐ भारी पानी (Heavy Water) क्या है?
- ☐ भारहीनता (Weightlessness) क्या है?
- ☐ विभिन्न प्रकार के वाद्य-यंत्र क्या हैं?
- ☐ विभिन्न चिपकाने वाले पदार्थ क्या हैं?
- ☐ टेलीप्रिंटर कैसे काम करता है?
- ☐ ड्राइक्लीनिंग क्या है?
- ☐ शराब कैसे बनाई जाती है?
- ☐ विभिन्न रंग कैसे बनाए जाते हैं?
- ☐ क्रेन कैसे काम करती है?
- ☐ बाइनाकुलर्स से दूर की वस्तुएं साफ कैसे दिखाई देती हैं?
- ☐ पल्सर (Pulsars) क्या हैं?
- ☐ स्टीरिओफोनिक ध्वनि क्या है?
- ☐ टैलकम पाउडर (Talcum Powder) कैसे बनाते हैं?
- ☐ मास स्पेक्ट्रोग्राफ (Mass Spectrograph) क्या है?
- ☐ बीजों से कौन से विभिन्न तेल निकाले जाते हैं?
- ☐ हम कौन-से कंद-मूल खाते हैं?
- ☐ चिड़ियां कैसे सुनती हैं?
- ☐ किन कीड़ों की उम्र सबसे लम्बी होती है?
- ☐ पेंगुइन पक्षी कहां मिलते हैं?
- ☐ गैंडे की विभिन्न किस्में कौन-सी हैं?
- ☐ मक्खियां अपनी टांगें आपस में क्यों रगड़ती हैं?
- ☐ क्या कीड़ों में भी खून होता है?
- ☐ मोर क्यों नाचता है?
- ☐ पौधे सूर्य के प्रकाश की ओर क्यों झुकते हैं?
- ☐ कीड़ों में प्रजनन और विकास कैसे होता है?
- ☐ संसार की सबसे खतरनाक चिड़िया कौन-सी है?
- ☐ हमारे शरीर में संधियां कितने प्रकार की होती हैं?
- ☐ कुछ आदमियों की आंखों में भेंगापन क्यों होता है?
- ☐ बच्चों को दूध पर क्यों पाला जाता है?
- ☐ सिर की चोट घातक क्यों होती है?
- ☐ शरीर में धमनियों और शिराओं का क्या काम है?
- ☐ रोधक्षमता क्या है?
- ☐ ई. सी. जी. क्या है?
- ☐ रंजकहीनता क्या है?
- ☐ वाम-दृष्टि और दक्षिण-दृष्टि का क्या अर्थ है?
- ☐ हमारे शरीर में जिगर या यकृत का क्या कार्य है?
- ☐ एलर्जी क्या है?
- ☐ आयरन-लंग मशीन क्या है?
- ☐ ब्लड-कैंसर या ल्यूकेमिया क्या है?
- ☐ लिफ्ट का आविष्कार कब हुआ?
- ☐ जीरो या शून्य का आविष्कार किसने किया?
- ☐ कपड़े धोने की मशीन का आविष्कार कब हुआ?
- ☐ हरगोबिंद खुराना ने अंतर्राष्ट्रीय ख्याति कैसे प्राप्त की?
- ☐ केपलर के ग्रह-गति के नियम क्या हैं?
- ☐ वॉलीबाल कैसे खेली जाती है?
- ☐ आइस-स्केटिंग कब आरम्भ हुआ?
- ☐ सार्फिंग क्या है?
- ☐ हैंडबॉल कैसे खेला जाता है?
- ☐ कैरम बिलियर्ड्स का खेल कितना पुराना है?

बड़े आकार के 232 पृष्ठ **पूर्णतया सचित्र**

पांचवें भाग के प्रश्नों की झलक

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

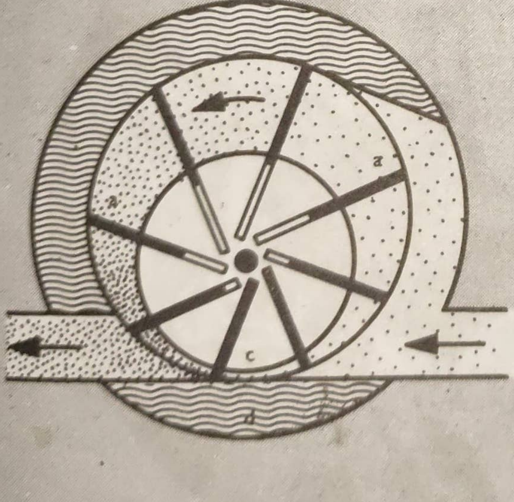
खेल-खिलाड़ी, आधुनिक विज्ञान, पेड़-पौधे और जीव-जन्तु, मानव शरीर, आविष्कार और आविष्कारक तथा सामान्य ज्ञान नामक छः प्रखण्डों में विभाजित

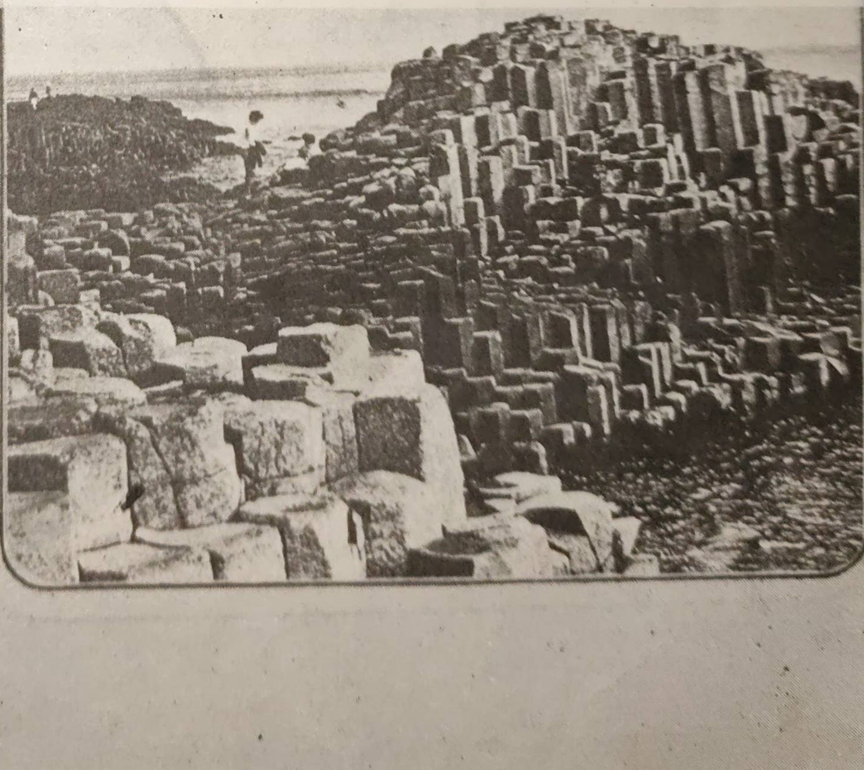
- ☐ प्रज्ञा परीक्षण क्या है?
- ☐ सौर हवा क्या है?
- ☐ ब्रिटेन का संघटन कब हुआ?
- ☐ साइफन कैसे काम करता है?
- ☐ ट्रोजन घोड़ा क्या था?
- ☐ ओपरा क्या है?
- ☐ ब्रिटेन के किस राजा ने सबसे लम्बी अवधि तक राज्य किया?
- ☐ विश्व की सबसे बड़ी नदी कौन-सी है?
- ☐ हिमधाव किसे कहते हैं?
- ☐ रूसी क्रांति के मूल कारण क्या थे?
- ☐ धातुओं को एनोडाइज कैसे किया जाता है?
- ☐ पाषाण युग किसे कहते हैं?
- ☐ बैटरी टार्च कैसे काम करती है?
- ☐ वियतनाम युद्ध के क्या कारण थे?
- ☐ दुनिया का सबसे ऊंचा रेलवे स्टेशन कौन-सा है?
- ☐ जहाजी सिग्नल उपकरण क्या है?
- ☐ बूमरैंग किसे कहते हैं?
- ☐ अभाज्य संख्याएं क्या होती हैं?
- ☐ विभिन्न प्रकार के विष क्या हैं?
- ☐ हमारे वायुमंडल का कितना भार है?
- ☐ कन्टैक्ट लेंस क्या होते हैं?
- ☐ बालचर आंदोलन कब आरंभ हुआ?
- ☐ वर्षा-प्रचुर वन किसे कहते हैं?
- ☐ विभिन्न पेंट्स कैसे बनाए जाते हैं?
- ☐ आगे चलती गाड़ी का पहिया पीछे घूमता क्यों दिखाई देता है?
- ☐ कॉस्मिक वर्ष किसे कहते हैं
- ☐ पायरोमीटर क्या है?
- ☐ ऐमीटर क्या है?
- ☐ प्रक्षेपास्त्र विज्ञान क्या है?
- ☐ आइडैन्टिकिट पद्धति क्या है?
- ☐ प्रकाश का अपरवर्तन क्या है?
- ☐ थियोडोलाइट किस काम आता है?
- ☐ अपराधियों की पहचान के लिए क्या तरीके प्रयोग में लाये जाते हैं?
- ☐ क्लिनोमीटर क्या है?
- ☐ जल-विलेय कांच क्या है?
- ☐ इलेक्ट्रोप्लेटिंग किसे कहते हैं?
- ☐ वेल्डिंग अथवा कटिंग टार्च क्या है?
- ☐ सल्फ्यूरिक अम्ल का निर्माण कैसे किया जाता है?
- ☐ वर्णलेखन क्या है?
- ☐ नोवा और सुपरनोवा क्या होते हैं?
- ☐ रसायन-युद्ध किसे कहते हैं?
- ☐ सिनेमा-स्कोप चलचित्र किसे कहते हैं?
- ☐ पनीर कैसे बनाया जाता है?
- ☐ विभिन्न प्रकार के कैलकुलेटर क्या होते हैं?
- ☐ कौन-कौन से जीव-जन्तु तथा पेड़-पौधे संरक्षणीय हैं?
- ☐ पेड़-पौधों के बीजों का प्रकीर्णन कैसे होता है?
- ☐ कौन से पक्षी उड़ने में असमर्थ हैं?
- ☐ क्या कुछ पौधे भी गति करते हैं?
- ☐ पेड़-पौधे और जीव-जंतु अपनी रक्षा कैसे करते हैं?
- ☐ मछलियां चीजों को कैसे सूंघती हैं?
- ☐ क्या बिच्छु के काटने से मनुष्य मर सकता है?
- ☐ ब्रेडफ्रूट का वृक्ष कहां पैदा होता है?
- ☐ जेब्रा के शरीर पर धारियां क्यों होती हैं?
- ☐ क्या कोई छिपकली अपनी आंखों से खून की पिचकारी छोड़ती है?
- ☐ कौन से कीड़े उल्टे होकर तैरते हैं?
- ☐ कौन सा जानवर उल्टा लटककर अपना जीवन बिताता है?
- ☐ क्या मछलियां सुन सकती हैं?
- ☐ विश्व का सबसे पहला पक्षी कौन-सा था?
- ☐ वनस्पतियों की आंतरिक संरचना का अध्ययन हम कैसे करते हैं?
- ☐ प्रथम (मानव) हृदय प्रतिरोपण कब किया गया?
- ☐ आंखों के सामान्य रोग कौन से हैं?
- ☐ हमारे शरीर में नाभि क्यों होती है?
- ☐ पीलिया का रोग क्या है?
- ☐ शरीर का कोई भी अंग सुन्न क्यों हो जाता है?
- ☐ आर एच तत्त्व क्या है?
- ☐ हमारा स्नायु तंत्र कैसे काम करता है?
- ☐ एक संसेचित अंड कोशिका कैसे सम्पूर्ण शिशु बनती है?
- ☐ यकृत का सिरोसिस क्या है?
- ☐ खून की कमी क्या है?
- ☐ विभिन्न मानसिक रोग क्या हैं?
- ☐ जनन नियंत्रण क्या है?
- ☐ ई.एस.पी. क्या है?
- ☐ मानसिक रोगियों को बिजली का झटका क्यों दिया जाता है?
- ☐ स्पर्शबोध क्या है?
- ☐ भारत के सर जे.सी. बोस के विज्ञान में क्या योगदान थे?
- ☐ एनरिको फर्मी ने क्या खोज की थी?
- ☐ सत्येन्द्रनाथ बोस का नाम आइंस्टीन के साथ कैसे जुड़ा?
- ☐ भारत के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम की शुरुआत किसने की?
- ☐ आधुनिक रसायनशास्त्र का जन्मदाता कौन है?
- ☐ घूर्णदर्शी क्या है और उसका आविष्कार कब हुआ था?
- ☐ शांतिस्वरूप भटनागर पुरस्कार क्या है?
- ☐ डा. विक्रम साराभाई का भारतीय विज्ञान में क्या योगदान है?
- ☐ मोर्स कोड का पहली बार कब प्रयोग किया गया?
- ☐ तीरंदाजी की शुरुआत कब हुई?
- ☐ टेबल टेनिस का जन्म कहां हुआ?
- ☐ वेट लिफ्टिंग का खेल कब शुरू हुआ?
- ☐ आइस बोटिंग का खेल क्या है?
- ☐ हैंग ग्लाइडिंग का खेल क्या है?

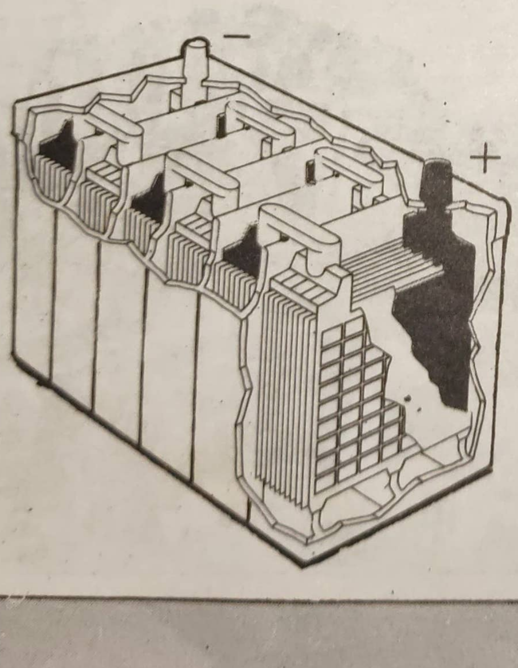
बड़े आकार के 232 पृष्ठ **पूर्णतया सचित्र**

अनुक्रम

1. सामान्य ज्ञान

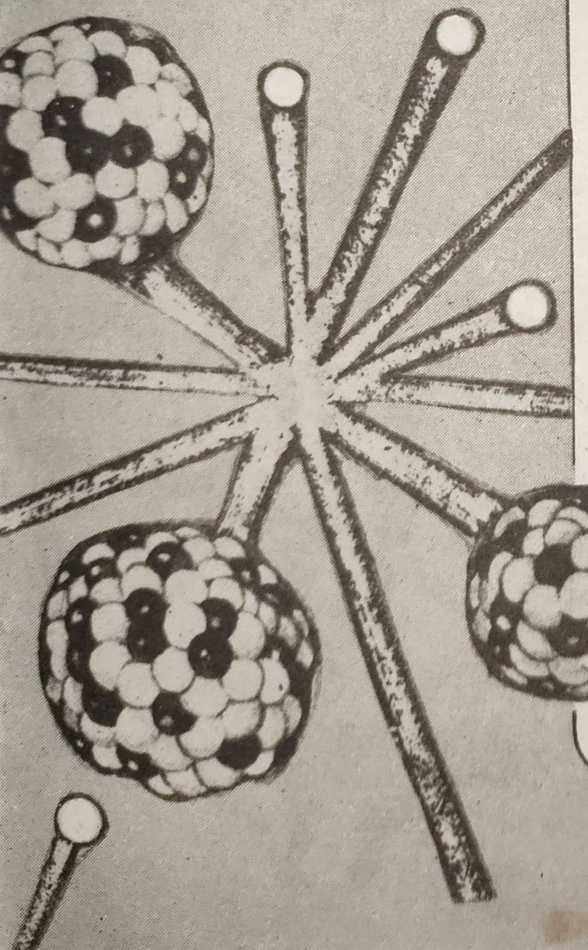


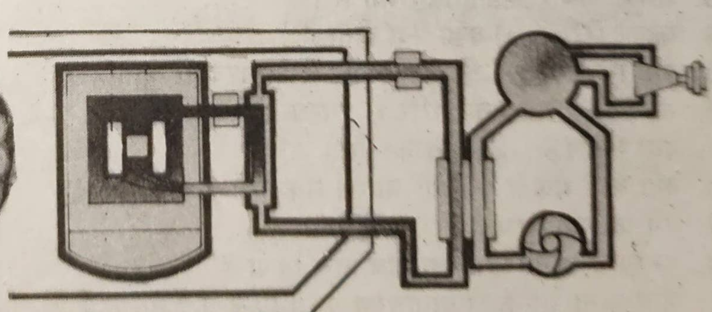




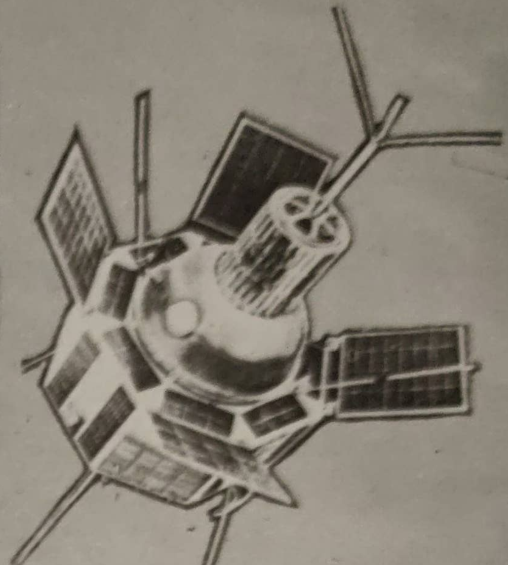


2. आधुनिक विज्ञान





3. पेड़-पौधे और जीव-जन्तु



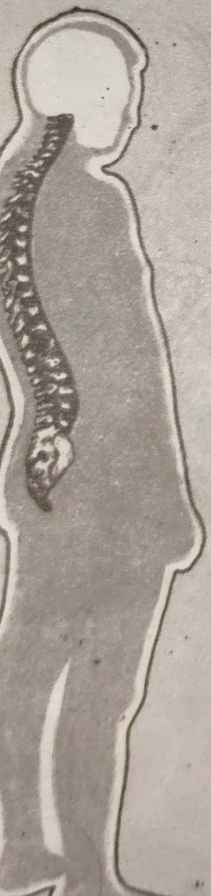






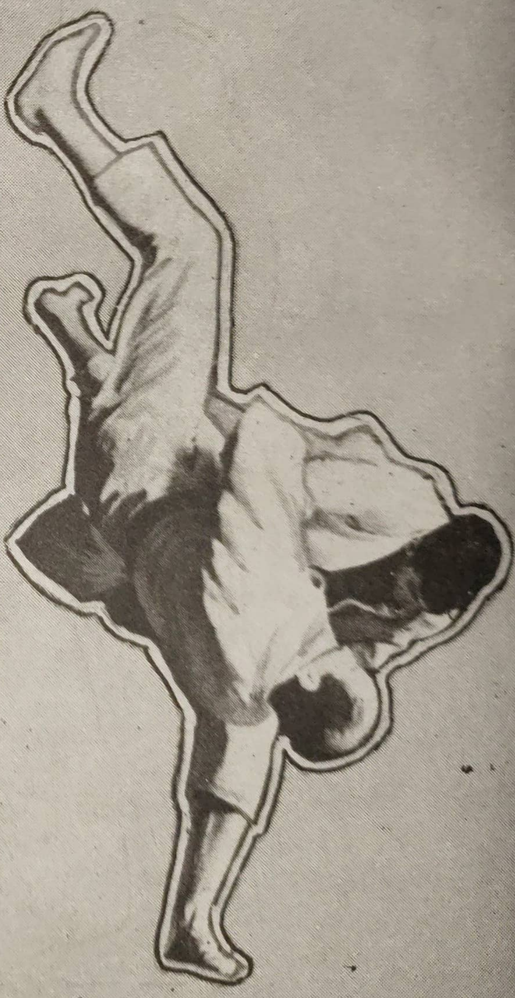


4. मानव शरीर

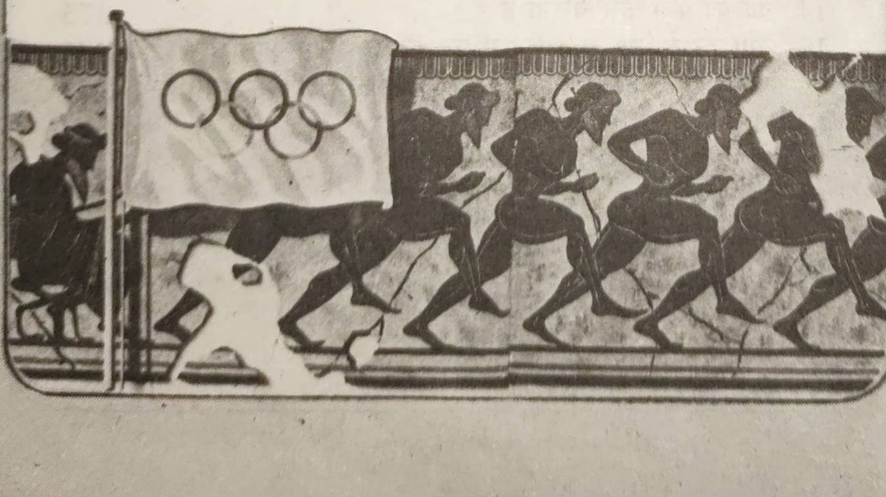




5. आविष्कार और आविष्कारक



6. खेल-खिलाड़ी

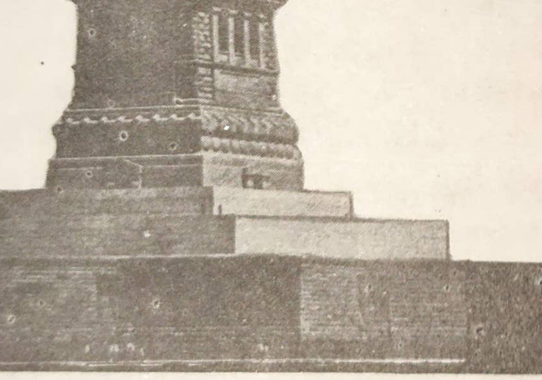


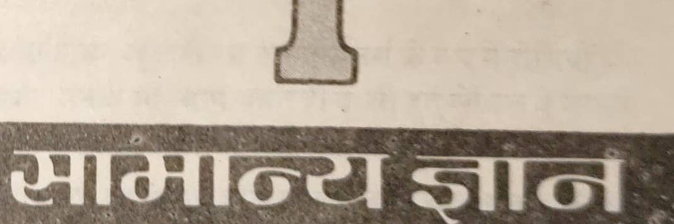




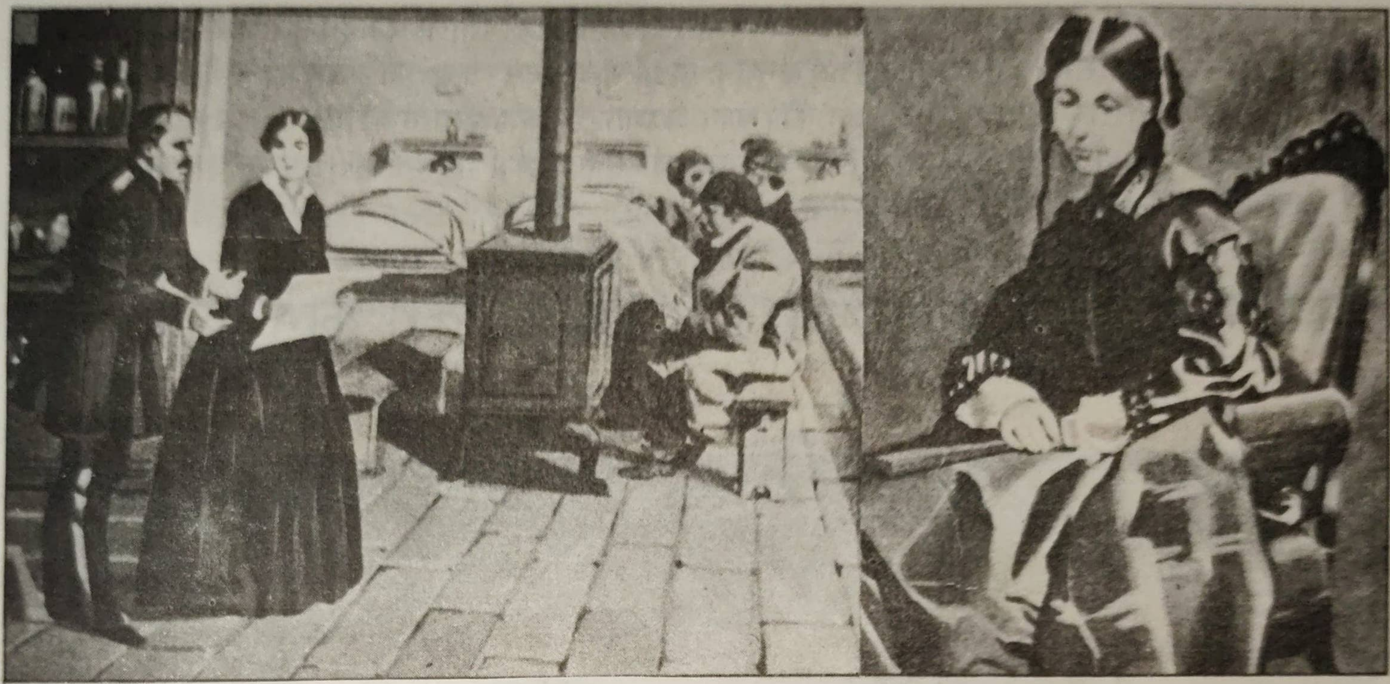
1

सामान्य ज्ञान





आधुनिक नर्सिंग की शुरुआत किसने की?



अंग्रेज महिला फ्लोरेंस नाइटिंगेल (Florence Nightingale) को आधुनिक नर्सिंग की जन्मदात्री कहा जाता है। उनके ही सुप्रयासों से आज नर्सिंग को महिलाओं के एक सम्मानजनक व्यवसाय का दर्जा मिल पाया है। फ्लोरेंस नाइटिंगेल का जन्म 12 मई, 1820 को इटली के फ्लोरेंस नगर में हुआ था। वह एक धनी मां-बाप की पुत्री थीं और उन्हें एक संपन्न परिवार के सभी सुख-साधन उपलब्ध थे। इन सब सुविधाओं को देखते हुए लोगों का विचार था कि वह जल्दी ही कहीं विवाह करके सुखपूर्वक जीवन बितायेंगी। उन दिनों महिलाओं द्वारा नौकरी करने को अच्छी नजर से नहीं देखा जाता था।

तभी एक दिन उन्होंने अपने माता-पिता को बताया कि वह आजीवन कुंवारी रह कर एक नर्स के रूप में रोगियों की सेवा करने का व्रत लेना चाहती हैं। उनका यह इरादा जानकर उनके मां-बाप बहुत ही दुःखी हुए लेकिन वे जानते थे कि उनकी पुत्री दृढ़ विचारों वाली है और उसे उसके निश्चय से डिगाया नहीं जा सकता।

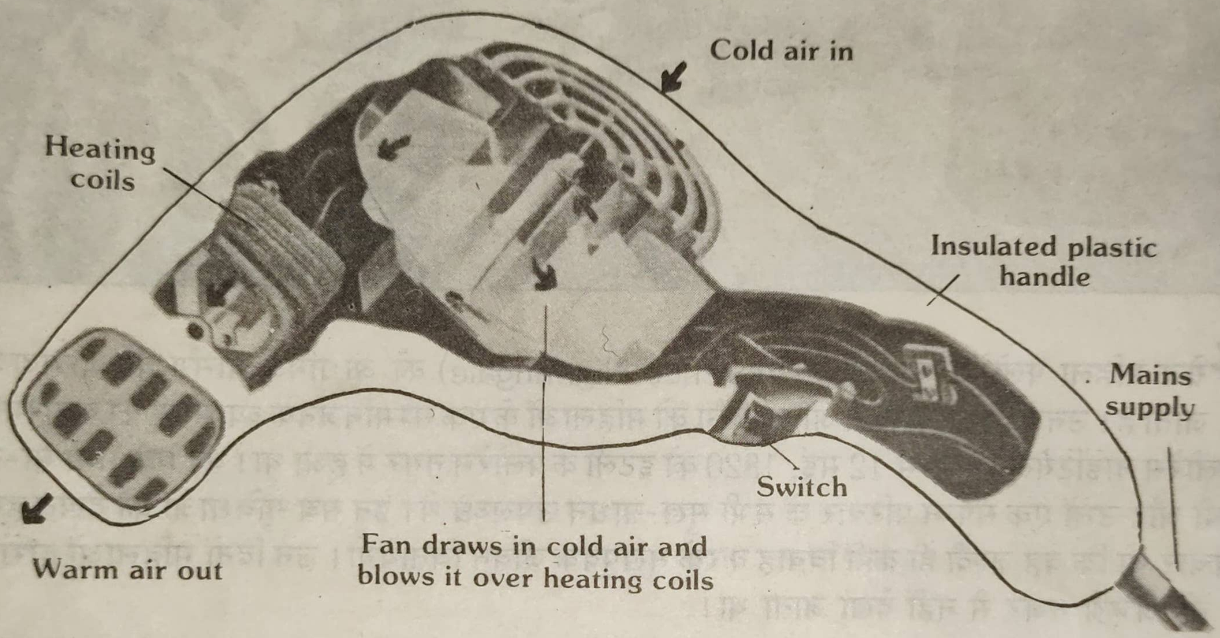
अपने इसी इरादे को पूरा करने के लिए उन्होंने लन्दन में एक छोटा-सा नर्सिंग होम खोला। इसी बीच सन् 1854 में क्रीमिया का युद्ध (Crimean war) आरम्भ हो गया। इस युद्ध के दौरान स्कूटरी (Scutari) के एक सैनिक अस्पताल में फ्लोरेंस नाइटिंगेल को नर्सिंग विभाग का इंचार्ज बना दिया गया।

स्कूटरी के अस्पताल में क्रीमिया-युद्ध में घायल अंग्रेज सिपाहियों की भारी भीड़ थी। नाइटिंगेल ने बड़ी मेहनत से वहां की स्थिति सुधारनी आरम्भ की। उन्होंने सबसे पहले वहां सफाई की उचित व्यवस्था करवायी। कपड़ों की सफाई के लिए एक लॉण्ड्री खुलवाई। रोगियों तथा घायलों के लिए भोजन तथा चिकित्सा का समुचित प्रबन्ध करवाया। वहां पहली बार रोगियों को साबुन, छुरी-कांटे, कंघे, दांत साफ करने के ब्रुश आदि देने की व्यवस्था की गयी। अपने अत्यन्त विनम्र स्वभाव के कारण वह सभी रोगियों को खुश रखती थीं। वह इतनी अनुशासनप्रिय थीं कि प्रत्येक कर्मचारी से यह अपेक्षा करती थीं कि वह उनके आदेशों का पालन करे। वहां के वित्तमंत्री ने उनके कार्य की बड़ी प्रशंसा की। रातभर हाथ में लालटेन लिये घायलों की सेवा में रत रहने के कारण फ्लोरेंस नाइटिंगेल का

नाम ही 'द लेडी विद दं लैम्प' (the lady with the lamp) पड़ गया था। इस महिला ने वहां कितना कठिन कार्य किया होगा, इसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है।

यद्यपि नाइटिंगेल स्कूटरी अस्पताल में किये गये अपने कार्यों के लिए विश्व-विख्यात हैं लेकिन उनके अंन्य कार्य भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं। अधिक कार्य करने से वह अस्पताल में बीमार भी पड़ गईं पर ज्योंही वह बीमारी से उठीं, उन्होंने एक नया सेवा-अभियान चला दिया। इसके अन्तर्गत ब्रिटेन के अस्पतालों में बहुत से सुधार किये गये। सेंट थॉमस अस्पताल में नर्सिंग के प्रशिक्षण के लिये उन्होंने 'नाइटिंगेल ट्रेनिंग स्कूल' की स्थापना की, जिसमें आज भी नर्सों को आधुनिक तरीके से रोगियों की सेवा की शिक्षा दी जाती है। यह अस्पताल सन् 1860 में स्थापित किया गया था। वह विश्व की पहली महिला थीं, जिन्हें उनकी जनसेवाओं के लिए सन् 1907 में 'ऑर्डर ऑफ मेरिट' (Order of merit) से सम्मानित किया गया।

बाल सुखाने का उपकरण (Hair Drier) कैसे काम करता है?



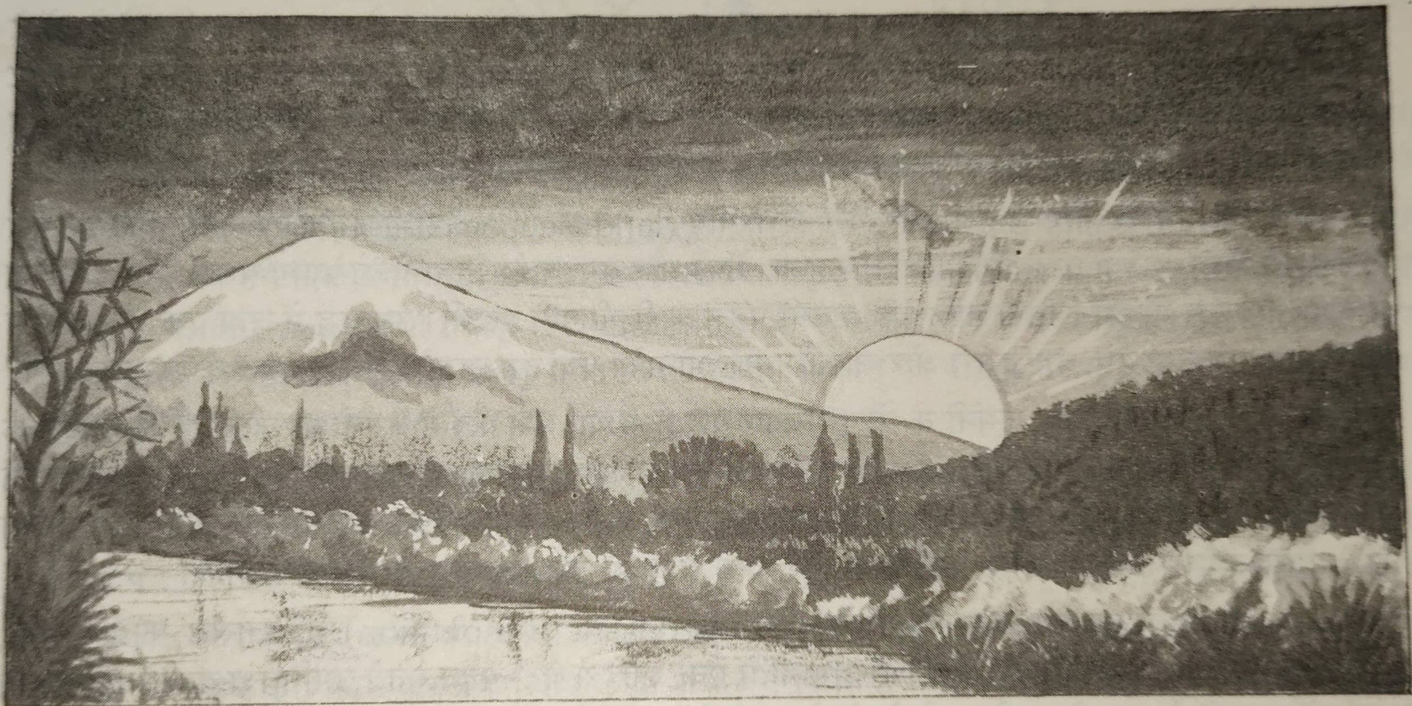
हम इस तथ्य से भली-भांति परिचित हैं कि जब किसी भी तार से विद्युत-धारा प्रवाहित होती है तो वह तार गर्म हो जाता है। इस प्रभाव को विद्युत-तापीय प्रभाव (electro thermal effect) कहा जाता है। इसी प्रभाव के आधार पर विद्युत हीटर, विद्युत केतली, विद्युत बल्ब, इमर्शन हीटर आदि विद्युत उपकरण विकसित किए गए हैं। हेअर ड्रायर अर्थात् बाल सुखाने का उपकरण भी इस प्रभाव पर आधारित है।

बाल सुखाने के उपकरण की ऊपरी सतह प्लास्टिक से बनी होती है। इसका आकार पिस्तौल जैसा होता है। इसके अन्दर नाइक्रोम नामक धातु के तार की एक छोटी-सी कुंडली (coil) लगी होती है, जो विद्युत-धारा प्रवाहित होने पर गर्म हो जाती है। इस कुंडली के ठीक पीछे एक छोटा-सा पंखा होता है। पंखे और तार की कुंडली में विद्युत-धारा प्रवाहित करने के लिए दो स्विच लगे होते हैं। एक स्विच को ऑन करने से पंखा चलने लगता है और प्लास्टिक के ढक्कन के अगले भाग से ठंडी हवा आने लगती है। जब दूसरा स्विच ऑन किया जाता है तो नाइक्रोम के तार से विद्युत-धारा प्रवाहित होने लगती है और इससे बनी कुंडली गर्म हो जाती है। पंखे से आती हवा जब इस गर्म तार के संपर्क में आती है तो वह भी गर्म हो जाती है। इसी गर्म हवा से बालों को सुखाया जाता है।

इस उपकरण का उपयोग सिर्फ बाल सुखाने में ही नहीं, बल्कि अनुसंधान प्रयोगशालाओं में भी किया जाता है।

उदय और अस्त होता सूरज दोपहर के सूरज से बड़ा क्यों दीखता है?

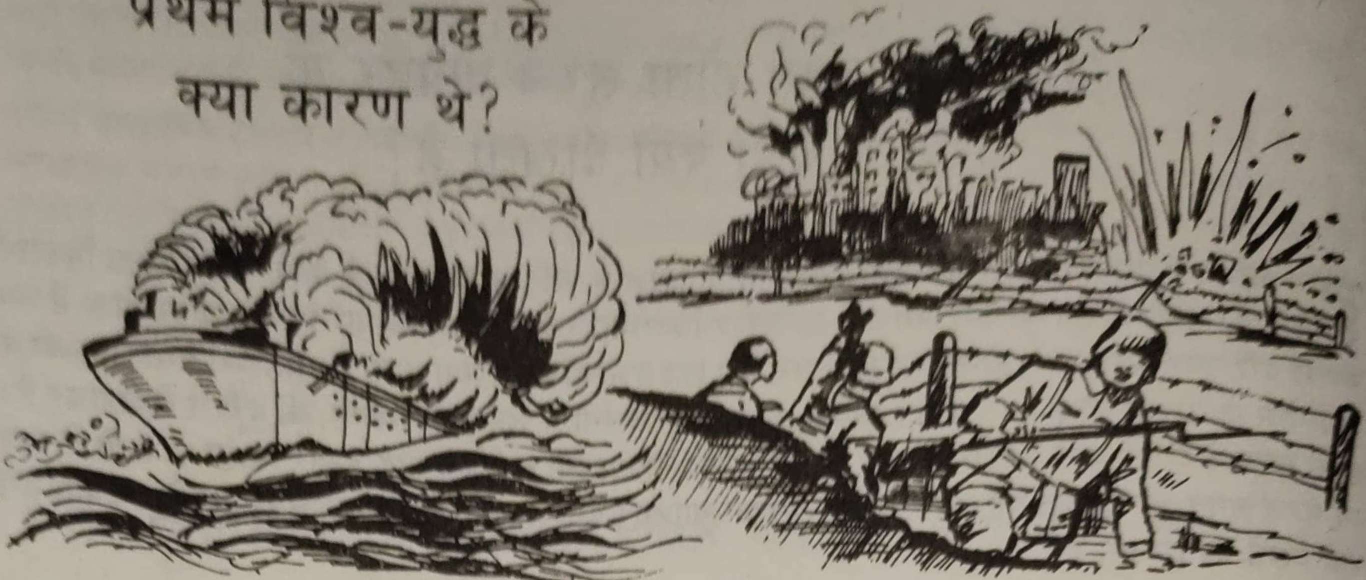
हम जानते हैं कि सूर्य पृथ्वी से बहुत बड़ा है लेकिन यह अत्यधिक दूर होने के कारण हमें छोटा दिखाई देता है। पृथ्वी से सूर्य की दूरी लगभग 15 करोड़ किलोमीटर है। जब सूर्य हमारे सिर के ऊपर होता है तब इसकी दूरी उदय और अस्त होने की दूरी से लगभग छह हजार किमी. कम होती है। यह दूरी हमारी पृथ्वी के अर्धव्यास के बराबर ही है। 15 करोड़ किमी. की दूरी की तुलना में छह हजार किमी. की दूरी न के बराबर है। इससे सूरज के दीखने वाले आकार में कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ना चाहिए। यदि अन्तर पड़ता भी है तो दोपहर का सूरज उगते और छिपते हुए सूरज से बड़ा दीखना चाहिए। क्या तुम जानते हो कि इसका विपरीत प्रभाव हमें क्यों देखने को मिलता है।



उदय और अस्त होते हुए सूर्य का बड़ा दीखना एक प्रकार का प्रकाशिकीय भ्रम (optic illusion) है। यदि तुम सुबह, शाम और दोपहर को सूरज का फोटो लो तो तुम देखोगे कि इन तीनों समयों में सूरज के प्रतिबिम्ब का आकार समान ही होता है। ऐसा ही प्रकाशिकीय भ्रम चन्द्रमा के लिए भी होता है। पूर्णिमा का चन्द्रमा जब निकलता है तब बड़ा दीखता है।

इस प्रकाशिकीय भ्रम का कारण यह है कि हम उदय और अस्त होते हुए सूरज के आकार की तुलना पृथ्वी की वस्तुओं से करते हैं। सूरज के तश्तरीनुमा आकार के पास पेड़, घर या कोई जलयान जब हम देखते हैं तो सूरज का आकार हमें बड़ा दिखाई देता है। दोपहर के समय जब सूरज हमारे सिर के ऊपर होता है तो तुलना के लिए हम इसके पास की कोई वस्तु देख नहीं पाते। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि सूर्य का उदय और अस्त होते समय बड़ा दीखना एक वास्तविकता नहीं बल्कि हमारा एक भ्रम है। सूरज का आकार तो सदा ही समान रहता है।

प्रथम विश्व-युद्ध के क्या कारण थे?



प्रथम विश्व-युद्ध सन् 1914 से सन् 1918 तक लड़ा गया। इसमें संसार के लगभग सभी बड़े देशों ने भाग लिया। इस युद्ध में एक ओर इंगलैंड, फ्रांस, रूस, अमरीका तथा जापान, आदि देश थे, जिन्हें मित्र राष्ट्र (the allies or allied nations) कहा जाता था। दूसरी ओर केन्द्रीय शक्तियां (Central powers) यानी जेर्मनी, ऑस्ट्रिया, तुर्की, बुल्गारिया तथा हंगरी, आदि देश थे। चार वर्ष के युद्ध के बाद मित्र राष्ट्रों की विजय हुई।

यह युद्ध बड़े पैमाने पर आरम्भ हुआ और थल-जल-वायु (land, sea, air) सभी जगहों पर लड़ा गया। इस युद्ध में कई नये अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग पहली बार हुआ। टैंकों और बम-वर्षक विमानों का प्रयोग सबसे पहले इसी युद्ध में हुआ था। इस युद्ध में जितनी हानि हुई, उतनी पहले कभी भी नहीं हुई थी। इस युद्ध में जहां एक ओर हजारों नगर और गांव नष्ट हुए, वहां दूसरी ओर लाखों मनुष्य भी मरे। क्या तुम जानते हो कि इस युद्ध के क्या कारण थे?

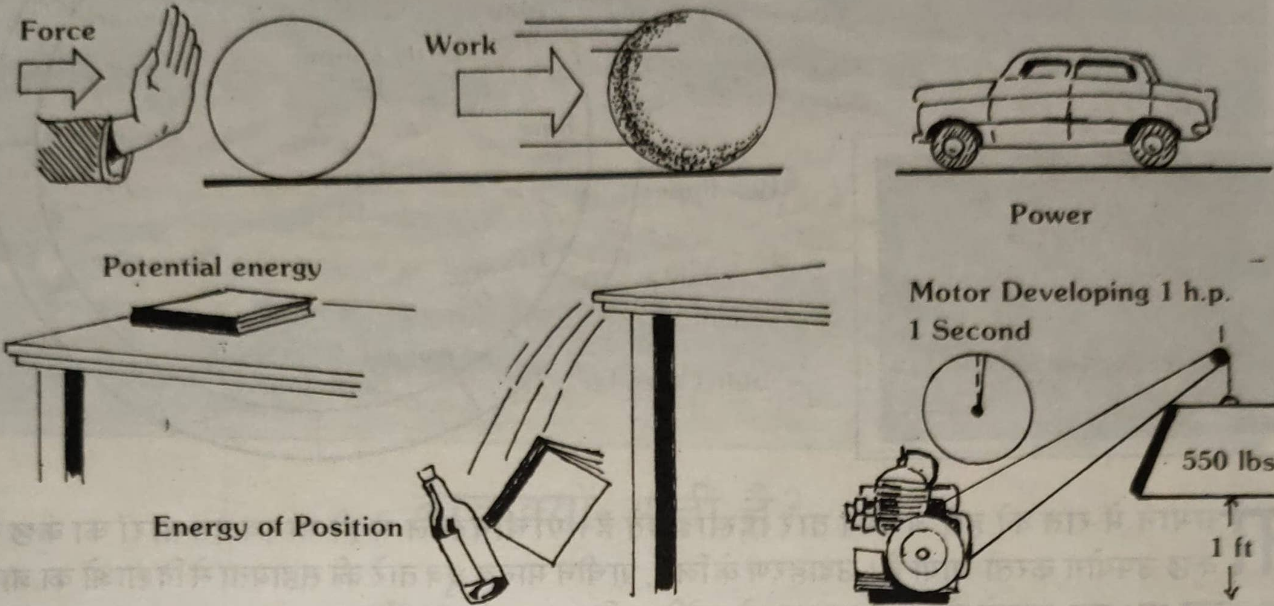
सन् 1870–71 में फ्रांस और जर्मनी के बीच भयंकर युद्ध हुआ था। इस युद्ध में जर्मनी की जीत हुई और फ्रांस के आलसेस (Alsces) और लॉरेन (Lorraine) नामक दो प्रान्तों पर जर्मनी ने अधिकार कर लिया। इन दोनों प्रान्तों में लोहे की खानें थीं, जिन्हें फ्रांस किसी भी कीमत पर वापिस लेना चाहता था। उधर जर्मनी इन्हें किसी भी कीमत पर वापिस नहीं देना चाहता था। इस स्थिति में दोनों देशों में युद्ध छिड़ना स्वाभाविक ही था।

इस युद्ध का दूसरा कारण साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्द्धा (imperialistic competition) थी। इंगलैंड, फ्रांस, जर्मनी, रूस, ऑस्ट्रिया और इटली संसार के विभिन्न भागों में एक-दूसरे से बढ़-चढ़कर नये उपनिवेश बनाने की लालसा रखते थे। इनमें से कुछ देश तो दूसरे देशों के उपनिवेश भी छीनने पर उतारू थे।

19वीं शताब्दी में तुर्की की शक्ति कम हो जाने पर रूस, ऑस्ट्रिया और बुल्गारिया जैसे देश बाल्कान क्षेत्र (Balkans region) में अपना आधिपत्य जमाना चाहते थे। 19वीं सदी में जर्मनी, ऑस्ट्रिया और इटली एक गुट में शामिल हो गये और इंगलैंड, फ्रांस और अमरीका दूसरे गुट में। देखते ही देखते इन दोनों शक्तिशाली गुटों में टकराव की स्थिति बढ़ती गयी। यूरोप के विभिन्न शक्तिशाली देश एक-दूसरे से बढ़-चढ़कर अस्त्र-शस्त्र बनाने में जुट गये और आपसी घृणा और विद्वेष की जैसे बाढ़-सी आ गयी।

सर्बिया (Serbia) के एक नागरिक द्वारा ऑस्ट्रिया के आर्कड्यूक (Archduke) का वध कर दिया गया। यह वध यूरोपीय देशों में खुले संघर्ष के छिड़ने का एक मुख्य कारण सिद्ध हुआ। युद्ध-सामग्री तो सब देशों के पास तैयार थी ही, इस घटना ने आग में घी का काम किया। परिणामस्वरूप 18 जुलाई, 1914 को ऑस्ट्रिया ने सर्बिया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। इन्हीं दो देशों के बीच छिड़ा युद्ध देखते-देखते प्रथम विश्व-युद्ध में बदल गया।

बल, कार्य, ऊर्जा और शक्ति क्या हैं?



यह एक आम अनुभव की बात है कि जमीन पर पड़े हुए गेंद को जब हम हाथ से धकेलते हैं तो वह गतिशील हो जाता है। इसी प्रकार लुढ़कते गेंद के सामने हाथ रखने से वह रुक जाता है। ऐसा क्यों होता है? इन दोनों ही क्रियाओं में हम गेंद पर एक बल (force) लगाते हैं। बल एक ऐसी भौतिक राशि है, जो किसी वस्तु पर लगाने पर उसे विस्थापित (displace) करने का प्रयास करती है या उसे विस्थापित कर देती है। यह भौतिक राशि द्रव्यमान (mass) तथा त्वरण (acceleration) के गुणनफल के बराबर होती है। इस राशि को न्यूटन (Newton) या डाइन (Dyne) इकाई में मापते हैं। किसी भी वस्तु को गति कराने के लिए बल की आवश्यकता होती हे और इस बल को किसी विशेष दिशा में लगाना होता है।

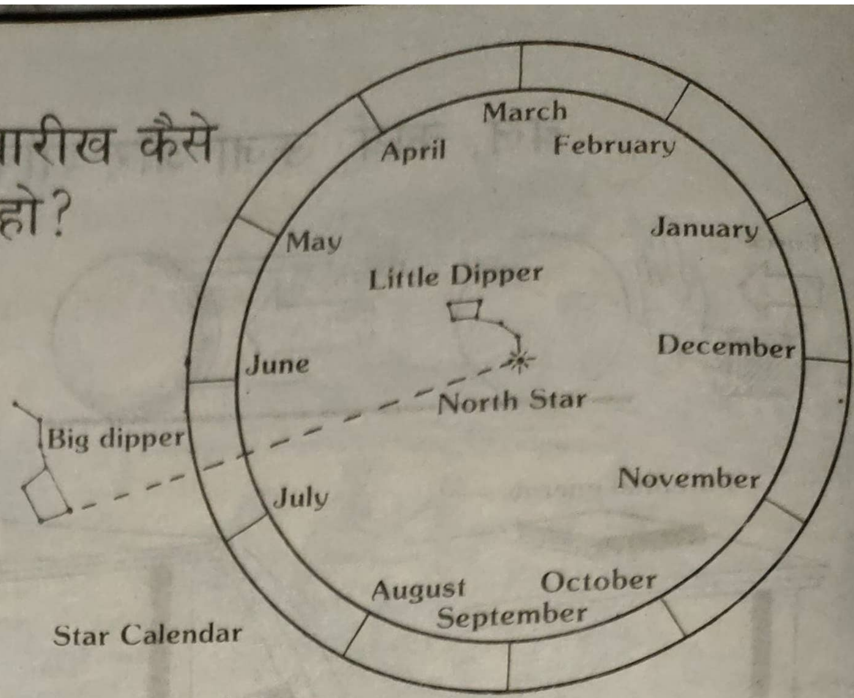
जब किसी वस्तु पर बल लगाया जाता है तो उस बल से वस्तु में विस्थापन आने पर कहा जाता है कि बल द्वारा कार्य (work) किया जा रहा है। किसी वस्तु पर किए गए कार्य की मात्रा, उस वस्तु पर लगाए गए बल और वस्तु में हुए विस्थापन के गुणनफल के बराबर होती है। किसी वस्तु पर किए गए कार्य को जूल (Joule) इकाई में मापते हैं।

किसी वस्तु के द्वारा कार्य करने की क्षमता को ऊर्जा कहते हैं। संसार की सभी वस्तुओं में कुछ न कुछ ऊर्जा होती है, जिससे वे कुछ न कुछ काम कर सकती हैं। ऊर्जा के कई रूप होते हैं जैसे—यांत्रिक ऊर्जा, ऊष्मा ऊर्जा, प्रकाश ऊर्जा, विद्युत ऊर्जा, चुम्बकीय ऊर्जा, रासायनिक ऊर्जा, नाभिकीय ऊर्जा, आदि। यांत्रिक ऊर्जा दो प्रकार की होती है। पहली प्रकार की ऊर्जा को स्थितिज (potential) ऊर्जा कहते हैं तथा दूसरे प्रकार की ऊर्जा को गतिज (kinetic) ऊर्जा कहते हैं। स्थितिज ऊर्जा वस्तु की स्थिति के कारण होती है, जबकि गतिज ऊर्जा वस्तु की गति के कारण होती है। किसी भी प्रकार की ऊर्जा को दूसरे प्रकार की ऊर्जा में बदला जा सकता है। घड़ी में चाबी देना, उसमें स्थितिज ऊर्जा जमा करना है। यही ऊर्जा घड़ी के चलने पर गतिज ऊर्जा में बदलती रहती है।

कुछ लोग ऊर्जा (energy) और शक्ति (power) को एक ही चीज समझते हैं लेकिन ये दोनों राशियां एक जैसी नहीं हैं। किसी वस्तु की समस्त ऊर्जा उसके द्वारा किए गए कार्य की क्षमता के बराबर होती है, जबकि वस्तु की शक्ति इकाई समय में किए गए कार्य के बराबर होती है। दूसरे शब्दों में कार्य करने की दर को हम शक्ति कहते हैं। शक्ति को वॉट में मापते हैं। शक्ति को हॉर्सपॉवर में भी मापा जाता है। एक हॉर्सपॉवर 746 वॉट के बराबर होती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि ये चारों भौतिक राशियां एक दूसरे से किसी न किसी प्रकार संबंधित हैं।

तारों की मदद से तुम तारीख कैसे ज्ञात कर सकते हो?





Star Calendar

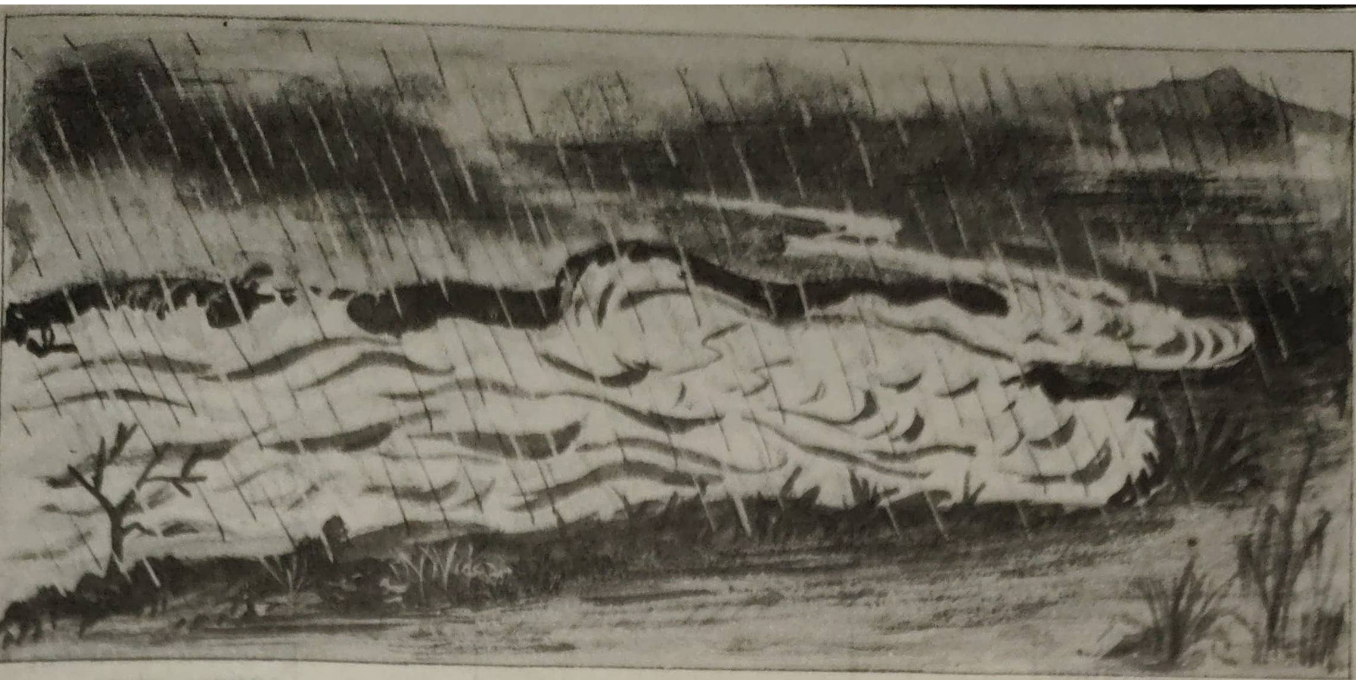
आसमान में रात को हमें असंख्य तारे दिखाई देते हैं। प्राचीनकाल से ही मानव इन तारों का कुछ न कुछ उपयोग करता आया है। उदाहरण के लिए, प्राचीन मानव ध्रुव तारे की सहायता से दिशाओं का ज्ञान प्राप्त करता था। ग्रह-नक्षत्रों के आधार पर उसने ज्योतिष-विज्ञान का विकास किया। आज का मानव इन तारों के विषय में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने का प्रयास कर रहा है। आज उसने ऐसे दूरदर्शी (telescope) विकसित कर लिए हैं, जो तारों के विषय में अनेक जानकारी प्रदान करते हैं।

तारों की सहायता से हम तारीख भी ज्ञात कर सकते हैं। क्या तुम जानते हो कि तारों की सहायता से किसी महीने के किसी दिन की तारीख कैसे ज्ञात की जाती है?

तारीख ज्ञात करने के लिए एक बड़ा कागज लो। इस कागज पर कम से कम आठ इंच व्यास का एक वृत्त (circle) खींचो। इसे घड़ी के डायल की भांति बारह समान भागों में विभाजित कर लो। प्रत्येक निशान पर बारह महीनों के नाम घड़ी के घंटों वाले स्थान पर इस प्रकार लिखो कि बारह बजे वाले स्थान पर मार्च का महीना लिखा जाए। इसके बाद घड़ी की सुई के चलने की विपरीत दिशा में शेष महीनों के नाम क्रमानुसार लिख लो। वृत्त के केन्द्र पर एक निशान लगाओ और उस निशान को ध्रुव तारा (North Star) मान लो। प्रत्येक महीने के बीच में लगे निशानों को यह मान लो कि वे 30 छोटे-छोटे भागों में बंटे हुए हैं।

किसी दिन जब आकाश साफ हो, रात्रि को इस चित्र को घर से बाहर ले आओ। इसे इस प्रकार पकड़ो कि मार्च का महीना ऊपर की ओर रहे। इस चित्र के लिए ऐसी कल्पना करो जैसे कि वह आकाश में और ध्रुव तारा इसके केन्द्र में है। अब आकाश में बिग-डिपर (Big dipper) की स्थिति ज्ञात करो। अब अपने चित्र पर बिग-डिपर को उसी स्थिति में रेखांकित कर लो। जब तुम यह कर चुको तो बिग-डिपर प्वाइंटर (pointer) से ध्रुव तारे की ओर एक रेखा खींचो। यह रेखा वृत्त के महीनों के बीच के अन्तराल से जिस बिंदु से गुजरेगी वह बिंदु उस दिन की तारीख प्रदर्शित करेगा। मान लो कि यह रेखा जून और जुलाई की स्थितियों के मध्य से गुजरती है तो उस दिन जून के महीने की 15 तारीख होगी।

इस विधि से तारीख ज्ञात करने के लिए यह आवश्यक है कि वृत्त का आकार बहुत बड़ा हो क्योंकि यदि वृत्त छोटा होगा तो दो महीनों के बीच की दूरी को 30 भागों में विभाजित करना बहुत मुश्किल होगा लेकिन फिर भी तुम महीने की सही तारीख के आसपास पहुंच सकते हो। इस विधि के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अर्धरात्रि को बिग-डिपर के प्वाइंटर से ध्रुव तारे तक तुमने कितने सही रूप में रेखा खींची है। इस प्रकार हम तारों की सहायता से दिनांक ज्ञात कर सकते हैं।



बाढ़ क्यों आती है?

यदि हम मानव इतिहास पर दृष्टि डालें तो हमें भयंकर बाढ़ों का लेखा-जोखा मिलता है। बाढ़ों से संबंधित बहुत-सी कहानियां भी सुनने को मिलती हैं। आदिमानव जानबूझकर उन घाटियों में अपना निवास स्थान बनाते थे, जिनमें बहुत बाढ़ आती थी। इसका कारण यह था कि बाढ़ से इन घाटियों की मिट्टी उपजाऊ हो जाती थी।

अब प्रश्न उठता है कि बाढ़ क्या है? बाढ़ आना नदी की वह स्थिति है, जिसमें बहता हुआ पानी किनारों को तोड़कर चारों ओर फैल जाता है। बाढ़ें बहुत ही विनाशकारी हो सकती हैं। उनसे अक्सर मिट्टी की उपजाऊ ऊपरी सतह बह जाती है, जिससे कई वर्षों तक वह मिट्टी खेती करने योग्य नहीं रहती। कभी-कभी तो बाढ़ों में गांव के गांव बह जाते हैं और बहुत से लोगों की जानें चली जाती हैं।

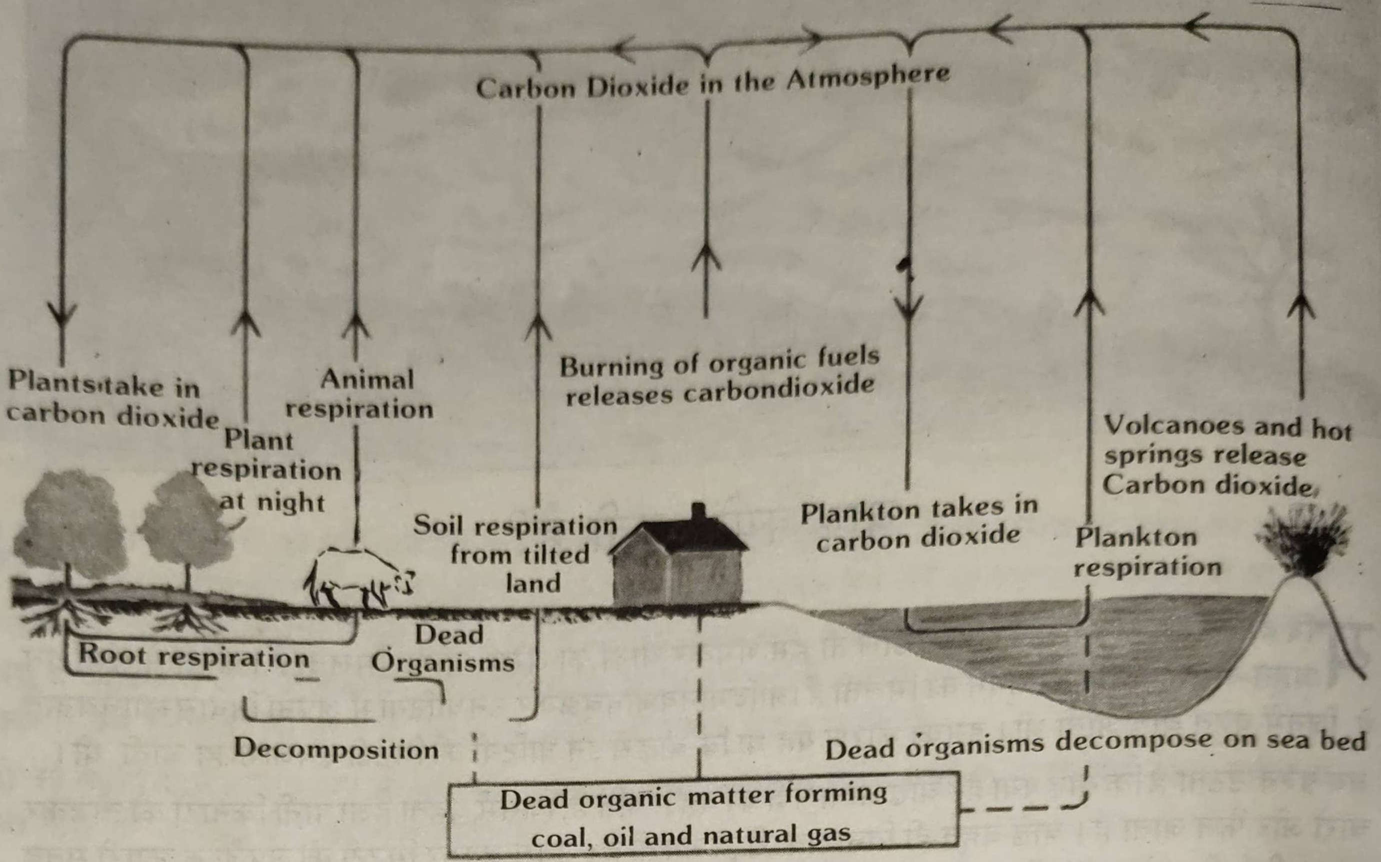
कुछ बाढ़ें हमारे लिए लाभदायक भी होती हैं। जैसे नील नदी की बाढ़ को मिस्र के लिए वरदान कहा जाता है क्योंकि बाढ़ जब वापिस लौटती है तो इसके साथ लाई गई उपजाऊ मिट्टी वहीं छूट जाती है। नील नदी की बाढ़ में वहां के खेतों पर उपजाऊ मिट्टी की तह जम जाती है, जिसमें मिस्रवासी अनाज, फल और कपास की खेती करते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि बाढ़ क्यों आती है? जब किसी नदी में भारी वर्षा के कारण आस-पास के नदी नालों से बहुत पानी आ जाता है तो नदी किनारों को तोड़कर बहने लगती है। यद्यपि नदी में पानी के प्रवाह का काफी क्षेत्रफल होता है लेकिन यदि पानी की मात्रा बहुत अधिक हो जाए तो नदी में बाढ़ आ जाती है। नदियों में आने वाली बाढ़ हर वर्ष एक सी नहीं होती। बाढ़ों की माप उनमें बहने वाले पानी की ऊंचाई, पानी के बहाव के आयतन तथा प्रभावित होने वाले क्षेत्र से मापी जाती है। इन्हीं मापों के आधार पर पुलों और बांधों का निर्माण किया जाता है। इन्हीं के आधार पर बाढ़-नियंत्रण के तरीके अपनाए जाते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि क्या बाढ़ को आने से रोका जा सकता है? सम्भवतः नदियों में बाढ़ के आने को रोकना लगभग असम्भव है फिर भी मनुष्य बाढ़-नियंत्रण के बहुत से तरीकों का विकास कर रहा है।

मुख्य रूप से बाढ़-नियंत्रण के तीन तरीके हैं। पहले तरीके में बांध बनाकर नदियों में आने वाली बाढ़ को रोका जा सकता है। इनके द्वारा जमीन के निचले क्षेत्रों में पानी जमा होने से रोका जा सकता है। दूसरा तरीका आपातकालीन जलमार्गों का निर्माण करने का है, जिनमें अतिरिक्त जल को बहाया जा सके। तीसरे तरीके के अन्तर्गत विशाल जलाशयों का निर्माण आता है, जिनमें बाढ़ के पानी को एकत्रित किया जा सके और बाद में धीरे-धीरे इस पानी को बड़ी-बड़ी जलधाराओं के रूप में छोड़ दिया जाए।

कार्बन चक्र क्या है?



शायद उन सभी तत्त्वों में कार्बन सबसे महत्त्वपूर्ण है, जिनका ज्ञान मनुष्य को है। हीरे जैसे बहुमूल्य पदार्थ कार्बन का ही एक रूप हैं। लिखने वाली पेन्सिलों के सिक्कों में भी कार्बन होता है। ऊष्मा और शक्ति के स्रोत कोयले में भी मुख्यतः कार्बन ही होता है।

इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य तो यह है कि कार्बन जीवन के लिए भी अत्यावश्यक है। सभी जीवित प्राणियों के शरीर कार्बनयुक्त यौगिकों से मिलकर बने हैं। वैज्ञानिकों का विश्वास है कि ब्रह्मांड में जहां कार्बन मिलता है, जीवन की संभावना केवल वहीं हो सकती है। जीवन कार्बन चक्र के बिना संभव नहीं है। क्या तुम जानते हो कि यह कार्बन चक्र क्या है?

कार्बन चक्र वह प्रक्रम है, जिसमें जीवित प्राणियों द्वारा प्रकृति से कार्बन प्राप्त किया जाता है, उसे प्रयोग किया जाता है और फिर उसे पुनः उसी प्रकृति में भेज दिया जाता है। इस प्रकार प्रकृति में कार्बन की प्रतिशत मात्रा निश्चित रहती है।

जीवन के लिए आवश्यक कार्बन का मुख्य स्रोत वायु में उपस्थित कार्बन डाइऑक्साइड गैस है। इसी गैस को सभी जीवित प्राणियों द्वारा प्राप्त किया जाता है और फिर वापिस वायुमंडल में भेज दिया जाता है। जीवन के लिए आवश्यक यह एक निरंतर चक्र है। इस चक्र में वायु की सीमित कार्बन डाइऑक्साइड सतत् रूप से बार-बार प्रयोग होती रहती है।

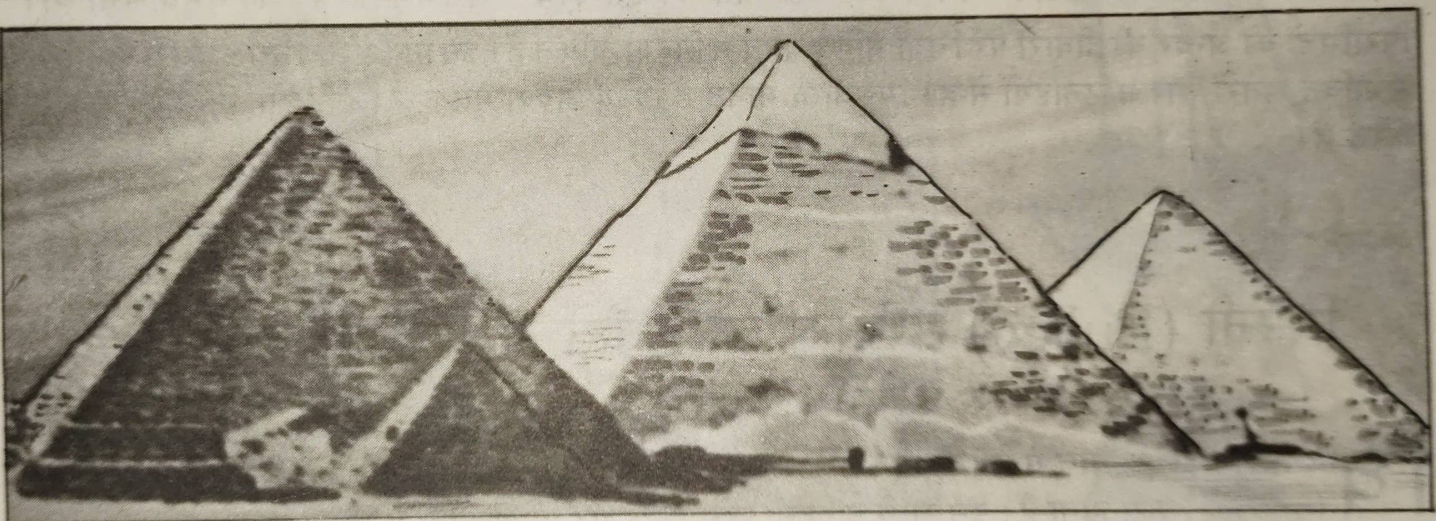
हरे पेड़-पौधे और वनस्पतियां वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड गैस लेकर मिट्टी से प्राप्त पानी के साथ उसका संयोग करा के कुछ जटिल कार्बन यौगिकों का निर्माण करती हैं। इस प्रक्रम के लिए, जिसे प्रकाश संश्लेषण (photosynthesis) कहते हैं, आवश्यक ऊर्जा सूर्य के प्रकाश से प्राप्त होती है। इसी प्रक्रम द्वारा पौधों, जड़ों,

तनों और पत्तियों का निर्माण होता है। इस प्रक्रम में ली गई कार्बन डाइऑक्साइड को पौधे दो प्रकार से वायुमंडल में वापिस भेजते हैं। एक तरीके में वे रात्रि को कार्बन डाइऑक्साइड छोड़ते हैं। दूसरे तरीके में जब वे मृत हो जाते हैं तो सड़ने पर उनसे कार्बन डाइऑक्साडड पैदा होती है।

सभी जीव-जन्तु वायु से कुछ न कुछ मात्रा में कार्बन डाइऑक्साडड लेते हैं। उनको यह गैस अधिकतर पेड़-पौधों के खाने से या पेड़-पौधे खाने वाले जन्तुओं को खाने से प्राप्त होती है। कार्बन के कुछ यौगिकों को खाया भी जाता है। वे पेट में जाकर पच जाते हैं, जिससे जीवन के लिए आवश्यक ऊर्जा प्राप्त होती है।

सभी जीव सांस लेने की प्रक्रिया में कार्बन डाइऑक्साइड छोड़ते हैं। मरने के बाद प्राणियों से भी कार्बन डाइऑक्साइड मुक्त होती है। वनस्पतियों और जन्तुओं के क्षय होने से कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस जैसे ईंधनों का निर्माण होता है। जब इन ईंधनों को जलाया जाता है तो इनके जलने से वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड जाती है। इस प्रकार समस्त जीव-जगत वायुमंडल की कार्बन डाइऑक्साइड गैस का आदान-प्रदान करता रहता है और यह कार्बन चक्र निरंतर चलता रहता है।

मिस्र के पिरामिड क्यों बनाए गए?



प्राचीन मिस्रवासियों का ऐसा विश्वास था कि उनका सम्राट किसी देवता का वंशज है। इसलिए सम्राट को अन्य लोगों से बिल्कुल ही अलग माना जाता था और जनता उसकी देवता की ही भांति पूजा करती थी। मिस्र के धार्मिक विचारों के अनुसार यह धारणा मृत्यु के बाद भी बनी रहती थी और यह माना जाता था कि मरने के बाद राजा दूसरी दुनिया में अन्य देवताओं से जा मिलता है।

प्राचीन मिस्र में यह परंपरा थी कि सम्राट अपने जीवनकाल में ही एक विशाल एवं भव्य मकबरे का निर्माण करवाता था, जिसमें उसे मृत्यु के बाद दफनाया जा सके। इस मकबरे का नाम ही पिरामिड रखा जाता था, जो त्रिभुज के आकार का होता था। इन विशाल पिरामिडों के निर्माण के लिए बहुत अधिक पत्थरों की आवश्यकता होती थी। सम्राट के शव को रखने के लिए चट्टान में एक कक्ष (chamber) काटा जाता था। यद्यपि ऐसे पिरामिड दक्षिण अमरीका में भी बनाए गए लेकिन वास्तविक पिरामिड केवल मिस्र में ही मिलते हैं।

आज मिस्र में लगभग 70 पिरामिड हैं लेकिन इनमें से केवल तीन ही अत्यधिक प्रसिद्ध हैं। ये काहिरा के पास गिंजा (Gizeh) में हैं। इनमें सबसे बड़ा पिरामिड सम्राट चिओप्स (Cheops) का है, जो कभी विश्व के सात आश्चर्यों में से एक माना जाता था। ऐसा अनुमान है कि ये पिरामिड ईसा पूर्व 2690 और 2560 शताब्दियों में बनाए गए। इन पिरामिडों का निर्माण सम्राट और उसकी रानियों के शवों की सुरक्षा के लिए किया गया था। उनके शरीर के साथ बहुत सी कीमती वस्तुएं भी दफन की जाती थीं।

मिस्रवासियों को पिरामिड निर्माणकला में दक्षता प्राप्त करने में बहुत लम्बा समय लगा। इनके निर्माण के लिए विशाल योजना बनानी पड़ती थी। नील नदी को पार करके बड़े-बड़े पत्थरों को ढोकर लाना पड़ता था। पिरामिडों का आधार वर्गाकार होता था। इनमें निर्माण के लिए बहुत अधिक गुलाम मजदूरों की आवश्यकता पड़ती थी। पत्थर काटने वाले कारीगरों को कभी-कभी तो नौ फुट लम्बे आरे प्रयोग में लाने पड़ते थे। इन पिरामिडों में जो खजाना रखा जाता था, उसे चोरों द्वारा चुरा लेने का भी भय बना रहता था। इसलिए जिस स्थान पर मृतक के शरीर को दफनाया जाता था, उसकी बनावट बहुत ही जटिल होती थी, जिससे चोर उस स्थान का पता लगाने में सफलता प्राप्त न कर सके। आमतौर पर शव को दफनाने का कक्ष पिरामिड के केन्द्र में होता था।

मिस्र के तीन प्रसिद्ध पिरामिड मायसेरिनस, चिओप्स और चेफ्रेन राजाओं के हैं, जिनकी ऊंचाई क्रमशः 65.5, 144.3 और 141.3 मीटर है। इनमें चिओप्स का पिरामिड सबसे ऊंचा है। इसके आधार के किनारे 226.3 मीटर हैं और इसका क्षेत्रफल 13 वर्ग एकड़ है। अनुमानतः इसका भार 550,000,000 क्विंटल है। इसके निर्माण में 23 लाख पत्थरों के टुकड़े प्रयोग में लाए गए थे। इसे बनाने में एक लाख मजदूरों ने लगातार काम किया। इन मजदूरों को हर तीन महीने बाद हटाकर नये मजदूर रखे जाते थे। इस कार्य में लगभग 30 वर्ष का समय लगा था।

पिरामिडों की अन्दर की दीवारों पर चित्रों सहित बहुत से निर्देश अंकित हैं। इन निर्देशों का संबंध दूसरी दुनिया के संभावित खतरों और कठिनाइयों से है। मिस्रवासी मानते हैं कि ये निर्देश मृतक के लिए दिशा-निर्देशन का कार्य करते हैं।

घिरनी (Pulley) से भारी बोझ कैसे ऊपर उठ जाता है?

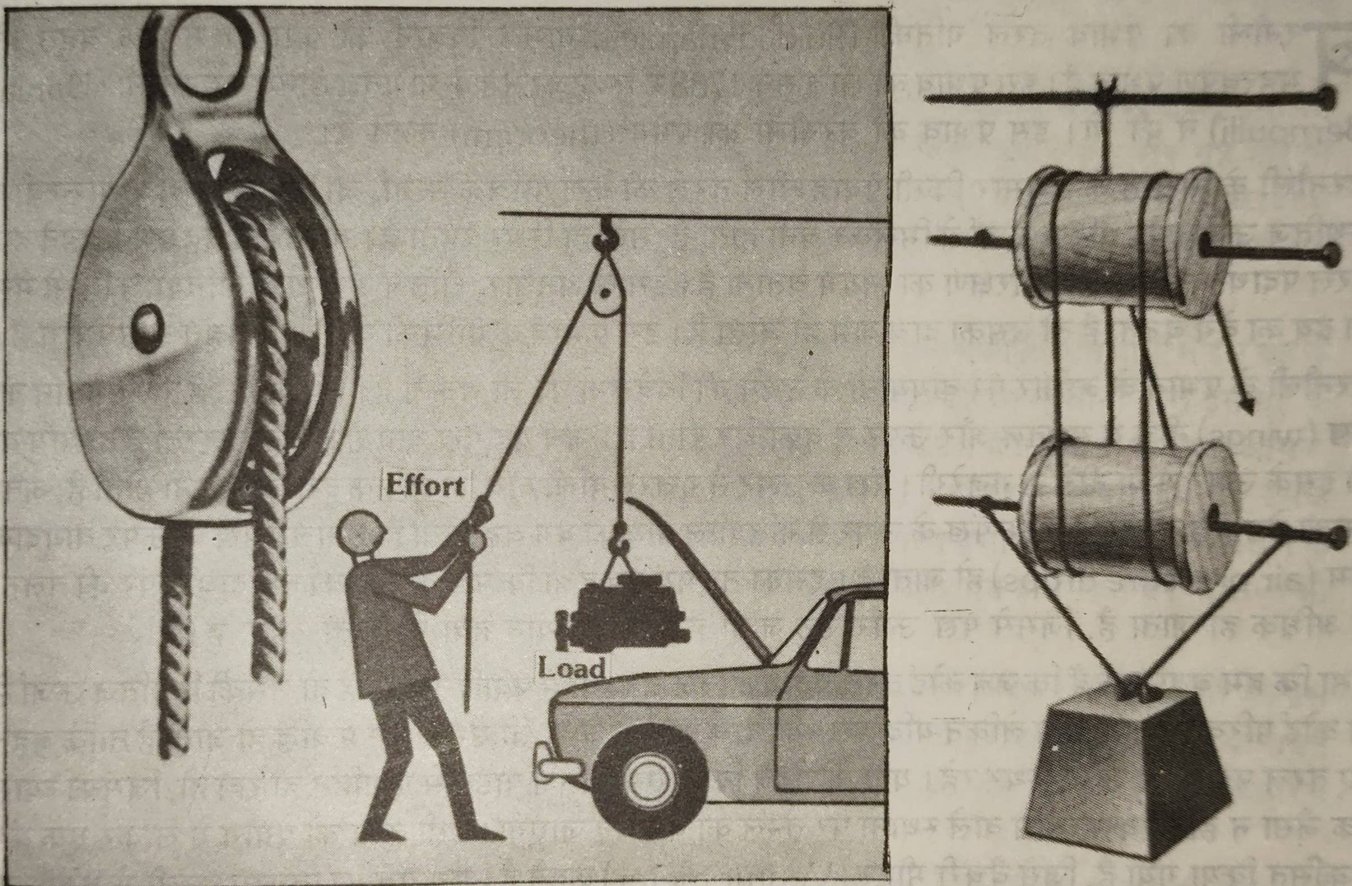
घिरनी लकड़ी या धातु से निर्मित एक प्रकार का पहिया होता है, जिसके रिम के चारों ओर एक खांचा (groove) कटा होता है। इस खांचे से किसी रस्से या जंजीर को आसानी से खींचा जा सकता है। घिरनी अपने अक्ष या एक्सल पर आसानी से घूम सकती है। घिरनियों को एक फ्रेम में फिक्स कर दिया जाता है। इस फ्रेम को ब्लॉक कहते हैं। घिरनियां भारी बोझ उठाने के काम आती हैं। क्या तुम जानते हो कि घिरनियों से भारी बोझ कैसे उठाया जाता है?

घिरनियों के कई तंत्र होते हैं। उदाहरण के लिए एक स्थिर घिरनी का बोझ उठाने के लिए प्रयोग किया जाता है। इस घिरनी के रिम के आर-पार एक रस्सी लटका दी जाती है। रस्सी के एक और वह भार बांध दिया जाता है, जिसे उठाना होता है और दूसरी ओर से रस्सी को खींचा जाता है। ऐसी घिरनी पर किया गया कार्य और उठने वाला भार बराबर होते हैं लेकिन इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि इस घिरनी पर नीचे की दिशा में बल अधिक सरलता से लगाया जा सकता है।

घिरनियों के दूसरे तंत्र में एक गतिशील घिरनी आती है। इस तंत्र में गतिशील घिरनी के साथ भार लटका दिया जाता है। इस घिरनी से होती हुई एक रस्सी गुजरती है, जिसका एक सिरा स्थिर होता है और दूसरा सिरा एक स्थिर

घिरनी से गुजरता है। दूसरी घिरनी केवल नीचे की दिशा में बल लगाने के लिए प्रयोग की जाती है। यदि ये दोनों ही घिरनियां घर्षणरहित हों तो गतिशील घिरनी पर लगाए गए बल का दुगुना बल लगता है। ऐसे घिरनी-तंत्र के दो यांत्रिक लाभ होते हैं। ऐसी घिरनियों का इस्तेमाल मुख्य रूप से क्रेनों में किया जाता है। इन्हीं घिरनियों की सहायता से नावों के पाल उठाए और गिराए जाते हैं।

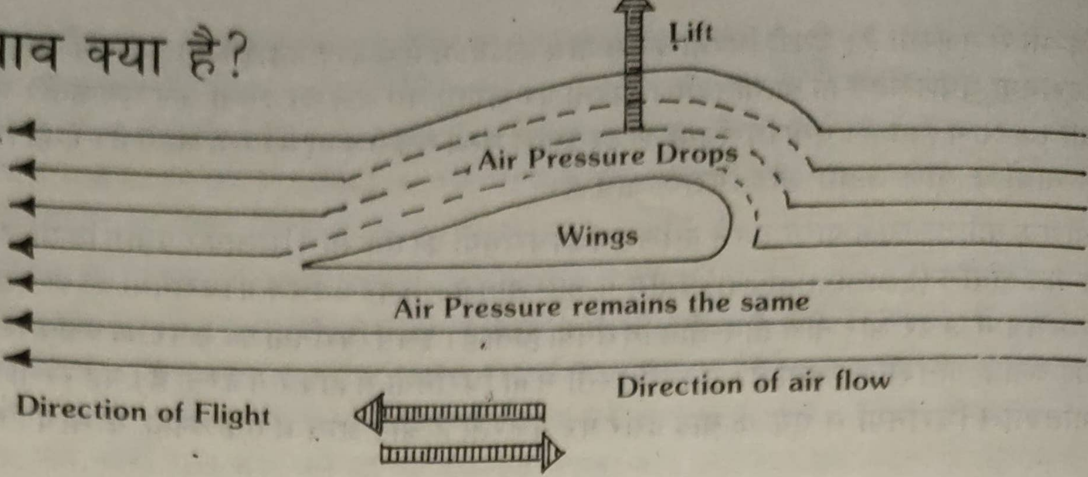
अधिक यांत्रिक लाभ प्राप्त करने के लिए कई घिरनियों को एक साथ मिलाकर प्रयोग किया जाता है। इन घिरनियों के कई संयोग (combination) प्रयोग में लाए जाते हैं। ऊपर के चित्र में घिरनियों की दो पद्धतियां दिखाई गई हैं। एक तंत्र में ऊपर और नीचे तीन-तीन घिरनियां होती हैं। इसमें घिरनियों का ऊपर का ब्लॉक स्थिर रहता है तथा नीचे का ब्लॉक गतिशील रहता है। एक ही रस्सी सभी घिरनियों से होकर गुजरती है। यह रस्सी क्रमानुसार स्थिर और गतिशील घिरनियों से एक के बाद दूसरे पर गुजरती है और अन्त में एक ब्लॉक के साथ फिक्स कर दी जाती है।



जिस वजन को उठाना होता है, उसे नीचे के ब्लॉक के साथ लटका दिया जाता है। जब घिरनियों की संख्या दोनों ब्लॉकों में समान होती है तो रस्सी का सिरा ऊपर के ब्लॉक से बांधकर घिरनियों से गुजारा जाता है। यदि घिरनियों की संख्या असमान होती है अर्थात् ऊपर के ब्लॉक में नीचे के ब्लॉक की तुलना में एक घिरनी अधिक होती है तो रस्सी को नीचे के ब्लॉक में बांधा जाता है। रस्सी को घिरनियों से बार-बार घुमाते हुए ऊपर ले जाया जाता है। भार को नीचे वाले ब्लॉक के साथ लटका दिया जाता है। इस प्रकार के तंत्रों का यांत्रिक लाभ बहुत अधिक होता है। असल में रस्सी के जितने हिस्से नीचे के ब्लॉक को साधे रहते हैं, उतना ही इस तंत्र का यांत्रिक लाभ होता है।

इनके अतिरिक्त घिरनियों के और भी तंत्र हैं, जो बोझ उठाने के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं।

बरनौली प्रभाव क्या है?



बरनौली का प्रभाव तरल गतिकी (fluid dynamics) नामक विज्ञान की प्रशाखा में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रभाव है। इस प्रभाव की खोज सन् 1738 में स्विट्ज़रलैंड के गणितज्ञ डैनियल बरनौली (Danial Bernoulli) ने की थी। इस प्रभाव को बरनौली का प्रमेय (theorem) कहते हैं।

बरनौली के सिद्धांत के अनुसार किसी प्रवाहशील तरल की कुल यांत्रिक ऊर्जा, जो कि उसके दाब, गुरुत्वीय स्थितिज ऊर्जा और गतिज ऊर्जा से मिलकर बनी होती है, सदा ही स्थिर रहती है। वास्तव में यह प्रमेय बहते हुए तरल पदार्थों के लिए ऊर्जा संरक्षण का नियम बताती है। इस के अनुसार, क्षैतिज अवस्था में गतिशील किसी गैस या द्रव का वेग बढ़ता है तो उसका दाब कम हो जाता है। इस प्रभाव के यांत्रिकी के क्षेत्र में बहुत से उपयोग हैं।

बरनौली के प्रभाव के आधार पर वायुयानों के उड़ने की विवेचना की जा सकती है। हम जानते हैं कि वायुयान का पंख (wings) नीचे से समतल और ऊपर से वक्राकार होता है। जब यह पंख वायु से हो कर गुजरता है तो वायु या तो इसके ऊपर से या नीचे से गुजरेगी। पंख के ऊपर से गुजरने वाली वायु को अधिक दूरी तय करनी होती है, अतः इसका वेग बढ़ जाता है। चूंकि पंख के ऊपर से गतिशील वायु का वेग बढ़ जाता है, इसलिए पंख के ऊपर वायुदाब कम (air pressure drops) हो जाता है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि पंख के नीचे का वायुदाब ऊपर की तुलना में अधिक हो जाता है, जिससे पंख ऊपर उठ जाता है और वायुयान हवा में तैरता रहता है।

जैसा कि हम बता चुके हैं कि जब कोई तरल पदार्थ क्षैतिज अवस्था में प्रवाहित होता है तो उसकी स्थितिज ऊर्जा में तो कोई परिवर्तन नहीं होता लेकिन यदि तरल का दाब कम हो जाए, तो उसके वेग में वृद्धि हो जाती है ताकि बहते हुए तरल पदार्थ की ऊर्जा स्थिर रहे। यदि कोई द्रव किसी ऐसे क्षैतिज पाइप से प्रवाहित हो रहा हो, जिसका व्यास एक जैसा न हो तो कम व्यास वाले स्थानों पर तरल का वेग बढ़ जाएगा। इसी तथ्य को प्रयोग में लाकर एक यंत्र विकसित किया गया है, जिसे वैंचुरी मीटर (Venturimeter) कहते हैं। इस यंत्र का विकास इटली के वैज्ञानिक जे. बी. वैंचुरी (1746-1822) ने किया था। यह यंत्र तरल पदार्थों का वेग मापने में प्रयोग किया जाता है।

द्रव पदार्थों को स्प्रे करने के लिए एक पम्प प्रयोग किया जाता है, जिसे एटोमाइजर (atomizer) कहते हैं। जिस द्रव का स्प्रे करना होता है, उसे एक कंटेनर (container) में रखते हैं। इस कंटेनर में एक नली डूबी रहती है। इसके साथ एक दूसरी नली होती है, जिसके एक सिरे पर एक नोजल (nozzle) होता है और दूसरे सिरे पर रबर का एक गुब्बारा लगा होता है। जब गुब्बारे को दबाया जाता है तो वायु तीव्र वेग के साथ बाहर निकलती है। इससे नली के ऊपर वायुदाब कम हो ज़ाता है। ऐसा होने पर कंटेनर से द्रव ऊपर आ जाता है। यही द्रव नोजल से निकलने पर नन्हीं-नन्हीं बूंदों में टूटकर स्प्रे का रूप धारण कर लेता है। पेंट-स्प्रेअर इसी सिद्धान्त पर कार्य करता है।

कॉर और बसों के कारबुरेटर बरनौली के सिद्धान्त पर ही कार्य करते हैं। क्रिकेट के गेंद का स्पिन करना भी बरनौली सिद्धान्त का हीं एक उदाहरण है।



मंगल ग्रह (Mars Planet) का रंग लाल क्यों दीखता है?

हम जानते हैं कि हमारे सौर-परिवार में नौ ग्रह हैं। उनके नाम हैं—बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेपच्यून और प्लूटो। सूर्य से दूरी के अनुसार मंगल का चौथा स्थान है। ये सभी ग्रह सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। मंगल ग्रह परिक्रमा करता हुआ धरती से 560 लाख कि.मीटर की दूरी तक आ जाता है। मंगल ग्रह देखने में लाल रंग का दिखाई देता है। क्या तुम जानते हो कि यह ग्रह लाल रंग का क्यों दीखता है?

हम जानते हैं कि बुध ग्रह सूर्य के सबसे निकट है तथा यह लगभग सूर्य के साथ ही उदय और अस्त होता है। इसलिए हम इसे सूर्य के उदय होने से पहले या अस्त होने के बाद कुछ समय तक देख सकते हैं। इसी प्रकार शुक्र ग्रह भी दिन निकलने से कुछ देर पहले या दिन छिपने के कुछ देर बाद तक ही देखा जा सकता है। मंगल ग्रह भी आकाश में कभी-कभी दिखाई देता है। सभी ग्रहों में, केवल शुक्र को छोड़कर, इसकी चमक सबसे अधिक है। इसका लालिमा लिए संतरे जैसा रंग बरबस ही हमारा मन मोह लेता है।

इस ग्रह का अध्ययन करने के लिए मानव बहुत से अन्तरिक्षयान इसकी ओर भेज चुका है। इन यानों ने इस ग्रह के विषय में अनेक महत्त्वपूर्ण जानकारियां दी हैं। सन् 1976 में वाइकिंग-I और वाइकिंग-II यानों द्वारा इस ग्रह के वायुमंडल के विषय में बहुत से महत्त्वपूर्ण तथ्यों का पता चला। इस ग्रह के वायुमंडल में एक से दो प्रतिशत आर्गन, दो से तीन प्रतिशत नाइट्रोजन, 95 प्रतिशत कार्बन डाइऑक्साइड और 0.3 प्रतिशत आक्सीजन है। इसके वायुमंडल में कुछ जलवाष्प की मात्रा भी है। मंगल ग्रह के वायुमंडल का घनत्व हमारी धरती के वायुमंडल के घनत्व का केवल एक प्रतिशत है। इसी कारण इस ग्रह पर विशाल तापमान परिवर्तन होते रहते हैं। कभी-कभी इस ग्रह पर बादल भी दिखाई देते हैं।

मंगल ग्रह की सतह चमकीले और काले क्षेत्रों से ढकी हुई है। ये क्षेत्र अपना आकार निरंतर बदलते रहते हैं। इस पर बहुत-सी चट्टानें हैं, जो लाल रंग के रेगिस्तानों से ढकी हुई हैं। इन रेगिस्तानों की धूल में लाइमोनाइट (Limonite) नामक खनिज होता है, जो धरती के रेगिस्तानों में भी है। इस धूल में लाल रंग का आयरन ऑक्साइड भी होता है।

मंगल ग्रह की सतह पर धूल भरे तूफान आते रहते हैं। इन तूफानों में वायु का वेग 150 किमी. प्रति घंटा तक चला जाता है। तूफानों में धूल ऊपर उठती रहती है, चूंकि मंगल पर गुरुत्वबल काफी कम है, इसलिए ये धूल के बादल हफ्तों वायुमंडल में टंगे रहते हैं। वायुमंडल में टंगे इन धूल के कणों और इसकी लाल सतह के कारण यह ग्रह लाल रंग का दिखाई देता है।

वैज्ञानिक मंगल ग्रह के विषय में अन्तरिक्ष खोज यानों (space probe ships) की सहायता से अधिक जानकारी प्राप्त करने का प्रयास कर रहे हैं। वाइकिंग-I और वाइकिंग-II नामक यानों से इस ग्रह की मिट्टी और वायुमंडल के विषय में महत्त्वपूर्ण तथ्य ज्ञात हुए हैं लेकिन अभी बहुत कुछ ज्ञात करना बाकी है। किसी भी खोज यान ने इस ग्रह पर जीवन के अस्तित्व का पता नहीं लगाया है। मैरीनर नामक खोज यानों ने इस ग्रह के चन्द्रमाओं, इस पर आने वाले तूफानों तथा इसके गड्ढों के विषय में महत्त्वपूर्ण आंकड़े दिए हैं। फिर भी, अभी इसके विषय में बहुत कुछ जानना बाकी है।

स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी (Statue of Liberty) क्यों बनाई गई?

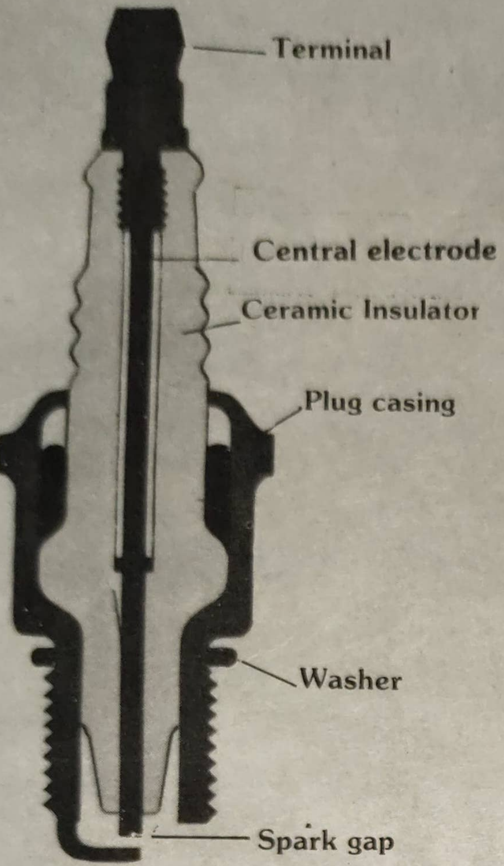


स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी का निर्माण अमरीका के जन्म और इसकी फ्रांस के साथ मैत्री की यादगार को जीवित रखने के लिए किया गया था। यह मूर्ति न्यूयार्क बन्दरगाह के मुहाने पर बैडलोज आइलैंड (जिसे आज लिबर्टी आइलैंड Liberty Island— कहते हैं) पर स्थापित है। इसकी स्थापना इसके निर्माता फ्रेडरिक बार्थोल्डी (Frederic Bartholdi) की इच्छानुसार इस स्थान पर की गई थी।

इस मूर्ति के निर्माण की योजना फ्रांस के प्रसिद्ध इतिहासकार एडुआर्ड द लैबोलये (Edouard de Laboulaye) ने अमरीका के युद्ध के बाद बनाई थी। इसके निर्माण में होने वाला व्यय फ्रांस के लोगों द्वारा वहन किया गया था। इसकी स्थापना के लिए जो 150 फुट का चबूतरा बनाया गया, उसका खर्च अमरीका द्वारा वहन किया गया था। इस मूर्ति का निर्माण बार्थोल्डी नामक मूर्तिकार की देखरेख में हुआ था। यह मूर्ति तांबे की चादर से बनाई गई है तथा अन्दर से खोखली है। इस 45.12 मीटर ऊंची और 2250 क्विटल वजन वाली मूर्ति का निर्माण सन् 1825 में पूरा हुआ। निर्माण के बाद इसे जलयान द्वारा न्यूयार्क भेजा गया, जहां इसे बैडलोज आइलैंड पर बनाए गए चबूतरे पर स्थापित किया गया। इस मूर्ति का उद्घाटन राष्ट्रपति ग्रोवर क्लीवलैण्ड (Grover Cleveland) ने 28 अक्तूबर, 1886 को किया।

इस मूर्ति की कुल ऊंचाई (आधार से मशाल तक) 91.20 मीटर है। यह मूर्ति एक स्त्री की है, जिसका सीधा हाथ ऊपर उठा हुआ है और इसी हाथ में एक मशाल है। उसके बायें हाथ में एक गोल तश्तरी है, जिस पर 4 जुलाई, 1776 (स्वतंत्रता दिवस) की तारीख खुदी हुई है। जिस चबूतरे पर इसे स्थापित किया गया है, उसमें एक लिफ्ट लगी हुई है तथा स्प्रिंग के आकार की सीढ़ियां भी हैं।

आरम्भ में यह मूर्ति प्रकाश-स्तम्भ बोर्ड के अधीन थी क्योंकि इसकी मशाल नाविकों के लिए प्रकाश-स्तम्भ का काम करती थी। सन् 1901 में इस मूर्ति को वार डिपार्टमेंट (War department) के हाथों सौंप दिया गया। सन् 1924 में इसे राष्ट्रीय स्मारक घोषित कर दिया गया। सन् 1956 में बैडलोज आइलैंड का नाम बदलकर लिबर्टी आइलैंड रख दिया गया। निश्चय ही यह विशाल मूर्ति स्वतंत्रता और समानता की द्योतक है।





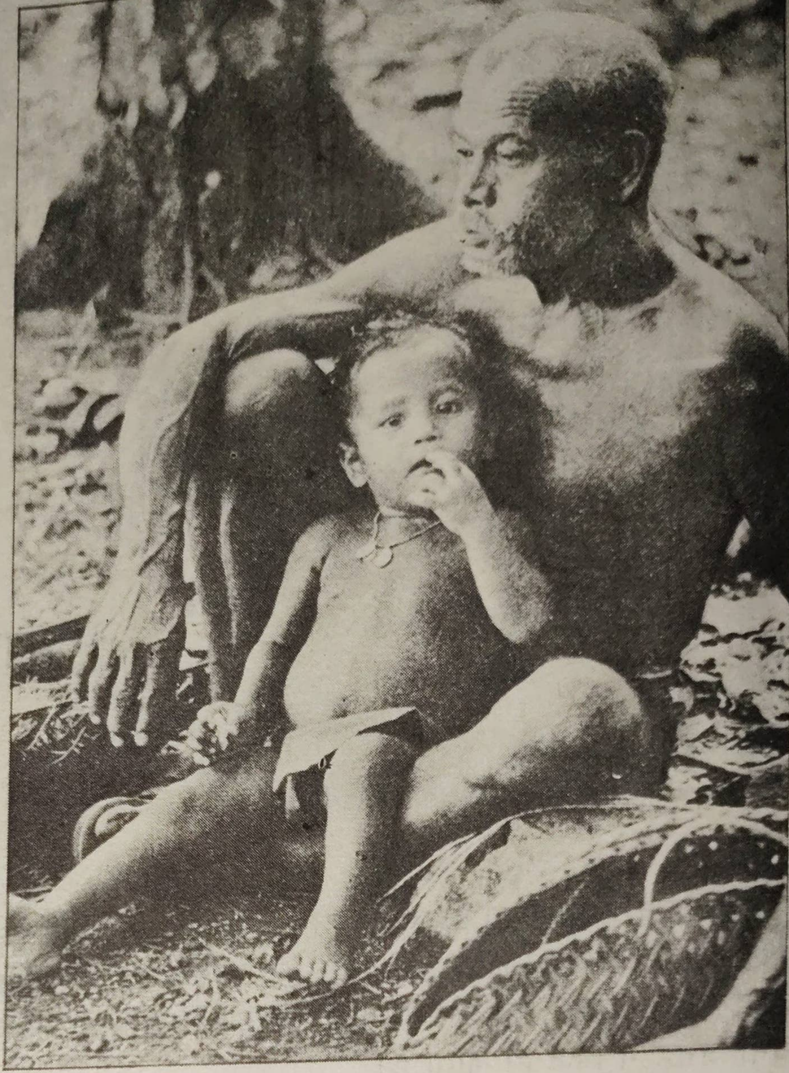
स्पार्क प्लग (Spark Plug) कैसे काम करता है?

स्पार्क प्लग एक ऐसा प्रक्रम है, जो स्कूटर और कार जैसे पेट्रोल इंजन-वाहनों में ईंधन और वायु के मिश्रण को ज्वलित करने (to ignite) के काम आता है। यह प्लग दहन इंजन (combustion engine) में लगा होता है तथा इससे आग की चिनगारी पैदा होती है। इसमें चूड़ियां कटी होती हैं, जिनके द्वारा यह पिस्टन के ऊपर बनी जगह में फिट हो जाता है।

स्पार्क प्लग में दो इलेक्ट्रॉड होते हैं। एक इलेक्ट्रॉड इसके केन्द्र से होकर जाता है। इस इलेक्ट्रॉड के चारों ओर चीनी मिट्टी (ceramic) का रोधी पदार्थ होता है। चीनी मिट्टी के चारों ओर धातु से बना प्लग का केस (plug casing) होता है। इसी केस में चूड़ियां कटी होती हैं, जो सिलिंडर के अन्दर फिट हो जाती हैं तथा विद्युत सम्पर्क स्थापक केस के निचले सिरे से एक दूसरा इलेक्ट्रॉड निकलता है, जो प्लग के केन्द्र की ओर आता है। इन दोनों इलेक्ट्रॉडों के बीच में थोड़ा-सा स्थान छोड़ दिया जाता है।

केन्द्रीय इलेक्ट्रॉड (centre electrode) और सिलिंडर हैड के तारों को दहन कुंडली (ignition coil) से जोड़ दिया जाता है। इंजन की दहन कुंडली से इन तारों में ऊंचे वोल्टेज का विद्युत स्पंद (pulse) भेजा जाता है। इस कुंडली द्वारा बैटरी से प्राप्त होने वाली 12 वोल्ट की वोल्टता 30 हजार वोल्ट में बदल जाती है। यह वोल्टता इतनी अधिक होती है कि इलेक्ट्रॉड के बीच के छोटे से स्थान में आग की चिनगारी पैदा कर देती है। यही चिनगारी सिलिंडर में उपस्थित ईंधन और वायु के मिश्रण में आग लगा देती है। इसी ऊष्मा से वाहन का इंजन चलता है।

बार-बार चिनगारी निकलने से प्लग के इलेक्ट्रॉडों का धीरे-धीरे क्षरण होता रहता है। गैसों के निकलने से इलेक्ट्रॉडों पर कार्बन की तह जम जाती है। इसलिए कभी-कभी इलेक्ट्रॉडों को साफ करना पड़ता है। यदि ऐसा न किया जाए तो उनसे आग की चिनगारी निकलनी बंद हो जाएगी। स्पार्क प्लग की चिनगारी से रेडियो और टेलीविजन संदेशों में बाधा पैदा हो जाती है। इससे मुक्ति पाने के लिए प्लग के तारों को ग्रेफाइट से संसेचित (impregnated) करना होता है।



गरीबी-रेखा (Poverty-Line) क्या है?

भोजन, मकान, कपड़ा और जीवन की ऐसी ही अन्य मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति न हो पाने से उत्पन्न दशा को गरीबी कहते हैं। इन आवश्यकताओं की पूर्ति की विवेचना किसी समाज-विशेष के स्तर के आधार पर की जाती है। जीवित रहने के लिए उपरोक्त न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति जरूरी है। प्रत्येक देश गरीबी हटाने के प्रयासों में लगा है, फिर भी विश्व के अधिकांश देशों में अभी भी गरीबी की स्थिति बनी है। क्या तुम जानते हो कि हमारे देश में गरीबी-रेखा किस प्रकार निश्चित की गयी है?

अगस्त, 1979 में कृषि-मंत्रालय के एक विभाग को ग्रामीण-पुनर्निर्माण-मंत्रालय का दर्जा दिया गया। इस मंत्रालय के अनुसार, यदि किसी पांच सदस्यीय परिवार की आमदनी 3500 रुपये प्रति वर्ष से कम है तो उसे गरीबी-रेखा से नीचे माना जाएगा। गरीबी-रेखा से नीचे आने वाले अधिकतर परिवार छोटे किसान; मजदूर, ग्रामीण कारीगर, हरिजन और पिछड़े वर्ग के हैं।

योजमा-आयोग के अनुसार सन् 1978 में ग्रामीण क्षेत्रों में 25.16 करोड़ लोग और शहरी क्षेत्रों में 5.11 करोड़ लोग गरीबी-रेखा से नीचे थे। इनकी संख्या सन् 1980 तक बढ़कर 31.68 करोड़ हो गयी थी। छठी पंचवर्षीय योजना में हमारी सरकार का लक्ष्य इस संख्या को सन् 1985 के अन्त तक 21.51 करोड़ तक कम करने का था।

हमारी सरकार लोगों को गरीबी-रेखा से ऊपर उठाने के लिए पूर्ण रूप से जागरूक रही है। इसके लिए कृषि तथा उद्योग-धंधों में रोजगार के नये अवसर पैदा करने की योजनाएं हैं। लघु उद्योगों की स्थापना में भी मदद देकर सरकार लोगों को गरीबी-रेखा से ऊपर उठाने के प्रयास कर रही है।



स्टेलेक्टाइट (Stalactites) और स्टेलेग्माइट (Stalagmites) क्या होते हैं?

स्टेलेक्टाइट और स्टेलेग्माइट कितनी ही गुफाओं और कंदराओं में देखने को मिलते हैं। स्टेलेक्टाइट गुफाओं की छतों से लटकती हुई पथरीली संरचनाएं (icicles) होती हैं, जबकि स्टेलेग्माइट गुफाओं के फर्श से ऊपर उठती हुई शंकु (cone) और स्तंभों (columns) के आकार की संरचनाएं होती हैं। क्या तुम जानते हो कि इनका निर्माण कैसे होता है?

हम जानते हैं कि अधिकतर गुफाएं चूना-पत्थर और चाक से बनती हैं। चूना-पत्थर एक बहुत ही मुलायम चट्टान है, जो क्षीण अम्लों द्वारा भी घुल सकती है। चूना-पत्थर को विलय करने वाला अम्ल वर्षा के पानी से प्राप्त होता है। वर्षा की गिरती हुई बूंदें वायु की कार्बन डाइआक्साइड से मिलकर कार्बोनिक अम्ल (carbonic acid) में बदल जाती हैं, जो चूने को अपने में घोल लेती हैं।

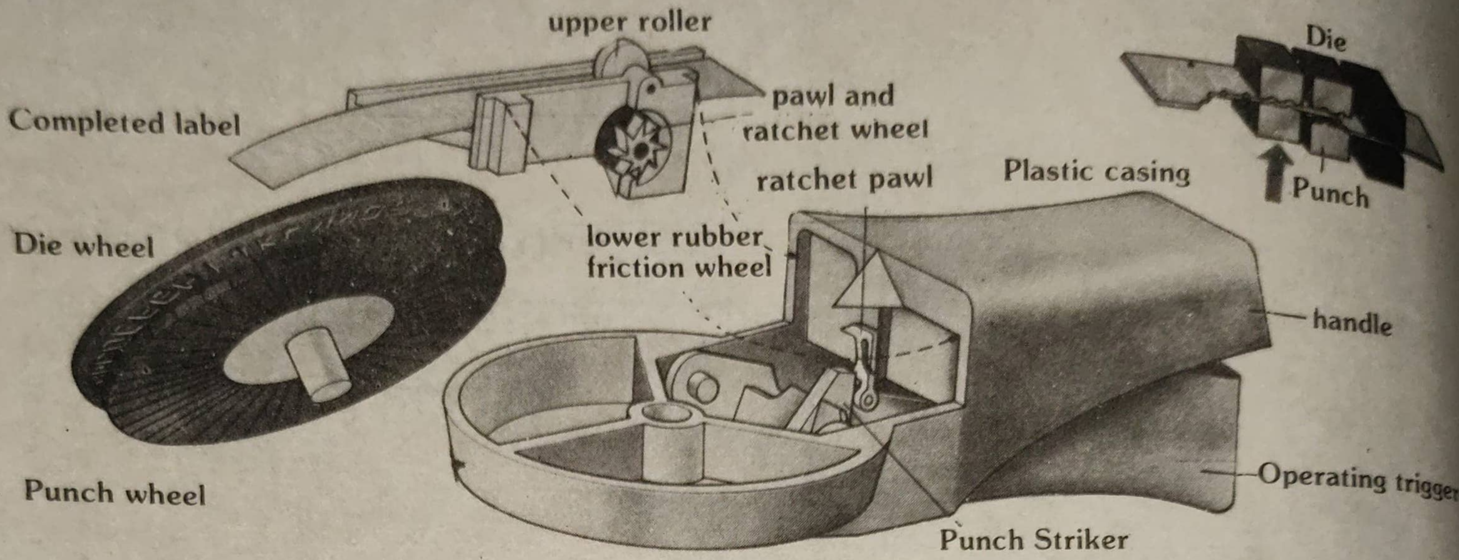
गुफाओं की दीवारों और छतों से पानी रिसता रहता है। इनमें चूना-पत्थर भी मिला होता है। इनके वाष्पीकरण से धीरे-धीरे कैल्शियम कार्बोनेट की परतें बनती जाती हैं और वे स्टेलेक्टाइट के रूप में बदलती जाती हैं। स्टेलेक्टाइट शब्द यूनानी भाषा का है, जिसका अर्थ है–''बूंद-बूंद करके।''

शुरू-शुरू में स्टेलेक्टाइट खोखले होते हैं क्योंकि कैल्शियम कार्बोनेट बूंद की बाहरी सतह पर तीव्रता से जमता है। धीरे-धीरे अन्दर का खोखलापन भरता जाता है और स्टेलेक्टाइट ठोस होता जाता है।

यदि पानी के रिसने की दर तीव्र होती है तो बूंदें गुफा की छत के साथ नहीं रुक पातीं बल्कि फर्श पर आ गिरती हैं। इनसे पानी वाष्पित होता रहता है और ये फर्श पर शंकु और गुम्बद के आकार में जमती जाती हैं। इन्हें हम स्टेलेग्माइट कहते हैं। ये इतने ऊंचे बढ़ जाते हैं कि छत से लटके हुए स्टेलेक्टाइटों से जुड़कर एक सीधा स्तम्भ बना देते हैं। ये गुफा का द्वार भी बन्द कर सकते हैं।

प्रत्येक स्टेलेक्टाइट और स्टेलेग्माइट के बढ़ने की गति अलग-अलग होती है। यह गति गुफा के अन्दर की नमी तथा तापमान पर निर्भर करती है। कुछ स्टेलेक्टाइट एक साल में एक इंच बढ़ते हैं लेकिन कुछ ऐसे भी हैं, जिन्हें एक इंच बढ़ने में सौ वर्ष तक का समय लग जाता है। जब गुफा में पानी जाना बन्द हो जाता है तो स्टेलेक्टाइटों की वृद्धि रुक जाती है। ऐसी गुफाओं को 'मृत गुफा' (dead caves) कहते हैं।

उभारदार छपाई (Embossing) कैसे की जाती है?



किसी सतह पर उभरे हुए नमूनों को किसी अन्य सतह पर पुनः उभारने के तरीके को समुद्भरण (embossing) कहते हैं। धातुओं को सजाने का यह एक बहुत पुराना तरीका है। किसी धातु की पतली चादर की निचली सतह को पीटकर उभारने का प्रक्रम आभूषण बनाने में बहुत पुराने समय से प्रयोग में लाया जाता रहा है। इसे चिताई का काम कहते हैं। इस प्रकार का समुद्भरण हाथ से किया जाता है। इस काम के लिए एक डाई (die) और उसकी विपरीत डाई प्रयोग में लाई जाती है।

किसी डिजाइन या नमूने को डाई के ऊपर बना दिया जाता है। फिर उसकी सतह से उस नमूने के चारों ओर की धातु मशीन द्वारा हटा दी जाती है, जिससे डाई की सतह पर नमूना उभर आता है। इसकी विपरीत डाई में उसी नमूने की पलट को खोद दिया जाता है। इन दोनों डाइयों में एक दूसरे से पूर्ण सामजस्य होता है। इन दोनों डाइयों को बीच में धातु या प्लास्टिक की एक पतली चादर रखकर डाई को हथौड़े से पीटा जाता है या फिर प्रेस मशीन से दबाया जाता है। ऐसा करने पर डाई पर खुदा नमूना उस चादर पर उभर आता है। यह तरीका धातुओं पर समुद्भरण के लिए प्राचीन काल से प्रयोग में आता रहा है।

डाई स्टाम्पिंग का तरीका भी बहुत पुराने समय से कागज पर उभार देने के लिए प्रयोग में लाया जाता रहा है। इस तरीके में कागज को दोनों डाइयों के बीच में दबा दिया जाता है तथा ऊपर वाली डाई पर उसी समय स्याही लगा दी जाती है। आजकल इस काम के लिए समुद्भरण मशीनें काम में लाई जा रही हैं, जो पलभर में कागज या धातुओं की चादर पर वांछित अक्षर के नमूने उभार देती हैं। इन मशीनों से काम करना बहुत सस्ता पड़ता है।

पिछले दो दशकों में समुद्भरण मशीनों ने बहुत अधिक लोकप्रियता प्राप्त कर ली है। ये मशीनें हस्तचालित होती हैं। अक्षरों या संख्याओं का एक मुलायम धातु की पत्ती या बिनाइल टेप पर समुद्भरण कर लिया जाता है। फिर इनको वांछित सतह पर हाथ से चलने वाली मशीन द्वारा दबाया जाता है। दबाने के लिए एक पहिया होता है, जो नमूने के दबाव द्वारा धातु को पत्ती पर उभार देता है।

आजकल कई प्रकार के समुद्भरण प्रेस भी प्रयोग में लाए जा रहे हैं। इन मशीनों में विभिन्न डाइयों को प्रेस बैड पर लगा दिया जाता है। इसके ऊपर की धातु की चादर पर दबाव डालकर समुद्भरण कर लिया जाता है। कुछ ऐसी मशीनें भी विकसित हो गई हैं, जिन पर हाथ से दबाव डाला जाता है।

कपास के पौधे को 'सूर्य की पुत्री' क्यों कहते हैं?



प्राचीनकाल में कपास के पौधे को लोग सूर्य की पुत्री की संज्ञा देते थे। इसका कारण यह था कि केवल रूई का पौधा ही सूर्य की शक्तिशाली किरणों द्वारा बढ़ता और पनपता है। सूर्य जितना अधिक गर्म होता है, रूई के रेशे उतने ही अधिक सफेद और मजबूत होते हैं। यही कारण है कि कपास की खेती पृथ्वी के उष्ण प्रदेशों या उनके पास के स्थानों में की जाती है। वास्तव में कपास की खेती विशेष रूप से पृथ्वी के उन भागों में की जाती है जो 37° उत्तर और 37° दक्षिण अक्षांशों के बीच में स्थित हैं। समस्त विश्व में इस पट्टी के अंतर्गत लगभग 7200 किमी. की ऐसी चौड़ाई है, जिसमें कपास के उगने के लिए आवश्यक परिस्थितियां उपलब्ध हैं वहां खूब प्रकाश होता है, खूब गर्मी पड़ती है और अच्छी वर्षा भी होती है।

आरंभ में, कपास के पौधे को पानी की बहुत आवश्यकता होती है। फिर पौधे पर फल आ जाता है और वह फट जाता है। इस दशा में उसमें से रूई गेंदाकार रूप में चमकने लगती है। उस समय इसे धूप की आवश्यकता होती है। इस अन्तराल में थोड़ी-सी बरसात भी रूई के रेशों को नष्ट कर सकती है। इस प्रकार कपास के पौधे के लिए उगने से लेकर फल आने तक वर्षा जरूरी है और फल आने के बाद मौसम का सूखा रहना जरूरी है।

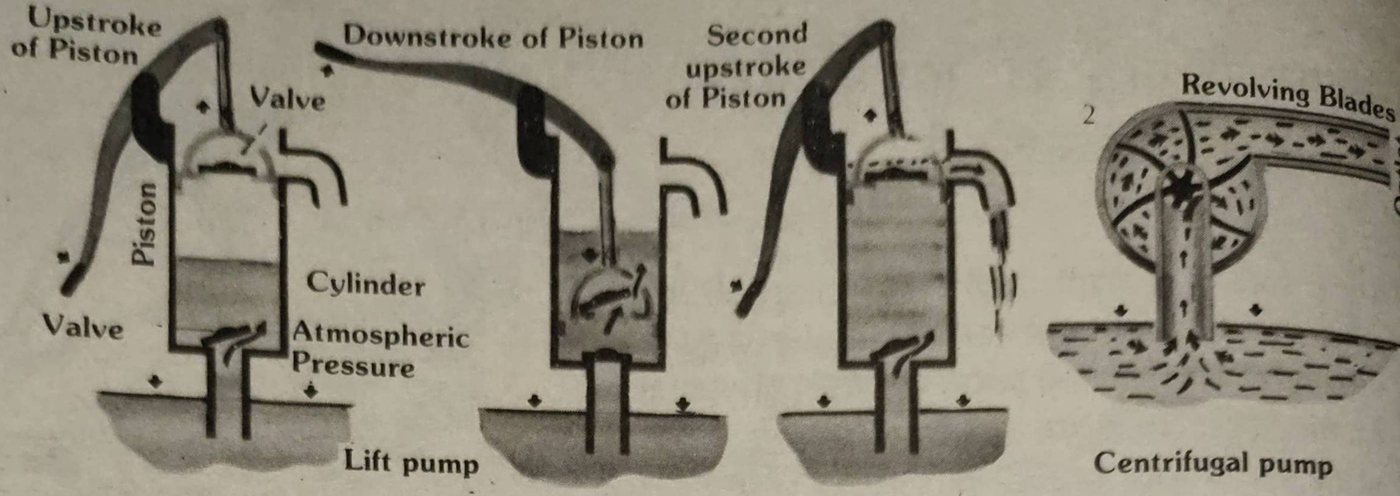
कपास के पौधे से हमें ऐसे रेशे मिलते हैं, जो कपड़े बनाने के लिए एक सामान्य पदार्थ के रूप में उपयोगी हैं। रूई का उद्योग कपड़ा-उद्योग के लिए अत्यावश्यक है और यह उद्योग संसार में लाखों लोगों को रोजगार प्रदान करता है। रूई का रेशा एक ऐसा रेशा है जिसके साथ किसी प्रकार की रासायनिक क्रिया कराने की आवश्यकता नहीं होती। धागा कातने से पहले कपास से मात्र बिनौले ही अलग करने होते हैं। कपास के बीजों को बिनौला कहते हैं।

कपास के पौधों की लगभग 20 किस्में होती हैं, जिनमें से केवल चार किस्मों की खेती की जाती है। रूई के उत्पादन में प्रथम स्थान चीन का है, द्वितीय स्थान रूस का और तृतीय स्थान अमरीका का है। इसके अतिरिक्त भारत, पेरू, ब्राजील, मिस्र, पाकिस्तान और कुछ दूसरे उष्ण देश हैं, जिनमें कपास की अच्छी खेती की जाती है।

कपास के पौधे की ऊंचाई एक से दो मीटर तक होती है। इसकी जड़ें लम्बी और पत्तियां चौड़ी होती हैं। कपास के फूल सफेद रंग के होते हैं और उनका जीवनकाल केवल एक दिन का होता है। जब फूल मुरझा जाता है तो फल का विकास होता है। रूई के फल को पूरी तरह से विकसित होने में लगभग दो महीने का समय लग जाता है। पक जाने पर यह हरे रंग के गेंद जैसा दीखता है। उस समय इसका व्यास लगभग पांच सेमी. होता है। इस गेंद के अन्दर ही रूई और बिनौले होते हैं। रूई के रेशों की लम्बाई लगभग तीन सेमी. होती है। इनमें 90% सैल्यूलोज होता है।

रूई के रेशों का प्रयोग कपड़े, कालीन, चादर, दरी, पट्टियां और जिल्दसाजी में किया जाता है। बिनौले को कुचलकर और दबाकर तेल निकाला जा सकता है, जिसका उपयोग मारगरिन (margarine) और मैलोरिन (mellorine) में होता है। यह तेल साबुन बनाने में भी काम आता है। तेल निकालने के बाद जो पदार्थ बचा रहता है, उसे बिनौले की खल कहते हैं। यह गाय, भैंस आदि घरेलू जानवरों के खिलाने के काम आता है।

वाटर पम्प (Water Pump) कैसे काम करता है?



वाटर पम्प हम सभी ने देखे हैं। ये ऐसे पम्प होते हैं, जो पानी को निम्न स्तर से उच्च स्तर तक उठाने के लिए प्रयुक्त किये जाते हैं। इन पम्पों का प्रयोग घरों में तथा सड़कों पर जमीन से पानी निकालने के लिए किया जाता है। ये पम्प इस तथ्य पर काम करते हैं कि वायुमंडलीय दाब (atmospheric pressure) के कारण पानी के एक स्तम्भ को लगभग 34 फीट की ऊंचाई तक उठाया जा सकता है।

एक साधारण वाटर पम्प की कार्य-प्रणाली ऊपर के चित्र में प्रदर्शित की गई है। इस पम्प में एक लोहे के पाइप को जमीन में जल-स्तर तक गाड़ दिया जाता है। इस पाइप के ऊपर एक बड़े व्यास का दूसरा पाइप फिट कर दिया जाता है। इसी पाइप में वाटर पम्प के घटक (components) लगाए जाते हैं। इसमें एक हैंडिल होता है, जिसका संबंध एक पिस्टन से होता है। हैंडिल की सहायता से पिस्टन को ऊपर-नीचे किया जा सकता है। इसमें दो वाल्व होते हैं, जिनमें एक पिस्टन के साथ लगा होता है और दूसरा, दोनों पाइपों के सम्पर्क-स्थान पर लगा होता है। ये दोनों ही वाल्व ऊपर की ओर खुलते हैं।

जब हैंडिल की सहायता से पिस्टन को ऊपर खींचा जाता है तो पिस्टन के नीचे नली में वायु-दाब कम हो जाता है। इससे नीचे का वाल्व खुल जाता है और ऊपर का वाल्व बंद हो जाता है। इस क्रिया में जल के ऊपर का दाब वायुमंडलीय दाब से कम हो जाता है। दाब के इस प्रकार कम होने से पानी वायुमंडलीय दाब द्वारा ऊपर वाले पाइप में धकेल दिया जाता है।

जब पिस्टन को हैंडिल द्वारा नीचे ले जाया जाता है तो पानी के भार से नीचे का वाल्व बंद हो जाता है। जल के संपीडित (compress) होने से ऊपर का वाल्व खुल जाता है, जिससे पानी पिस्टन के ऊपर आ जाता है। बार-बार ऐसा करने से पानी का स्तर ऊपर उठता जाता है और अन्त में निकास-द्वार से पानी बाहर आने लगता है।

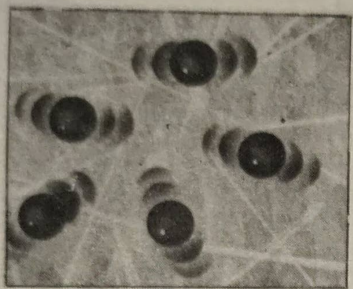
इस पम्प में दो कमियां हैं, एक तो इसमें पानी रुक-रुक कर आता है (जब पिस्टन ऊपर जाता है) दूसरा, इस पम्प द्वारा सिद्धांततः 34 फीट से अधिक गहराई से पानी को ऊपर नहीं उठाया जा सकता। व्यावहारिक रूप से तो इसके द्वारा पानी को केवल 30 फुट तक ही उठाया जा सकता है। इन दोषों से मुक्ति पाने के लिए इस पम्प में कुछ परिवर्तन कर दिए गए हैं। पम्प के इस परिवर्तित रूप को हम फोर्स पम्प (force pump) कहते हैं। इस पम्प में दूसरा वाल्व पिस्टन में नहीं लगाया जाता, बल्कि साथ ही में लगी निकास-नली में लगाया जाता है। इसके द्वारा पानी को लगभग 300 फीट की ऊंचाई तक उठाया जा सकता है। इस पम्प का उपयोग कई मंजिल के भवनों में पानी को ऊपर ले जाने के लिए किया जाता है।

पानी को निरन्तर ऊपर भेजने के लिए आजकल घूर्णनशील ब्लेडों (revolving blades) से युक्त सेण्ट्रीफ्यूगल पम्प प्रयोग में लाए जाते हैं। ये सामान्यतः विद्युत या पेट्रोल से चलते हैं।

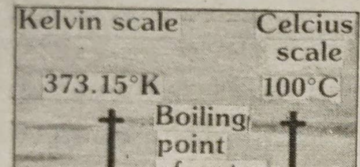
परम शून्य (Absolute zero) तापमान क्या है?



At absolute zero
atoms are still



Above absolute
zero atoms move



किसी वस्तु का तापमान यह प्रदर्शित करता है कि वह वस्तु कितनी गर्म या कितनी ठंडी है। वस्तुओं का तापमान थर्मामीटरों की सहायता से मापा जाता है। सामान्य तापमान मापने के लिए जो थर्मामीटर प्रयोग में लाये जाते हैं, उन पर निम्न तापमान शून्य डिग्री होता है। आज के वैज्ञानिकों ने शून्य डिग्री से भी कम तापमान पैदा कर लिये हैं। निम्न तापमानों के लिए एक पैमाना विकसित किया गया है, जिसे कैल्विन पैमाना (Kelvin scale) या परम तापमान पैमाना कहते हैं।

सैद्धान्तिक रूप से परम शून्य तापमान वह संभावित निम्नतम तापमान है, जिस पर एक गैस पहुंच सकती है। यह तापमान –273.15° सेल्सियस होता है। यह संख्या इस तथ्य पर आधारित है कि गैस का आयतन (volume) तापमान कम करने के साथ-साथ कम होता जाता है। इस सिद्धांत के अनुसार गैस का आयतन समाप्त हो जाएगा, यदि उसका तापमान –273.15° सेल्सियस यानि परम शून्य तक कम कर दिया जाए। इस तापमान पर गैस के अणु पूर्ण विश्रामावस्था में आ जाएंगे और पदार्थ में कोई भी ऊष्मा नहीं रहेगी। वास्तविक प्रयोगों में सभी गैसें पहले द्रवों में बदलती हैं और फिर ठोस अवस्था में बदलकर परम शून्य तापमान की ओर बढ़ती हैं।

प्रयोगशाला में किये गये प्रयोगों द्वारा वैज्ञानिक आज तक भी परम शून्य तापमान पर नहीं पहुंच पाए हैं। अब तक निम्नतम तापमान तांबे के नाभिकों (nuclei) को निम्न तापमान पर चुम्बकीकरण करके प्राप्त किया गया है। जब विद्युत चुम्बक का स्विच बंद किया गया तो तांबे के नाभिकों का अचुम्बकीकरण हो गया, जिससे तापमान काफी नीचे गिर गया फिर भी परम शून्य तापमान से एक डिग्री के दस लाखवें भाग के ऊपर था। जिन पदार्थों को इस तापमान तक ठंडा कर दिया जाता है, उनकी प्रतिक्रिया कुछ विचित्र-सी हो जाती है। इस तापमान पर आक्सीजन नीलापन लिए सफेद ठोस में परिवर्तित हो जाती है। ऐसे निम्न तापमान पर रबर का एक गेंद इतना भुरभुरा (brittle) हो जाता है कि जमीन पर मारने से यह उछलने की बजाय टूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाता है। पारा जो सामान्यतः तरल होता है, वह निम्न तापमान पर सख्त हो जाता है और चांदी की तरह चमकने लगता है। हाइड्रोजन गैस तरल में बदल जाती है और बर्तन की दीवारों के साथ रेंगने लगती है। प्राकृतिक गैस को निम्न तापमान पर ठंडा करके तरल में बदलकर विभिन्न देशों में भेजा जाता है।

वह तापमान, जिस पर गैस का आयतन (volume) समाप्त हो जाता है, उसे कैल्विन पैमाने पर परम शून्य डिग्री का मान दिया गया है। यह तापमान वैज्ञानिक मापों में प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए कैल्विन पैमाने पर हाइड्रोजन गैस का द्रव में परिवर्तित होने का तापमान 20K होता है तथा द्रव हीलियम का तापमान 4.2K होता है।

हमारे देश का राष्ट्रीय चिह्न क्या है ?



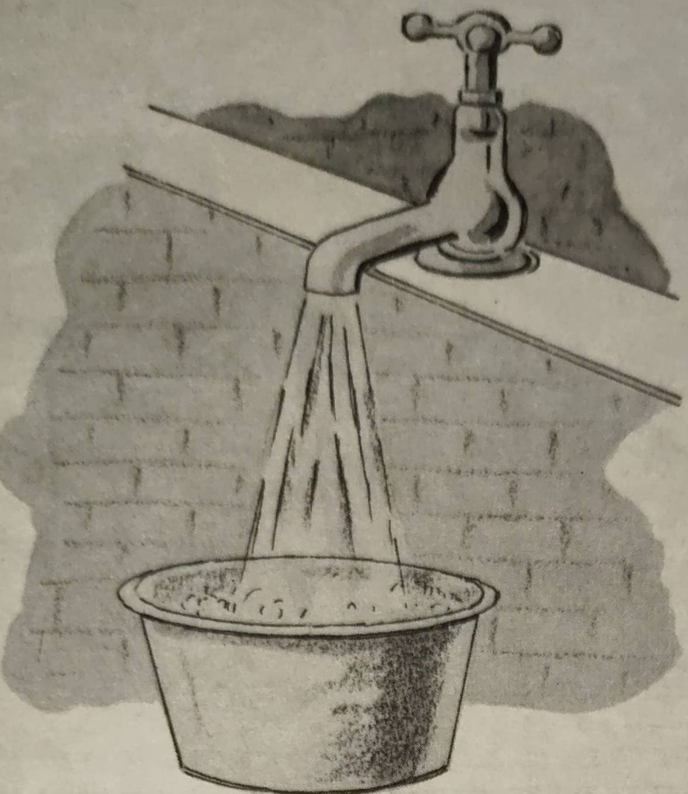
सत्यमेव जयते

विश्व में सभी देशों का कोई न कोई राष्ट्रीय चिह्न होता है। इस राष्ट्रीय चिह्न को सरकारी दस्तावेजों पर प्रयोग में लाया जाता है। क्या तुम जानते हो कि हमारे देश का राष्ट्रीय चिह्न क्या है?

हमारे देश का राष्ट्रीय चिह्न सारनाथ में लगी अशोक की लाट का ऊपरी भाग है। इस लाट के ऊपरी भाग में चार खुले मुंह वाले शेर हैं लेकिन राष्ट्रीय चिह्न में तीन ही शेर दिखाई देते हैं। चौथा शेर चित्र की दो विमाओं (dimensions) के कारण दिखाई नहीं देता। आधार की प्लेट के केन्द्र में धर्मचक्र है। धर्मचक्र के दाहिनी ओर एक बैल का चित्र है तथा बायीं ओर घोड़े का चित्र है। दाहिनी और बायीं ओर के सिरों पर दो पहिए दिखाए गए हैं। इस आधार प्लेट के नीचे "सत्यमेव जयते" लिखा हुआ है। इसका अर्थ है कि केवल सत्य की ही विजय होती है। ये शब्द देवनागरी लिपि में लिखे हुए हैं। यह वाक्य मुंडका उपनिषद् से लिया गया है।

हम अपने देश के राष्ट्रीय चिह्न को सिक्कों और नोटों पर देख सकते हैं। सरकार द्वारा दिए जाने वाले सभी प्रमाण पत्रों पर राष्ट्रीय चिह्न बना होता है। इसी प्रकार सभी न्यायालयीय तथा सरकारी कागजातों पर राष्ट्रीय चिह्न छपा होता है।

राष्ट्रीय चिह्न के अतिरिक्त चीता हमारे देश का राष्ट्रीय जानवर है। मोर हमारे देश का राष्ट्रीय पक्षी है। कमल का फूल हमारा राष्ट्रीय फूल है।



नल से बर्तन में गिरते जल की ध्वनि क्यों बदलती रहती है?

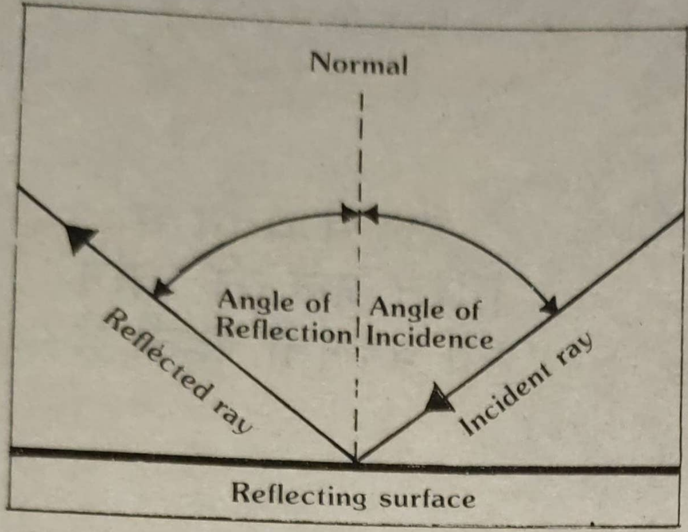
यह एक आम अनुभव की बात है कि जब किसी बर्तन में नल से पानी भरा जाता है तो जैसे-जैसे बर्तन में पानी भरता है, वैसे-वैसे बर्तन से निकलने वाली ध्वनि का स्वर निरन्तर रूप से बदलता जाता है। शुरू-शुरू में ध्वनि का स्वर मोटा होता है लेकिन जैसे-जैसे बर्तन भरता जाता है, उसका स्वर तीखा होता जाता है। क्या तुम जानते हो कि ऐसा क्यों होता है?

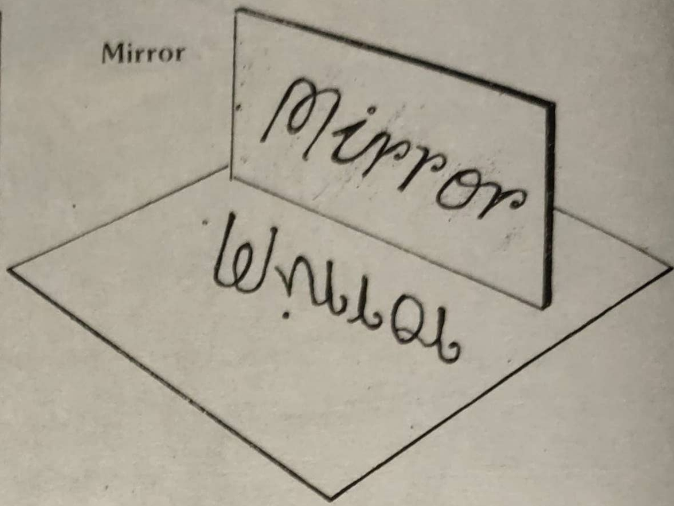
हम जानते हैं कि वस्तुओं के कम्पन (vibrate) करने से ध्वनियां पैदा होती हैं। संगीत वाद्य-यंत्रों के तारों के कम्पन करने, ढोल की झिल्ली के कम्पन करने तथा बांसुरी में वायु-स्तम्भ (air-column) के कम्पन करने से ध्वनियां पैदा होती हैं। जब किसी धातु के बर्तन में नल से पानी गिरता है तो बर्तन की धातु कम्पन करने लगती है, जिससे ध्वनि पैदा होती है। धातु की आवाज के साथ एक दूसरी आवाज भी मिली होती है। यह आवाज पानी की सतह के ऊपर के वायु-स्तम्भ के कम्पन से पैदा होती है। वायु का यह स्तम्भ जल की सतह और बर्तन के मुंह के बीच में बनता है।

जैसा कि हम जानते हैं कि शुरू-शुरू में बर्तन से निकलने वाली आवाज भारी होती है और बाद में यही आवाज पतली होती जाती है। इसका तात्पर्य है कि शुरू-शुरू में ध्वनि की आवृत्ति (frequency) कम होती है लेकिन जैसे-जैसे बर्तन पानी से भरता जाता है, उसकी आवृत्ति बढ़ती जाती है। इसी वायु-स्तम्भ की लम्बाई के अनुसार ही ध्वनि की आवृत्ति पैदा होती है। एक लम्बा वायु-स्तम्भ कम आवृत्ति की ध्वनि पैदा करता है। जैसे-जैसे बर्तन में पानी भरता जाता है, वायु-स्तम्भ की लम्बाई कम होती जाती है, जिससे ध्वनि की आवृत्ति बढ़ती जाती है अर्थात् ध्वनि तीखी होती रहती है।

हम ऊपर बता चुके हैं कि बर्तन की धातु से भी ध्वनि पैदा होती है। जैसे-जैसे बर्तन में पानी ऊपर भरता जाता है, धातु के ये कम्पन बदलते जाते हैं। इस तथ्य को तुम एक धातु के गिलास द्वारा परख सकते हो। धातु के एक खाली गिलास को एक चम्मच से बजाओ। फिर इसे पानी से भरकर चम्मच से बजाओ। इन दोनों ध्वनियों में अन्तर होता है। शुरू-शुरू में जब एक खाली बर्तन नल के नीचे रखा जाता है तो धातु और वायु-स्तम्भ के कम्पनों से ध्वनि पैदा होती है। बर्तन में पानी भरने से धातु के कम्पन तो दब जाते हैं और वायु-स्तम्भ के कम्पन हमें ध्वनि के रूप में सुनाई देते हैं। संगीत-वाद्य जल-तरंग से विभिन्न प्रकार की ध्वनियां इसी आधार पर पैदा की जाती हैं।

प्रकाश का परावर्तन (reflection) क्या है?





प्रकाश की कोई किरण जब किसी समतल, चमकदार तल पर पड़ती है तो वह उसी माध्यम में लौटकर वापस आ जाती है। किसी तल से प्रकाश के इस प्रकार लौटने को प्रकाश का परावर्तन कहते हैं। प्रकाश का परावर्तन दो प्रकार का होता है—नियमित और अनियमित। नियमित परावर्तन चिकने तलों से होता है और अनियमित परावर्तन खुरदुरे तलों से होता है।

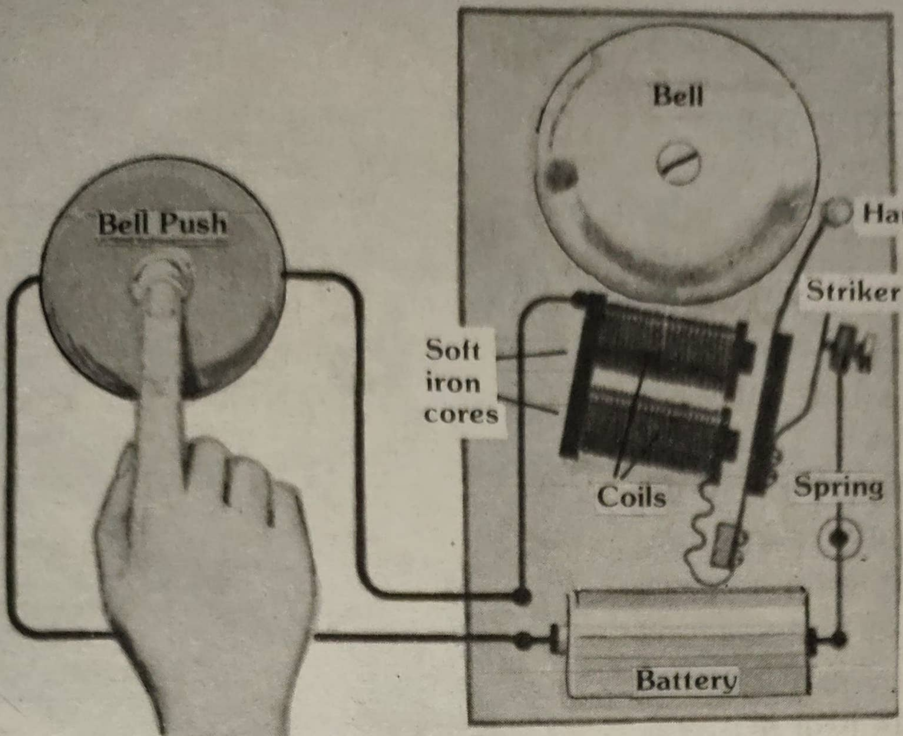
जब किसी दर्पण में हम अपना प्रतिबिम्ब देखते हैं तो यह प्रतिबिम्ब परावर्तन के कारण ही बनता है। परावर्तन के दो नियम होते हैं। इन नियमों को समझने से पहले कुछ बातें जानना जरूरी हैं। टकराने वाली किरण को आपतित किरण (incident ray) कहते हैं और लौटकर आने वाली किरण को परावर्तित किरण (reflected ray) कहते हैं। तल पर खींची गई लम्बवत रेखा को अभिलम्ब (normal) कहते हैं। परावर्तन का पहला नियम यह है कि आपतित किरण, परावर्तित किरण और अभिलम्ब एक ही तल में होते हैं।

आपतित किरण और अभिलम्ब के बीच के कोण को आपतन कोण (angle of incidence) कहते हैं। इसी प्रकार परावर्तित किरण और अभिलम्ब के बीच के कोण को परावर्तन कोण (angle of reflection) कहते हैं। परावर्तन के दूसरे नियम के अनुसार आपतन कोण और परावर्तन कोण बराबर होते हैं।

परावर्तन के ये दोनों नियम नियमित और अनियमित तलों से होने वाले दोनों ही परावर्तनों के लिए सत्य होते हैं लेकिन जब प्रकाश किसी खुरदुरे तल से टकराता है तो वह कई दिशाओं में विसरित (scatter) हो जाता है। इनमें हर विसरित किरण के लिए परावर्तन के नियम लागू होते हैं।

प्रकाश का परावर्तन केवल समतल सतहों से ही नहीं होता, बल्कि बक्राकार तलों से भी होता है। बक्राकार तलों से होने वाले परावर्तन को प्रयोग में लाकर उत्तल (convex) और अवतल (concave) दर्पण बनाए जाते हैं। कार या बस में चालक के पास लगे दर्पण उत्तल दर्पण होते हैं, जिनकी सहायता से वह अपने पीछे आने वाले वाहनों को आसानी से देख सकता है। अवतल दर्पण दाढ़ी बनाने में प्रयोग किये जाते हैं क्योंकि इनमें चेहरा बड़ा दीखता है।

प्रकाश के परावर्तन के बहुत से उपयोग हैं। पनडुब्बियों में बाहर देखने के लिए प्रयुक्त पैरिस्कोप नामक यंत्र प्रकाश के परावर्तन के सिद्धांत पर काम करता है। दर्पणों द्वारा होने वाले प्रकाश के परावर्तन को प्रयोग में लाकर परावर्तक दूरदर्शी बनाए जाते हैं। सूक्ष्मदर्शियों में भी वस्तु को प्रकाशित करने के लिए दर्पण (mirrors) प्रयोग में लाए जाते हैं।



विद्युत-घंटी (Electric bell) कैसे काम करती है?

विद्युत-घंटी विद्युत चुम्बकीय प्रभावों के आधार पर बना एक सरल प्रक्रम है। इसका उपयोग कार्यालयों, घरों, उद्योगों तथा अग्नि-सूचकों में किया जाता है। क्या तुम जानते हो कि विद्युत की घंटी कैसे काम करती है?

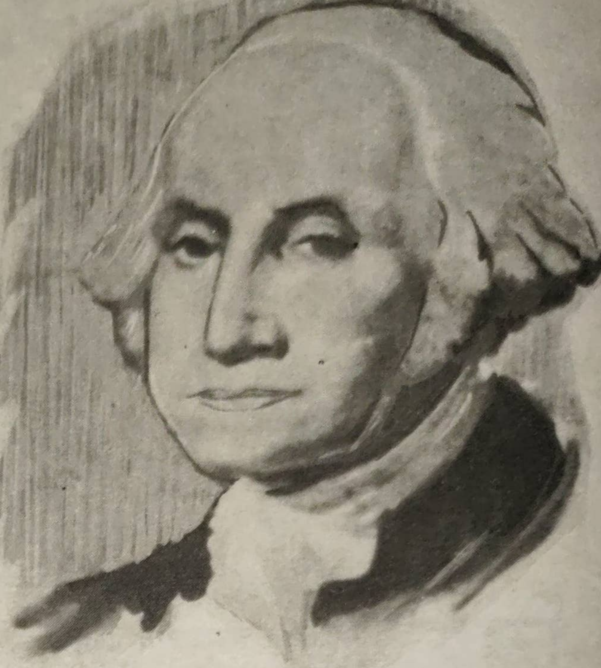
विद्युत-घंटी में अंग्रेजी के यू (U) के आकार का एक विद्युत चुम्बक होता है। इसके पास ही मुलायम लोहे(soft iron) से बना एक आर्मेचर लगा होता है। इस आर्मेचर के साथ एक हथौड़ी (hammer) लगी होती है, जो गोंग (gong) से टकराकर ध्वनि पैदा करती है। यह हथौड़ी बार-बार गोंग से टकराती है। इसमें एक कटोरीनुमा गोंग होता है, जो आधार के साथ लगा होता है। घंटी बजाने के लिए एक पुश बटन होता है।

जब घंटी का पुश बटन दबाया जाता है तो विद्युत चुम्बक की कुंडली (coil) में आर्मेचर स्प्रिंग और संपर्क पेंच से होती हुई विद्युत धारा प्रवाहित होती है। विद्युत धारा के प्रवाहित होने से लोहे की क्रोड़ (core) चुम्बक बन जाती है। यह विद्युत चुम्बक आर्मेचर को अपनी ओर खींचता है, जिससे इसमें लगी हथौड़ी गोंग से टकराकर आवाज पैदा करती है।

चित्र से यह स्पष्ट है कि आर्मेचर चुम्बकीय आकर्षण द्वारा आगे की ओर खिंचता है। जब ऐसा होता है तो वह संपर्क पेंच से अलग हो जाता है और इस प्रकार विद्युत-संबंध विच्छिन्न हो जाता है। इससे विद्युत चुम्बक की कुंडली में विद्युत धारा का बहना बंद हो जाता है। परिणाम यह होता है कि विद्युत चुम्बक का चुम्बकत्व समाप्त हो जाता है। ऐसा होने पर आर्मेचर का चुम्बकीय खिंचाव भी समाप्त हो जाता है। इस स्थिति में संपर्क स्प्रिंग आर्मेचर को अपनी मूल अवस्था में खींच लाती है। जैसे ही आर्मेचर अपनी मूल अवस्था में वापिस आता है, वैसे ही इसका संबंध संपर्क पेंच से हो जाता है। ऐसा होने पर विद्युत परिपथ (circuit) पूरा हो जाता है, जिससे विद्युत चुम्बक फिर से चुम्बक बनकर आर्मेचर को अपनी ओर खींच लेता है। इससे हथौड़ी फिर एक बार गोंग से टकराकर ध्वनि पैदा करती है। जब तक घंटी का पुश बटन दबा रहता है, तब तक यह क्रम बार-बार चलता रहता है। विद्युत चुम्बक बार-बार चुम्बक बनता रहता है और आर्मेचर को अपनी ओर खींचकर आवाज पैदा करता रहता है। इस प्रकार जब तक बटन दबा रहता है, बिजली की घंटी बजती रहती है।

यदि मुलायम लोहे के स्थान पर इस्पात की क्रोड प्रयोग में लाई जाए तो विद्युत धारा प्रवाहित होने पर वह स्थायी चुम्बक बन जाएगी। परिणाम यह होगा कि आर्मेचर हमेशा ही चुम्बक की ओर खिंचा रहेगा। ऐसी स्थिति में हथौड़ी गोंग से केवल एक ही बार टकराएगी और एक ही बार ध्वनि पैदा करेगी।

संयुक्त राज्य अमरीका का जन्मदाता कौन था?



जार्ज वाशिंगटन (George Washington) को संयुक्त राज्य अमरीका का जन्मदाता माना जाता है। अमरीका के निवासी उन्हें राष्ट्रपिता कहते हैं। वाशिंगटन कोई विशेष स्वाभाविक प्रतिभा के व्यक्ति नहीं थे। वह बहुत पढ़े-लिखे भी नहीं थे। वे न तो बहुत प्रभावशाली वक्ता थे और न ही उच्च श्रेणी के लेखक थे। लेकिन उनमें एक ऐसा विशेष गुण था, जो विद्या और विद्वत्ता से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण था—यह गुण था उनके उच्च चरित्र का। वह निर्भीक व्यक्ति थे और साथ में अत्यन्त कर्त्तव्यपरायण भी। इन्हीं गुणों के कारण अमरीकावासियों ने उन्हें अपना नेता मान लिया था। उनकी मृत्यु के बाद यह कहा गया था कि वे युद्ध में प्रथम थे, शान्ति में प्रथम थे और अपने देशवासियों के हृदय में भी उनका प्रथम स्थान था।

जार्ज वाशिंगटन का जन्म 22 फरवरी, 1732 में हुआ था। उनके पिता औगस्टाइन वाशिंगटन (Augustine Washington) नौसेना में कप्तान रह चुके थे। जब जार्ज वाशिंगटन की उम्र केवल 12 वर्ष ही थी, तभी उनके पिता की मृत्यु हो गई। उनके पास उनके दादा की काफी जमीन थी। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा अधिक ठीक प्रकार से न हो पायी क्योंकि उन दिनों वर्जीनिया के समाज में घुड़सवारी और कृषि के तरीकों में दक्षता को ही अधिक महत्त्वपूर्ण समझा जाता था। अपने कार्य के लिए इन्होंने गणित का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

जंगली हालात में रहने का अच्छा प्रशिक्षण होने के कारण इन्हें वर्जीनिया की फौज में लैफ्टिनैंट कर्नल बना दिया गया और उन्हें ओहिओ नदी पर नाकाबन्दी कर रही फ्रांसीसी सेना के विरुद्ध एक अभियान पर भेजा गया। बाद में जब जनरल ब्रैडोक को फ्रांस की फौजों के विरुद्ध लड़ने के लिए भेजा गया तो वे उनके साथ मददगार के रूप में भेजे गये। दुर्भाग्यवश इस युद्ध में ब्रैडोक मारे गये। इस लड़ाई में उन्होंने महान् साहस का परिचय दिया। परिणामस्वरूप उन्हें मात्र 23 साल की उम्र में ही वर्जीनिया की सेना का कमांडर बना दिया गया।

सन् 1759 में उन्होंने मार्था कुस्टिस (Martha Custis) नामक एक धनी नौजवान विधवा के साथ शादी कर ली। इस महिला के पास 15 हजार एकड़ जमीन थी। इस तरह वाशिंगटन अमरीका के धनी व्यक्तियों में से एक बन गये। उनका वैवाहिक जीवन लम्बा और खुशहाल रहा। उनके अपना कोई बच्चा नहीं हुआ लेकिन मार्था की पिछली शादी से उनके दो बच्चे थे। अगले 15 वर्षों तक जार्ज वाशिंगटन माऊंट बर्नन में एक किसान का-सा जीवन व्यतीत करते रहे। वे उन दिनों भी वर्जीनिया पार्लियामेंट के सदस्य थे।

जार्ज वाशिंगटन अमरीका की सुरक्षा के लिए कुछ भी करने को तैयार रहते थे। सन् 1774 में उन्हें फिलाडैलफिया में हुई कॉण्टिनेण्टल कांग्रेस में प्रतिनिधि के रूप में भेजा गया। सन् 1775 की दूसरी कांग्रेस के अधिवेशन में वे फौज की वर्दी में उपस्थित हुए। इसका तात्पर्य था कि वे ब्रिटेन के विरुद्ध लड़ने के लिए तैयार हैं। उस समय तक युद्ध आरम्भ हो चुका था और अमरीका की तेरह कालोनियों को अपना कमांडर चुनना था। इस अधिवेशन में वाशिंगटन को एक मत से कमांडर चुन लिया गया। इस काम के लिए उनसे बेहतर शायद ही कोई व्यक्ति हो सकता था। कमांडर बनने के बाद उनके सामने बहुत मुश्किल रास्ता था।

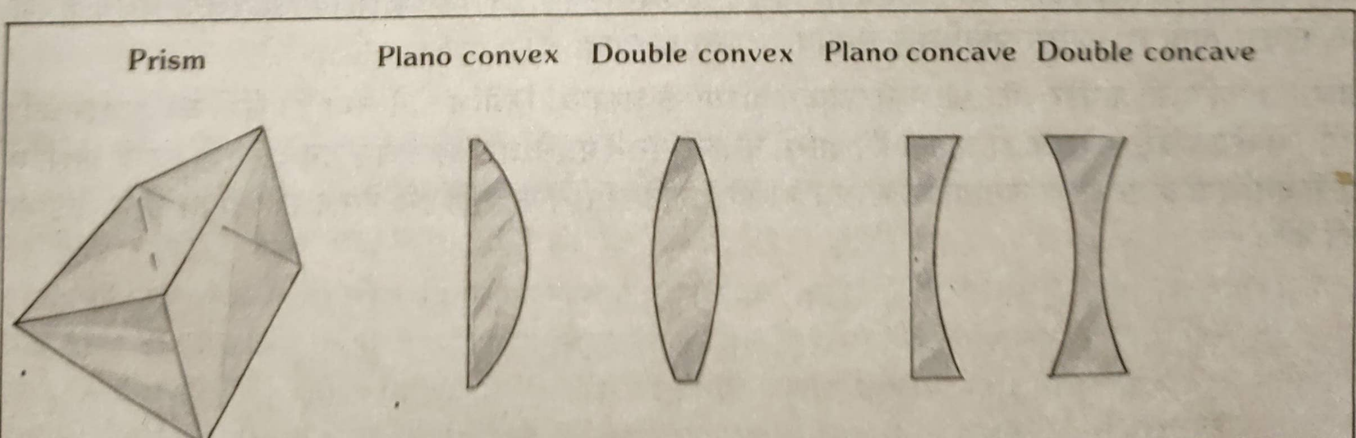
कई वर्षों तक युद्ध चलता रहा। अन्ततः सन् 1781 में ब्रिटेन ने अपने घुटने टेक दिये। यह वाशिंगटन की महान उपलब्धि थी। सन् 1783 के अन्त में फौजें समाप्त कर दी गयीं और जार्ज वाशिंगटन ने कमांडर पद से त्यागपत्र दे दिया। वे अपने शेष जीवन को आराम से गुजारने की आशा में माऊंट बर्नन वापिस लौट गए लेकिन इस नए प्रजातंत्र को उनकी अधिक आवश्यकता थी। सन् 1789 में उनको एकमत से संयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति चुना गया। उन्होंने अप्रैल, 1789 में न्यूयार्क के फैड्रल हाल में शपथ ग्रहण की। इसके बाद सरकार के सभी कार्यालय फिलाडैलफिया में चले गये, जहां ये सात साल तक रहे। इसी दौरान वाशिंगटन डी.सी. नयी राजधानी के रूप में निर्मित हो रही थी।

वाशिंगटन आठ साल तक अमरीका के राष्ट्रपति रहे। तीसरी बार उन्होंने राष्ट्रपति पद सम्भालने से इनकार कर दिया और जॉन एडम्स वहां के नये राष्ट्रपति बनाए गये। एक बर्फ के तूफान में घिर जाने के कारण ठंड से वे बीमार पड़ गये और 67 वर्ष की उम्र में 14 सितम्बर, 1799 को उनका देहान्त हो गया। उन्हें माऊंट बर्नन में ही दफनाया गया।

विभिन्न प्रकार के लेंस क्या हैं?

लेंस पारदर्शक पदार्थ से निर्मित एक ऐसा टुकड़ा होता है, जो दो तलों (surfaces) से घिरा होता है और प्रकाश की किरणों को मोड़ देता है। सामान्यतः लेंस कांच, प्लास्टिक या क्वार्ट्ज से बनाए जाते हैं। सभी लेंस प्रकाश के अपवर्तन (refraction) के आधार पर काम करते हैं। प्रकाश की किरणें जब लेंस के ऊपर पड़ती हैं तो लेंस में प्रवेश करने पर और बाहर निकलने पर वे अपने मूल रास्ते से मुड़ जाती हैं। लेंसों की सतह वक्राकार होती है। इन तलों का झुकाव इस प्रकार समायोजित किया जाता है कि प्रकाश किरणों को वांछित दिशा में मोड़कर किसी भी बिन्दु पर केन्द्रित किया जा सकता है। लेंसों से समानान्तर किरणें भी पैदा की जा सकती हैं। उपयोगों के अनुसार ही लेंसों का डिजाइन बनाया जाता है।

लेंसों के मुख्य रूप से दो वर्ग हैं: 1. उत्तल लेंस (convex lens) और 2. अवतल लेंस (concave lens)। उत्तल लेंस बीच में से मोटे होते हैं और किनारों से पतले होते हैं। अवतल लेंस बीच में से पतले होते हैं और किनारों पर मोटे होते हैं। इन दोनों ही प्रकार के लेंसों को अलग-अलग तीन रूपों में बनाया जाता है।



अलग-अलग लेंसों की संरचना इस प्रकार है:

1. उभयोत्तल (convexo-convex): इस लेंस के दोनों तल बाहर की ओर उभरे हुए होते हैं।
2. समतल उत्तल (plano-convex): इसका एक तल समतल तथा दूसरा तल उत्तल होता है।
3. अवतलोत्तल (concavo-convex): इसका एक तल अवतल तथा दूसरा तल उत्तल होता है।
4. उभयावतल (concavo-concave): इस प्रकार के लेंस के दोनों तल अवतल होते हैं।
5. समतल अवतल (plano-concave): इसका एक तल समतल तथा दूसरा तल अवतल होता है।
6. उत्तलावतल (convexo-concave): इसका एक तल उत्तल तथा दूसरा तल अवतल होता है।

अधिकतर लेंसों का निर्माण वस्तुओं से आने वाले प्रकाश को केन्द्रित करके प्रतिबिम्ब बनाने के लिए किया जाता है। एक उत्तल लेंस को दो प्रिज्मों का युगल माना जा सकता है, जिनके शीर्ष ऊपर की ओर रखकर आधारों को जोड़ दिया गया हो। इसी प्रकार एक अवतल लेंस को भी दो प्रिज्मों का युगल माना जा सकता है, जिनके दो शीर्षों को मिलाकर जोड़ दिया गया हो।

अधिकतर लेंस प्रतिबिम्ब (image) बनाते हैं, जैसे हमारी आंख का लेंस वस्तुओं का रेटिना (retina) पर प्रतिबिम्ब बनाता है। कैमरे का लेंस फोटो फिल्म के ऊपर वस्तुओं के प्रतिबिम्ब बनाता है। सूक्ष्मदर्शियों (microscope) में लेंसों का उपयोग वस्तुओं के आवर्धित प्रतिबिम्ब (magnified images) बनाने के लिए किया जाता है।

लेंसों में एक तीसरा दोष और भी होता है, जिसे ऐस्टिगमेटिज्म (Astigmatism) कहते हैं। इस दोष के कारण किसी उपयोग सूक्ष्मदर्शियों और दूरदर्शियों में किया जाता है। कैमरों के निर्माण में लेंसों का बहुत बड़ा योगदान रहा है। उत्तल लेंसों को प्रयोग में लाकर बच्चे सूर्य के प्रकाश को केन्द्रित करके कागजों और घास-फूंस में आग लगाने के लिए काम में लाते हैं। नजर के चश्मे लेंसों द्वारा ही बने होते हैं। सिनेमा प्रोजेक्टरों, सर्चलाइटों तथा लाइटहाउसों में भी लेंसों का प्रयोग किया जाता है।

प्रत्येक लेंस का एक फोकस होता है। उत्तल लेंस में अनन्त (infinity) से आने वाली किरणें जिस बिन्दु पर केन्द्रित होती हैं, उस बिन्दु को हम लेंस का फोकस कहते हैं। फोकस पर बनने वाला प्रतिबिम्ब एकदम स्पष्ट होता है।

लेंसों में कुछ दोष होते हैं। जैसा कि हम बता चुके हैं कि एक लेंस दो प्रिज्मों का युगल होता है, इसलिए लेंसों से बनने वाले प्रतिबिम्बों में रंगदोष होता है अर्थात् लेंस वस्तु से आने वाले प्रकाश को विभिन्न रंगों में तोड़ देता है। इस दोष से मुक्ति पाने के लिए कई लेंसों को मिलाकर प्रयोग में लाया जाता है।

लेंसों में एक तीसरा दोष और भी होता है, जिसे स्टिगमेटिज्म (stigmatism) कहते हैं। इस दोष के कारण किसी गोल वस्तु का प्रतिबिम्ब अण्डाकार बनता है। लेंस पर विभिन्न कोणों पर पड़ने वाली किरणें अलग-अलग दूरियों पर फोकस होती हैं, जिससे प्रतिबिम्ब में दोष उत्पन्न हो जाता है।

आजकल विभिन्न आकार और विभिन्न फोकस दूरियों के लेंसों का निर्माण होने लगा है। लेंसों का आकार कुछ मिमी. से लेकर कई इंच तक हो सकता है। आंखों के लिए इतने पतले और छोटे लेंस बनने लगे हैं, जिन्हें आंखों में काली पुतलियों के ऊपर ही लगाया जा सकता है। इन्हें कांटेक्ट लेंस कहते हैं। ये लेंस दूसरे व्यक्ति को दिखाई भी नहीं देते।

गुड फ्राइडे और ईस्टर क्यों मनाये जाते हैं?



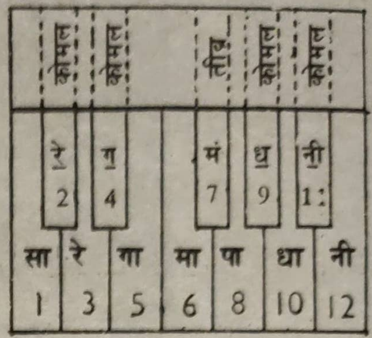
ईस्टर (Easter) ईसाई धर्मावलम्बियों के मुख्य त्योहारों में एक है। ईस्टर पूर्व के सातों दिनों को एक 'पवित्र सप्ताह' (Holy week) के रूप में माना जाता है। इस सप्ताह में पड़ने वाले शुक्रवार को 'गुड फ्राइडे' (Good Friday) कहा जाता है।

माना जाता है कि हजारों वर्ष पूर्व इसी शुक्रवार के दिन ईसा मसीह को जेरूसलम नामक नगर की चारदीवारी से बाहर लाया गया था। उन पर कुछ झूठे आरोप लगाकर उनको सूली पर चढ़ाए जाने की सजा दी गयी थी। कैलवरी (Calvary) नामक पहाड़ी पर तीन क्रॉस गाड़े गए थे। उनमें से एक पर ईसा मसीह को कांटों का ताज पहनाकर लटका दिया गया और शरीर में कीलें ठोंक दी गयीं। अन्य दो क्रॉसों पर दो चोरों को भी ऐसी ही सजा दी गयी। मृत्यु के बाद ईसा के समर्थकों ने उनके मृतक शरीर को अरिमेथिया के जोसिफ (Josiph of Arimathaea) के गुम्बद में रख दिया। इसके ठीक तीसरे दिन अर्थात् रविवार को ईसा का पुनरुत्थान (resurrection) हो गया यानी वह पुनर्जीवित हो उठे। ईसा मसीह के इस प्रकार पुनर्जीवित होने की स्मृति में जो उत्सव 31 मार्च या इसके बाद आने वाली पूर्णिमा के बाद रविवार को मनाया जाता है, उसे 'ईस्टर सण्डे' कहते हैं।

दूसरी शताब्दी से ही शुक्रवार को शोक-दिवस के रूप में मनाने की प्रथा चली आ रही है। इस दिन ईसा की स्मृति में व्रत रखा जाता है। लोग गिरजाघरों में जाकर प्रार्थना करते हैं। इस दिन 'बाइबिल' का पाठ किया जाता है तथा ईसा के क्रॉस के समक्ष धर्मोपदेश दिये जाते हैं। ईसा की स्तुति में गीत गाये जाते हैं। विश्व के सभी ईसाई धर्मावलम्बी यह दिन बड़ी श्रद्धा के साथ मनाते हैं। कुछ देशों में लोग इस दिन एकता का व्रत भी लेते हैं।

संगीत के सात स्वर क्या होते हैं?





	Doh	Ray	Me	Fah	Soh	Lah	Te	Doh
Number	1	2	3	4	5	6	7	8
Name	C	D	E	F	G	A	B	C′
Frequency	262	294	330	349	392	440	494	523

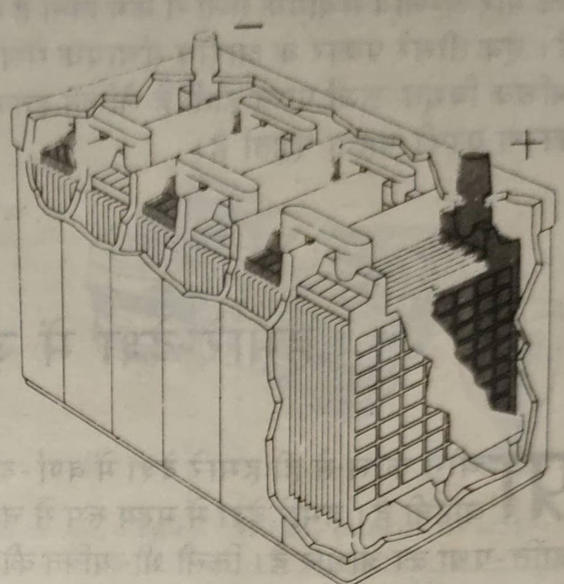
लयबद्ध ध्वनियों को हम संगीत कहते हैं तथा जिन ध्वनियों में तालमेल नहीं होता, उन्हें कोलाहल का नाम दे दिया जाता है। हम यह भली भांति जानते हैं कि संगीत के सात स्वर होते हैं। इन स्वरों को सा, रे, गा, मा, पा, धा, नी, सा कहते हैं। पश्चिमी संगीत में इनको डो, रे, मी, फा, सोल, ला, टी, डो (Do, Re, Mi, Fa, Sol, La, Ti, Do) कहते हैं। इसी स्वरग्राम के आधार पर संगीत को लयबद्ध किया जाता है। क्या तुम जानते हो कि संगीत के ये सात स्वर किस प्रकार बनाये गये?

स्वरग्राम का आविष्कार लगभग एक हजार वर्ष पहले एक गिरिजाघर के गुडो दा एरिजो नामक पादरी ने किया था। वे पवित्र संगीत के बहुत ही प्रेमी थे। उनका जीवनकाल सन् 990 से 1050 तक रहा। उनके समय तक संगीत के स्वर नहीं थे। उस समय तक केवल सांकेतिक संगीत था। इन संकेतों को न्यूम्स (Neumes) कहते थे। ये संकेत लय के उतार-चढ़ाव की केवल दिशा ही बताते थे।

संगीत के इस स्वरग्राम में निश्चित आवृत्तियां होती हैं तथा एक निश्चित लय होती है। इन सात स्वरों की आवृत्तियां (frequencies) क्रमशः 264, 297, 330, 352, 396, 440, 495 और 528 होती हैं। पहली आवृत्ति के सापेक्ष इनका अन्तराल 9/8, 5/4, 4/3, 3/2, 5/3, 15/8 और 2 होता है। अंतिम आवृत्ति पहले की दुगुनी हो जाती है। दो स्वरों के बीच का अन्तराल 9/8, 10/9, 16/15, 9/8, 10/9, 9/8 और 16/15 होता है। यदि इन सभी स्वरों को गुणा किया जाए तो इसका मान 2 हो जाता है। यह सा और सा के बीच का अन्तराल बताता है अर्थात इन दोनों आवृत्तियों में दुगुने का अन्तर है। इस अन्तराल को देखने से पता चलता है कि इसमें तीन अन्तराल हैं। ये अन्तराल 9/8, 10/9 और 16/15 हैं। पहले अन्तराल को मुख्य लय, दूसरे को अल्प लय और तीसरे को अर्द्ध लय कहते हैं।

रूसी संगीत वाद्य-यंत्रों में इस स्वरग्राम का तारत्व (pitch) नियमित रूप से व्यवस्थित किया जाता है। सात स्वरों के इस क्रम में एक निश्चित संगीत स्वर बन जाता है। इसी स्वरग्राम को प्रयोग में लाकर संगीत के वाद्य-यंत्रों का निर्माण किया जाता है। संगीत वाद्य-यंत्रों की निर्माण-कला इस स्वरग्राम के आधार पर बड़ी ही दिलचस्प हो गई है।

कार की बैटरी कैसे काम करती है?



बैटरी एक ऐसा प्रक्रम है, जो रासायनिक क्रिया द्वारा विद्युत पैदा करती है। एक बैटरी में एक से अधिक सेल (cell) होते हैं। प्रत्येक सेल विद्युत-धारा पैदा करता है। कई सेलों से बनी बैटरियां मोटरकारों, भारी यंत्रों, अन्तरिक्षयानों और पनडुब्बियों के लिए विद्युत प्रदान करती हैं।

कार में प्रयुक्त होने वाली बैटरी को संचायक सेल (storage battery) कहते हैं। इसका आविष्कार फ्रांस के भौतिकशास्त्री गैस्टन प्लाण्टे (Gaston Plante) ने सन 1859 में किया था। यह शुष्क सेल की तुलना में काफी अधिक विद्युत पैदा करती है। कार की बैटरी में सामान्यतः तीन या छह संचायक सेल श्रेणी क्रम (series) में जुड़े होते हैं। इस बैटरी को कई बार चार्ज किया जा सकता है। इसे लम्बे समय तक प्रयोग किया जा सकता है।

संचायक बैटरियों को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है: (1) अम्लीय संचायक बैटरी और (2) क्षारीय संचायक बैटरी। अम्लीय संचायक बैटरी में कांच या प्लास्टिक का डिब्बा होता है। प्रायः यही बैटरी विश्वभर में कारों में प्रयोग की जाती है। इस बैटरी के प्रत्येक सेल में दो इलेक्ट्रॉड होते हैं, जिनमें से एक धनात्मक (positive) इलेक्ट्रॉड का काम करता है और दूसरा ऋणात्मक (negative) इलेक्ट्रॉड का। इनमें से एक इलेक्ट्रॉड सीसा धातु का बना होता है और दूसरा इलेक्ट्रॉड लैड डाइऑक्साइड का बना होता है। ये दोनों ही इलेक्ट्रॉड तनु गंधक के अम्ल में डूबे रहते हैं। इस सेल में आसवित जल (distilled water) की आवश्यकता होती है। ऐसा एक सेल 2 वोल्ट शक्ति का होता है।

धनात्मक प्लेट पर लैड डाइऑक्साइड गंधक के अम्ल के हाइड्रोजन और सल्फेट आयनों (ions) के साथ क्रिया करके लैड सल्फेट और पानी का निर्माण करता है। इस क्रिया में दो इलेक्ट्रॉन तार से प्राप्त किये जाते हैं, जो रासायनिक क्रिया को संतुलित करते हैं। ऋणात्मक प्लेट पर सीसा धातु सल्फेट आयनों के साथ क्रिया करके लैड सल्फेट बनाती है और बाहरी तार को दो इलेक्ट्रॉन देती है, जिससे विद्युत संतुलन हो जाता है। इसका शुद्ध प्रभाव यह होता है कि ऋणात्मक प्लेट से धनात्मक प्लेट की ओर इलेक्ट्रॉनों की धारा प्रवाहित होने लगती है।

जब सीसा या लैड डाइऑक्साइड समाप्त हो जाता है तो सेल काम करना बंद कर देते हैं। इन सेलों को ऋणात्मक से धनात्मक प्लेट की ओर विद्युत धारा प्रवाहित करके पुनः चार्ज किया जा सकता है। इस क्रिया में ऋणात्मक प्लेट पर लैड सल्फेट फिर से टूटकर लैड में परिवर्तित हो जाता है और धनात्मक प्लेट पर यह लैड डाइऑक्साइड में बदल जाता है।

दोबारा चार्ज करने की क्रिया के दौरान सेल को दी जाने वाली विद्युत ऊर्जा रासायनिक ऊर्जा में बदल कर लैड सल्फेट को लैड और लैड डाइऑक्साइड में तोड़ देती है तथा इस क्रिया में मुक्त हुए सल्फेट आयनों को पानी के साथ संयोग कराके हल्के गंधक के अम्ल में बदल देती है। जब सेल को फिर से प्रयोग किया जाता है तो यह रासायनिक ऊर्जा फिर से विद्युत ऊर्जा में बदल जाती है। इसलिए हम कह सकते हैं कि सेल को पुनः चार्ज करने में प्रयोग हुई ऊर्जा विद्युत सेल में जमा हो गई है।

क्षारीय बैटरियों (alkali storage battery) में अम्ल के स्थान पर पोटाशियम हाइड्रोक्साइड प्रयोग किया जाता है। इसमें भी दो इलेक्ट्रॉड होते हैं। सामान्य क्षारीय अम्ल में एक निकिल ऑक्साइड की प्लेट होती है तथा दूसरी लोहे की प्लेट होती है। दूसरे कुछ सेलों में निकिल ऑक्साइड का धनात्मक इलेक्ट्रॉड होता है और कैडमियम धातु का ऋणात्मक इलेक्ट्रॉड होता है। इन सेलों में बार-बार पानी डालने की आवश्यकता नहीं होती। यद्यपि इन सेलों का भार अम्लीय संचायक सेलों से कम होता है लेकिन इस प्रकार के प्रत्येक सेल से 1.2 वोल्ट विद्युत ही पैदा होती है। एक तीसरे प्रकार के क्षारीय संचायक सेल में सिल्वर ऑक्साइड और जिंक की प्लेटें होती हैं। इन सेलों से अधिक विद्युत ऊर्जा प्राप्त होती है लेकिन इनका प्रयोग अधिक प्रचलित नहीं है क्योंकि इनका निर्माण चांदी के कारण काफी महंगा पड़ता है।

हमारे देश में जाति-प्रथा कैसे शुरू हुई?

प्राचीन काल से ही हमारे देश में वर्ण-व्यवस्था का प्रचलन रहा है, जो समाज को विभिन्न समूहों में बांटती है। हमारे देश में मुख्य रूप से चार वर्ग हैं—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। यही वर्ण-व्यवस्था जाति-प्रथा का आधार है। किसी भी व्यक्ति की जाति उसके जन्म के अनुसार निश्चित होती है अर्थात् एक व्यक्ति जिस जाति में जन्म लेता है, उसकी वही जाति मानी जाती है।

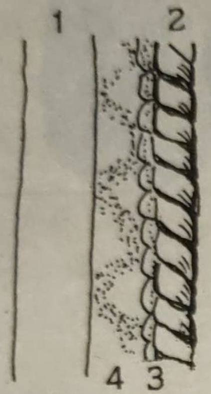
हमारे देश में ब्राह्मण जाति को सबसे ऊंचा माना जाता है। पुरातन विचारों के अनुसार इस जाति का प्रमुख कार्य वेदों को पढ़ना, पढ़ाना तथा अध्ययन द्वारा ज्ञान प्राप्त करना है। क्षत्रियों को लड़ाकू और शासन करने वाली जाति माना गया है। तत्पश्चात् वैश्य आते हैं, जिनका काम व्यापार तथा कृषि इत्यादि करना था। शूद्रों का कार्य इन तीनों जातियों की सेवा करना था। मध्यकाल में एक जाति और भी बन गई थी, जिसे अछूत कहते हैं।

भारत में नीची जातियों के परिवार में जन्मा व्यक्ति शिक्षा और धन द्वारा अपने को उच्च जाति में नहीं बदल सकता। हमारे देश में प्रत्येक जाति में दूसरी जाति के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के विरुद्ध सख्त नियम बनाये गये हैं। इन नियमों का उल्लंघन करने वाले व्यक्तियों को उस जाति के मुखिया सजा दे सकते हैं लेकिन जैसे-जैसे देश में आधुनिकता आती जा रही है, इन नियमों में भी परिवर्तन आते जा रहे हैं। फिर भी भारतीय समाज में जाति-प्रथा का आज भी काफी बोलबाला है।

अब प्रश्न यह उठता है कि भारत में यह जाति-प्रथा कब और कैसे शुरू हुई? एक सिद्धान्त के अनुसार जब ईसा से 1500 वर्ष पहले आर्य भारत में आए तो उन्होंने व्यक्तियों के कार्यों के अनुसार उन्हें चार वर्णों में बांटा। उस समय व्यक्ति की जाति उसके जन्म से नहीं बल्कि उसके कार्य से निश्चित की जाती थी। आर्य कद-काठी के लम्बे-चौड़े और साफ रंग के होते थे। उनका सामाजिक जीवन सुसंयोजित था। प्रत्येक जाति का अपना-अपना कार्य होता था। कार्यों के अनुसार ही लोगों को विभिन्न जातियों में बांटा जाता था, जबकि आजकल जन्म के अनुसार व्यक्ति की जाति निश्चित होती है।

भारत के संविधान के अनुसार किसी भी व्यक्ति को जाति के अनुसार ऊंचा-नीचा नहीं माना जा सकता और न ही जाति के आधार पर किसी को किसी सुविधा से वंचित किया जा सकता है। यद्यपि संविधान के कारण जाति-प्रथा में कुछ सुधार हुए हैं लेकिन फिर भी जाति-प्रथा भारत में खूब फल-फूल रही है और ऐसा विश्वास किया जाता है कि जाति-प्रथा आने वाले समय में भी लम्बी अवधि तक चलती रहेगी। इस बात का कारण यह है कि हमारे देश में हजारों वर्षों से चली आ रही जाति-प्रथा एक प्रकार का धार्मिक संस्थान बन गयी है।

ऊन हमें गर्म क्यों रखती है?



1 Skin

2 Woollen cloth, a good insulator

3 Projecting Fibres which cause the formation of a layer of air

4 Layer of air, more insulating than the wool itself



A pound of wool can absorb upto $2\frac{1}{2}$ ounces of water.

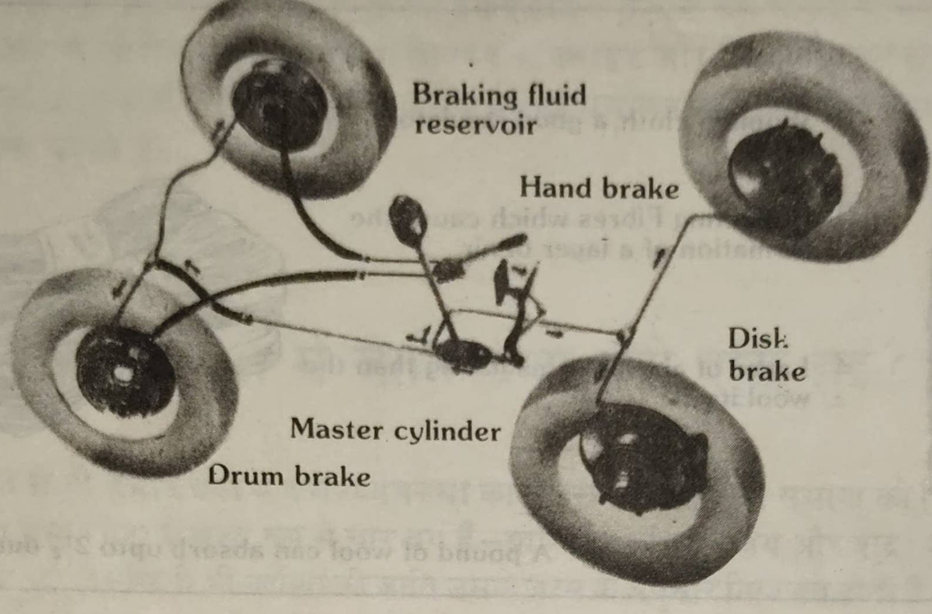
संसार में 90 करोड़ से भी अधिक भेड़ें हैं, जिनमें से 15 करोड़ से कहीं अधिक भेड़ें अकेले आस्ट्रेलिया में हैं। इन्हीं भेड़ों से हमें ऊन प्राप्त होता है, जिससे भांति-भांति के कपड़े बनाए जाते हैं। ये कपड़े हमारे शरीर को गर्म रखते हैं। क्या तुम जानते हो कि ये ऊनी कपड़े हमारे शरीर को कैसे गर्म रखते हैं?

हम जानते हैं कि हमारे शरीर का आन्तरिक तापमान 98.4° फेरेनहाइट होता है लेकिन बाहरी त्वचा का तापमान लगभग 91° फेरेनहाइट होता है। हमें गर्मी या ठंडक तब महसूस होती है, जब हमारे शरीर का कोई हिस्सा ऐसी वस्तु के सम्पर्क में आता है, जिसका तापमान हमारे शरीर के तापमान से अधिक या कम होता है।

जब हमारे आस-पास के वातावरण का तापमान लगभग 65° फेरेनहाइट होता है तो हमें बहुत अच्छा लगता है क्योंकि हमारे शरीर का तापमान इससे लगभग 25° अधिक होता है। ऐसी स्थिति में हमारे शरीर से निरन्तर रूप से ऊष्मा निकलतीं रहती है। यदि वातावरण का तापमान इससे कम होने लगता है तो हमें ठंड का अनुभव होने लगता है। ऐसी स्थिति से छुटकारा पाने के लिए हमारे कपड़े ऐसे होने चाहिएं, जो ऊष्मा के कुचालक (bad conductor) हों। ऊन ऊष्मा की कुचालक है तथा इसके रेशों (fibres) के बीच में बहुत सारी हवा बंद हो जाती है। हवा ऊन से भी अधिक ऊष्मा की कुचालक है, इसलिए हमारे शरीर से पैदा होने वाली ऊष्मा अधिक मात्रा में बाहर नही निकल पाती। ऊन के वस्त्र और शरीर के बीच में वायु की परत होने के कारण भी शरीर से ऊष्मा बाहर नहीं निकल पाती। इसलिए ऊनी कपड़े पहनने से हमें गर्मी का एहसास होता है।

ऊन का एक गुण यह भी है कि यह वायु की नमी को अवशोषित कर लेती है। एक पौंड ऊन 2.5 औंस जल को अवशोषित कर सकती है। फिर भी ऊन हमें सूखी ही लगती है। इस अवशोषित नमी को शक्तिशाली से शक्तिशाली मशीन भी नहीं निकाल सकती। अपने इसी गुण के कारण यह त्वचा से निकले हुए जलवाष्प को अवशोषित कर लेती है। त्वचा से निकला हुआ पसीना ऊन में अवशोषित हो जाता है और इस अवशोषित नमी से शरीर को कुछ गर्मी का एहसास होता है। नमी के अवशोषण से ऊन थोड़ा गर्म हो जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि ऊष्मा का कुचालक होने, नमी को अवशोषित करने और वायु को बंद करने के गुणों के कारण ही ऊन से हमारे शरीर को गर्मी प्राप्त होती है।

विभिन्न प्रकार के ब्रेक क्या होते हैं?



ब्रेक एक ऐसा प्रक्रम है, जो पहिये या धुरी जैसे गतिशील प्रक्रमों को धीमा करने या रोकने के काम आता है। चूकि सभी गतिशील वस्तुओं में गतिज ऊर्जा (kinetic energy) होती है, अतः ब्रेक मूलतः एक ऊर्जा अवशोषक (absorber) है। अधिकतर ब्रेक ऊर्जा-अवशोषण यांत्रिकीय या द्रव गतिकीय या विद्युतीय रूप में करते हैं।

यांत्रिकीय ब्रेक सबसे अधिक प्रयोग होते हैं। इनका प्रयोग मोटर वाहनों, साइकिलों और रेलगाड़ियों में होता है। ये ठीक घर्षण (friction) के आधार पर काम करते हैं। जब किसी सख्त पदार्थ से बने हिस्से को गतिशील भाग के साथ दबाया जाता है तो घर्षण पैदा होता है। साइकिल के ब्रेकों को जब रिम के साथ दबाया जाता है तो एक घर्षण पैदा होता है, जिससे पहिया रुक जाता है। ये ब्रेक केबलों (cables) और उत्तोलकों (levers) से प्रचालित होते हैं।

मोटर वाहनों के ब्रेक द्रवगतिकीय प्रणाली द्वारा काम करते हैं। इनमें ब्रेक पर लगा बल द्रव द्वारा संचरित होता है। यह द्रव एक द्रवाशय (fluid reservoir) में होता है। भारी ट्रकों, बसों और रेलगाड़ियों में यांत्रिक ब्रेक प्रणाली को चलाने के लिए संपीडित वायु (compressed air) प्रयोग में लायी जाती है।

ड्रम ब्रेक (drum brake) प्रणाली में दो वक्राकार टुकड़े एक ड्रम के अन्दर लगे होते हैं और ड्रम का संबंध पहिए के साथ होता है। जब ब्रेक के टुकड़ों को ड्रम के अन्दर की सतह के साथ दबाया जाता है तो ब्रेक लगने की क्रिया होती है। डिस्क के आकार के ब्रेकों में समतल पैड (pad) होते हैं, जिन्हें डिस्क की बाहरी सतह के साथ दबाया जाता है। इस डिस्क का संबंध पहिए के साथ होता है।

सन् 1869 में अमरीका के जार्ज वेस्टिंग हाउस ने तीव्र क्रियाशील स्वचालित वायु ब्रेकों का आविष्कार किया। इस प्रकार के ब्रेक पटरियों (rails) पर चलने वाली गाड़ियों में प्रयोग किए जाते हैं। इनमें संपीडित वायु प्रयोग की जाती है। वेस्टिंग हाउस द्वारा खोजे हुए ब्रेकों का सुधरा हुआ रूप आज भी अमरीका तथा दूसरे देशों में रेलगाड़ियों में प्रयोग किया जाता है।

वायुयानों में भी मोटरवाहनों जैसे कई प्रकार के यांत्रिक ब्रेक प्रयोग में लाए जाते हैं। एक जेट वायुयान का वेग इंजन के प्रणोद (thrust) को उलटा करके कम किया जा सकता है।



मोम (Wax) कैसे बनाया जाता है?

मोम एक ठोस वसीय पदार्थ होता है, जो बहुत से तलों के ऊपर सुरक्षा परत चढ़ाने के लिए प्रयोग किया जाता है। इससे मोमबत्ती और पालिश भी बनाई जाती है। मोमिया कागज हमारे आमतौर से काम आने वाली वस्तु है। क्या तुम जानते हो कि मोम हमें कहां से प्राप्त होता है?

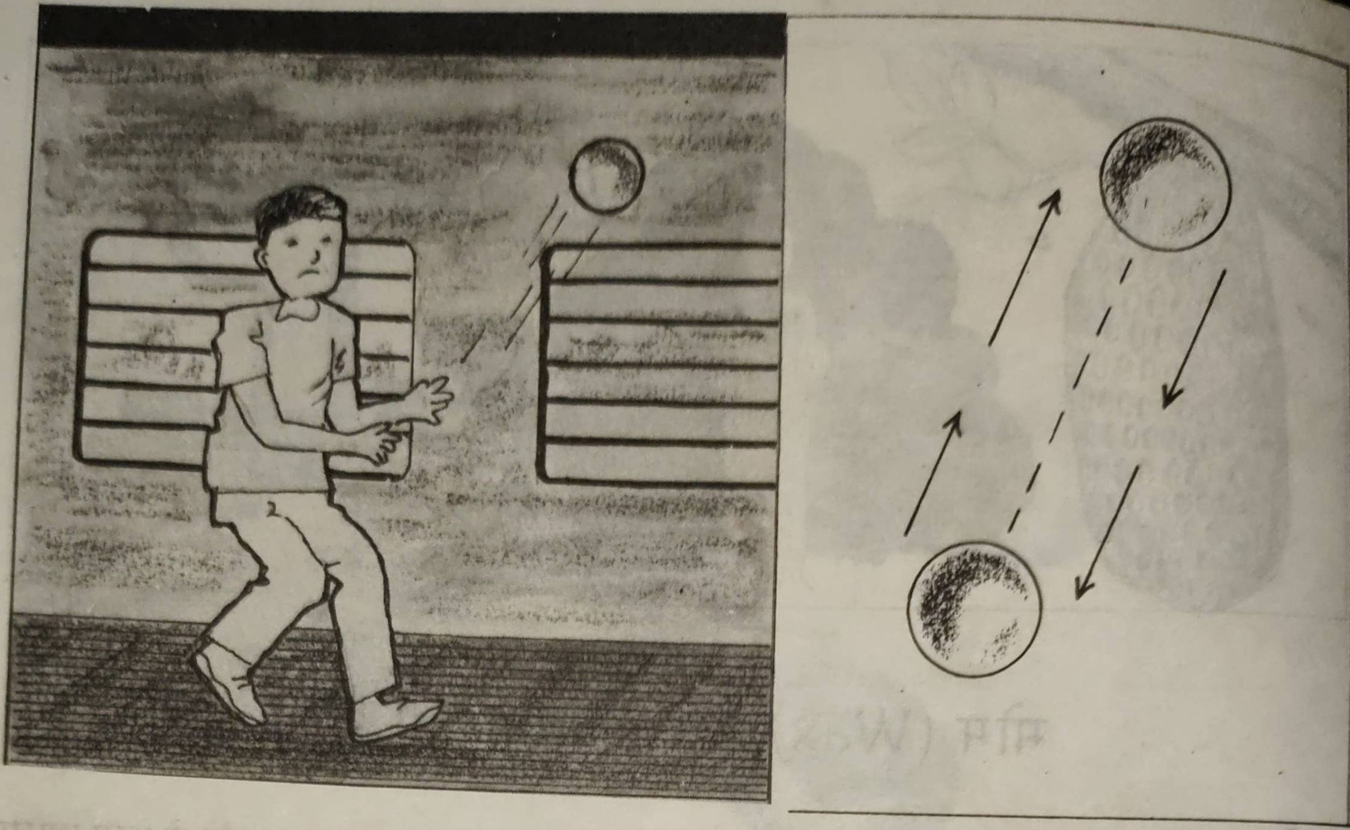
सामान्य ताप पर मोम ठोस अवस्था में होता है लेकिन गर्म करने पर यह ढीला होकर पिघल जाता है। बहुत से पेड़-पौधों से प्राप्त होने वाले फलों और तरकारियों तथा पत्तियों पर मोम की एक सुरक्षा परत होती है। मोम हमें जानवरों से भी प्राप्त होता है। कुछ खनिजों और पेट्रोलियम से भी हमें मोम प्राप्त होता है। आजकल कुछ ऐसी कृत्रिम विधियों का भी विकास हो गया है, जिनके द्वारा संश्लेषित (synthetic) मोम बनाया जा सकता है।

इन सभी स्रोतों के आधार पर हम मोम को चार वर्गों में बांट सकते हैं: 1. खनिज मोम, 2. जन्तु मोम, 3. फल और सब्जियों से प्राप्त मोम, 4. कृत्रिम मोम। पैराफिन नामक मोम एक खनिज मोम है; जो हमें पेट्रोलियम से प्राप्त होता है। यह काफी सख्त होता है। पेट्रोलियम जैली नामक मोम काफी मुलायम होता है तथा औषधियों में प्रयोग किया जाता है। आजकल प्रयोग में आने वाला 90 प्रतिशत से भी अधिक मोम, हमें पेट्रोलियम से ही प्राप्त होता है। इसके बहुत से उपयोग हैं क्योंकि यह गंधरहित, स्वादरहित और रासायनिक रूप से अक्रियाशील है।

शहद की मक्खियों से प्राप्त होने वाला मोम जन्तु मोम की श्रेणी में आता है। यह आमतौर पर शृंगार प्रसाधनों, मोमबत्तियों, पालिशों और कृत्रिम फूलों के निर्माण में प्रयोग होता है। वूल-वैक्स हमें ऊन वाले जानवरों से मिलता है। इसे लेनोलिन (lanolin) कहते हैं।

पेड़-पौधों से हमें कई प्रकार के मोम प्राप्त होते हैं। कारनोबा (carnauba) मोम, कारनोबा ताड़ वृक्ष की पत्तियों से प्राप्त होता है। इसके पौधे ब्राजील में होते हैं। यह मोम बहुत सख्त होता है, इसलिए फर्श और फर्नीचर की पालिशों में प्रयोग किया जाता है। कैंडोलिला मोम हमें मैक्सिको और दक्षिण-पश्चिमी अमरीका में उगने वाले इसी नाम के पौधों से प्राप्त होता है। यह भूरे रंग का होता है तथा फोनोग्राफ के रिकार्डों में प्रयोग किया जाता है। बे-बेरी नामक एक झाड़ीदार वनस्पति होती है। इसकी बेरीज (berries) से हमें बे-बेरी नामक मोम प्राप्त होता है, जिससे मोमबत्तियां बनाई जाती हैं।

संश्लेपित मोम हाइड्रोजन, कार्बन तथा ऑक्सीजन के संयोग द्वारा बनाया जाता है। निश्चित गुणों वाले मोम के निर्माण के लिए अलग-अलग सूत्र (formulae) होते हैं।



चलती रेलगाड़ी में उछाला गेंद कहां गिरेगा?

इस प्रश्न के उत्तर में शायद तुम सोचोगे कि चलती रेलगाड़ी के डिब्बे से उछाला गेंद उछालने वाले व्यक्ति के पीछे गिरेगा क्योंकि गेंद को ऊपर जाने और नीचे आने में कुछ समय लगेगा और इस समय में गेंद उछालने वाला व्यक्ति रेलगाड़ी के साथ आगे बढ़ जाएगा। वास्तव में इस प्रश्न का उत्तर यह नहीं है।

इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए इस प्रयोग को तुम स्वयं कर सकते हो। तुम्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि चलती गाड़ी के डिब्बे में उछाला गेंद ठीक तुम्हारे हाथों पर ही आकर गिरता है। क्या तुम जानते हो कि ऐसा क्यों होता है? चलती रेलगाड़ी में रखी सभी वस्तुएं रेलगाड़ी के साथ ही गति करने लगती हैं। रेलगाड़ी में लगे पंखे, उसमें बैठी सवारिया, तुम और तुम्हारे हाथ का गेंद, सभी कुछ रेलगाड़ी के वेग से गतिशील होते हैं। जब तुम गेंद को ऊपर फेंकते हो तो रेलगाड़ी का वेग भी इसके साथ निहित होता है। जब गेंद को ऊपर फेंका जाता है तो इसके क्षैतिज (horizontal) वेग के साथ-साथ ऊर्ध्वाधर (vertical) वेग और जुड़ जाता है। रेल में चलने वाले यात्रियों को इसकी क्षैतिज गति दिखाई नहीं देती। गेंद केवल ऊपर-नीचे जाती दीखती है।

रेल से बाहर जमीन पर खड़े एक ऐसे व्यक्ति की कल्पना करो, जो तुम्हारे इस प्रयोग को देख रहा है। जैसा कि हम बता चुके हैं, गेंद में क्षैतिज और ऊर्ध्वाधर, दो गतियां हैं। ये दोनों गतियां एक-दूसरे से मिलकर एक परवलयी (parabolic) मार्ग निर्मित करती हैं। बाहर खड़ा व्यक्ति इस गेंद को परवलयी रास्ते से जाता हुआ देखेगा लेकिन रेलगाड़ी में खड़ा व्यक्ति इसे केवल ऊपर-नीचे जाते हुए देखेगा।

अब प्रश्न उठता है कि क्या गेंद केवल ऊपर नीचे जाता है या परवलयी रास्ते से गुजरता है। इन दोनों में से कौन-सा सही उत्तर है। वास्तव में सभी गतियां देखने में सापेक्ष (relative) होती हैं। परमगति (absolute motion) का कोई तात्पर्य नहीं है। यही कारण है कि रेलगाड़ी में उछाले गेंद की गतियां दो दर्शकों को भिन्न-भिन्न दीखती हैं। रेलगाड़ी के बाहर खड़े व्यक्ति के लिए गेंद परवलयी रास्ता तय करता व्यक्ति के हाथ में आता है लेकिन रेलगाड़ी में खड़े आदमी के लिए गेंद ऊपर-नीचे ही गति करता है। सापेक्ष गति के और भी ऐसे बहुत से उदाहरण हैं।

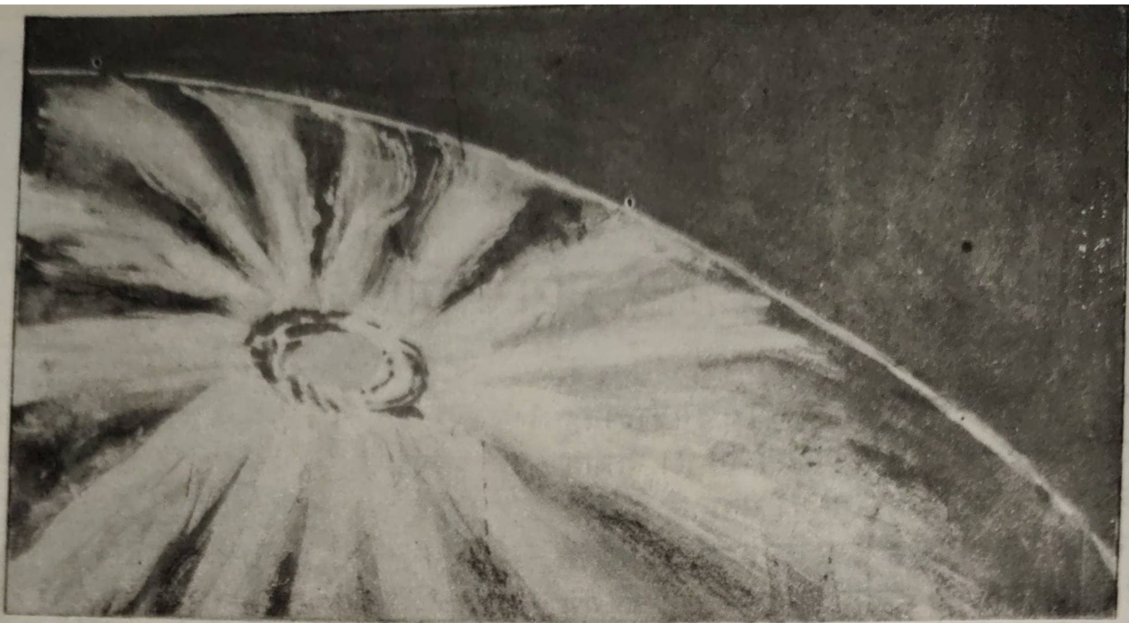
चन्द्रमा के सागर क्या हैं?



चन्द्रमा को नंगी आंखों से देखने पर उसकी सतह पर हमें कुछ काले धब्बे दिखाई देते हैं। प्राचीन मानव का विचार था कि चन्द्रमा की सतह के ये काले धब्बे पानी से भरे सागर हैं जैसा कि हमारी धरती के सागर हैं। गैलिलियो ने चन्द्रमा के इन धब्बों को सन् 1609 में अपने बनाए हुए दूरदर्शी से देखा। उन्हें ये काले धब्बे सपाट सागरों के रूप में दिखाई दिए। इसलिए इन्हें चन्द्रमा के सागरों का नाम दे दिया गया। वास्तव में ये सूखे सपाट मैदान हैं, जहां पानी का निशान भी नहीं है लेकिन पुरानी धारणा के अनुसार इन्हें आज भी हम सागर कहते हैं। खगोलज्ञ (astronomers) इन सागरों को मेरिया (maria) कहते हैं। गैलिलियो ने चन्द्रमा के कुछ चमकीले क्षेत्रों का भी अध्ययन किया। ये चमकीले क्षेत्र वास्तव में ऊंचे पहाड़ थे। चन्द्रमा के कुछ पहाड़ तो लगभग एक हजार मीटर तक ऊंचे हैं अर्थात् इनकी ऊंचाई एवरेस्ट से भी अधिक है। आश्चर्य की बात तो यह है कि गहरे विशाल मैदान चन्द्रमा की हमारी तरफ वाली सतह पर ही हैं। दूसरी ओर की सतह पर इनकी संख्या बहुत ही कम है। दूसरी सतह लगभग पर्वतमालाओं से ही ढकी है।

चन्द्रमा के इन सपाट मैदानों को दो वर्गों में बांटा जा सकता है। पहले वर्ग में वे सागर आते हैं, जो लगभग वृत्ताकार हैं। दूसरे प्रकार के मैदान अनियमित आकार के हैं। वृत्ताकार सागर सामान्यतः पर्वतों से घिरे हैं। मेअर इम्ब्रियम (सी ऑफ शावर्स) और मेअर क्विरियन (सी ऑफ क्राइसिस) चन्द्रमा की हमारी ओर की सतह पर ऐसे ही सागर हैं। मेअर मोस्कोविन्स (सी ऑफ मास्को) चन्द्रमा की दूसरी ओर की सतह पर एक ऐसा ही सागर है। अनियमित सागरों में मेअर ट्रेन्क्विलिटाटिस (सी ऑफ ट्रेन्क्विलिटी) और ओसिनस प्रोसैलरम (ओशन ऑफ स्टोर्म्स) आते हैं जिनके किनारों पर विशेष पर्वतमालाएं नहीं हैं।

चन्द्रमा के ये सागर तांबे की परतों से ढके हुए हैं। इन सागरों का निर्माण सम्भवतः तीव्र वेग से गिरते हुए विशाल क्षुद्र ग्रहों या उल्कापिंडों के चन्द्रमा की सतह से टकराने के कारण हुआ होगा। इनकी टकराहट से चन्द्रमा की सतह फट गई होगी या ज्वालामुखी फूट पड़े होंगे, जिनके कारण चन्द्रमा के आन्तरिक भाग से विशाल लावा बहकर सतह पर जम गया होगा। चन्द्रमा की सतह की चट्टानों की संरचना बासाल्ट (bassalt) से मिलती-जुलती है। अपोलो यानों के अन्तरिक्षयात्रियों द्वारा इन सागरों की चट्टानों के नमूने एकत्रित किए गए और उनका अध्ययन किया गया। इन अध्ययनों से ऐसा लगता है कि इन सागरों के बेसिन लगभग 350 करोड़ वर्ष पहले भरने आरम्भ हुए थे। चन्द्रमा के पर्वतीय भागों की उत्पत्ति सागरों से पहले हुई थी। अधिकतर पर्वतमालाएं इन सागरों को घेरे हुए हैं।



चन्द्रमा की किरणें क्या हैं?

यह हम सबको भली भांति ज्ञात है कि चन्द्रमा अपने प्रकाश से प्रकाशित नहीं होता बल्कि सूर्य के प्रकाश के परावर्तन (reflection) द्वारा ही यह चमकता है। सबसे बड़े रहस्य की बात तो यह है कि चन्द्रमा की सतह से ये किरणें कैसे निकलती हैं?

चन्द्रमा की किरणें वे चमकीली लकीरें हैं, जो टायको, कोपरनिकस तथा कैपलर जैसे विशाल गड्ढों से सभी दिशाओं में निकलती हैं। ये छोटे गड्ढों से भी निकलती हैं। टायको से निकलने वाली कुछ किरणें तो इतनी लम्बी होती हैं कि वे एक हजार मील से भी अधिक दूरी तक फैल जाती हैं। चन्द्रमा की सतह पर बहुत अधिक संख्या में गड्ढे हैं। इनमें से अधिकतर गड्ढों का निर्माण उल्कापिंडों के टकराने से हुआ है। इनमें से कुछ निश्चय ही ज्वालामुखियों के फटने से बने हैं। इन गड्ढों की दीवारें ढलवां हैं।

अभी तक कोई भी इस बात को निश्चयपूर्वक ज्ञात नहीं कर पाया है कि आरम्भ में इन किरणों की उत्पत्ति कैसे हुई या इनमें क्या है? इनके विषय में सबसे अधिक प्रचलित सिद्धान्त यह है कि ये उन चट्टानों के कणों की धारायें हैं, जो गड्ढों के निर्माण के समय उल्कापिंडों के टकराने से प्रकीर्णित हो गए थे।

ये कण किस प्रकार प्रकीर्णित हुए होंगे, इस बात को एक सरल प्रयोग द्वारा दर्शाया जा सकता है। एक काले कागज पर कुछ टैल्कम पाउडर डालो और उस पर तेजी के साथ एक चम्मच का गोल वाला भाग टकराओ। कागज पर पड़ा पाउडर सभी दिशाओं में इस प्रकार तितर-बितर हो जाएगा, जिस प्रकार चन्द्रमा पर किरणें दिखाई देती हैं। चूंकि चन्द्रमा पर कोई वायुमंडल नहीं है, जिससे धूल के इन कणों की आपसी संरचना में विघ्न पड़ सके। यही कारण है कि धूल के छितरे हुए इन कणों का आज भी वही रूप है जैसा कि निर्माण के समय था। धूल की इन्हीं रेखाओं से सूर्य का प्रकाश परावर्तित हो जाता है, जो हमें चन्द्र-किरणों के रूप में दिखाई देता है।

एक दूसरे सिद्धान्त के अनुसार इन किरणों की उत्पत्ति चन्द्रमा के उस पदार्थ से होती है, जो उल्कापात के कारण गड्ढा निर्मित होने में इधर-उधर गिर गया था। उल्कापिंड के टकराने से पैदा हुई ऊष्मा और विस्फोट ने इस पदार्थ को पिघला दिया होगा और कांच जैसा पदार्थ निर्मित कर दिया होगा। ये कांच के टुकड़े गड्ढों के इर्द-गिर्द जमा हो गये हैं और यही टुकड़े सूर्य के प्रकाश को परावर्तित करते हैं। इस आधार पर इस तथ्य की विवेचना की जा सकती है कि चन्द्रमा की कलाओं के बदलने से इन किरणों की चमक भी बदलती है।

ऊपर चित्र में, टायको नामक विशाल गड्ढे से प्रकीर्णित किरणों को दिखाया गया है। ये किरणें दो हजार मील से भी अधिक दूरी तक फैलती हैं और चन्द्रमा की दूसरी सतह से ऊपर की ओर अन्तरिक्ष में विलीन हो जाती हैं।

विभिन्न राष्ट्रीय पुरस्कार (National Awards) क्या हैं?



साहित्य, कला, विज्ञान, सेना, खेल इत्यादि विभिन्न क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों के लिए अनेक राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं। मोटे रूप से इन्हें तीन वर्गों में बांटा जा सकता है:—

(1) असैनिक पुरस्कार।
(2) वीरता पुरस्कार।
(3) विशेष सेवा पुरस्कार।

1. असैनिक पुरस्कार : इस प्रकार के चार पुरस्कार हैं:—

(क) भारत-रत्न : भारत का यह सबसे महत्त्वपूर्ण पुरस्कार है। यह पुरस्कार कला, साहित्य, विज्ञान और समाज-सेवा में किये गये अभूतपूर्व कार्यों के लिए दिया जाता है। इसमें कांस्य धातु से बनी पीपल की पत्ती दी जाती है, जिसकी लम्बाई 5.8 सेमी., चौड़ाई 4.7 सेमी. तथा मोटाई 3.1 मिमी. होती है। पत्ती के एक ओर सूर्य बना होता है, जिसके नीचे हिन्दी में 'भारत-रत्न' खुदा होता है। पत्ती के दूसरी ओर राष्ट्रीय-चिह्न और वाक्यांश अंकित होता है। राष्ट्रीय चिह्न सूरज और पत्ती के किनारे प्लैटिनम (platinum) धातु से बने होते हैं।

(ख) पद्म विभूषण : यह पुरस्कार सरकारी सेवा सहित किसी भी क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य के लिए प्रदान किया जाता है। इस पुरस्कार में एक वृत्ताकार डिजाइन बना होता है जिस पर एक ज्यामितीय (geometrical) नमूना बना होता है। इस वृत्ताकार भाग का व्यास (diameter) 4.4 सेमी. तथा मोटाई 0.6 मिमी. होती है। इसके एक ओर कमल का फूल बना होता है, जिस पर हिन्दी में 'पद्म विभूषण' लिखा होता है। इसके दूसरी ओर राष्ट्रीय-चिह्न और वाक्यांश अंकित होता है। यह भी कांस्य धातु से बना होता है। इस पर श्वेत स्वर्ण से खुदाई की जाती है। यह दूसरा उच्चतम् तथा महत्त्वपूर्ण पुरस्कार है।

(ग) पद्म भूषण : यह पुरस्कार सरकारी कर्मचारियों सहित किसी भी व्यक्ति को अपने क्षेत्र में किये गये विशिष्ट कार्यों के लिए दिया जाता है। इसका डिजाइन भी पद्म विभूषण जैसा होता है। इसके एक ओर कमल के फूल के ऊपर 'पद्म' और नीचे 'भूषण' शब्द अंकित होता है। इसके दोनों ओर लिखाई का काम सोने से किया गया होता है।

(घ) पद्म श्री : यह पुरस्कार सरकारी कर्मचारियों सहित किसी भी व्यक्ति को क्षेत्र-विशेष में किये गये उल्लेखनीय कार्य के लिए दिया जाता है। इस पुरस्कार में भी कमल के फूल के ऊपर 'पद्म' और नीचे 'श्री'

अंकित होता है। एक ओर ज्यामितीय (geometrical) नमूना बना होता है। इस पर लिखाई स्टेनलैस स्टील से की जाती है।

उपरोक्त सभी पुरस्कार गणतंत्र दिवस के अवसर पर दिये जाते हैं।

2. वीरता पुरस्कार : साहसिक और वीरतापूर्ण प्रयासों के लिए भी पुरस्कार दिये जाते हैं। इनमें निम्नलिखित छह पुरस्कार आते हैं:–

(क) **परमवीर चक्र** : जल, थल तथा वायु तीनों सेनाओं के किसी भी सैनिक अथवा अधिकारी द्वारा किये गये किसी भी साहसिक तथा वीरतापूर्ण कार्य के लिए यह पुरस्कार दिया जाता है। इस पुरस्कार में वृत्ताकार पदक दिया जाता है, जो कांस्य धातु से बना होता है। इस पदक पर इन्द्र के चार वज्र और बीच में राष्ट्रीय-चिह्न बने होते हैं। पदक के दूसरी ओर हिन्दी और अंग्रेजी में 'परमवीर चक्र' अंकित होता है। इसी ओर मध्य में कमल के दो फूल बने होते हैं।

(ख) **महावीर चक्र** : साहस के उल्लेखनीय कार्यों के लिए प्रदत्त पुरस्कारों में यह दूसरा उच्चतम् पुरस्कार है। पुरस्कार में दिया जाने वाला पदक रजत् मान (standard silver) से बना होता है तथा वृत्ताकार रूप में होता है। इसके एक ओर पांच किनारों वाला सितारा बना होता है तथा दूसरी ओर हिन्दी और अंग्रेजी में 'महावीर चक्र' लिखा होता है। इसके मध्य में भी कमल के दो फूल बने होते हैं।

(ग) **वीर चक्र** : वीरता के लिये प्रदत्त यह तीसरा उच्चतम् पुरस्कार है। इस पुरस्कार का पदक वृत्ताकार होता है और चांदी से बना होता है। इसके एक ओर पांच किनारों वाला सितारा बना होता है। इसके केन्द्र में अशोक चक्र बना होता है तथा दूसरी ओर हिन्दी और अंग्रेजी में 'वीर चक्र' लिखा होता है। इसके मध्य में भी कमल के दो फूल बने होते हैं।

(घ) **अशोक चक्र** : यह पदक साहसपूर्ण कार्य अथवा त्याग के लिए दिया जाता है। वृत्ताकार रूप में बना यह पदक गिल्ट (सोने) से बना होता है। इसके एक ओर अशोक चक्र अंकित होता है, जो कमल के फूलों से घिरा होता है। किनारों पर कमल की पत्तियां, फूल और कलियां बनी होती हैं। दूसरी ओर 'अशोक चक्र' लिखा होता है। खाली जगह में कमल के फूल बने होते हैं।

(ङ) **कीर्ति चक्र** : यह पुरस्कार भी बहादुरी के लिये दिया जाता है। इस पुरस्कार का वृत्ताकार पदक चांदी से बना होता है। इसमें भी वही सब कुछ बना होता है जो अशोक चक्र में होता है।

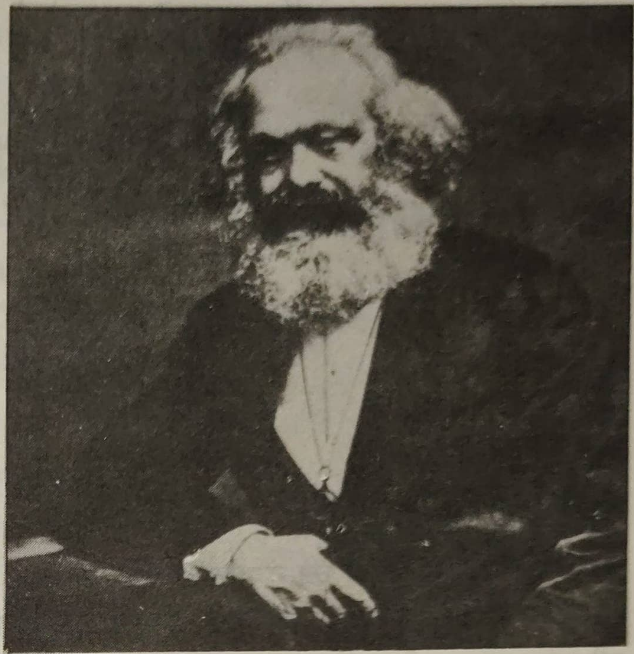
(च) **शौर्य चक्र** : यह पुरस्कार भी बहादुरी के लिये दिया जाता है। इसकी बनावट भी अशोक चक्र जैसी ही होती है। अन्तर केवल इतना होता है कि यह कांस्य धातु से बना होता है।

परम विशिष्ट सेवा पदक, अति विशिष्ट सेवा पदक और विशिष्ट सेवा पदक सराहनीय सेवाओं के लिये दिये जाते हैं। ये तीनों सेनाओं के सैनिकों को प्रदान किये जाते हैं। परम विशिष्ट सेवा पदक सोने से, अति विशिष्ट सेवा पदक चांदी से और सेवा पदक कांसे से बना होता है। ये सभी पदक वृत्ताकार रूप में बने होते हैं। इनके एक ओर पांच किनारों वाला सितारा तथा दूसरी ओर शेर का चिह्न होता है।

इसके अतिरिक्त जीवन-रक्षा पुरस्कार भी दिये जाते हैं, जो आग में जलने तथा पानी में डूबते हुए व्यक्तियों को बचाने वालों को प्रदान किये जाते हैं। इस वर्ग में सर्वोत्तम जीवन-रक्षा पदक, उत्तम जीवन-रक्षा पदक और जीवन-रक्षा पदक आते हैं।

इन तमाम पुरस्कारों के अतिरिक्त जवाहरलाल नेहरू पुरस्कार, भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार, संगीत-नाटक अकादमी पुरस्कार, साहित्य अकादमी पुरस्कार आदि भी राष्ट्रीय पुरस्कारों के अन्तर्गत आते हैं।

कार्ल मार्क्स कौन थे?



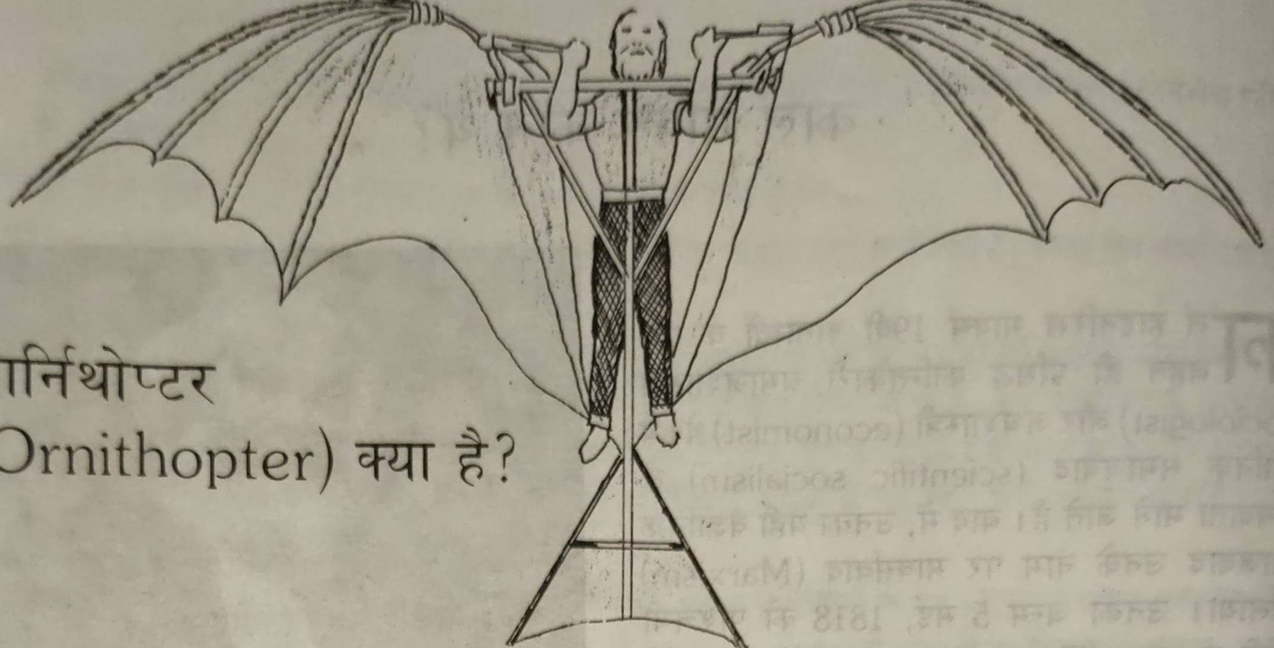
कार्ल हाइनरिख मार्क्स 19वीं शताब्दी के एक बहुत ही प्रसिद्ध क्रान्तिकारी समाजशास्त्री (sociologist) और अर्थशास्त्री (economist) थे। वे वैज्ञानिक समाजवाद (scientific socialism) के जन्मदाता माने जाते हैं। बाद में, उनका यही वैज्ञानिक समाजवाद उनके नाम पर मार्क्सवाद (Marxism) कहलाया। उनका जन्म 5 मई, 1818 को पश्चिमी जर्मनी के ट्रायर (Trier) नामक शहर में एक यहूदी परिवार में हुआ था। उनके पिता हाइनरिख एक वकील थे और जन-आन्दोलनों में भाग लेते रहते थे। कार्ल के जन्म के एक साल बाद उनके पिता ईसाई बन गए और 6 वर्ष की उम्र में कार्ल को भी ईसाई धर्म में दीक्षित कर दिया गया।

सन् 1830 से 1835 तक मार्क्स की शिक्षा ट्रायर के हाई स्कूल में हुई। अक्तूबर, 1835 में उन्होंने बॉन विश्वविद्यालय (Bonn University) से दसवीं कक्षा पास की। एक साल बाद उन्होंने बॉन विश्वविद्यालय छोड़कर बर्लिन विश्वविद्यालय में कानून और दर्शनशास्त्र की पढ़ाई आरम्भ कर दी। इसके बाद जेना विश्वविद्यालय में इतिहास पढ़ना आरम्भ किया। सन् 1842 में वे एक समाचारपत्र के संपादक बन गए और उन्होंने सामाजिक और आर्थिक विषयों पर लिखना आरम्भ किया लेकिन जब वह 25 वर्ष के थे, उन्हें यह समाचारपत्र बन्द कर जर्मनी छोड़ना पड़ा।

सन् 1843 में विवाह करके वे पेरिस चले गए। वहां उन्होंने फ्रेडरिक एंगेल्स के साथ हैगलवाद (Hagelianism) के विरुद्ध लिखना शुरू किया। इसके बाद उन्होंने निर्धनता के दर्शन (philosophy of poverty) से संबंधित कई किताबें लिखीं।

कुछ दिन पेरिस में रहने के बाद उन्हें फ्रांस छोड़कर लन्दन में शरण लेनी पड़ी। वे वहां काफी दीन अवस्था में अपने परिवार के साथ रहे। सन् 1859 में उन्होंने अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों से संबंधित प्रथम पुस्तक प्रकाशित कराई। यहीं उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक दास कैपिटल (Das Kapital) लिखी, जिसमें पूंजीपतियों के काम करने का तरीका बताया गया था। मार्क्स का विश्वास था कि उत्पादन का नियंत्रण कामगारों तथा मजदूरों के हाथों में होना चाहिए। अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में मार्क्स का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहा। 2 दिसम्बर, 1881 को पत्नी की मृत्यु और 11 जनवरी, 1883 में हुई बड़ी लड़की की मृत्यु से उनका दिल टूट गया।

फेफड़ों में फोड़ा होने के कारण 14 मार्च, 1883 को लन्दन में कार्ल मार्क्स का देहान्त हो गया। 17 मार्च, 1883 को उन्हें लन्दन के हाई गेट में दफनाया गया। उनकी कब्र पर यह लिखा हुआ है ''वर्कर्स ऑफ ऑल लैंड्स, यूनाइट'' (workers of all lands, unite) अर्थात् ''दुनिया के मजदूरो, एक हो।''



आर्निथोप्टर (Ornithopter) क्या है?

आर्निथोप्टर एक ऐसी मशीन है, जिसका निर्माण चिड़ियों की भांति पंख फड़फड़ा कर उड़ान भरने के लिए किया गया था। ऐसी मशीन का निर्माण 15वीं शताब्दी के अन्त में लियोनार्दो दाँ विन्शी ने किया था। उन्होंने इस प्रकार की मशीन के बहुत से चित्र और नमूने बनाये। लियोनार्दो दाँ विन्शी न केवल एक महान् गणितज्ञ थे बल्कि एक प्रसिद्ध पेंटर, इंजीनियर, मूर्तिकार और संगीतज्ञ भी थे। उन्होंने उड़ते हुए पक्षियों और वायु की गति का अध्ययन किया। इस अध्ययन से उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि पक्षी हवा में अपने पंख फड़फड़ाकर उड़ते हैं। ऐसा करना मानव के लिए भी सम्भव है। इसी विचार को कार्यान्वित करने के लिए उन्होंने आर्निथोप्टर का निर्माण किया। इसमें मनुष्य को अपनी भुजाओं और टांगों की सहायता से पंखों को फड़फड़ाना होता था।

आर्निथोप्टरों द्वारा बहुत से मनुष्यों ने उड़ान भरने के प्रयास किये। रॉबर्ट हुक ने ऐसे ही यान से सन् 1650 के लगभग इंगलैंड में उड़ान भरी। उन्होंने अपनी इस उड़ान को सफल बताया लेकिन साथ ही साथ उन्होंने हवा में रहने की तमाम कठिनाइयों के विषय में भी लिखा है। वह पहले व्यक्ति थे जिन्होंने यह अनुभव किया कि उड़ान के लिए पंखों की कोई आवश्यकता नहीं है।

आर्निथोप्टर से बहुत से मनुष्यों ने उड़ानें भरीं लेकिन सभी असफल रहीं। सन् 1890 के लगभग आक्टेव चेन्यूट (Octave-Chanute) ने इन उड़ानों की असफलता का कारण बताया। उन्होंने कहा कि अपनी भुजाओं और टांगों की सहायता से मनुष्य उड़ान के लिए आवश्यक शक्ति पैदा नहीं कर पाता।

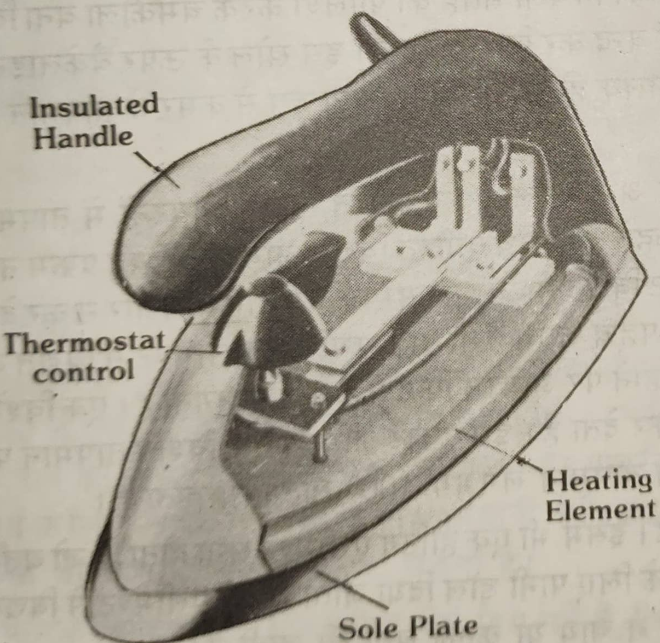
समय के साथ इन यानों के डिजाइनों में सुधार होता गया और इसके परिणामस्वरूप आधुनिक आर्निथोप्टरों का विकास हुआ। एक आदमी को ले जाने वाला हैलीकाप्टर एक ऐसा ही यान है। इसके द्वारा मनुष्य हवा में सीधा ही ऊपर-नीचे और आगे-पीछे उड़ान भर सकता है। ह्विरली विंग (Whirly wing) नामक मशीन भी एक ऐसा ही यान है, जो अमरीका की सेना द्वारा अपने स्काऊटों के लिए प्रयोग किया जाता है।

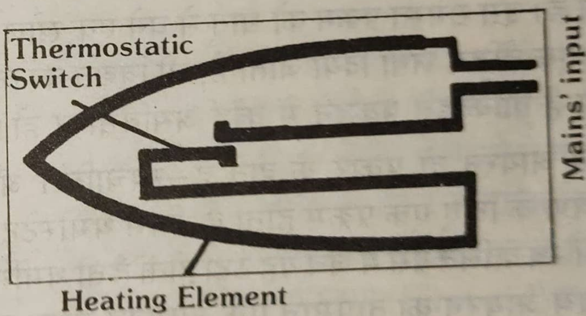
एरोसाईकिल (aerocycle) एक आदमी के लिए प्रयोग किये जाने वाले हैलीकाप्टर का एक सुधरा हुआ रूप है। इसका आकार ह्विरली विंग मशीन से कुछ बड़ा होता है। एक आदमी के लिए उड़ने वाली एक छोटी मशीन और भी है, जिसे फ्लाइंग प्लेटफार्म कहते हैं। इसका आकार डोनट (Doughnut) नामक मेवे जैसा होता है और इसके केन्द्र में एक पंखा होता है। यह पंखा ही प्लेटफार्म को ऊपर उठाता है और प्लेटफार्म के ऊपर आदमी खड़ा होता है। आदमी के झुकने से इस यान की क्षैतिज उड़ान नियंत्रित होती है।

वायु के गद्दे वाले वाहन हॉवरक्राफ्ट से मिलते-जुलते यान हैं। ये यान वायु के गद्दे पर फिसलते रहते हैं। यह गद्दे एक समतल पंखे द्वारा निर्मित किया जाता है, जो यान के नीचे अत्यन्त तीव्र गति से हवा फेंकता है। यही वायु का गद्दा यान को ऊपर उठाये रहता है। गद्दे को स्थिर रखने के लिए यान के बाहरी किनारे से एक लचीली स्कर्ट (flexible skirt) जुड़ी रहती है। यान में लगे प्रोपैलर इसे तेजी के साथ आगे बढ़ाते हैं। इन सतत् प्रयासों के बावजूद आज तक कोई ऐसा आर्निथोप्टर नहीं बन पाया है, जो अपने आप में पूर्ण हो।

विद्युत-तापित (Electrically heated) उपकरण कैसे काम करते हैं?

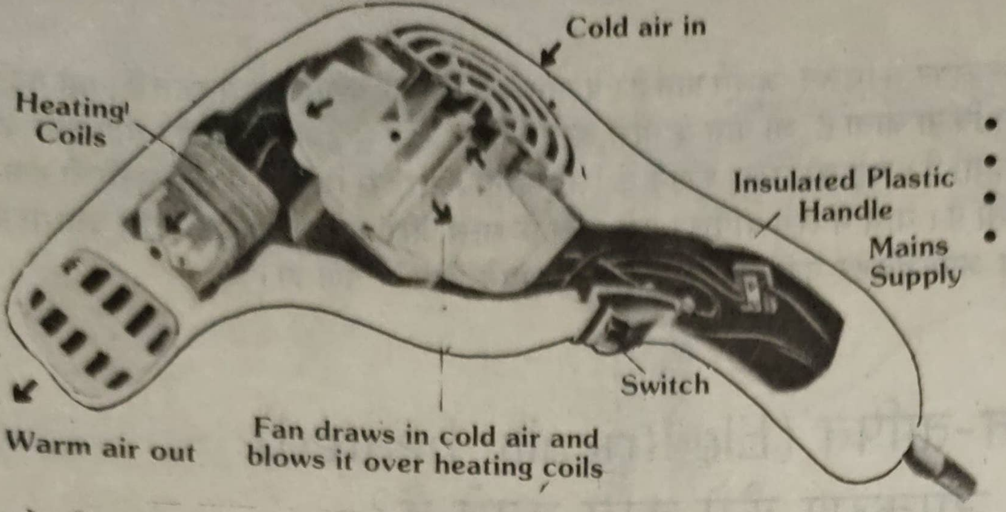
विद्युत हीटर, इमर्शन हीटर, विद्युत आयरन, बिजली की केतली आदि सभी ऐसे उपकरण हैं, जो विद्युत के जरिये ताप पैदा करते हैं। ये सभी उपकरण विद्युत के तापीय प्रभाव (heating effects) के आधार पर काम करते हैं। जब किसी तार से विद्युत-धारा गुजारी जाती है तो तार गर्म हो जाता है। तार का गर्म होना दो तथ्यों पर निर्भर करता है—एक तो तार के प्रतिरोध (resistance) पर और दूसरा विद्युत-धारा की मात्रा पर। तार में पैदा होने वाले ताप की मात्रा प्रतिरोध की तथा समायत विद्युत-धारा (square of the current) की समानुपाती (proportional) होती है। विद्युत-धारा जितने अधिक समय तक प्रवाहित होती है, ताप भी उतना ही अधिक पैदा होता है। इसको ही हम विद्युत का तापीय प्रभाव कहते हैं।





- थर्मोस्टेटिक स्विच (Thermostatic Switch)
- थर्मोस्टेट-नियंत्रण (Thermostat Control)
- विद्युतरोधी हैंडल (Insulated Handle)
- धातु का निचता तला (Sole Plate)
- मुख्य विद्युत-धारा का प्रवेश (Mains input)
- तापन तत्व (Heating Element)

विद्युत के तापीय प्रभावों के आधार पर बहुत से घरेलू उपकरण बिकसित किए गए हैं। इन सभी की कार्य-प्रणाली लगभग एक है—अन्तर केवल संरचना का है। एक विद्युत हीटर में नाइक्रोम (nichrome) के तार की एक कुंडली (coil) होती है, जो स्प्रिंग के रूप में बनी होती है। इस कुंडली को विद्युतरोधी मिट्टी के आधार (base) पर लगा दिया जाता है। जब इस कुंडली में विद्युत-धारा गुजारी जाती है तो नाइक्रोम का तार गर्म होकर लाल हो जाता है। रूम-हीटरों में भी ऐसी ही व्यवस्था होती है। अन्तर केवल इतना होता है कि नाइक्रोम का तार विद्युतरोधी छड़ों पर



लपेट दिया जाता है तथा इन छड़ों के पीछे एक परावर्तक (reflector) लगा दिया जाता है, जो तापीय विकिरण को किसी भी दिशा में भेज सकता है।

इमर्शन हीटर में भी तार लगा होता है, जो धातु की नली में डाल दिया जाता है। तार को नली से अलग करने के लिए रोधी पाउडर भर दिया जाता है। यह पाउडर विद्युत का तो कुचालक (bad conductor) होता है लेकिन ताप का कुछ हद तक सुचालक होता है। तार के दोनों सिरों का विद्युत से सम्पर्क कर देने पर यह गर्म हो जाता है। धातु की छड़ को पानी से भरी बाल्टी में डुबा दिया जाता है।

विद्युत आयरन धुले हुए कपड़ों से सलवटें हटाने के काम आता है। इस उपकरण में भी नाइक्रोम धातु का एक रिबन होता है, जो अभ्रक (mica) की दो पतली चादरों के बीच में दबा दिया जाता है। इससे ताप चारों ओर प्रेस के आधार में समान रूप से फैल जाता है। अभ्रक की इन चादरों को लोहे की एक भारी प्लेट में स्थापित कर दिया जाता है। यही प्लेट कपड़े की सतह के सम्पर्क में आती है। इसकी निचली सतह को पालिश करके चमकीला बना दिया जाता है। इस समस्त प्रक्रम को धातु से बने एक खोल में बन्द कर दिया जाता है। इस खोल के ऊपर बैकेलाइट से बना एक हैंडिल लगा दिया जाता है, जो विद्युत का कुचालक होता है। यह सामान्य रूप से कमरे के तापमान पर रहता है ताकि इसे पकड़ने में कोई असुविधा न हो।

विद्युत आयरन दो प्रकार के होते हैं—स्वचालित और अस्वचालित। स्वचालित विद्युत आयरनों में तापमान नियंत्रण के लिए एक प्रक्रम होता है, जिसे थर्मोस्टेट कहते हैं। अस्वचालित विद्युत आयरनों में यह प्रक्रम नहीं होता। स्वचालित प्रेस में जब यह ठंडा होता है तो थर्मोस्टेट विद्युत सप्लाई का सम्पर्क गर्म होने वाले तार से कर देता है। जब आयरन का तापमान एक उपयुक्त सीमा पर पहुंच जाता है तो यही थर्मोस्टेट एलीमैण्ट से विद्युत का सम्पर्क विच्छिन्न कर देता है। विद्युत से सम्पर्क विच्छेद होने पर आयरन फिर से ठंडा होने लगता है। एक विशेष तापमान पर थर्मोस्टेट फिर से विद्युत सम्पर्क स्थापित कर देता है। इस प्रकार आयरन एक विशेष तापमान पर बना रहता है। सूती कपड़ों के लिए विद्युत आयरन का तापमान लगभग 100° सेल्सियस होता है।

बिजली की केतली चाय या कॉफ़ी बनाने के काम आती है। इसमें भी एक हीटिंग एलीमेण्ट लगा होता है, जो बर्तन की तली में बैठा दिया जाता है। बर्तन में चाय या कॉफी के लिए पानी डाल दिया जाता है, जो एलीमेण्ट से विद्युत धारा गुजारने पर गर्म हो जाता है। इसी उबलते पानी से चाय या कॉफी बना ली जाती है।

ताप पैदा करने वाले सभी विद्युत उपकरणों के लिए उनका भू-योजन (earth-connection) होना बहुत जरूरी है। इमर्शन हीटरों के लिए यह आवश्यक है कि बिना पानी में डुबाए उन्हें चालू नहीं किया जाए।

विद्युत चालित कुछ दूसरे उपकरण भी हैं, जो विद्युत के तापीय प्रभाव पर आधारित हैं। विद्युत का बल्ब भी एक ऐसा ही प्रक्रम है, जिसमें लगातार विद्युत-धारा के प्रवाहित होने के कारण तार की कुंडली (wire coil) लाल होकर सफेद हो जाती है और प्रकाश देने लगती है।

प्राथमिक चिकित्सा क्या है?



अपने जीवनकाल में हम सभी को दुर्घटनाओं के कारण बहुत-सी चोटें लगती रहती हैं। इनमें से बहुत-सी चोटें ऐसी होती हैं, जिनकी चिकित्सा के लिए हमें डाक्टर की आवश्यकता होती है लेकिन बहुत-सी ऐसी छोटी-मोटी चोटें भी होती हैं, जिनके लिए डाक्टर की आवश्यकता नहीं होती। खेल के मैदान में गिरने से घुटनों पर खरोंच आ जाना, किसी टूटे हुए कांच या ब्लेड से त्वचा का कट जाना, रगड़ से त्वचा का छिल जाना या फिर गर्म चीजों के छूने से त्वचा का जल जाना आदि ऐसी ही कुछ छोटी-छोटी चोटें हैं। इन सबका उपचार घर में ही किया जा सकता है। घर में किए जाने वाले ऐसी छोटी चोटों के उपचार को ही प्राथमिक चिकित्सा (First-aid) कहते हैं।

ऐसी छोटी-मोटी चोटों को स्वयं ठीक करने की हमारी शरीर में ही एक प्रकृतिप्रदत्त क्षमता है और इसके लिए किसी जटिल उपचार की आवश्यकता नहीं होती। इनके उपचार के लिए केवल इस बात की आवश्यकता होती है कि घाव को उचित प्रकार से साफ रखा जाए और बाहरी कीटाणुओं के हमले के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान की जाए। इस कार्य के लिए आजकल त्वचा के साथ आसानी से चिपक जाने वाली पट्टियां बाजार में मिलती हैं, जिन्हें शरीर के किसी भी भाग पर चिपकाया जा सकता है।

प्राथमिक चिकित्सा के कुछ तरीके नीचे दिये गये हैं, जिन्हें शरीर के किसी अंग के कट जाने, छिल जाने से खून निकलने, कुचल जाने और जल जाने पर प्रयोग किया जा सकता है।

कटने की चिकित्सा—हमारी त्वचा आमतौर पर चाकू, कांच या ब्लेड से कभी-कभी कट जाती है। इससे रक्त वाहिनियां नष्ट हो जाती हैं और उनसे देर तक खून बहता रहता है। यह अधिक चिन्ता का विषय नहीं है। इस प्रकार के कटे हुए स्थानों को लिण्ट (lint) से ढक कर उस स्थान पर पट्टी बांध देनी चाहिए। एक या दो दिन बाद पट्टी हटाई जा सकती है और उस पर चिपकने वाली पट्टी (sticking plaster or tape) लगाई जा सकती है।

छिले जाने पर खून निकलने की चिकित्सा—घुटने और कोहनी के बल किसी ऊबड़-खाबड़ सतह पर गिर जाने से त्वचा की ऊपरी सतह छिल जाती है और उसमें से खून निकलने लगता है। इस प्रकार की चोट की चिकित्सा के लिए घाव को पहले हाइड्रोजन परॉक्साइड (Hydrogen peroxide) से अच्छी तरह से साफ करना चाहिए। पानी में कोई एण्टीसैप्टिक लोशन मिलाकर भी त्वचा के छिले भाग को साफ किया जा सकता है। साफ करने के बाद यदि त्वचा से खून न बह रहा हो तो छिले अंग को खुला छोड़ देना चाहिए। खून बहने की स्थिति में घाव को लिण्ट से ढककर एक-दो दिन के लिए पट्टी बांध देनी चाहिए।

कुचलने की चिकित्सा—शरीर के किसी अंग के कुचल जाने पर उस स्थान के ऊतक (tissues) नष्ट हो जाते हैं लेकिन वहां की त्वचा नहीं फटती। इनको उपचार की कोई आवश्यकता नहीं होती। ये स्वयं ही कुछ दिनों में ठीक हो जाते हैं।

जलने की चिकित्सा—किसी सामान्य गर्म वस्तु के छू जाने से त्वचा प्रायः लाल हो जाती है लेकिन अधिक गर्म वस्तुओं के सम्पर्क में आने से त्वचा पर फफोले भी पड़ जाते हैं। इससे त्वचा के ऊतक पूरी तरह से नष्ट हो जाते हैं। जलने से यदि त्वचा केवल लाल हो गयीहै तो किसी उपचार की आवश्यकता नहीं है। यदि त्वचा पर फफोले पड़ गये हैं तो उन्हें फोड़ना नहीं चाहिए क्योंकि वे नीचे बनने वाली त्वचा को सुरक्षा प्रदान करते हैं। इन फफोलों पर चिपकने वाली पट्टी बांध देनी चाहिए। लगभग एक सप्ताह में फफोले की ऊपरी त्वचा सूखकर गिर जाती है और नीचे नयी त्वचा आ जाती है।

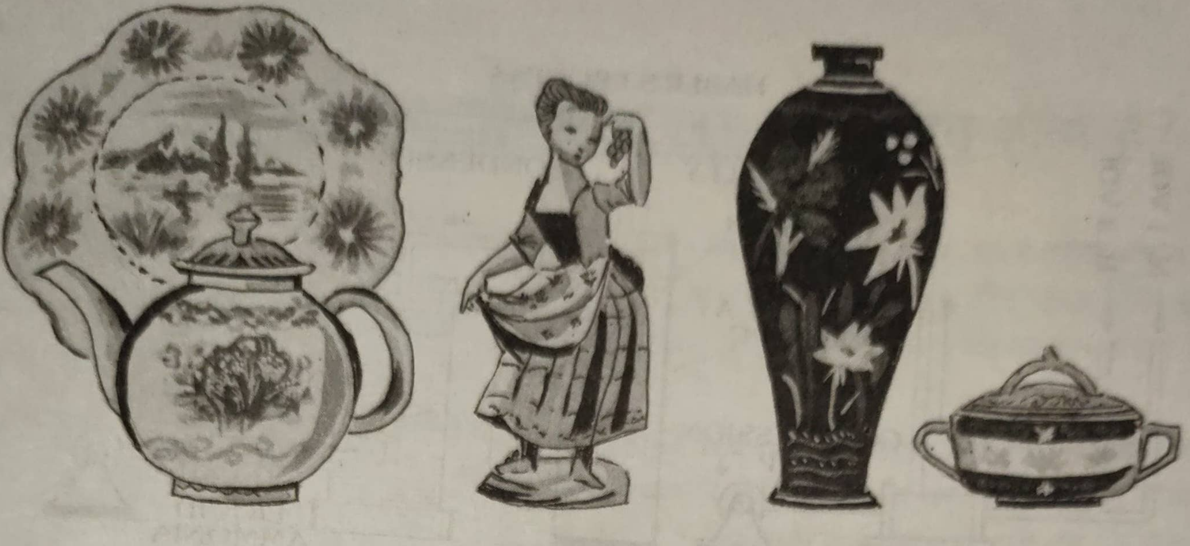
त्वचा के सूखने का उपचार—ठंडे और शुष्क मौसम में कभी-कभी हाथों की त्वचा सूख जाती है और उस पर सूजन आ जाती है। इस स्थिति से छुटकारा पाने के लिए हर रात जस्ते (zinc) और अरंडी के तेल की क्रीम लगा लेनी चाहिए।

कट जाने या त्वचा के रगड़ खाने पर एण्टीटिटनस इंजेक्शन लगवाना बहुत जरूरी है क्योंकि इस रोग के कीटाणु जंग लगे हुए पदार्थों या सड़क आदि पर पड़ी धूल में भी हो सकते हैं। यह सावधानी बरतना बहुत ही आवश्यक है क्योंकि टिटनस का रोग बहुत ही भयानक होता है। प्राथमिक चिकित्सा से संबंधित आवश्यक सामग्री घर में अवश्य रखनी चाहिए। चित्र में इसी सामग्री को दिखाया गया है।

सिरेमिक (Ceramic) क्या होते हैं?

सिरेमिक शब्द की उत्पत्ति यूनानी भाषा के कैरामोस (Keramos) शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है 'कुम्हार की मिट्टी'। आजकल इस शब्द का उपयोग सभी प्रकार की पॉटरी (pottery) के लिए किया जाता है। विभिन्न प्रकार के सिरेमिक भिन्न-भिन्न प्रकार की मिट्टियों से बनाए जाते हैं, जिनमें फ्लिण्ट, फैल्सपार और चायना स्टोन जैसे पदार्थ मिलाए जाते हैं।

अधिकतर सिरेमिक सिलिकान, कार्बन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन और कुछ दूसरे पदार्थों के यौगिक होते हैं। मिट्टी सभी प्रकार के सिरेमिकों का आधार है। सिरेमिकों के निर्माण में काम आने वाली विभिन्न प्रकार की मिट्टियां जल और वायु की क्रिया द्वारा चट्टानों के क्षरण (decomposition) द्वारा बनती हैं। ग्रेनाइट नामक चट्टानों से सिरेमिक निर्माण के लिए अधिकांश मिट्टी प्राप्त होती है। इन मिट्टियों में क्वार्ट्ज, माइका और फैल्सपार आदि होते हैं। मशीनों में पीस कर इन मिट्टियों से पाउडर बना लिया जाता है। इस पाउडर के साथ पानी मिलाया जाता



है। पानी मिलने से यह गुंधे आटे की तरह मुलायम हो जाता है, जिससे इसे किसी भी रूप में ढाला जा सकता है। सिरेमिकों को अलग-अलग रूपों में परिवर्तित करने के लिए विभिन्न तरीके प्रयोग में लाए जाते हैं।

सिरेमिकों से निर्मित उत्पाद को सुखाया जाता है और सुखाने के बाद इसे एक भट्ठी में तपाया या पकाया जाता है। तपाने वाली इस भट्ठी को किल्न (Kiln) कहते हैं। सिरेमिकों को 650° से लेकर 1650° सेल्सियस तक पकाया जाता है। पकाने की इस प्रक्रिया में उत्पाद सख्त हो जाता है और इसमें मजबूती आ जाती है। पकाने के बाद उत्पाद लम्बे समय तक खराब नहीं होता है।

अधिकतर सिरेमिक उत्पादों पर ग्लास जेसे पदार्थ की परत चढ़ा दी जाती है। इससे उत्पाद की सतह के छोटे-छोटे छिद्र भर जाते हैं। इस परत के कारण उत्पाद की सतह चिकनी और चमकीली भी हो जाती है। इससे उत्पाद की सफाई करना एक सरल काम हो जाता है और इसके साथ वह देखने में भी आकर्षक लगता है। परत चढ़ाने वाले कुछ पदार्थ उत्पाद की सजावट के लिए भी प्रयोग किए जाते हैं।

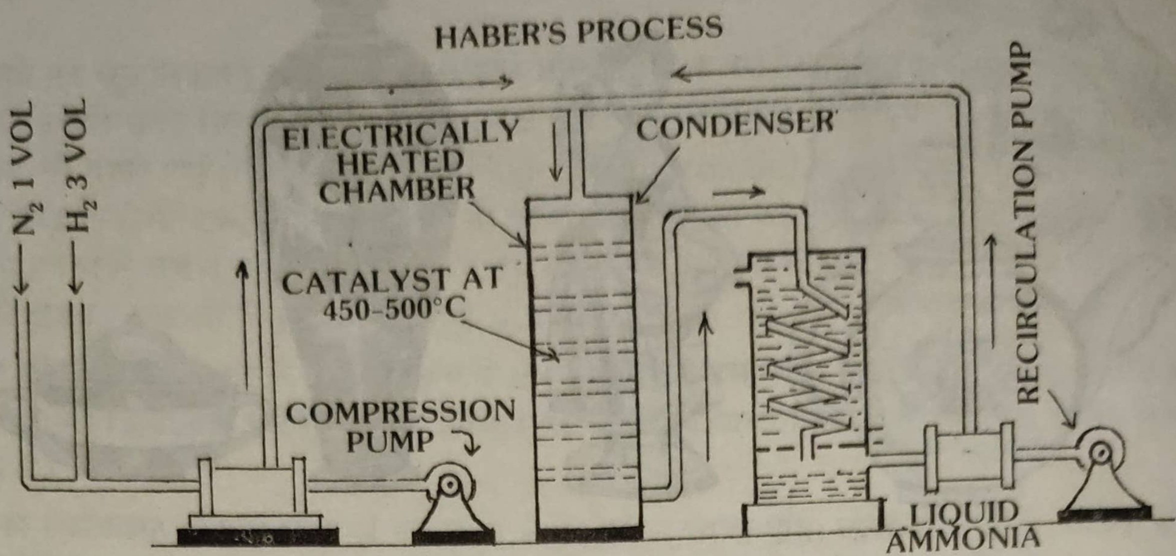
सिरेमिकों से अनेक प्रकार की वस्तुएं बनाई जाती हैं। एल्यूमिना तथा सिलिकान कार्बाइड विभिन्न प्रकार के अपघर्षक (abrasive) बनाने में प्रयोग किये जाते हैं, जो विभिन्न प्रकार के तलों को घिसकर पालिश करने के काम आते हैं।

क्ले और शैल, भवनों के लिए ईंट तथा पानी के पाइप बनाने में प्रयोग किये जाते हैं। कैल्शियम सिलिकेट सीमेण्ट बनाने के काम आता है। जिप्सम से प्लास्टर का निर्माण किया जाता है। पोर्सलेन से नहाने के टब, कमोड और सिंक आदि बनाए जाते हैं। पोर्सलेन से प्याले, तश्तरी आदि क्रॉकरी भी बनाई जाती है। पोर्सलेन का निर्माण क्ले, फैल्सपार और क्वार्ट्ज से किया जाता है।

एल्यूमिना और पोर्सलेन कुछ ऐसे सिरेमिक हैं, जो विद्युत के भी कुचालक हैं। इन पदार्थों को मोटर आदि के प्लगों, विद्युत लाइनों और टेलीविजन सेटों में कुचालकों की भांति प्रयोग किया जाता है। कुछ प्रकार के कैपिसिटर बेरियम टाइटनेट जैसे सिरेमिक पदार्थों से बनाए जाते हैं।

भट्ठियों के अन्दर लगाई जाने वाली मिट्टी भी सिरेमिकों की श्रेणी में आती है। ये पदार्थ ऊष्मा का प्रतिरोध करते हैं और रासायनिक क्रियाओं को होने से रोकते हैं। कुछ प्रकार के रीफेक्ट्रीक सिरेमिकों को रॉकेटों में भी प्रयोग किया जाता है। ये तीव्र वेग से चलने से उत्पन्न उच्च तापमान को सहन कर सकते हैं। एल्यूमिना, सिलिका और मैगनीशियम के यौगिक, इसी काम में प्रयोग किये जाते हैं।

कृत्रिम हड्डियों के जोड़ और बनावटी दांत भी विशेष प्रकार की पोर्सलेन से बनाए जाते हैं। यूरेनियम ऑक्साइट जैसे सिरेमिक नाभिकीय भट्ठियों में प्रयोग किये जाते हैं। रूबी के रूप में एल्यूमिना तीव्र लेसर किरणें पैदा करने के लिए प्रयोग की जाती है।



अमोनिया (Ammonia) गैस क्या है?

अमोनिया गैस नाइट्रोजन और हाइड्रोजन का एक यौगिक (compound) है। नाइट्रोजन के एक परमाणु और हाइड्रोजन के तीन परमाणुओं से मिलकर अमोनिया का एक अणु बनता है। इसकी गंध बहुत तीखी (pungent) होती है। यह एक रंगहीन गैस है। इस गैस को संपीडित (compress) करके या –33 डिग्री सेल्सियस तक ठंडा करके तरल अवस्था में बदला जा सकता है। अमोनिया गैस पानी में अत्यन्त घुलनशील होती है। सामान्य ताप और दाब पर इस गैस के 700 आयतन (volume) पानी के मात्र एक आयतन में घुल जाते हैं। अमोनिया का पानी में विलयन समक्षारीय (basic) होता है तथा विलयन को अमोनियम हाइड्रोक्साइड कहते हैं।

अमोनिया गैस बनाने की कई विधियां हैं। प्रयोगशाला में यह गैस अमोनियम क्लोराइड तथा बुझे चूने के मिश्रण को गर्म करके बनाई जाती है। औद्योगिक पैमाने पर यह गैस हाइड्रोजन और नाइट्रोजन की अभिक्रिया से निर्मित की जाती है। इस प्रक्रम को हाबर (Haber) का प्रक्रम कहते हैं। इस विधि में नाइट्रोजन के एक भाग व हाइड्रोजन के तीन भाग के एक मिश्रण को 500 वायुमंडलीय दाब पर लोहे की उपस्थिति में संपीडित करके 500° सेल्सियस ताप पर प्रवाहित किया जाता है। लोहा यहां एक उत्प्रेरक (catalyst) का काम करता है। दोनों गैसे क्रिया करके अमोनिया गैस बनाती हैं। कोल और कोक को कोल गैस में आसवित करके भी अमोनिया गैस बनाई जाती है।

अमोनिया गैस के हमारे जीवन में बहुत से उपयोग हैं। इससे बहुत से अमोनियम यौगिक बनाए जाते हैं। इस गैस से नाइट्रिक अम्ल बनाया जाता है, जो दूसरे पदार्थों को घुलनशील बनाने के काम आता है। यदि अमोनिया गैस की नमक के अम्ल के साथ क्रिया कराई जाए तो अमोनियम क्लोराइड नामक यौगिक का निर्माण होता है। यह यौगिक प्रयोगशाला में तथा शुष्क सेलों (dry cells) में काम आता है। यह यौगिक रंगाई करने और मुद्रण (printing) में भी प्रयोग किया जाता है।

अमोनियम सल्फेट इस गैस का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण यौगिक है। यह यौगिक अमोनिया और गंधक के अम्ल (sulphuric acid) की क्रिया द्वारा बनाया जाता है। अमोनियम सल्फेट का उर्वरक (fertilizer) के रूप में प्रयोग किया जाता है क्योंकि यह मिट्टी को नाइट्रोजन देता है। अमोनियम नाइट्रेट उर्वरकों और विस्फोटकों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है। इससे नाइट्रस ऑक्साइड या लाफिंग गैस (laughing gas) भी बनाई जाती है। काफी बड़ी मात्रा में अमोनिया का नाइट्रिक अम्ल के निर्माण में उपयोग होता है।

अमोनिया का जलीय विलयन घरों में सफाई के लिए प्रयोग किया जाता है। एक समय था जब अमोनिया प्रशीतक (refrigerent) के रूप में प्रयोग की जाती थी लेकिन आजकल यह प्रशीतक के रूप में प्रयोग नहीं की जाती है। अमोनिया का प्रयोग कृत्रिम धागों के निर्माण में भी किया जाता है। यह हमारे लिए एक बहुत ही उपयोगी गैस है।

उदय और अस्त होता सूर्य अण्डाकार क्यों प्रतीत होता है?

सूर्य हमारा जीवनदाता है। इससे हम ऊष्मा और प्रकाश पाते हैं। उदय और अस्त होता सूरज हमें नारंगी रंग का दिखाई देता है। आकाश नीला दिखाई देता है। ऐसे ही उदय और अस्त होता सूरज अण्डाकार दिखाई देता है। ये सभी दिलचस्प घटनाएं हैं। क्या तुम जानते हो कि पृथ्वी का वायुमंडल उदय और अस्त होते सूरज को अण्डाकार कैसे बना देता है?

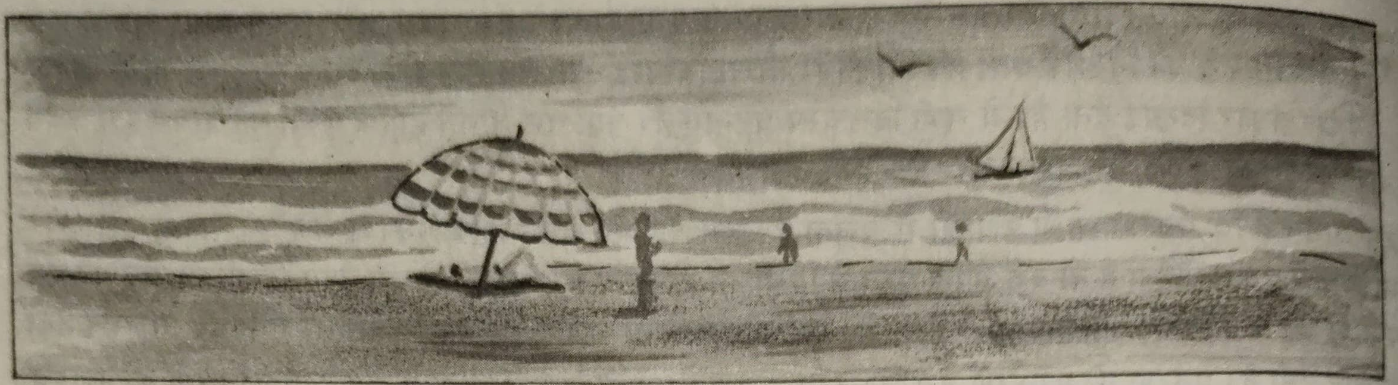
हम जानते हैं कि प्रकाश सीधी रेखाओं में चलता है। हम यह भी जानते हैं कि प्रकाश जब एक माध्यम से दूसरे माध्यम में प्रवेश करता है तो वह अपने रास्ते से विचलित हो जाता है। प्रकाश के इस तरह विचलित होने को हम प्रकाश का अपवर्तन (refraction) कहते हैं। इसी अपवर्तन के कारण पानी के गिलास में डूबी हुई पेन्सिल टेढ़ी दिखाई देती है। प्रकाश की ये किरणें जब विरल माध्यम से सघन माध्यम में प्रवेश करती हैं तो ये किरणें अभिलम्ब (normal) की ओर झुक जाती हैं।

हमारी धरती का वायुमण्डल पृथ्वी के पास सघन है और जैसे-जैसे हम ऊपर जाते हैं, यह विरल होता जाता है। सूर्य की किरणें अन्तरिक्ष से होती हुई पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश करती हैं। वायुमंडल में प्रवेश करने के बाद प्रकाश का रास्ता बदलता जाता है। शुरू-शुरू में प्रकाश विरल वायुमंडल से गुजरता है और बाद में सघन वायुमंडल से होता हुआ हमारी आंखों तक पहुंच जाता है और हमें सूर्य दिखाई देने लगता है। यहां यह जान लेना जरूरी है कि जिस कोण पर किरणें हमारी आंखों में प्रवेश करती हैं, वह कोण मूल कोण से काफी भिन्न होता है। हम जानते हैं कि हमें वस्तु उसी दिशा में दीखती है, जिस दिशा में प्रकाश की किरणें हमारी आंखों में प्रवेश करती हैं। इस तथ्य के अनुसार सूर्य हमें अपनी मूल स्थिति से कुछ ऊपर विस्थापित हुआ दीखता है। इसका तात्पर्य यह है कि सूर्य जब क्षितिज से नीचे होता है तब भी हमें पूर्व में उदय होता दिखाई देता है। इसी प्रकार जब सूरज छिप चुका होता है, तब भी हमें कुछ देर तक दिखाई देता रहता है।

हम जानते हैं कि सूर्य से आने वाली किरणों का रास्ता वायुमंडल में प्रवेश करने के बाद निरन्तर रूप से बदलता रहता है। इन किरणों का विचलित होना इनके आपतन कोण (angle of incidence) पर निर्भर करता है। जब सूरज हमारे सिर के ऊपर होता है तो इससे आने वाली किरणें वायुमंडल पर लम्बवत् गिरती हैं, इसलिए वे अपने रास्ते से विचलित नहीं होती हैं। उदय होते और अस्त होते समय सूरज की किरणें काफी बड़े आपतन कोण पर वायुमंडल से टकराती हैं, इसलिए इस स्थिति में किरणें अपने रास्ते से अधिकतम विचलित होती हैं।

सूरज की तश्तरी के हर बिन्दु से किरणें निकलती हैं। यदि हम सूरज के सबसे निचले और सबसे ऊपर वाले बिन्दुओं से प्रकाश को आता हुआ मानें तो क्षितिज के पास का निम्नतम बिन्दु सबसे पास होगा। निम्नतम बिन्दु से आने वाला प्रकाश उच्चतम बिन्दु की तुलना में अधिक विचलित होता प्रतीत होगा। इसका परिणाम यह होगा कि ये दोनों बिन्दु ऊपर की ओर खिसक जाएंगे। इस प्रकार सूरज की तश्तरी ऊपर की ओर विस्थापित हो जाएगी। इस स्थिति में नीचे का बिन्दु ऊपर के बिन्दु की तुलना में अधिक विस्थापित होगा। इस प्रकार सूर्य की तश्तरी थोड़ी-सी दबी हुई अर्थात् अण्डाकार दिखाई देगी। यह अण्डाकार रूप ऊर्ध्वाधर (vertical) दिशा में दबा हुआ दिखाई देता है। जैसे-जैसे सूर्य आकाश में उठता जाता है, वैसे-वैसे यह प्रभाव तेजी से कम होने लगता है और सूरज की तश्तरी वृत्ताकार दिखाई देनी शुरू हो जाती है।

सागरों का पानी सड़ता क्यों नहीं है?



हम जानते हैं कि धरती पर जल का विशाल भंडार है। हमारी धरती की सतह का लगभग तीन-चौथाई भाग सागरों से ढका है। इन सागरों में अनेक जीव-जन्तु और पेड़-पौधे हैं। वास्तव में सागरों में पौधों और जीव-जन्तुओं की संख्या धरती से कुछ न कुछ अधिक ही है। जब इन जीव-जन्तुओं और पौधों में से कुछ की मृत्यु हो जाती है तो उनका क्षय (decay) होने लगता है। इस क्षय के कारण उनमें से दुर्गन्ध आने लगती है। आश्चर्य की बात तो यह है कि सागरों में प्रतिदिन अनेक जीव-जन्तु और पेड़-पौधों के मरने पर भी दुर्गन्ध नहीं आती है। क्या तुम जानते हो कि ऐसा क्यों होता है?

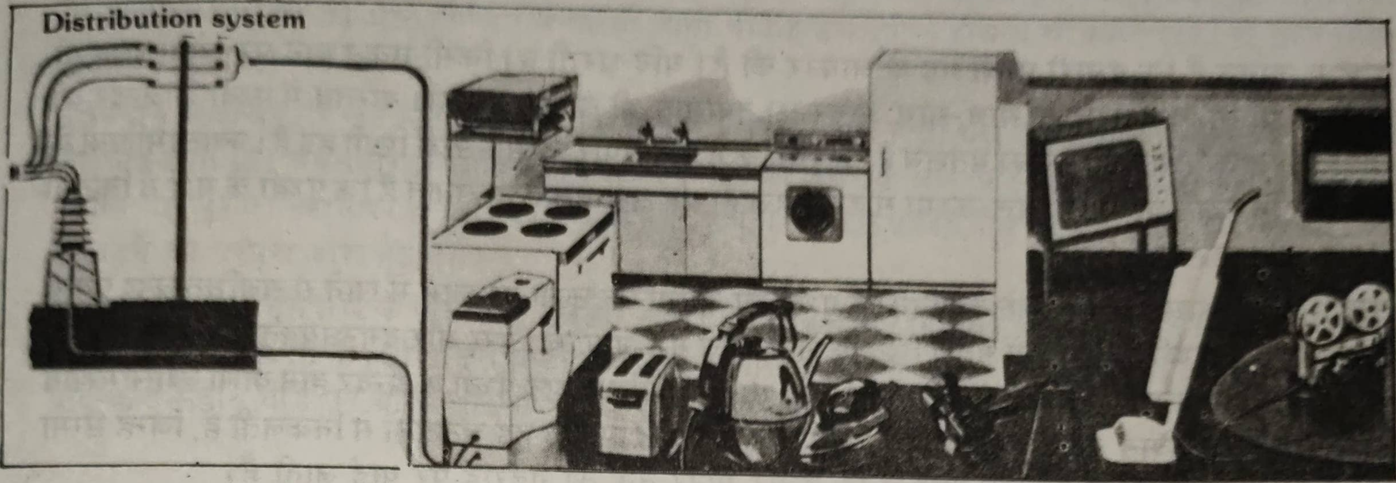
इस तथ्य को समझने के लिए हम एक गांव का उदाहरण लेते हैं। वहां सड़कों के किनारे ढेर सारा कूड़ा-करकट और गंदगी डाली जाती है। यह सभी गंदगी सड़ती नहीं है क्योंकि इसका बहुत सारा भाग सूअर और दूसरे जानवर खा जाते हैं। इस प्रकार ये जानवर कूड़े-करकट को खाकर हमारे गांव और कस्बों को साफ रखने में मदद करते हैं। ठीक यही प्रक्रिया सागर में भी होती है।

सागरों में बहुत-सी मछलियां और दूसरे अनेक जानवर होते हैं। वहां अमीबा और बैक्टीरिया जैसे जीवित प्राणी भी होते हैं, जो मरे हुए पेड़-पौधों और जानवरों को खाकर सागरों को साफ रखने में हमारी मदद करते हैं। यदि तुम गांव के किसी तालाब में कुछ मछलियां छोड़ दो तो तालाब की गंदगी को खाकर ये मछलियां उसे साफ रखेंगी। यदि तुम तालाब की सारी मछलियां पकड़कर बाहर निकाल दो तो कुछ ही दिनों में तालाब का पानी सड़ जाएगा और उसमें से बदबू आने लगेगी।

सागर की सारी गंदगी तो जीव-जन्तुओं द्वारा खाई नहीं जाती, फिर बची हुई गंदगी सड़कर दुर्गन्ध पैदा क्यों नहीं करती? इस बात का उत्तर पाने के लिए हमें सागरों के विषय में एक बात याद रखनी जरूरी है। मृतक जानवरों और पौधों की गंदगी सागर में किसी एक स्थान पर एकत्रित नहीं होती बल्कि सारे ही सागर में फैलती रहती है। चूंकि सागर का क्षेत्रफल बहुत अधिक होता है, इसलिए किसी एक विशेष स्थान पर कूड़ा-करकट बहुत ही कम होता है। इस कूड़े-करकट के क्षय होने पर जो गैसें निकलती हैं, वे वायुमंडल में विसरित हो जाती हैं। यही कारण है कि सामान्यतः सागर का पानी सड़ता नहीं है और उसमें दुर्गन्ध पैदा नहीं होती है।

कभी-कभी समुद्रों के किनारे हमें दुर्गन्ध महसूस होती है। ऐसा उच्च ज्वार के कारण होता है। उच्च ज्वार में सागर के अन्दर की गंदगी किनारों तक आ जाती है। जब यह पानी वापिस जाता है तो यह गंदगी किनारों पर ही रह जाती है। धीरे-धीरे यह सड़ने लगती है और इसमें बदबू पैदा हो जाती है। समुद्री किनारों पर अत्यधिक प्रदूषण के कारण भी बदबू पैदा हो जाती है। कहीं-कहीं सागर का पानी रुक जाता है और यदि उसमें जीव-जन्तु और पेड़-पौधे काफी संख्या में मर जाएं तो उनके क्षय होने से भी दुर्गन्ध पैदा हो जाती है।

घरेलू विद्युत उपकरणों को बिजली से कैसे जोड़ते हैं?



शहरों और कस्बों में रहने वाले लोग अपने घरों में अनेक ऐसे उपकरण प्रयोग में लाते हैं, जो विद्युत से चलते हैं। इन उपकरणों में मुख्यतः बिजली का बल्ब, बिजली का पंखा, ट्यूबलाइट, रेडियो तथा टेलीविजन आदि आते हैं। क्या तुम जानते हो कि इन उपकरणों को चलाने के लिए जो विद्युत लाइन प्रयोग में लायी जाती है, उसकी व्यवस्था घरों में किस प्रकार की जाती है?

बिजली के खम्बे से केबल को किसी उचित स्थान से घर में प्रवेश कराया जाता है। इस केबल को एक बन्द बक्स में प्रवेश कराया जाता है। इस केबल का विद्युत-धारा ले जाने वाला तार (Live wire) मुख्य फ्यूज से जोड़ दिया जाता है। यह बक्स और फ्यूज दोनों सील कर दिये जाते हैं। ये दोनों चीजें प्रयोगकर्त्ता को कभी नहीं छेड़नी चाहिएं। इस फ्यूज का मान 60 से 100 एम्पीयर तक होता है। इस मुख्य फ्यूज के बाद एक विद्युत-मीटर जोड़ दिया जाता है, जो घर में प्रयोग हुई विद्युत-ऊर्जा को मापता है। इसके बाद सप्लाई के तारों को वितरण बक्स के साथ जोड़ दिया जाता है। वितरण बक्स में एक ऑन-ऑफ स्विच होता है, जो 'लाइव वायर' (गर्म तार) और 'न्यूट्रल वायर' (ठंडा तार) में कुछ स्विचों द्वारा संबंध स्थापित कराता है या संबंध-विच्छेद करता है। इसे आम भाषा में मेन स्विच कहते हैं। इस स्विच का प्रयोग फ्यूज को बदलने के समय किया जाता है। यह ध्यान रखने की बात है कि फ्यूज हमेशा लाइव वायर में लगाया जाता है।

वितरण बक्स से तारों को घर में प्रयोग होने वाले विभिन्न उपकरणों के लिए बिछाया जाता है। बल्बों और पंखों के लिए पांच एम्पीयर की लाइन होती है अर्थात् इसमें पांच एम्पीयर के फ्यूज लगे होते हैं। पावर लाइन में 15 एम्पीयर के फ्यूज लगाए जाते हैं। सभी स्विच लाइव वायर में ही लगाए जाते हैं। यदि स्विच न्यूट्रल वायर में लगा दिए जाएं तो स्विच ऑफ होने पर भी उपकरण में करण्ट आ सकता है और प्रयोग करने वाले व्यक्ति को झटका लग सकता है। सुरक्षा के लिए एक तीसरे तार को, जिसे अर्थ वायर कहते हैं, जमीन में दबा दिया जाता है। सभी विद्युत उपकरण एक दूसरे के समानान्तर क्रम में जुड़े होते हैं। ऐसा इसलिए किया जाता है ताकि सभी उपकरणों को समान वोल्टता मिल सके। यदि इन उपकरणों को श्रेणी क्रम (in series) में जोड़ दिया जाए तो सबको समान विद्युत वोल्टता नहीं मिल पाएगी। इस प्रकार हर घर में विद्युत उपकरणों को 'मेन-लाइन' से जोड़ने और बिजली के झटकों से बचने की सुरक्षात्मक व्यवस्था होती है।

पृथ्वी की आन्तरिक ऊष्मा का कैसे उपयोग किया जा सकता है?

हम जानते हैं कि हमारी पृथ्वी गेंद के आकार की है। यदि धरती को किसी एक स्थान पर खोदा जाए तो हम पाएंगे कि गहराई के साथ-साथ अन्दर का तापमान भी बढ़ता जाता है। वास्तव में पृथ्वी के अन्दर का तापमान बहुत अधिक है। इसका मतलब है कि पृथ्वी के गर्भ में अपार ऊष्मा-ऊर्जा छिपी हुई है। ज्वालामुखियों के फटने से निकलने वाली विशाल ऊष्मा से हम सहज ही यह अनुमान लगा सकते हैं कि पृथ्वी के गर्भ में कितनी ऊष्मा का भंडार है।

सन् 1800 के आसपास इटली के वैज्ञानिकों ने पृथ्वी की आन्तरिक ऊर्जा को काम में लाने से संबंधित कुछ प्रयोग किए। उन्होंने पृथ्वी की सतह में गहरा छिद्र किया, जिससे गर्म भाप की धारा और दुर्गन्धयुक्त गैसें बाहर निकल पड़ीं। फिर इसी प्रकार के अन्य छिद्र और खोदे गए। मानव निर्मित ये छिद्र पृथ्वी के अन्दर होने वाली ज्वालामुखीय प्रक्रियाओं को प्रदर्शित करते हैं। वहां जल, भाप और गैसें कुछ पिघली हुई चट्टानों से निकलती हैं, जिन्हें मैग्मा (Magma) कहते हैं। ये चट्टानें पांच से छः हजार मीटर तक की गहराई पर पाई जाती हैं।

पृथ्वी में खोदे गए इन छिद्रों से निकलने वाली गैसों में बोरिक अम्ल काफी मात्रा में पाया गया। इस को व्यावसायिक रूप से निकालने के लिए सन् 1818 में इटली में एक कारखाना स्थापित किया गया। इसके बाद वैज्ञानिकों के मस्तिष्क में इन छिद्रों से निकलने वाली शक्ति को विद्युत निर्माण में प्रयोग करने का विचार आया। इस विचार को प्रयोगात्मक रूप में बदला गया और इटली में सन् 1904 में लैण्डर एलो (Landar Ello) नामक स्थान पर भूगर्भ की ऊष्मा से प्रचालित प्रथम विद्युत-केन्द्र बनाया गया।

भूगर्भीय ऊष्मा-ऊर्जा को चार तरीकों से प्रयोग में लाया जा सकता है। पृथ्वी के गर्भ से निकलने वाली शुष्क भाप को टरबाइन चलाकर विद्युत पैदा करने के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है जैसा कि इटली के लैण्डर एलो नामक स्थान पर किया जा रहा है। पृथ्वी के गर्भ से निकलने वाले गर्म पानी को भवनों को गर्म रखने के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। आइसलैंड (Iceland) के रेकजाविक (Reykjavik) नामक स्थान पर पृथ्वी से निकलने वाले गर्म पानी का शहर को गर्म रखने में प्रयोग किया जा रहा है। अवसादी चट्टानों के क्षेत्रों में 40° से 100° सेल्सियस तापमान का पानी मिलता है, जिसे कृषि के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। उच्च दाब के क्षेत्रों का पेट्रोलियम प्राप्त करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

पिछले कुछ वर्षों से वैज्ञानिकों का ध्यान पृथ्वी की आन्तरिक ऊर्जा की ओर केन्द्रित हो रहा है। वे ऐसे यंत्रों का विकास करने में लगे हुए हैं, जिनसे धरती की आन्तरिक ऊर्जा को अधिक से अधिक उपयोग में लाया जा सके।

घोड़े पर लोग बायीं ओर से ही क्यों बैठते हैं?

विश्व के समस्त देशों में घुड़सवारी की जाती है। सभी जगह घोड़े पर लोग बायीं ओर से चढ़ते हैं। क्या तुम जानते हो कि लोग ऐसा क्यों करते हैं?

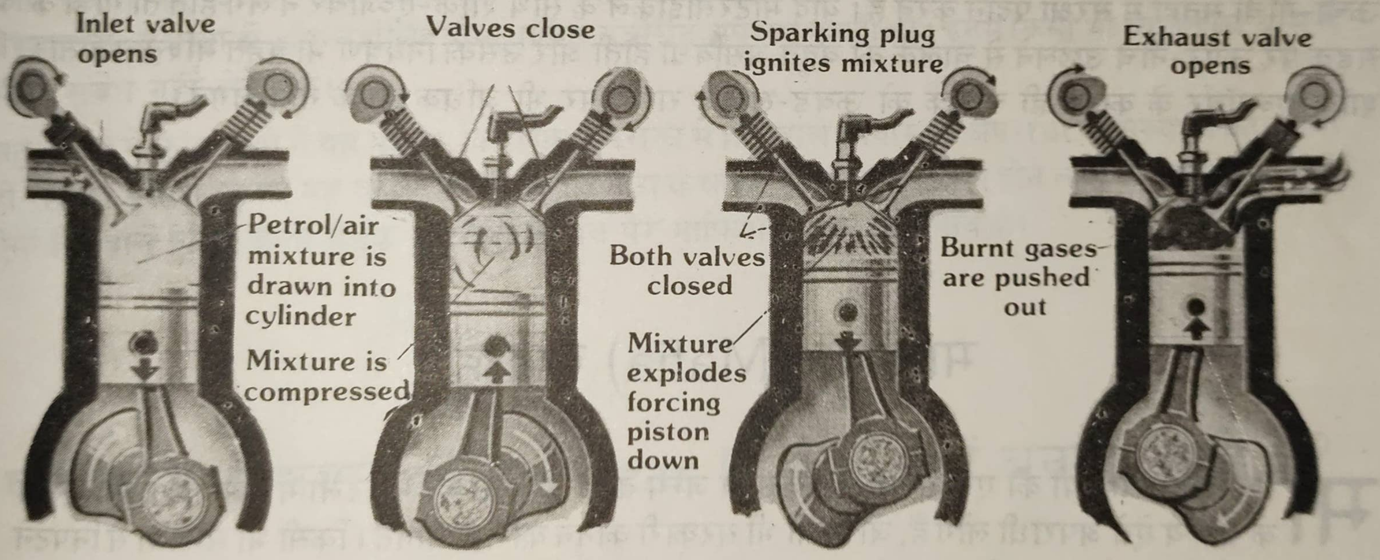
घोड़े पर बायीं ओर से चढ़ने की प्रथा सैंकड़ों वर्ष पुरानी है। इसका घोड़े से कुछ भी संबंध नहीं है। इस प्रथा के आरम्भ होने के विषय में लोगों का निम्नलिखित विचार है।

सैकड़ों वर्ष पहले घोड़े का उपयोग लड़ाई के मैदानों में किया जाता था। उस समय के युद्ध आज की भांति नहीं थे। उन युद्धों में लोग अधिकतर तलवारों का इस्तेमाल करते थे। तलवार को लोग अपनी पेटी से बायीं ओर लटकाते थे। तलवार बायें पैर की ओर इसलिए लटकायी जाती थी कि उसे दाहिने हाथ से खींचकर तुरन्त ही खोल में से बाहर निकाला जा सकता था।

घुड़सवार के शरीर पर लटकती तलवार की स्थिति बायें पैर की ओर होती थी। इसलिए उसे बायां पैर उठाने में कठिनाई होती थी। घुड़सवार को दाहिना पैर उठाकर घोड़े की कमर के आर-पार रखना अधिक आसान होता था क्योंकि दायें पैर को उठाने पर तलवार कोई बाधा नहीं डालती थी। इस प्रकार घोड़े पर दायां पैर उठाकर बायीं ओर से चढ़ने की परंपरा शुरू हुई।

यद्यपि आज के घुड़सवारों के पास कोई तलवार नहीं होती लेकिन फिर भी घोड़े पर बायीं ओर से चढ़ने की प्रथा सदियों से चली आ रही है। प्रशिक्षित घोड़ा भी सवार के बायीं ओर से ही चढ़ने के अभ्यस्त हो जाता है। इसलिए यदि कोई सवार घोड़े पर दायीं ओर से चढ़ता है तो इससे घोड़ा बिदक सकता है।

मोटरसाइकिल का इंजन कैसे काम करता है?



मोटरसाइकिल दो पहियों वाला एक यातायात वाहन है। सबसे पहली मोटरसाइकिल का निर्माण सन् 1885 में जर्मनी के गोटलिब डैम्लर (Gottlieb Daimler) द्वारा किया गया था लेकिन 19वीं शताब्दी के अन्त तक मोटरसाइकिल उद्योग का वास्तविक विकास न हो पाया। आरम्भ की मोटरसाइकिलें सामान्य साइकिलों का ही एक परिवर्धित रूप थीं। अन्तर केवल इतना था कि उनमें इंजन लगे थे। जल्दी ही मोटरसाइकिलों के लिए उपयुक्त फ्रेमों का निर्माण होने लगा। क्या तुम जानते हो कि मोटरसाइकिल का इंजन कैसे काम करता है?

मोटरसाइकिल का इंजन दूसरे ऑटोमोबाइल के इंजनों की भांति ही कार्य करता है। इसमें एक अन्तर्दहन इंजन होता है। यह दो या चार स्ट्रोक वाला पैट्रोल इंजन हो सकता है अथवा रोटरी वेंकल-टाइप (rotary wankel-

type) इंजन हो सकता है। ये इंजन वायु द्वारा या जल द्वारा ठंडे किए जाते हैं। एक अन्तर्दहन इंजन में वायु को ईंधन के साथ मिलाया जाता है। ईंधन को एक आग की चिनगारी द्वारा जलाया जाता है। जब ईंधन जलता है तो विशाल मात्रा में गर्म गैसें पैदा होती हैं। ये गैसें सिलिंडर में पिस्टन को धक्का देती हैं। पिस्टन की गति से पहियों को शक्ति मिलती है। अधिकतर मोटरसाइकिलों में एक या दो सिलिंडर होते हैं। रेसिंग मोटरसाइकिलों में कभी-कभी दो से अधिक सिलिंडर भी हो सकते हैं।

मोटरसाइकिलों में एक प्रक्रम होता है, जिसे क्लच (clutch) कहते हैं। इसे एक हाथ के लीवर द्वारा प्रचालित किया जाता है। यह इंजन का गीअर बॉक्स (gear box) से संबंध विच्छेद कर देता है। क्लच का प्रयोग चालक मोटरसाइकिल को स्टार्ट करने, बन्द करने तथा गीअर बदलने के लिए करता है। अधिकतर मोटरसाईकिलों में तीन या चार गीअर होते हैं। गीअर बदलने का काम पैरों से किया जाता है। क्लच का लीवर हैंडिल की छड़ों के एक ओर होता है। दूसरी ओर एक ऐसा लीवर होता है, जो सामने के ब्रेक को नियंत्रित करने के काम आता है। मोटरसाइकिलों में ड्रम या डिस्क के आकार के ब्रेक होते हैं। ड्रम ब्रेकों में एक छोटा सा ड्रम होता है, जो पहिए के हब (hub) में लगा होता है। इसमें एस्बस्टस के पैड लगे होते हैं, जो ब्रेक लगाने पर ड्रम को दबाते हैं। डिस्कनुमा ब्रेकों में इस्पात से निर्मित एक डिस्क होती है, जो पैडों के जोड़े के साथ पहिए के हब में लगी होती है।

आधुनिक मोटरसाइकिलों के ढांचे इस्पात की नलिकाओं से बनाए जाते हैं। ढांचे के नीचे के भाग में दो पाइप जोड़ दिए जाते हैं, जिन पर इंजन लगा दिया जाता है। चालक को आनन्द से गाड़ी चलाने के लिए दोनों पहियों के साथ निलम्बन तंत्र (suspension) लगाया जाता है। पहियों के साथ ऊपर-नीचे की गति के कारण लगने वाले झटकों से बचने के लिए शाक-एब्जॉर्बर (absorber) या हाइड्रोलिक डैम्पर (damper) लगाए जाते हैं। ये सड़क की ऊंची-नीची सतहों से सुरक्षा प्रदान करते हैं। यदि मोटरसाइकिल के साथ शॉक-एब्जॉर्बर न लगे होते तो गाड़ी के सड़क पर ऊपर-नीचे उछलने से चालक को बहुत असुविधा होती और उसका नियंत्रण भी बहुत मुश्किल होता। शॉक-एब्जॉर्बर के कारण ही चालक को ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर भी अधिक झटके नहीं लगते।

माफिया (Mafia) क्या है?

माफिया अपराधियों की एक संस्था है, जिसका जन्म तेरहवीं शताब्दी में इटली में हुआ था। इस संस्था के सदस्य ऐसे अपराधी लोग हैं, जो किसी भी सरकारी कानून को नहीं मानते। किसी भी समस्या से निपटने के लिए इनके अपने ही कानून हैं। इस संस्था का जन्म जमींदारी के अमानवीय अत्याचारों के विरोध में हुआ था। यह संस्था शुरू-शुरू में अपने देश में ही शक्तिशाली हुई लेकिन बाद में विश्वभर में इसकी जड़ें फैलती गईं। इटली की बहुत-सी सरकारों ने कई बार अपराधियों की इस संस्था को दबाने की कोशिश की लेकिन उन्हें कोई सफलता नहीं मिली। सैकड़ों वर्षों से यह संस्था फलती-फूलती रही है और अपने ही विचित्र तरीकों से गुप्त रूप से तथाकथित न्याय भी प्राप्त करती रही है।

उस जमाने में इटली में भ्रष्ट सरकारी अफसर गरीबों के साथ दुश्मनों जैसा व्यवहार करते थे। माफिया के नेता ऐसे लोगों से ही बदला लेते थे। अमीरों से लूटी हुई सम्पत्ति में इस संस्था के लोगों का भी हिस्सा होता था। उनकी न्याय करने की पद्धति बहुत ही जटिल थी। गलत काम करने वाले लोगों और उनके परिवारों से बदला लेना भी इस संस्था के कार्यों में से एक था।

सन् 1860 में बोरबन (Bourbon) की राजाशाही के पतन के बाद इटली की सरकार ने, माफिया के दमन में कुछ सफलता प्राप्त की लेकिन तब तक यह इतनी व्यापक संस्था बन चुकी थी कि उसे दबाना बहुत कठिन था।

सन् 1920 के दशक के आरम्भ में मुसोलिनी की शासन व्यवस्था के अंतर्गत माफिया का लगभग अन्त हो गया लेकिन 25 वर्ष बाद फिर से अपराधी लोग संगठित हो गए। द्वितीय महायुद्ध के दौरान भूमि के कानूनों में कुछ सुधार होने के बाद माफिया की शक्तियां मध्य और पश्चिमी सिसली में कुछ कम हो गईं लेकिन औद्योगिक, व्यापारिक आदि शहरी गतिविधियों में इसकी पैठ काफी गहरी हो गई। गत कुछ वर्षों से टापुओं पर रहने वाले इस संस्था के कुछ मुख्य नेताओं को ढूंढ निकालने का प्रयास किया जा रहा है।

19वीं शताब्दी के अन्त में और 20वीं शताब्दी के आरम्भ में सिसली और इटली से कुछ ऐसे समूह, जिनमें माफिया के भी कुछ सदस्य थे, अमरीका जाकर बस गए। सन् 1930 के दशक में अमरीका में भी माफिया जैसी एक संस्था संगठित हो गई, जो कोई भी अपराध करने में नहीं हिचकती थी। कुछ अधिकारियों का तो यहां तक कहना है कि अपराध करने वालों की यह एक बड़ी संगठित व शक्तिशाली संस्था है। सन् 1850 और 60 के बीच में अमरीकी सरकारी सूत्रों से यह ज्ञात हुआ था कि माफिया की संरचना वहां पर भी सिसली से मिलती-जुलती थी। यहां यह संस्था कोसा नोस्ट्रा (Cosa Nostra) के नाम से जानी जाती है।

सन् 1950 और 60 के दौरान माफिया की गतिविधियां 24 व्यक्तिगत समूहों द्वारा संचालित होती थीं। प्रत्येक शहर में अपराधियों का एक समूह था। अकेले न्यूयार्क शहर में ही ऐसे पांच समूह थे। प्रत्येक समूह के सबसे ऊंचे अधिकारी को बॉस या डॉन कहते थे। प्रत्येक डॉन का एक उपडॉन होता था, जो मुख्य बॉस के आदेशों के अनुसार कार्य करता था। इसके नीचे लैफ्टीनेण्ट और लैफ्टीनेण्टों के नीचे बहुत-से कार्यकर्त्ता होते थे। यह संस्था वेश्यावृत्ति, जुआबाजी और नशीली औषधियों से संबंधित अपराध करती थी। इनमें किसी भी व्यक्ति का बॉस से सीधा संबंध नहीं होता था।

सन् 1970 में कुछ लोगों ने यह महसूस किया कि अमरीका में होने वाले व्यवस्थित अपराधों की संख्या में कुछ कमी हो रही है। इसका कारण यह था कि पुरानी विचारधारा के बॉसों की संख्या कुछ कम होने लगी थी लेकिन आज भी ऐसा विश्वास किया जाता है कि अमरीकी जीवन पर माफिया का काफी प्रभाव है।

पंचवर्षीय योजनाएं (Five-year Plans) क्यों बनाई जाती हैं?

स्वतंत्रता के बाद देश की आर्थिक समस्याओं के सुनियोजित समाधान तथा देश को आर्थिक दृष्टि से समृद्ध बनाने के लिए हमारे आर्थिक चिन्तकों तथा राजनेताओं ने महसूस किया कि लम्बी अवधि की योजनाएं बनाई जाएं और उनके आधार पर विकास के कार्यक्रम चलाये जायें। इसके लिए एक योजना-आयोग (planning commission) गठित किया गया, जिसका मुख्य कार्य देश में उपलब्ध संसाधनों के अधिकतम उपयोग के उपाय खोजना निर्धारित किया गया। अपने इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए वह आज तक पंचवर्षीय योजनाएं तैयार करता आ रहा है तथा इन्हीं से हमारे देश ने काफी प्रगति की है।

पंचवर्षीय योजनाओं में देश के विकास के लिए विभिन्न कार्यक्रम तैयार किये जाते हैं, जिनमें से अधिकांश को पांच वर्ष में पूरा करने का लक्ष्य होता है। इन योजनाओं की रूपरेखा देश के बहुमुखी विकास को ध्यान में रखते हुए

तैयार की जाती है। इन योजनाओं के अन्तर्गत सामाजिक और आर्थिक विकास पर मुख्य ध्यान दिया जाता है। इनके अन्तर्गत नये पुलों का निर्माण, सड़कों का निर्माण, बांध बनाना, नये कारखाने लगाना आदि आते हैं। कृषि-उत्पादन में बढ़ोत्तरी भी इन योजनाओं का एक प्रमुख उद्देश्य रहा है।

किसी भी पंचवर्षीय योजना में विभिन्न लक्ष्यों को निर्धारित करके उनकी प्राथमिकता भी निश्चित की जाती है तथा उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग करने पर बल दिया जाता है। नियोजित विकास के फलस्वरूप उत्पादित वस्तुओं और उनसे अर्जित लाभ का न्यायोचित वितरण करना भी इन योजनाओं का मुख्य उद्देश्य है। इन योजनाओं के अन्तर्गत बिजली का उत्पादन और सिंचाई की सुविधाएं भी आती हैं।

अब तक हमारे देश में छह पंचवर्षीय योजनाएं पूरी हो चुकी हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना अप्रैल, 1951 से आरम्भ होकर 31 मार्च, 1956 को पूरी हुई थी। इस योजना में 778 करोड़ रुपये की धनराशि कृषि-कार्यों के लिए निर्धारित की गई थी। दूसरी पंचवर्षीय योजना सन् 1956 से सन् 1961 तक, तीसरी सन् 1961 से सन् 1966 तक, चौथी सन् 1969 से सन् 1974 तक, पांचवी सन् 1974 से सन् 1979 तक और छठी सन् 1980 से सन् 1985 तक चली। तीसरी और चौथी योजनाओं के बीच सन् 1966 से सन् 1969 तक एक अल्पकालीन आन्तरिक योजना पर काम किया गया क्योंकि देश की राजनैतिक स्थितियां कुछ ऐसी थीं कि पंचवर्षीय योजना तैयार नहीं की जा सकी। इसी प्रकार सन् 1979-80 में भी एक वर्ष की एक विकास योजना पर ही काम किया गया। सन् 1985 में छठी पंचवर्षीय योजना पूरी होने के बाद सातवीं पंचवर्षीय योजना पर अमल शुरू हो गया है।

द्वितीय विश्व-युद्ध के क्या कारण थे?

द्वितीय विश्व-युद्ध सन् 1939 से सन् 1945 तक लड़ा गया। इस युद्ध में एक ओर जर्मनी, इटली, जापान, रोमानिया, आदि देश थे। इन देशों को केन्द्रीय शक्तियों (Central powers) के नाम से जाना



जाता है। दूसरी ओर ब्रिटेन, फ्रांस, अमरीका, रूस, हालैंड, बेल्जियम, डेनमार्क और नॉर्वे, आदि मिलाकर लगभग 30 छोटे-बड़े देश थे। इनको मित्र-राष्ट्र (the allies or allied nations) कहा जाता है। क्या तुम जानते हो कि इस विश्व-युद्ध के क्या कारण थे?

वार्सा (Warsaw) का सन्धि-पत्र द्वितीय विश्व-युद्ध का एक बहुत बड़ा कारण था। इस सन्धि-पत्र के द्वारा ही प्रथम विश्व-युद्ध की समाप्ति हुई थी लेकिन इस सन्धि-पत्र की नींव ही अन्याय पर रखी गई थी। इस में पराजित राष्ट्रों, जैसे-जर्मनी, ऑस्ट्रिया, हंगरी तथा तुर्की के साथ बड़ा अपमानजनक व्यवहार किया गया था। इस अपमान के कारण ये देश बदले की भावना से ओत-प्रोत थे। इस अन्यायपूर्ण सन्धि के विरुद्ध युद्ध होना स्वाभाविक ही था।

प्रथम विश्व-युद्ध के बाद फ्रांस ने जर्मनी को नीचा दिखाने का हर संभव प्रयास किया। इसलिए जैसे ही जर्मनी ने शक्ति प्राप्त की, वैसे ही उसने फ्रांस से पुराना हिसाब चुकाना आरम्भ कर दिया।

इटली, जापान और जर्मनी की उत्तेजक एवं आक्रामक नीतियां भी द्वितीय विश्व-युद्ध का प्रमुख कारण बनीं। पश्चिमी शक्तियों द्वारा फासिस्ट देशों के प्रति तुष्टिकरण की नीति भी इसके लिए काफी हद तक जिम्मेदार थी। यदि इन फासिस्ट देशों पर शुरू से ही अंकुश लगा दिया जाता तो सम्भवतः द्वितीय विश्व-युद्ध न हुआ होता।

प्रथम विश्व-युद्ध के पश्चात् अमरीका का यूरोप की राजनीति से अलग हो जाना भी इस युद्ध का एक कारण था। अमरीका के अलग हो जाने से फ्रांस द्वारा जर्मनी को अपमानित करना सरल हो गया था।

सन् 1939 में जर्मनी द्वारा पोलैण्ड पर आक्रमण इस युद्ध का तात्कालिक कारण बना। जब इंगलैंड और फ्रांस को यह विश्वास हो गया कि उन्हें फासिस्ट देशों का मुकाबला करना ही होगा तो उन्होंने 3 सितम्बर, 1939 को जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। देखते ही देखते दूसरे देश भी इस युद्ध में शामिल हो गए और द्वितीय विश्व-युद्ध अपनी पूरी भीषणता के साथ आरंभ हो गया।

जब जर्मनी पूरी तरह से घेरे में आ गया तो 2 मई, 1944 को हिटलर ने आत्महत्या कर ली। 7 मई को जर्मनी ने हथियार डाल दिए और इस प्रकार यूरोप में द्वितीय विश्व-युद्ध की समाप्ति हो गई। एशिया में यह विश्व-युद्ध तीन महीने और जारी रहा लेकिन अमरीका द्वारा जापान के हीरोशिमा और नागासाकी नामक नगरों पर परमाणु बम गिराए जाने के बाद जापान ने भी 14 अगस्त, 1945 को हथियार डाल दिए। इसके साथ ही एशिया में भी द्वितीय विश्व-युद्ध का अन्त हो गया।

प्रत्यास्थता (Elasticity) और सुघट्यता (Plasticity) में क्या भेद है?

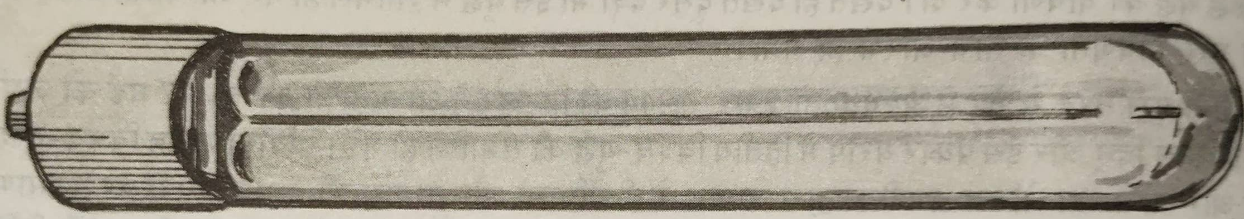
जब किसी वस्तु पर बल लगाया जाता है तो उस वस्तु की लम्बाई (length), आकार (shape) या आयतन (volume) में विरूपण (distortion) हो जाता है। बल हटाने पर यदि वह वस्तु अपनी मूल अवस्था में आ जाती है या आने की चेष्टा करती है तो ऐसी वस्तु प्रत्यास्थ (elastic) वस्तु होती है तथा पदार्थ के इस गुण को प्रत्यास्थता (elasticity) कहते हैं। रबर इसका एक आदर्शतम उदाहरण है। शायद तुम पढ़कर चौंको पर लोहा, सोना, चांदी, आदि भी प्रत्यास्थ धातुएं हैं। ये सब बल लगाये जाने पर विरूपित हो जाती हैं लेकिन बल हटाने पर अपनी मूल अवस्था में वापिस आने की चेष्टा करती हैं।

ऐसे पदार्थ, जो बल लगाने पर स्थायी रूप से विरूपित हो जाते हैं और बल हटाने पर अपनी मूल अवस्था में वापिस नहीं आते, सुघट्य (plastic) कहलाते हैं और उनके इस गुण को सुघट्यता (plasticity) कहते हैं। गीले आटे पर अंगुली से दबाव डाला जाए तो वह स्थायी रूप से विरूपित हो जाता है। इस प्रकार आटा एक सुघट्य पदार्थ है। गीली मिट्टी, प्लास्टिसिन (plasticin) आदि सुघट्य पदार्थों के कुछ उदाहरण हैं।

एक तीसरे प्रकार के पदार्थ भी होते हैं, जो बल लगाने पर चूर-चूर हो जाते हैं। ऐसे पदार्थों को भुरभुरा (brittle) कहते हैं। ईंट, मिट्टी का ढेला आदि भुरभुरे पदार्थ हैं। पदार्थों का प्रत्यास्थता का गुण हमारे लिए बहुत ही उपयोगी है। इसी गुण के आधार पर पता लगाया जाता है कि कोई पदार्थ कितना बल सहन कर सकता है। प्रत्येक पदार्थ की एक प्रत्यास्थता-सीमा (elasticity limit) होती है, जिसके आधार पर यह पता लगाया जाता है कि कोई पदार्थ कितना बल लगाने के बाद स्थायी रूप से विरूपित हो जायेगा। पदार्थों की प्रत्यास्थता मापने के विभिन्न तरीके हैं।

भवनों और पुलों का निर्माण करते समय प्रत्यास्थता के गुणों के आधार पर ही तय किया जाता है कि किस धातु की कितनी मोटी सलाखें प्रयोग में लायी जायें। तुमने पुलों पर भार-सीमा लिखी देखी होगी। यह भार-सीमा प्रत्यास्थता के गुणों के आधार पर ही निश्चित की जाती है। विभिन्न प्रकार के वाहनों के निर्माण, रेल पटरियां बिछाने, आदि में भी प्रत्यास्थता-सीमा को आधार बनाया जाता है।

सोडियम लैम्प कैसे काम करता है?



सोडियम लैम्प एक ऐसा प्रकाश-स्रोत है, जो सड़कों तथा चौराहों आदि पर प्रकाश की व्यवस्था करने के काम आता है। इसका उपयोग प्रयोगशालाओं में अनुसंधान-कार्यों के लिए भी किया जाता है। इससे पीले रंग का चमकीला प्रकाश निकलता है, जो आंखों को काफी अच्छा लगता है।

प्रत्यावर्त्ती विद्युत-धारा (A.C. current) से चलने वाले सोडियम लैम्पों में अंग्रेजी के अक्षर यू (U) के उलटे आकार जैसी कांच की एक नली होती है। इस नली के दोनों सिरों पर बेरियम ऑक्साइड की परत चढ़े टंग्स्टन धातु के दो इलेक्ट्रॉड (electrode) लगे होते हैं। कांच की नलियों में से वायु को निकाल दिया जाता है और उसके स्थान पर थोड़ी-सी निऑन (Neon) गैस और सोडियम धातु के छोटे-छोटे कण डाल दिये जाते हैं। इसके पश्चात् नलिओं को सील कर दिया जाता है। लैम्प में विद्युत-विसर्जन (electric discharge) पैदा करने के लिए दोनों इलेक्ट्रॉडों के बीच में एक ट्रांसफार्मर की सहायता से 400 वोल्ट की विद्युत-धारा प्रवाहित की जाती है। आरम्भ में निऑन गैस के विद्युत-विसर्जन के कारण लाल रंग का प्रकाश निकलता है। इसी अवधि में सोडियम के परमाणु उत्तेजित हो जाते हैं और उनसे पीले रंग का प्रकाश निकलते लगता है। चूंकि सोडियम धातु का आयनन विभव (ionisation potential) निऑन गैस से अधिक होता है, इसलिए इस लैम्प से सोडियम के परमाणुओं से उत्पन्न प्रकाश ही उत्सर्जित (emit) होता है।

इस लैम्प का कार्यात्मक तापमान 250° सेल्सियस होता है। यदि यह तापमान कम हो जाता है तो सोडियम लैम्प से निकलने वाले प्रकाश की तीव्रता कम हो जाती है। इस लैम्प से निकलने वाला प्रकाश केवल दो तरंगदैर्ध्य (wave length) का होता है। इनका मान 5890 और 5896 आंग्स्ट्राम (Angstrom) होता है।

संसार की सबसे पुरानी भूमिगत रेलवे कहां है?

आज संसार के सभी देशों में रेलगाड़ियों की पटरियों का जाल-सा बिछा हुआ है, जिन पर रात और दिन रेलगाड़ियां दौड़ती रहती हैं। ये रेलगाड़ियां पता नहीं कितनी सवारियां और माल एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाती हैं। अधिकतर रेलगाड़ियां धरती के ऊपर ही चलती हैं लेकिन संसार में बहुत से देशों में भूमिगत रेलगाड़ियां भी हैं। क्या तुम जानते हो कि संसार की सबसे पुरानी भूमिगत रेलवे कहां पर है?

विश्व की सबसे पहली भूमिगत रेलवे का निर्माण लंदन शहर में हुआ था। रेलगाड़ी के पथ की योजना बना कर सड़क के किनारे विशाल खाई खोदी गई। एक खाई में ट्रेन की पटरियां बिछाई गईं और इसे इस प्रकार ढक दिया गया कि नीचे रेलवे टनल बन जाए और ऊपर सड़क बन जाए।

लंदन की भूमिगत रेलवे का मूल रास्ता लगभग चार मील लम्बा था। यह पैडिंगटन स्टेशन से फॅरिंगटन स्ट्रीट तक जाता था। उसे 10 जनवरी, 1863 में चालू किया गया। इस पथ पर चलने वाली शुरू की रेलगाड़ियों में भाप के इंजन थे। इन इंजनों से निकलने वाले धुएं से सारी सुरंग भर जाती थी, जिससे यात्रा बड़ी ही कष्टमय हो जाती थी। चूंकि विश्व की यह पहली भूमिगत रेलवे थी, इसलिए कष्टदायक होने के बावजूद लोगों के लिए बेहद कौतूहल का विषय थी। इस पर रोजाना 30,000 यात्री नियमित रूप से यात्रा करते थे।

इसके पश्चात् इस भूमिगत रेलवे के दूसरे भाग भी चालू कर दिये गये। सन् 1890 में एक और गहरी रेलवे टनल लंदन में बनायी गयी। इसके लिए विद्युत से चलने वाली रेलगाड़ियों का निर्माण किया गया। आरम्भ की रेलगाड़ियों में खिड़कियां नहीं थीं क्योंकि खिड़कियों का लगाना एक भूमिगत ट्रेन के लिए अनावश्यक समझा गया


The world's first underground railway

Modern train of the London underground.

था। ट्रेन का गार्ड हर स्टेशन पर उस स्थान का नाम पकारता था। सन् 1979 तक लगभग 500 रेलगाड़ियां इस मार्ग पर चलने लगी थी, जो 594,000,000 सवारियां ले जाती थीं। उत्तरी लाइन पर रेलवे की अधिकतम गहराई 67.2 मीटर है, जो हैम्पस्टैड (Hampstead) के पास है। रेलगाड़ी को बिना बदले हुए सबसे लम्बी यात्रा एपिंग से पश्चिमी रूस्लिप (Epping to West Ruislip) तक है, जो 54.8 किमी. लम्बी है।

आजकल विश्व के दूसरे देशों में भी भूमिगत रेल लाइनें हैं। पेरिस में ऐसी ही भूमिगत रेलवे सन् 1900 में चालू की गयी थी। अमरीका के बोस्टन शहर में सन् 1895 और सन् 1897 के बीच में भूमिगत रेलवे का निर्माण किया गया। न्यूयार्क में भी सन् 1904 में भूमिगत रेलवे बनाई गयी। आज विश्व की यह सबसे लम्बी भूमिगत रेलवे है। सन् 1930 के दौरान मास्को शहर में भी भूमिगत रेलवे का निर्माण हुआ। कनाडा के टोरण्टो शहर में सन् 1954 में भूमिगत रेलवे निर्मित की गयी। जापान के टोकियो शहर की भूमिगत रेलवे सन् 1927 में चालू की गयी। इसके अतिरिक्त विश्व के दूसरे देशों के शहरों में भी भूमिगत रेलगाड़ियां हैं, जो यात्रियों की सेवा में दिन-रात लगी रहती हैं।

भूमिगत रेलों का निर्माण काफी जटिल कार्य है। ऐसी अधिकतर रेलवे लाइनें शहरों की सड़कों के नीचे बिछाई जाती हैं। सामान्यत: पटरियां बिछाने के लिए सड़कों के साथ-साथ गहरी खाइयां खोदी जाती हैं। इन खाइयों की दीवारों का निर्माण ईंटों से किया जाता है। इन्हें मजबूत गर्डरों से ढक कर छत के रूप में ऊपर सड़क बना दी जाती है। इस प्रकार नीचे रेलगाड़ी चलती हैं और ऊपर दूसरे यातायात के वाहन चलते हैं।

विदेश जाने के लिए पासपोर्ट की आवश्यकता क्यों होती है?

विश्व के सभी देशों में किसी दूसरे देश में जाने के लिए पासपोर्ट प्रयोग किया जाता है। यह सरकार द्वारा दिया गया एक प्रकार का लाइसेंस होता है, जो किसी भी देश विशेष के नागरिक को विदेश जाने की अनुमति प्रदान करता है। पासपोर्ट का चलन सदियों से चला आ रहा है। यह सरकार के नाम में व्यक्ति के अपने व्यवहार का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है। विदेश जाने के लिए इसे युद्ध और शान्ति दोनों में ही प्रयोग किया जा सकता है।

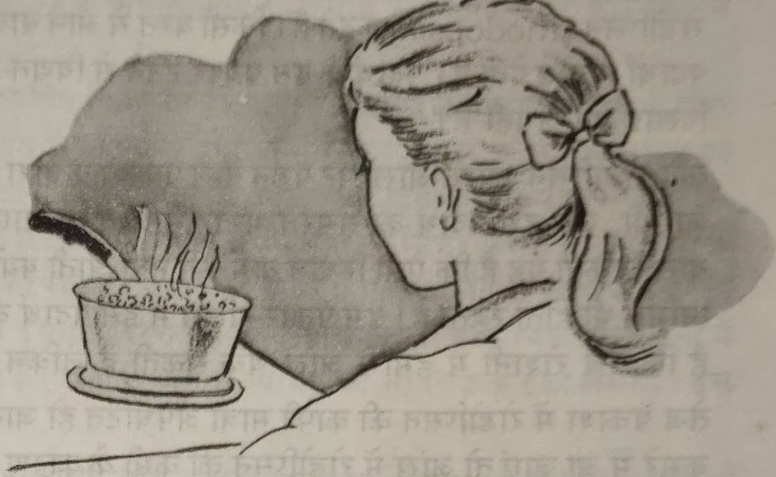
पासपोर्ट शब्द का मूल अर्थ है किसी पोर्ट या बंदरगाह को छोड़ने या प्रवेश करने की अनुमति प्रदान करने वाला दस्तावेज या प्रपत्र। बाद में इसका अर्थ विस्तृत होकर यह हो गया कि व्यक्ति अपने देश को छोड़ सकता है और दूसरे देश में प्रवेश कर सकता है।

यद्यपि पासपोर्ट हमें अपने देश को छोड़ने की अनुमति देता है लेकिन यह निश्चित रूप से हमें दूसरे देश में रहने की अनुमति नहीं देता। इसके लिए कुछ देश वीसा (visa) मांगते हैं। वीसा के आधार पर ही तुम्हें दूसरे देश में रहने की अनुमति मिलती है। विदेश जाने के लिए पासपोर्ट एक आवश्यक दस्तावेज है।

पासपोर्ट एक छोटी-सी पुस्तिका के रूप में होता है। इस पुस्तिका में संबंधित व्यक्ति का नाम, जन्मतिथि, पिता का नाम तथा अन्य ब्यौरे होते हैं। इसमें संबंधित व्यक्ति का फोटो भी होता है, जो उचित अधिकारी द्वारा प्रमाणित किया जाता है। इसमें उन देशों के नाम भी होते हैं, जिनमें जाने के लिए संबंधित व्यक्ति को अनुमति दी गई है। पासपोर्ट के आधार पर ही व्यक्ति की पहचान की जाती है तथा इसी के आधार पर विदेश में उसकी सुरक्षा का प्रबन्ध किया जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि विदेश जाने के लिए पासपोर्ट एक बहुत महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है।

गर्म करने पर दूध बर्तन से बाहर क्यों निकलने लगता है?

दूध पानी की तरह एक साधारण पदार्थ नहीं है। यह एक कलिल (colloid) है, जिसमें बहुत से पदार्थ पानी से संलग्न रहते हैं। इन पदार्थों में प्रोटीन, चीनी और वसा मुख्य हैं। दूध को जब गर्म किया जाता है तो बर्तन में वह ऊपर उठने लगता है और उबलकर बर्तन से बाहर निकलने लगता है। क्या तुम जानते हो ऐसा क्यों होता है?



जब दूध को धीरे-धीरे गर्म किया जाता है तो प्रोटीन और वसा (fat) एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं। ये दोनों ही पदार्थ दूध की सतह पर मलाई के रूप में जमा हो जाते हैं क्योंकि ये दोनों ही दूध से हल्के होते हैं।

दूध के गर्म होने पर इसका कुछ पानी जलवाष्प के रूप में वाष्पित हो जाता है। यदि गर्म करते समय दूध की ऊपरी सतह मलाई से ढक जाए तो जलवाष्प इसके नीचे दब जाता है। अधिक गर्म करने पर यह जलवाष्प फैलने लगता है। जलवाष्प के फैलने से मलाई की परत में फैलाव आ जाता है, जिससे दूध बर्तन में ऊपर उठता जाता है। परिणाम यह होता है कि बर्तन में से जलवाष्प निकलने पर उसके साथ मलाई और दूध भी बाहर आने लगता है।

उफान से दूध को बाहर निकलने से रोकना बहुत आसान है। हमें सिर्फ इतना करना है कि भाप के निकलने के लिए कोई जगह होनी चाहिए। इस काम के लिए हम दूध के बर्तन में एक लम्बा चम्मच रख दें। दूध के उबलने से बनी भाप इस चम्मच के हैंडिल के साथ-साथ बाहर निकलती रहेगी। इससे पानी का वाष्प मलाई के अन्दर जमा नहीं हो पाएगा और इस प्रकार दूध में उबाल आने पर वह बर्तन से बाहर नहीं आ पाएगा। दूध को बाहर निकलने से रोकने का यह बड़ा प्रभावशाली तरीका है।

धूप से अचानक अंधेरे में आने पर चीजें साफ क्यों नहीं दीखतीं?

यह एक आम अनुभव की बात है कि जब हम तेज धूप में से एक अपेक्षाकृत अंधेरे कमरे में आते हैं तो कमरे की वस्तुएं हमें एकदम साफ दिखाई नहीं देतीं। शुरू-शुरू में वे धुंधली दिखाई देती हैं और बाद में साफ दिखाई देने लगती हैं। क्या तुम जानते हो कि ऐसा क्यों होता है?

हम तेज और धुंधले प्रकाश (dim light), दोनों में ही वस्तुओं को देख सकते हैं। प्रकाश की चमक के अनुसार हमारी आंख की पुतली का आकार अपने आप समायोजित (synchronize) हो जाता है। जब हम मन्द रोशनी में होते हैं तो आंख की पुतली चौड़ी हो जाती है, जिससे आंख में अधिक प्रकाश प्रवेश कर सकता है। जब हम तेज प्रकाश में होते हैं तो यह पुतली सिकुड़ जाती है। जब हम तेज धूप से अचानक अंधेरे कमरे में प्रवेश करते हैं तो

पुतली को चौड़ा होने में कुछ समय लगता है। इसलिए अंधेरे कमरे की वस्तुओं को स्पष्ट देखने में भी कुछ समय लगता है।

ऐसा होने का एक दूसरा महत्त्वपूर्ण कारण भी है। हमारी आंख का पर्दा जिसे हम दृष्टिपटल या रेटिना कहते हैं, उस पर ही वस्तुओं के प्रतिबिम्ब बनते हैं। रेटिना में बहुत-सी कोशिकाएं (cells) होती हैं, जिन्हें हम शलाका (rods) और शंकु (cones) कहते हैं। रेटिना की इन शलाकाओं में नीलारुण (purple) रंग का एक पदार्थ होता है, जिसे रोडोप्सिन (rhodopsin) कहते हैं। किसी वस्तु से आने वाला प्रकाश जब रेटिना पर पड़ता है तो रोडोप्सिन को दो पदार्थों में तोड़ देता है। पदार्थ के इस प्रकार टूटने से विद्युत-स्पंद पैदा होते हैं, जो मस्तिष्क में आते हैं और वस्तु हमें दिखाई देने लगती है।

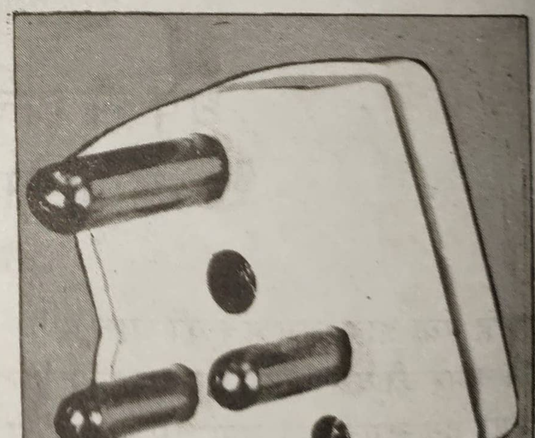
यदि रोडोप्सिन हमारी आंखों पर पड़ने वाले प्रकाश के द्वारा निरन्तर ही अपघटित होता रहे तो एक स्थिति ऐसी आ जाएगी, जब इस पदार्थ का समस्त भंडार समाप्त हो जाएगा। ऐसी स्थिति में तो व्यक्ति अंधा ही हो जाएगा। वास्तविकता यह है कि ऐसी स्थिति कभी भी नहीं आती क्योंकि यह पदार्थ टूटता भी रहता है और साथ-साथ पुनः निर्मित भी होता रहता है। इस प्रकार रेटिना में इस पदार्थ की पूर्ण समाप्ति कभी भी नहीं होती। हां, इतना अवश्य है कि तेज रोशनी में हमारी आंखें थक सकती हैं लेकिन अंधे होने की स्थिति कभी भी नहीं आ सकती।

तेज प्रकाश में रोडोप्सिन की काफी मात्रा अपघटित हो जाती है। ऐसी स्थिति में यदि हम अचानक ही एक अंधेरे कमरे में आ जाएं तो आंख में रोडोप्सिन की कमी के कारण हमें वस्तुएं एकदम स्पष्ट दिखाई नहीं देंगी। रोडोप्सिन के पुनः निर्माण में कुछ समय लगेगा और वस्तुएं हमें फिर से स्पष्ट दिखाई देने लगेंगी।

इसके विपरीत जब हम एक अंधेरे कमरे से अचानक ही तेज प्रकाश में आते हैं तो हमारी आंखें चुंधिया जाती हैं। इसका कारण यह है कि अंधेरे कमरे में बहुत कम रोडोप्सिन अपघटित होता है लेकिन एकदम से तेज रोशनी में जाने पर इसकी बहुत भारी मात्रा अपघटित हो जाती है, जिससे बहुत सारे विद्युत-स्पंद मस्तिष्क में पहुंचते हैं। इन्हीं के कारण तेज प्रकाश में हमारी आंखें चुंधिया जाती हैं।

रोडोप्सिन निर्माण के लिए हमें विटामिन 'ए' की आवश्यकता होती है। विटामिन 'ए' की कमी के कारण हमें रंगांधता (colour blindness) का रोग हो जाता है। विटामिन 'ए' हमें हरी पत्तियों, गाजर, अंडे और दूध से मिलता है।

विद्युत प्लग में लगी तीसरी पिन का क्या कार्य है?



यह एक सर्वविदित तथ्य है कि विद्युत प्लग में तीन पिनें होती हैं। इन तीनों पिनों को तीन तारों द्वारा जोड़ कर विद्युत उपकरण के साथ संबंधित कर दिया जाता है। इन तीन पिनों में से दो पिनों का आकार तो समान होता है लेकिन तीसरी पिन इन दो की तुलना में कुछ मोटी होती है। इस पिन को सामान्यतः एक हरे रंग के तार के साथ जोड़ दिया जाता है। इस तार को अर्थ का तार (earthwire) या भूयोजित तार कहते हैं। क्या तुम जानते हो कि प्लग में लगी इस तीसरी पिन का क्या काम होता है?

तीसरी पिन और हरे रंग के तार में सामान्य स्थितियों में कोई भी विद्युतधारा प्रवाहित नहीं होती है। इस तार का एक सिरा विद्युतीय उपकरण की बॉडी के साथ जोड़ दिया जाता है तथा दूसरे सिरे का संबंध घर में बिछे विद्युत के तारों द्वारा जमीन में दबी एक धातु की प्लेट से कर दिया जाता है। इस प्रकार प्लग की तीसरी पिन विद्युत उपकरण का संबंध पृथ्वी के साथ कर देती है। इसे अर्थिंग या इलेक्ट्रिकल ग्राउंडिंग कहते हैं। वास्तव में यह एक ऐसी सावधानी है, जो कि विद्युत उपकरण का सम्पर्क ऐसे तार के साथ हो जाने की स्थिति में बरतनी जरूरी है, जिसमें से विद्युतधारा प्रवाहित हो रही है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि विद्युत उपकरण में कुछ दोष विकसित हो जाता है, जिससे उपकरण के धातु के खोल में विद्युतधारा प्रवाहित होने लगती है। ऐसी स्थिति में यदि कोई व्यक्ति उपकरण को छू ले तो उसे विद्युत का झटका लगेगा। उपकरण के खोल में बहती विद्युतधारा मनुष्य के शरीर से प्रवाहित होती जमीन में चली जाती है। इससे उसे विद्युत का झटका लग जाता है। विद्युत के झटके की गम्भीरता इस बात पर निर्भर करती है कि मनुष्य के शरीर में से विद्युतधारा की कितनी मात्रा प्रवाहित हो रही है। उदाहरण के लिए यदि व्यक्ति के हाथ भीगे हों तो उसके शरीर से अधिक विद्युतधारा प्रवाहित होगी। इसका कारण यह है कि गीली त्वचा सूखी त्वचा की तुलना में विद्युत की अधिक सुचालक (conductor) होती है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति को भयानक झटका लगेगा। इस झटके से उसकी मृत्यु तक हो सकती है।

तीसरी पिन का प्रयोग या अर्थिंग ऐसा तरीका है, जो दोषी उपकरणों से लगने वाले विद्युत के झटकों के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करता है। मेन्स (mains) से चलने वाले सभी उपकरणों के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उनका धरती के साथ उचित रूप से सम्बन्ध स्थापित करा दिया जाए। प्लग की तीसरी पिन यही करती है।

यदि कोई विद्युत उपकरण उचित ढंग से भूयोजित कर दिया गया है और उसकी बॉडी में किसी दोष के कारण विद्युतधारा प्रवाहित होने लगती है तो यह विद्युत धारा उपकरण के धातु के खोल से तार में होती हुई धरती में स्वयमेव चली जाती है। यदि कोई व्यक्ति उपकरण को छू लेता है तो उसे झटका नहीं लगेगा क्योंकि तार का प्रतिरोध (resistance) मनुष्य के शरीर की तुलना में कम होता है। इसी कारण समस्त विद्युतधारा तार में प्रवाहित होती हुई जमीन में चली जाती है और मनुष्य के शरीर से बहुत ही कम विद्युतधारा प्रवाहित होती है। चूंकि तार का प्रतिरोध कम होता है और अगर इसमें काफी मात्रा में विद्युतधारा बहती है तो लाइन में लगा फ्यूज का तार पिघलकर संबंध विच्छेद कर देता है। इस प्रकार प्लग की तीसरी पिन विद्युत के झटकों के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करती है।

पिन कोड (Pin Code) प्रणाली क्या है?

भारत एक विशाल देश है। इसमें हजारों डाकघर हैं, जो घर-घर में पत्रों के वितरण की सुविधा प्रदान करते हैं। इसके साथ ही हमारे देश में अनेक भाषाएं बोली जाती हैं तथा इन भाषाओं को लिखने के लिए विभिन्न लिपियां प्रयोग में लाई जाती हैं। इसी कारण डाक विभाग के लोगों को पत्रों पर लिखे पतों को पढ़ने में काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इस कठिनाई से छुटकारा पाने के लिए एक व्यवस्था स्थापित की गई है। इस व्यवस्था को पिन कोड प्रणाली कहते हैं। क्या तुम जानते हो कि पिन कोड प्रणाली क्या है?

पिन शब्द अंग्रेजी के तीन अक्षरों पी (P) आई (I) और एन (N) को प्रदर्शित करता है। इन अक्षरों का विस्तृत रूप पोस्टल इण्डैक्स नम्बर (Postal Index Number) है। इस प्रणाली के अनुसार समस्त भारत को आठ डाक क्षेत्रों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक क्षेत्र को छोटे वर्गों में बांटा गया है।

पिन कोड प्रणाली में छः अंक होते हैं। प्रत्येक अंक का अपना एक विशेष अर्थ है और वह एक विशेष सूचना प्रदान करता है। बाईं ओर का प्रथम अंक डाक-क्षेत्र को प्रदर्शित करता है और इसके बाद के दूसरे और तीसरे अंक उपक्षेत्र को प्रदर्शित करते हैं। इस प्रकार पहले तीन अंक मिलकर छंटाई करने वाले जिले को प्रदर्शित करते हैं। दाईं ओर के तीन अंक उस जिले के उस डाकघर को प्रदर्शित करते हैं, जो किसी पत्र-विशेष का वितरण करेगा। इस प्रकार ये छः अंक एक साथ मिलकर वितरण डाकघर को प्रदर्शित कर देते हैं।

डाकघर पिन कोड प्रणाली के अन्तर्गत भारत को निम्नलिखित क्षेत्रों में बांटा गया है:

क्षेत्र नम्बर 1 इस क्षेत्र में दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, चंडीगढ़, हिमाचल प्रदेश तथा जम्मू और कश्मीर आते हैं।

क्षेत्र नम्बर 2 इसमें उत्तरप्रदेश आता है।

क्षेत्र नम्बर 3 इसमें राजस्थान, गुजरात, दमन और दियू तथा दादरा, नगर हवेली आते हैं।

क्षेत्र नम्बर 4 इसमें महाराष्ट्र, गोवा और मध्यप्रदेश आते हैं।

क्षेत्र नम्बर 5 इसमें आंध्रप्रदेश और कर्नाटक आते हैं।

क्षेत्र नम्बर 6 इसमें तमिलनाडु, केरल और लक्षद्वीप आते हैं।

क्षेत्र नम्बर 7 इसमें पश्चिमी बंगाल, अंडेमान और निकोबार, उड़ीसा, अरुणांचल प्रदेश, आसाम, मणिपुर, मेघालय, नागालैंड और त्रिपुरा आते हैं।

क्षेत्र नम्बर 8 इस क्षेत्र में बिहार आता है।

भारत के कुछ मुख्य शहरों के पिन कोड नम्बर निम्न प्रकार हैं।

कलकत्ता जी.पी.ओ.	700001	बम्बई जी.पी.ओ.	400001
हैदराबाद जी.पी.ओ.	500001	अहमदाबाद जी.पी.ओ.	300001
मद्रास जी.पी.ओ.	600001	बंगलौर सिटी	560002
कानपुर एच.ओ.	208001	जयपुर जी.पी.ओ.	302001
नई दिल्ली एच.ओ.	110001	दिल्ली जी.पी.ओ.	110006
अमृतसर एच.ओ.	143001	सिन्दरी	828122

पिन कोड प्रणाली हमारे लिए बहुत ही उपयोगी है। इसकी सहायता से पत्रों का वितरण शीघ्रता से हो जाता है।

लड़के अधिक बुद्धिमान होते हैं या लड़कियां?

इस प्रश्न के विषय में लोगों के अलग-अलग विचार हैं। कुछ लोगों का कहना है कि लड़कियां अधिक बुद्धिमान होती हैं, जबकि दूसरे लोगों का यह विचार है कि लड़के अधिक चतुर होते हैं। सारे प्रयासों के बावजूद वैज्ञानिक आज तक कोई ऐसा तर्कसम्मत पैमाना नहीं ढूंढ पाए हैं, जिसके आधार पर निश्चित रूप से कहा जा सके कि एक लिंग-विशेष दूसरे लिंग की तुलना में अधिक बुद्धिमान या चतुर होता है। इस प्रश्न को निम्नलिखित तथ्यों के आधार पर समझा जा सकता है।

पुरुषों के मस्तिष्क का औसत भार महिलाओं से अधिक होता है लेकिन साथ ही उन के शरीर का औसत भार भी महिलाओं से अधिक होता है। अतः हम कह सकते हैं कि लड़के और लड़कियों में मस्तिष्क का प्रतिशत भार समान

ही होता है। रही मस्तिष्क के आकार के अन्तर की बात, यह अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है। मानव जाति के समस्त नर और मादाओं के मस्तिष्क में इतनी तंत्रिका-कोशिकाएं होती हैं कि उनकी संख्या थोड़ी बहुत अधिक हो तो इससे कोई अंतर नहीं पड़ता।

लड़के और लड़कियों पर किए गए बहुत से परीक्षणों से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि दोनों ही परीक्षण- परीक्षाओं में लगभग समान अंक प्राप्त करते हैं। शब्द-चातुर्य से संबंधित परीक्षणों में यह पाया गया है कि लड़कियां लड़कों से अधिक अंक प्राप्त करती हैं लेकिन गणित और यांत्रिकी से संबंधित परीक्षणों में लड़के उनसे अधिक अंक प्राप्त करते हैं। इन परीक्षणों के आंकड़े अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं हैं क्योंकि ये परीक्षण किसी भी लिंग की निपुणता मापने के लिए पर्याप्त तथा प्रामाणिक नहीं हैं। दूसरे, अंकों से प्राप्त आंकड़े केवल औसत आंकड़े होते हैं। कुछ परीक्षणों में एक लिंग दूसरे लिंग से अधिक अंक प्राप्त कर सकता है लेकिन औसतन ये आंकड़े दोनों लिंगों के लिए समान ही रहते हैं।

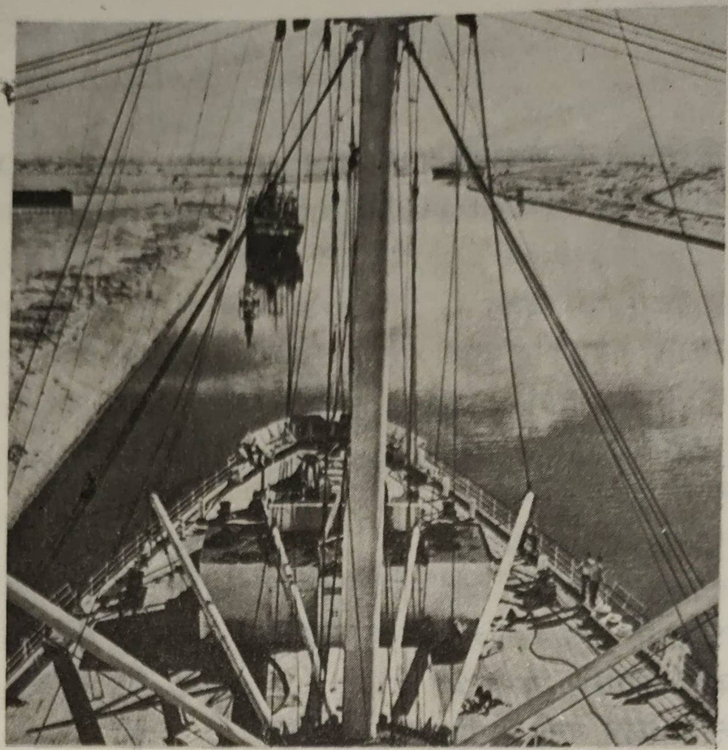


बचपन से ही लड़कों और लड़कियों के साथ अलग-अलग प्रकार का व्यवहार किया जाता है। उदाहरण के लिए लड़कियों को खेलने के लिए प्रायः गुड़िया दी जाती है, जबकि लड़कों को दूसरे यांत्रिक खिलौने दिए जाते हैं। इस प्रकार लड़कियों का विकास लड़कों से कुछ अलग प्रकार का होता है लेकिन आज समय बदल रहा है। लड़के और लड़कियां समान क्षेत्रों में काम करने लगे हैं। यही कारण है कि उनकी दक्षताएं और क्षमताएं भी लगभग एक-जैसी ही होती जा रही हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वैज्ञानिक परीक्षणों के आधार पर हमारे पास कोई ऐसा मापदंड नहीं है जो एक लिंग की दूसरे पर श्रेष्ठता साबित कर सके। किसी क्षमता-विशेष पर दोनों लिंगों में से किसी एक का पूर्ण अधिकार नहीं है। दोनों ही लिंगों में व्यक्तिगत रूप से किसी भी योग्यता को विकसित करने की समान सम्भावना है। लड़के और लड़कियां दोनों में ही यह क्षमता है कि वे जो बनना चाहें बन सकते हैं।

स्वेज नहर का निर्माण कैसे हुआ?

मध्य सागर और लाल सागर को एक नहर द्वारा जोड़ने का विचार बहुत पुराना है। कुछ लोगों का कहना है कि पहली नहर फराओ सम्राटों के काल में लगभग 2000 वर्ष पहले बनाई गई थी। कई बार इस नहर के निर्माण की योजनाएं बनीं लेकिन हर बार किसी न किसी कारण से यह नहीं बन पाई। इस विचार पर गंभीरता से तभी सोचा गया जब पश्चिमी यूरोप, भारत और सुदूर पूर्व के बीच व्यापार आरम्भ हो गया। इस नहर



के बनने से ऐसा अनुमान था कि भारत आने के लिए लगभग 4000 मील का रास्ता कम हो जाएगा। ब्रिटेन के लोग इस कार्य के लिए बड़े इच्छुक थे। उनका व्यापार और राज्य-क्षेत्र फैलता ही जा रहा था लेकिन इस कार्य के लिए पहल फ्रांस के लोगों ने की।

स्वेज नहर परियोजना का जनक फर्दिनेन्द द लैसेप्स को माना जाता है। उन्होंने व्यक्तिगत रूप से मिस्र की सरकार से यह आग्रह किया कि वह इस नहर के निर्माण का भार उन्हें सौंप दे। मिस्र की सरकार ने उन्हें सहमति प्रदान कर दी। उन्होंने इस परियोजना के लिए यूरोपीय देशों से आवश्यक धन जुटाया। उन्हें नहर के लिए बहुत से लोगों ने नक्शे दिए किन्तु अन्ततः इटली के इंजीनियर लुइगी नेगरैली (Luigi Negrelli) के नक्शे को मान्यता दी गई।

25 अप्रैल, 1859 को नहर-निर्माण का कार्य शुरू हुआ और 15 अगस्त, 1869 में यह काम पूरा हुआ। इस कार्य के लिए महारानी विक्टोरिया ने फर्दिनेन्द को विशेष आदर प्रदान किया। 1875 में स्वेज कैनाल कम्पनी के अधिकतर शेयर ब्रिटेन के प्रधानमंत्री डिजरेली (Disraeli) द्वारा खरीद लिए गए। इस प्रकार नहर पर ब्रिटेन का अधिकार बढ़ गया और कम्पनी को 99 वर्ष तक नहर के परिचालन का अधिकार सौंप दिया गया।

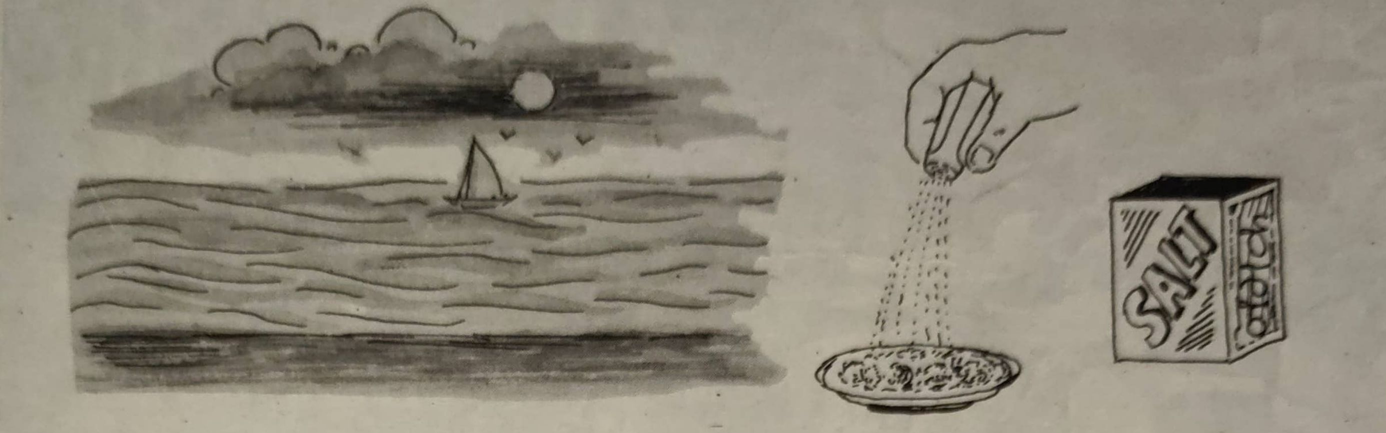
सन् 1956 में मिस्र की सरकार ने अचानक ही नहर का राष्ट्रीयकरण कर दिया। अब इस नहर की देखभाल उन देशों को करनी थी, जिन से होकर यह गुजरती है। इस निर्णय पर ब्रिटेन और फ्रांस के लोग काफी नाराज हुए लेकिन अंततः उन्हें इस समझौते को मानना ही पड़ा।

10 वर्ष के अथक परिश्रम से, 25,000 मिस्री और 1,000 यूरोपीय कारीगरों द्वारा निर्मित यह नहर बड़ी ही महत्त्वपूर्ण साबित हुई। 17 नवम्बर, 1869 को इस नहर को खोल दिया गया। 20 जहाजों का बेड़ा पोर्ट सईद से चलकर स्वेज तक आया।

इस नहर की लम्बाई लगभग 107 मील है। इसकी चौड़ाई पानी की सतह के ऊपर 235 फुट से लेकर 421 फुट तक है। तली में इसकी चौड़ाई 151 फुट और 337 फुट के बीच में है। नहर के पानी की गहराई 37 फुट से 42½ फुट तक है। इसमें केवल उन जहाजों को जाने की आज्ञा दी जाती है, जिन्हें लगभग 35 फुट की गहराई की आवश्यकता होती है।

इस नहर के कारण यूरोप से एशिया और पूर्वी अफ्रीका का सरल और सीधा मार्ग खुल गया और इससे लगभग 6,000 मील की दूरी की बचत हो गई। इससे अनेक देशों, पूर्वी अफ्रीका, ईरान, अरब, भारत, पाकिस्तान, सुदूर पूर्व एशिया के देशों, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड इत्यादि देशों के साथ व्यापार में बहुत सुविधा हो गई।

खाने का नमक हमें कहां से प्राप्त होता है?



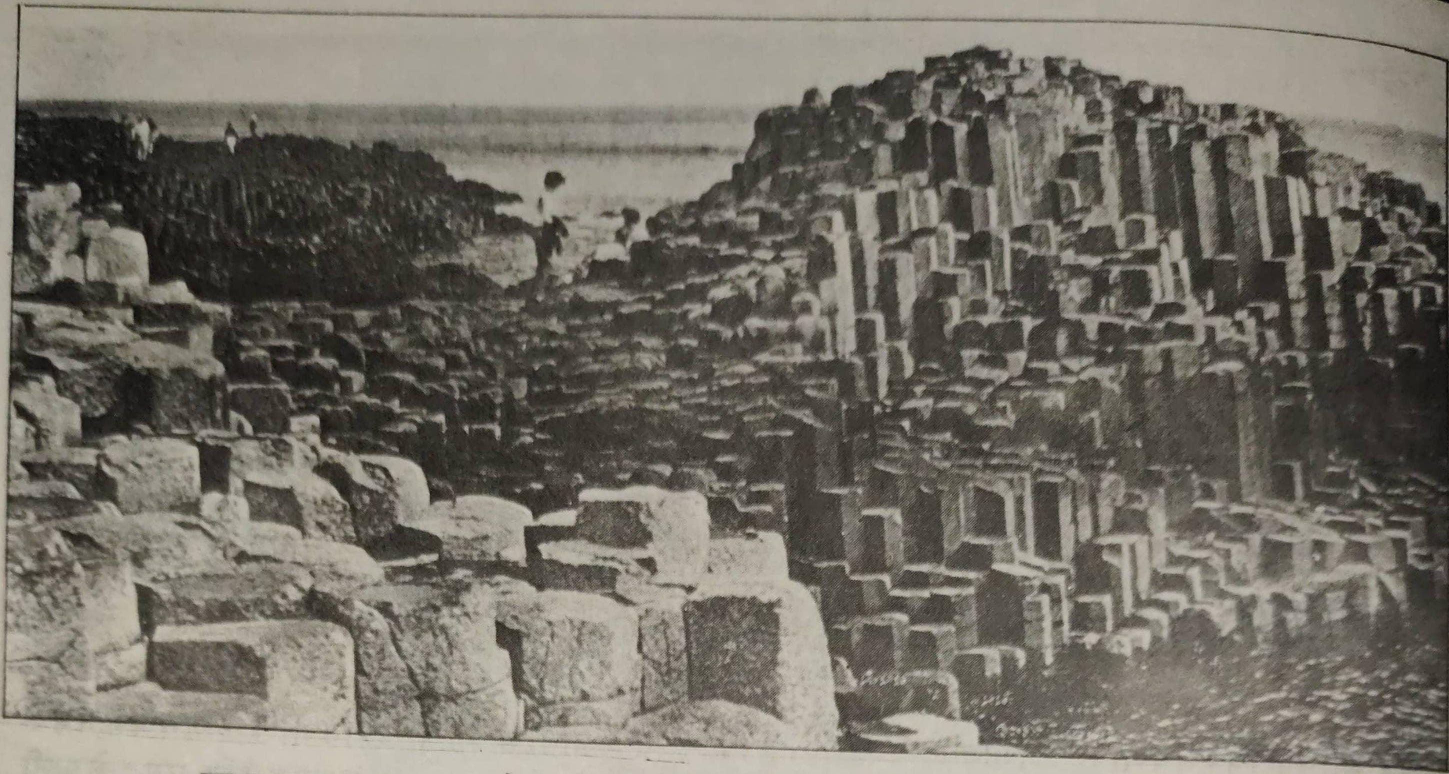
वैज्ञानिक विश्लेषणों से अनुमान लगाया गया है कि समुद्र के पानी में 45 लाख घन मील के लगभग नमक है। यह नमक धरती से ही सागरों में पहुंचा है। प्रतिशत मात्रा के अनुसार यह माना जाता है कि समुद्र के पानी में तीन से साढ़े तीन प्रतिशत के बीच तक नमक है। इसमें सन्देह नहीं कि अधिकतर नमक हमें सागरों से ही प्राप्त होता है लेकिन लाखों वर्ष पहले कुछ झीलें समुद्र से अलग हो गई थीं, जिनका पानी धीरे-धीरे वाष्पित होता गया और वे केवल नमक की झीलें बन गईं। इस प्रकार की झीलों में ऊटा (Utah) की ग्रेट साल्ट लेक ऐसी है, जिसके पानी में समुद्र के पानी की तुलना में चार-पांच गुना अधिक नमक है। इसी प्रकार तुर्की की लेक वान (Lake Van) में लगभग 33% नमक है।

अब प्रश्न उठता है कि हमें खाने का नमक कैसे प्राप्त होता है? खाने का नमक वास्तव में सोडियम और क्लोरीन का एक यौगिक (compound) है। इसे सोडियम क्लोराइड कहते हैं। सोडियम का एक परमाणु क्लोरीन के एक परमाणु से मिलकर सोडियम क्लोराइड का एक अणु बनाता है।

सामान्यत: नमक प्राप्त करने के लिए समुद्र का पानी प्रयोग में लाया जाता है। इस काम के लिए समुद्र के पानी को लम्बे-चौड़े खेतों में भेजा जाता है। इन खेतों की गहराई लगभग तीन फुट होती है। पहले खेत में जब पानी जाता है तो उसमें से बालू, कीचड़ और छोटे-छोटे जीव-जन्तु नीचे जम जाते हैं। इसके बाद पानी दूसरे खेतों में पहुंचता है, जहां इसका वाष्पीकरण (evaporation) होता है। वाष्पीकरण की प्रक्रिया में पानी तो उड़ जाता है लेकिन नमक जम जाता है। इस नमक को इकट्ठा करके सुखाया जाता है। इसके बाद इसमें से अशुद्धियां अलग कर दी जाती हैं और इस प्रकार शुद्ध नमक प्राप्त हो जाता है।

ठंडे प्रदेशों में नमक निकालने के लिए एक दूसरा तरीका प्रयोग में लाया जाता है। समुद्र के पानी को जमने के लिए छोड़ दिया जाता है। चूंकि जमे हुए पानी में नमक नहीं आ पाता, इसलिए नमक बिना जमे हुए पानी में पहुंचकर अपनी प्रतिशत मात्रा बढ़ा लेता है। जमी हुई बर्फ को हटा दिया जाता है और शेष पानी को जमने के लिए छोड़ दिया जाता है। यह प्रक्रम तब तक जारी रखा जाता है, जब तक कि बहुत नमकीन पानी ही शेष न रह जाए। इस नमकीन पानी में से कृत्रिम गर्मी द्वारा पानी का वाष्पीकरण कर दिया जाता है और इस प्रकार अन्त में केवल नमक बच जाता है।

संसार में बहुत से स्थानों पर नमक के जमे हुए भंडार भी हैं। अकेले अमरीका में ही कन्सास, ओक्लाहोमा, टैक्सास और न्यू मैक्सिको के लगभग पौने दो लाख वर्ग कि्मी. के क्षेत्र में नमक की खानें हैं। यह विश्व में नमक का सबसे बड़ा क्षेत्र है। रूस की यूराल पर्वतमालाओं में भी नमक के भंडार हैं। जर्मनी की स्टासफर्ट नमक की खानें बहुत ही प्रसिद्ध हैं। वैज्ञानिकों का विचार है कि नमक की इन खानों का निर्माण लगभग 15 से 20 करोड़ वर्ष पहले हुआ था।

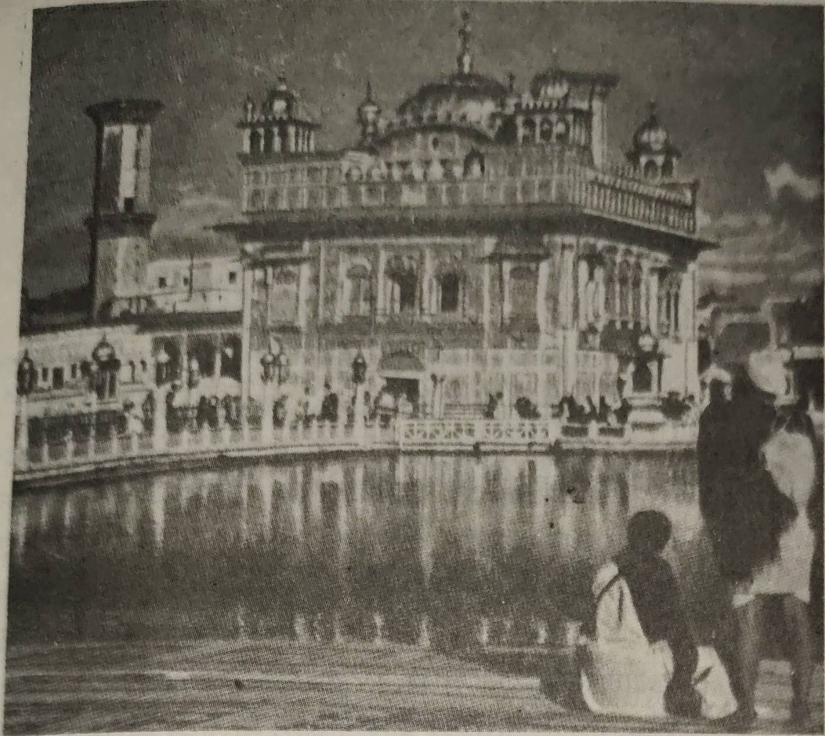


जाइण्ट्स कॉज्वे (Giants' Causeway) क्या है?

उत्तरपूर्वी आयरलैण्ड के एण्टरिम तट (Antrim Coast of North-Eastern Ireland) पर स्थित जाइण्ट्स कॉज्वे प्रकृति की कारीगरी का एक अनुपम नमूना है। इस स्थान पर एक जैसे षट्भुजीय (hexagonal) पत्थरों के स्तम्भ हैं, जो किसी संगतराश की कला के अद्भुत नमूने प्रतीत होते हैं। कॉज्वे में पत्थरों के ऐसे बत्तीस हजार से अधिक स्तम्भ हैं, जो एक-दूसरे के आस-पास स्थित हैं। पत्थरों की ये आकृतियां लगभग 183 मीटर तक फैली हुई हैं। इन स्तम्भों का व्यास 15 से 20 इंच है तथा इनमें से कुछ की ऊंचाई नौ मीटर तक है। इनमें से अधिकतर पत्थर षट्भुजीय हैं। किन्तु इनमें से बहुत सारे पत्थर पंचभुजीय, सप्तभुजीय तथा दूसरे रूपों में भी मिलते हैं। कुछ स्थानों पर कॉज्वे 40 फुट तक चौड़ा है। जहां पर यह सबसे अधिक संकुचित हैं, वहां पर इसकी ऊंचाई भी सबसे अधिक है। प्लीजकिन (pleaskin) नामक स्तम्भों की ऊंचाई तो 400 फुट तक है। क्या तुम जानते हो कि प्रकृति के इस अद्भुत दृश्य का निर्माण कैसे हुआ?

जाइण्ट्स कॉज्वे के निर्माण के विषय में कई कहानियां प्रचलित हैं। एक किंवदन्ति के अनुसार इसका निर्माण दैत्यों की एक जाति द्वारा किया गया, जिन्होंने इसे स्टाफा (Staffa) तक जाने के लिए रास्ते के रूप में बनाया। स्टाफा में भी एक ऐसी ही रचना देखने को मिलती है। इस संबंध में एक अन्य कथा कुछ इस प्रकार है। दो भीमकाय दैत्यों के बीच एक-दूसरे से दूर पत्थर फेंकने का मुकाबला हुआ। जिस दैत्य का पत्थर कम दूरी पर गिरा, वह अपमान और शर्म से धम्म से धरती पर गिर कर मर गया। उसके गिरने से ही पत्थरों की यह अद्भुत आकृतियां निर्मित हो गयीं। खैर, ये सब तो मात्र कपोल-कल्पनाएं हैं।

जाइण्ट्स कॉज्वे के निर्माण की वास्तविकता कुछ इस प्रकार है। लगभग पांच करोड़ वर्ष पहले एण्टरिम विशाल ज्वालामुखियों के क्षेत्र के मध्य स्थित था। इसके एक ओर स्कॉटलैण्ड, आइसलैण्ड और ग्रीनलैण्ड का पूर्वी किनारा था। एण्टरिम की तरल लावे की चादरें इस सारे क्षेत्र में फैल गयीं। जब ये ठण्डी हुई तो ठोस रूप में परिवर्तित होने लगीं। जब ये ठण्डी हो रहीं थीं तो सिकुड़ने के कारण जगह-जगह से चटक गयीं। जैसा कि सामान्य रूप से किसी गांव के तालाब में कीचड़ के सूखने के बाद होता है। लावा के ठण्डे होने पर जो दरारें पड़ती हैं, वे सीधी होती हैं। लेकिन इस प्रक्रिया के काफी देर तक चलते रहने से ये दरारें षट्भुजीय जाल की भांति बन गयीं। नीचे की ओर जैसे-जैसे लावा ठण्डा होता गया, सतह की ये षट्भुजीय दरारें भी नीचे की ओर बढ़ती गयीं और इन विशाल स्तम्भों के सिरों में बदल गयीं। इन्हीं स्तम्भों को आज हम जाइण्ट्स कॉज्वे कहते हैं।



अमृतसर का स्वर्ण-मन्दिर किसने बनवाया?

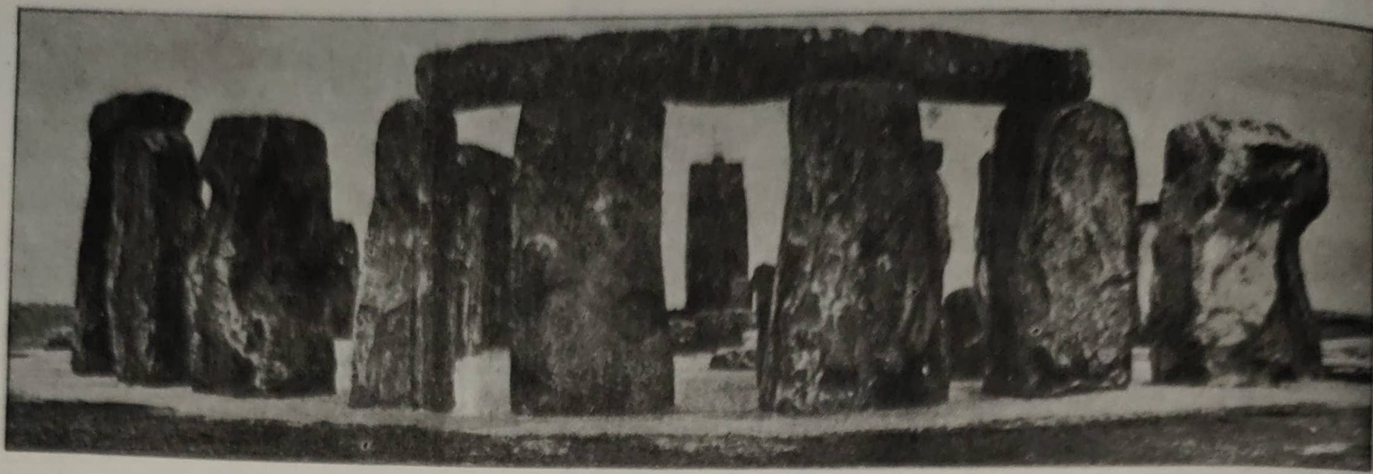
जहां आज अमृतसर नगर बसा हुआ है, वहां सैकड़ों वर्ष पहले एक निर्जन जंगल हुआ करता था। इस जंगल में एक तालाब था। सिखों के चौथे गुरू श्री रामदास जी ने यहां एक गांव की स्थापना की, जो बाद में 'गुरु का चक' नाम से प्रसिद्ध हुआ। धीरे-धीरे यही गांव एक नगर (रामदासपुर) में बदल गया। सिखों के पांचवें गुरू श्री अर्जुनदेव ने यहां सन् 1589 में एक सरोवर का निर्माण करवाया। उन्होंने इसे 'अमृतसर' अर्थात् 'अमृत का तालाब' नाम दिया। इसी तालाब के नाम पर ही इस शहर का नाम अमृतसर पड़ गया। उन्होंने तालाब के मध्य में स्वर्ण-मंदिर का निर्माण करवाया। इस मन्दिर की नींव सन् 1588 में एक मुसलमान फकीर मियां मीर द्वारा रखी गयी। इस मन्दिर का निर्माण-कार्य सन् 1601 में पूरा हुआ। बाबा बुड्ढा इसके पहले ग्रंथी नियुक्त हुए।

स्वर्ण-मन्दिर को 'दरबार साहिब' भी कहते हैं। यह सिखों का मुख्य पूजा-स्थल है तथा अमृतसर का ताज है। संगमरमर से बना यह दुमंजिला मन्दिर 67 फुट के वर्गाकार चबूतरे पर बना हुआ है। यह तालाब के बीचोंबीच स्थित है। इसका गुम्बद सुनहरा है। इस मन्दिर की चारों दिशाओं में चार द्वार बने हैं, जो इस बात को दर्शाते हैं कि किसी भी दिशा से आने वाला, किसी भी जाति या धर्म का व्यक्ति इसमें प्रवेश कर सकता है। मन्दिर के कांसे से बने कंगूरे स्वर्ण-पत्र से ढके हुए हैं। ये सूर्य के प्रकाश में चमकते हैं तथा इनकी परावर्तित परछाईं (reflected image) तालाब के पानी में दिखाई देती है।

तालाब के पश्चिमी तट के साथ बना 24 फुट लंबा और 21 फुट चौड़ा एक मार्ग मन्दिर के पश्चिमी द्वार तक जाता है। यह मन्दिर देखने में बहुत सुन्दर लगता है। मन्दिर में सिखों की पवित्र पुस्तक 'गुरु ग्रंथ साहिब' रखी हुई है, जिसका संगीत के साथ समय-समय पर पाठ होता रहता है।

पवित्र तालाब के एक ओर दर्शनार्थियों के लिए ठहरने का स्थान है। इसमें दूरस्थ स्थानों से आने वाले यात्री ठहरते हैं। मन्दिर के प्रवेश-द्वार के सामने 'अकाल-तख्त' बना है, जो सिख-धर्म के महानतम व्यक्ति का सर्वोच्च आसन माना जाता है। अकाल-तख्त से प्रतिदिन प्रातःकाल सोने की पालकी पर 'गुरु ग्रंथ साहिब' को स्वर्ण-मन्दिर में लाया जाता है। दर्शनार्थियों को जूते उतारकर मन्दिर में जाने की आज्ञा दी जाती है। वहां सिगरेट आदि पीना पूर्णतः निषिद्ध है।

मन्दिर के पास एक अटल मीनार है, जिसमें गुरू नानक के जीवन से संबंधित सुन्दर चित्र बने हुए हैं। ऊपरी मंजिल पर एक छोटा-सा शीशमहल है। आजकल इसका प्रयोग अखंड पाठ के लिए किया जाता है। स्वर्ण-मन्दिर के दर्शनों के लिए केवल सिख ही नहीं बल्कि अन्य धर्मावलंबी भी काफी संख्या में आते हैं।



स्टोनहेंज (Stonehenge) कब बनाया गया?

स्टोनहेंज वृत्ताकार में खड़े पत्थरों का एक विशाल समूह है, जिसके चारों ओर मिट्टी की एक संरचना है। स्टोनहेंज इंग्लैंड के सेलिसबरी (salisbury) नामक स्थान से आठ मील दूर उत्तर में है। इसकी संरचना कुछ जटिल है। बाहर की ओर एक वृत्ताकार खाई (ditch) है, जिसमें अन्दर जाने के लिए जगह छुटी हुई है। इसके बाद मिट्टी से बना किनारा है। किनारे के अन्दर वलयाकार रूप में 56 गड्ढे हैं, जिन्हें ऑब्रे छिद्र (Aubrey holes) कहते हैं। इनके और केन्द्र के पत्थरों के बीच में गड्ढों के दो और वृत्त हैं। पत्थरों को दो वृत्ताकार कतारों में लगाया गया है। इसके अलावा अलग-अलग पत्थर हैं, जिनके नाम क्रमशः अल्टार स्टोन, स्लोटर स्टोन, ट्रू स्टेशन स्टोन और हैले स्टोन हैं।

इस तथ्य को कोई भी निश्चयपूर्वक नहीं जानता कि स्टोनहेंज का निर्माण किसने और किसलिए करवाया? इस तथ्य का पता लगाने के लिए इस स्थान की सन् 1919 में खुदाई की गयी। इस खुदाई के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि स्टोनहेंज के निर्माण के तीन मुख्य समय रहे हैं।

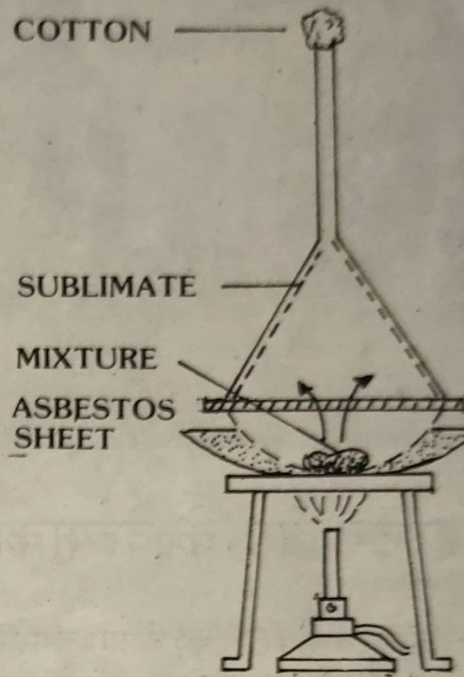
स्टोनहेंज के निर्माण का प्रथम चरण ईसा से 1800 वर्ष पूर्व माना जाता है। इस अन्तराल में बाहरी वृत्ताकार खाई और किनारे का निर्माण किया गया। इसी अवधि में किनारे के अन्दर की ओर 56 गड्ढे भी खोदे गये। इन गड्ढों का नाम इनके आविष्कारक के नाम पर ऑब्रे छिद्र (Aubrey holes) रखा गया है। इसी में हैले स्टोन भी आते हैं। ऐसी संभावना भी है कि वृत्त के केन्द्र पर भी कोई पाषाण संरचना हो सकती है।

निर्माण का दूसरा चरण इसके लगभग 200 वर्ष बाद शुरू हुआ। इस अन्तराल में मिट्टी से बने प्रवेश-द्वार को चौड़ा किया गया तथा इसे एवोन नदी (River Avon) से जोड़ दिया गया। इस सम्पर्क को स्थापित करने के लिए समानान्तर किनारे और खाइयां बनायी गयीं थीं। उसी समय नीले रंग के बहुत सारे पत्थर पैन ब्रोकशायर के प्रैसली चट्टानों से लाये गये और उन्हें इस स्थान पर दो वृत्तों में खड़ा किया गया।

इस कार्य का तीसरा चरण ईसा पूर्व 1600 के बाद आरम्भ हुआ माना जाता है। इस पूरे स्थान को ठीक करने के लिए 80 रेतीले पत्थरों के विशाल टुकड़े मार्लबोरो से लाये गये। इनको 30-30 के जोड़ों में एक वृत्त में खड़ा कर दिया गया।

सामान्यतः लोगों का विश्वास है कि स्टोनहेंज का निर्माण एक पूजा-स्थल के रूप में किया गया था। लेकिन इनके निर्माण का सही उद्देश्य क्या था, यह अभी तक पता नहीं चल पाया है। इन पत्थरों के विषय में एक खगोलशास्त्रीय विवेचना भी है। इसके अनुसार पत्थरों की इस विशेष प्रकार की व्यवस्था का सूर्य के उदय और अस्त होने से गहरा संबंध है। इसके निर्माण का चाहे कुछ भी उद्देश्य रहा हो, यह चार हजार वर्ष पुरानी संरचना आज भी एक आकर्षक और अनसुलझे रहस्य के रूप में खड़ी है।

कपूर (Camphor) बिना द्रव में बदले गैस क्यों बन जाता है?



जब ठोस पदार्थों (solids) को गर्म किया जाता है तो पहले वे पिघलते हैं और द्रव में बदल जाते हैं। अधिक गर्म करने पर यह द्रव उबलने लगता है और गैस में बदल जाता है। ऐसा अधिकतर ठोस पदार्थों के साथ होता है। जब हम एक बर्फ का टुकड़ा तश्तरी में रखते हैं तो पहले यह पिघलकर पानी बन जाता है और फिर बाद में वह वाष्पित हो जाता है। कुछ पदार्थ ऐसे भी होते हैं, जो गर्म करने पर ठोस अवस्था से सीधे ही गैस अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं। कपूर एक ऐसा ही ठोस पदार्थ है, जो सीधे ही ठोस से गैस अवस्था में चला जाता है। आयोडीन और ठोस कार्बन डाइऑक्साइड भी ऐसे ही पदार्थ हैं। जो पदार्थ ठोस से सीधे ही गैस अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं उन्हें ऊर्ध्वपाती (sublime) पदार्थ कहते हैं तथा इस क्रिया को ऊर्ध्वपातन (sublimation) कहते हैं। क्या तुम जानते हो कि ऐसा क्यों होता है?

हम जानते हैं कि सभी पदार्थ अणुओं और परमाणुओं से मिलकर बने होते हैं। ये कण आकर्षण बल द्वारा एक-दूसरे से चिपके रहते हैं। यदि आकर्षण बल कमजोर हो तो इन कणों को एक-दूसरे से सरलता से अलग किया जा सकता है। बर्फ के टुकड़े में यह आकर्षण बल काफी कम होता है, इसलिए थोड़ी-सी गर्मी देने पर बर्फ के कण एक दूसरे से अलग होकर पानी में बदल जाते हैं और अधिक गर्मी देने पर यही कण एक-दूसरे से अधिक अलग होकर जल-वाष्प का रूप धारण कर लेते हैं।

यदि हम कपूर का एक टुकड़ा खुले में रख दें तो वह बिना द्रव में बदले सीधा ही वाष्पित हो जाता है। इसका कारण यह है कि कपूर के कण एक-दूसरे से बहुत ही कमजोर बल द्वारा चिपके रहते हैं। इनके बीच का आकर्षण बल बर्फ के अणुओं के बीच के आकर्षण बल से भी कम होता है, इसलिए जरा-सी गर्मी मिलने पर ही कपूर वाष्पित हो जाता है।

कपूर के टुकड़े से एक तीव्र गंध आती है। इसका कारण यह है कि बहुत कम ऊष्मा मिलने पर भी कपूर के अणु एक दूसरे से अलग होकर चारों ओर फैल जाते हैं। कपूर के अणुओं को एक-दूसरे से अलग करने के लिए वातावरण की ऊष्मा ही काफी है। जब हम कपूर के टुकड़े को गर्म करते हैं तो यह 179° सेल्सियस पर पिघलकर द्रव में बदलना शुरू कर देता है लेकिन जैसे ही वह द्रव में बदलने को होता है, आग पकड़ लेता है और जलने लगता है। यदि किसी प्रकार इसके चारों ओर से आक्सीजन अलग कर दी जाए तो यह पिघल जाएगा। इस स्थिति में कपूर जल नहीं सकता क्योंकि उसके चारों ओर से आक्सीजन हटा दी गई है।

यदि तुम कपूर को एक खुली हुई तश्तरी में जलाओ तो तुम देखोगे कि कपूर का जलता हुआ टुकड़ा एक रंगहीन द्रव पर तैरता हुआ नजर आता है। यही कपूर की द्रव अवस्था है।

इन पदार्थों के अलावा नैपथलीन (naphthalene) की गोलियां, अमोनियम क्लोराइड आदि कुछ और पदार्थ हैं, जो गर्म करने पर सीधे ही गैस अवस्था में बदल जाते हैं।



ईस्टर द्वीप के दैत्याकार चेहरों का निर्माण किसने किया?

ईस्टर द्वीप चिली (Chile) के पश्चिम में प्रशान्त महासागर में लगभग 3800 कि.मी. दूर है। यूं तो इस द्वीप पर उनसे पूर्व भी कई लोग आये और गए पर सही अर्थों में इसकी खोज का श्रेय एक अंग्रेज महिला कैथरिन राउटलैज (Katherine Routledge) को दिया जाता है। उन्होंने सन् 1914-15 में इस द्वीप की यात्रा की। इस द्वीप पर पत्थर की विशालकाय मूर्तियां हैं। ये मूर्तियां सिर्फ चेहरों की हैं। इनकी टांगें तथा धड़ नहीं हैं। इन की ऊंचाई आमतौर से 12 से 15 फुट तथा वजन लगभग 20 टन तक है। अब तक ऐसे चेहरों वाली एक हजार से भी अधिक मूर्तियां खोजी जा चुकी हैं। इन चेहरों को मोआई (Moi) कहा जाता है। इनमें सबसे बड़ा चेहरा 32 फुट लम्बा और लगभग 90 टन वजन का है। प्रामाणिक रूप से आज तक कोई नहीं बता पाया है कि इन विशालकाय चेहरों को किसने और क्यों बनाया।

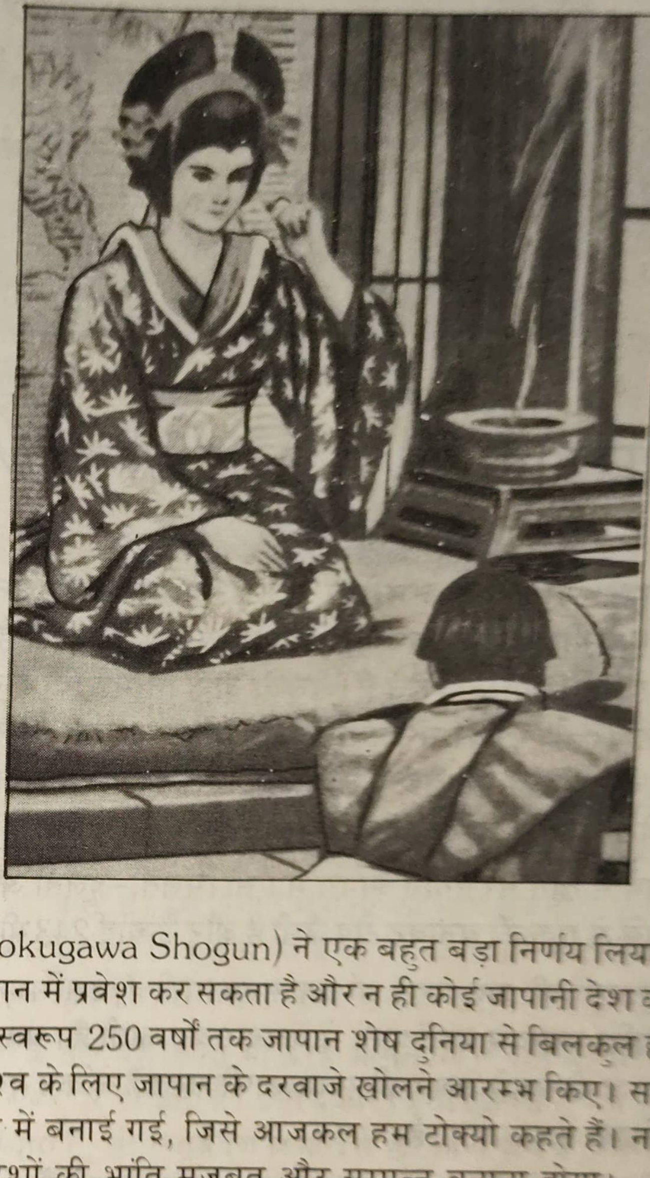
आधुनिक वैज्ञानिकों का विचार है कि इन दैत्याकार मूर्तियों का निर्माण पोलिनेशियन (Polynesian) लोगों ने किया था। इस बात के बहुत से प्रमाण मिल रहे हैं कि सन् 1110 और 1205 के बीच तथा सन् 1650 ई. तक ईस्टर द्वीप के निवासी विशाल मूर्तिया और उनकी वेदियां (ahu) बनाते रहे। उस समय इस द्वीप पर हनाउएपे (Hanau-Epe) के नेतृत्व वाला गुट राज्य करता था।

इन मूर्तियों के लिए प्रयोग में लाये गये पत्थरों को सरकाने का काम लकड़ी के तने काटकर बनाई गई स्लेजों (sledge) पर रख कर किया गया होगा। ऐसा माना जाता है कि उस समय इस द्वीप की आबादी लगभग 20 हजार अवश्य रही होगी। विलियम मुलोय (William Mulloy) नामक एक विद्वान का अनुमान है कि इस द्वीप के निवासी लकड़ी की स्लेजों की सहायता से इन पत्थरों को एक दिन में एक हजार फुट से अधिक नहीं सरका पाते होंगे। इन मूर्तियों के निर्माण के लिए लोग लकड़ी के फ्रेम बनाकर ऊपर चढ़ते होंगे। इनमें से कुछ मूर्तियां ऐसी भी हैं, जिनकी आंखें पूरी नहीं बन पाई हैं। इन अधूरी मूर्तियों को 'अन्धा मोआई' कहा जाता है। ऐसी लगभग सौ मूर्तियां हैं।

इन विशालकाय मूर्तियों को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि मानों उदास चेहरे क्षितिज की ओर निहार रहे हों। ये मूर्तियां शायद वहां की नष्ट सभ्यता की प्रतीक हैं।

जापान आधुनिक देश कैसे बना?

जापान आज विश्व के आधुनिकतम देशों में एक है। इलेक्ट्रॉनिक्स के क्षेत्र में तो इस देश को विश्व में सबसे आगे कहना भी अनुचित न होगा। जापान की इस सफलता तथा उन्नति के पीछे एक बहुत लम्बा इतिहास है।

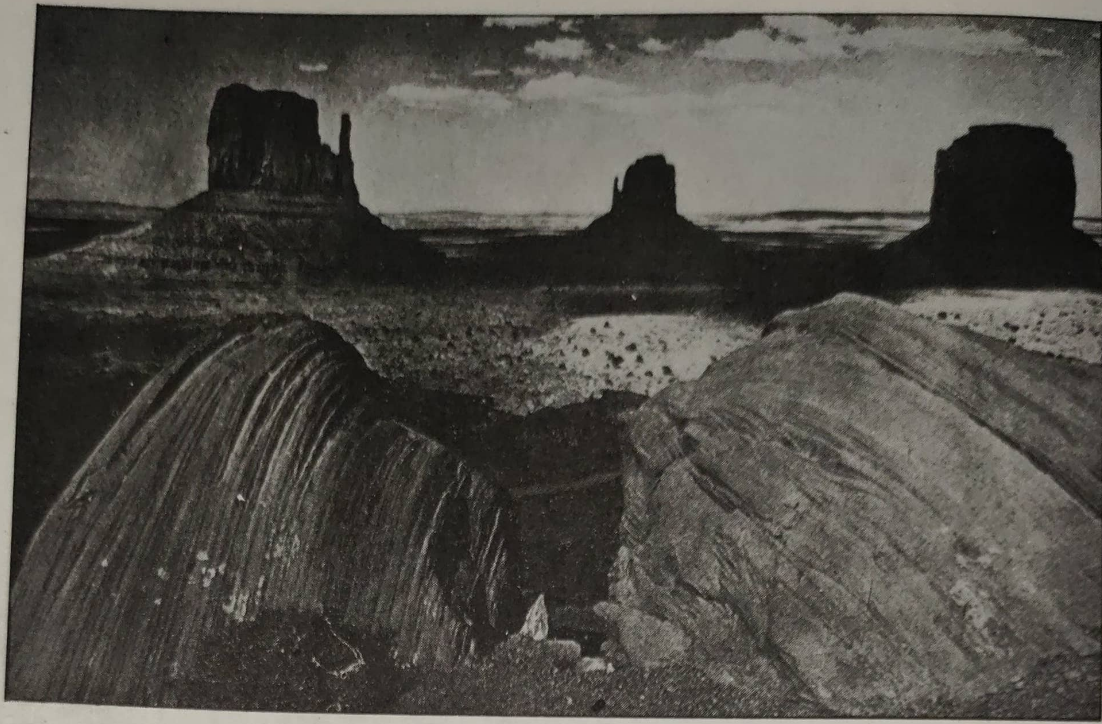


जापान की सभ्यता का इतिहास चौथी शताब्दी में तब शुरू हुआ जब चीन और कोरिया की संस्कृति वहां पहुंची। चीन और कोरिया की संस्कृति के साथ ही वहां बौद्ध धर्म का आगमन भी हुआ, जिससे इस देश में कला और चित्रकारी का उदय हुआ। आठवीं शताब्दी में जब इंगलैंड अंधकार युग (Dark age) में था, जापान नारा (Nara) नामक शहर में अपनी सुन्दर राजधानी बना चुका था। आठवीं शताब्दी के अन्त में यह राजधानी क्योटो (Kyoto) में स्थानान्तरित कर दी गई। बारहवीं शताब्दी में जब जापान सभ्यता के विकास के अगले चरण की ओर अग्रसर हो रहा था, तब वहां गृहयुद्ध शुरू हो गया, जो 16वीं सदी के अंत तक चलता रहा। इस युद्ध के कारण जापान के विकास में जबर्दस्त बाधा पड़ी।

सन् 1624 में वहां के राष्ट्राध्यक्ष तोकूगावा शोगन (Tokugawa Shogun) ने एक बहुत बड़ा निर्णय लिया। उन्होंने यह घोषित किया कि कोई भी विदेशी न तो जापान में प्रवेश कर सकता है और न ही कोई जापानी देश को छोड़कर विदेश जा सकता है। इस आदेश के परिणामस्वरूप 250 वर्षों तक जापान शेष दुनिया से बिलकुल ही कटा रहा। सन् 1853 में कमाडोर पैरी (Perry) ने विश्व के लिए जापान के दरवाजे खोलने आरम्भ किए। सन् 1868 में जापान की राजधानी क्योटो से बदलकर एडो में बनाई गई, जिसे आजकल हम टोक्यो कहते हैं। नई सरकार ने निर्णय लिया कि जापान को भी पश्चिमी देशों की भांति मजबूत और सम्पन्न बनाना होगा।

इसके बाद जापान में औद्योगिक क्रांति सी हो गयी। रेलगाड़ियां, फैक्टरियां और लड़ाकू जलपोत बनने आरम्भ हुए। अस्त्र -शस्त्रों के निर्माण में भी जापान ने इतनी उन्नति की कि सन् 1905 में रूस से हुए युद्ध में इसने रूस को भी हरा दिया। सन 1930 के दौरान वहां की सेना का सरकार पर अधिक नियंत्रण होने लगा। सन् 1941 में जापान द्वितीय विश्वयुद्ध में शामिल हो गया और इस युद्ध में इसने अमरीका के दांत खट्टे कर दिए लेकिन अमरीका द्वारा हीरोशिमा और नागासाकी पर परमाणु बम गिराने के कारण इसे सन् 1945 में घुटने टेकने पड़े।

द्वितीय विश्वयुद्ध में इस हार के बाद भी जापान का मनोबल नहीं टूटा और वह लगातार प्रगति के पथ पर आगे ही बढ़ता रहा। अपने इन्हीं अथक प्रयत्नों के कारण आज वह विश्व का सबसे अग्रणी औद्योगिक देश बन गया है।



एरिज़ोना की मॉन्युमेंट वैलि (Monument valley) क्या है?

मॉन्युमेंट वैलि अमरीका में उत्तर-पश्चिम एरिज़ोना (Arizona) तथा दक्षिण-पश्चिम ऊटा (Utah) की सीमाओं के आर-पार विस्तृत सपाट मैदानों में है। यहां सैंकड़ों ऊंचे-ऊंचे रेतीले पत्थरों के स्तम्भ, टीले और बुटे (buttes) बने हैं। प्रकृति द्वारा निर्मित विभिन्न आकार-प्रकार की ये संरचनाएं (formations) इस घाटी (valley) की सुन्दरता में चार चांद लगा देती हैं। सन्ध्या के समय जब सूरज अस्ताचल पर होता है तो इन संरचनाओं की परछाईं मीलों लम्बी दिखाई देती है। इन संरचनाओं का पत्थर लाल रंग का है। इनका निर्माण रेतीले पत्थरों की विशाल चट्टानों के वायु तथा वर्षा द्वारा अपरदन (erosion) से हुआ।

इनमें से तीन संरचनाएं आपस में ऐसी मिलती-जुलती और इस ढंग से खड़ी हैं कि उन्हें 'तीन बहनें' कहा जाता है। इनमें से एक की बनावट टोप जैसी है और ऊंचाई 243 मीटर है। इनकी आकृतियां किसी प्राकृतिक स्तम्भ जैसी हैं।

चट्टानों की कुछ परतें अधिक सख्त होती हैं, इसलिए वायु और वर्षा का सख्त परतों पर कम प्रभाव होता है। जबकि मुलायम परतें पानी में घुलकर बह जाती हैं। यह तथ्य यहां के एक स्तम्भ में स्पष्ट रूप से प्रदर्शित है। इस स्तम्भ के सबसे ऊपर की सतह काफी सख्त है लेकिन मुलायम होने के कारण नीचे की परतों पर वर्षा और वायु का अधिक प्रभाव पड़ा है।

एरिज़ोना की ये संरचनाएं काफी पास-पास दीखती हैं, जबकि ये इतनी पास हैं नहीं। कुछ संरचनाएं हाथी के पैरों जैसी दीखती हैं। इस क्षेत्र में एक वर्ष में लगभग 8 इंच वर्षा होती है लेकिन बर्फ यहां काफी मात्रा में गिरती है। एक अनुमान के अनुसार इन संरचनाओं का निर्माण लगभग 25000 लाख वर्ष पहले अपरदन के कारण आरम्भ हुआ। आज भी इनका निरन्तर अपरदन हो रहा है लेकिन इतनी धीमी गति से कि मनुष्य को अपने पूर्ण ज़ीवनकाल में भी कोई विशेष परिवर्तन नहीं दिखाई देता है।

इन संरचनाओं में से कुछ समाधि स्तम्भों की भांति दीखती हैं। इनमें से कुछ वास्तव में समाधियां हैं भी। एक चट्टान के नीचे एक नवाहो (Navaho) भारतीय अपने घोड़े के साथ दफनाया गया था। इन संरचनाओं को देखकर मिस्र के मानव-निर्मित विशालकाय पिरामिडों की याद आ जाती है।

जानवर अपना तनाव (tension) कैसे दूर करते हैं?



कभी-कभी जानवर ऐसी स्थिति में फंस जाते हैं कि वे न तो भाग सकते हैं और न ही अपने शत्रु से लड़ सकते हैं। उनके लिए यह एक विशेष प्रकार के तनाव की स्थिति होती है। तनाव की इस स्थिति से छुटकारा पाने के लिए विभिन्न जानवर विभिन्न तरीके अपनाते हैं।

तनाव की स्थिति से छुटकारा पाने की क्रिया को समझने के लिए हम स्कूल के एक ऐसे बच्चे का उदाहरण लेते हैं जिसने कुछ गलती कर दी हो और उस गलती के लिए उसके अध्यापक ने उसे पकड़ लिया हो। इस स्थिति में वह अपने को दोषी महसूस करता है तथा अध्यापक से बहुत डर जाता है। इस स्थिति में न तो वह भाग सकता है और न ही वह अध्यापक से लड़ सकता है। ऐसे समय में वह एक तनावपूर्ण स्थिति में आ जाता है। इस तनाव से छुटकारा पाने के लिए वह अपने सिर को खुजलाने लगता है या जोर-जोर से सांस लेता है ताकि उसका तनाव कम हो सके।

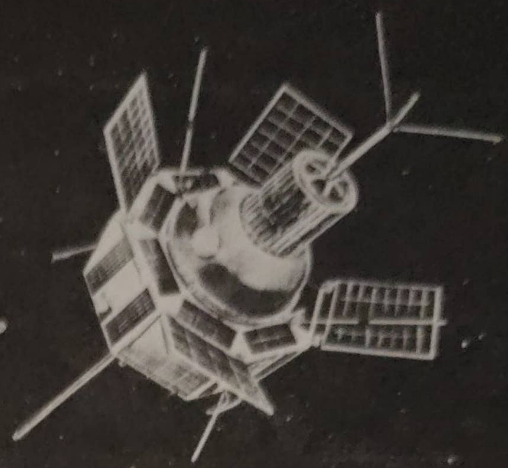
ठीक इसी प्रकार जब किसी चूहे को कोई बिल्ली घेर लेती है और वह किसी भी तरह भागने की स्थिति में नहीं रह जाता तो वह बैठ जाता है और अपने पंजों को बार-बार चेहरे पर रगड़ता है। इसी प्रकार किसी बिल्ली से भयभीत चिड़िया इधर-उधर फुदकने लगती है। ये सभी ऐसी क्रियाएं हैं, जो तनावपूर्ण स्थिति से छुटकारा पाने के लिए की जाती हैं। इन्हें हम विस्थापन क्रियाएं (displacement actions) कहते हैं। सामान्य स्थिति में आने के लिए जानवर इस प्रकार की क्रियाएं करते हैं। कभी-कभी ऐसी स्थिति में जानवर हमें नुकसान भी पहुंचा सकते हैं। ये सभी क्रियाएं उनकी प्रतिवर्ती क्रियाएं (reflex actions) हैं।

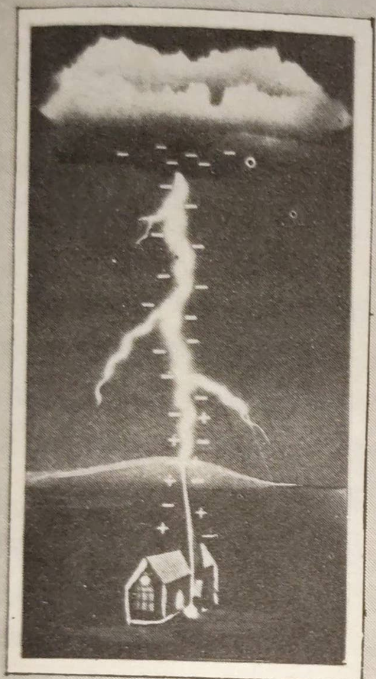
प्रतिवर्ती क्रियाओं के संदर्भ में रूसी वैज्ञानिक इवान पावलौव का एक प्रसिद्ध प्रयोग है। इस प्रयोग में उन्होंने कुछ कुत्तों को खाने की कुछ चीजें दिखायीं। इससे कुत्तों के मुंह में पानी आ गया। उसी समय उन्होंने एक घण्टी बजाई। इस क्रिया को उन्होंने कई बार दुहराया। इसके पश्चात् कुत्तों को बिना खाना दिखाये ही घण्टी बजाई। ऐसा करने पर भी कुत्तों के मुंह में पानी आ गया। दूसरे शब्दों में, कुत्तों के दिमाग में यह बात बैठ गयी कि घण्टी बजने के साथ ही उन्हें खाना दिया जायेगा अर्थात् घण्टी का बजना खाने का पर्याय बन गया। इस स्थिति को दशात्मक प्रतिवर्ती

क्रिया (conditioned reflex action) कहते हैं। यह क्रिया अपने आप ही होने लगती है। जब जानवरों को कुछ कामों का प्रशिक्षण दे दिया जाता है तो वह अपने आप ही इन क्रियाओं को करने लगते हैं। इसी प्रकार हम पढ़ना-लिखना और बात करना सीखते हैं।

बहुत से जानवर मां-बाप की सहायता के बिना ही बड़े हो जाते हैं। इसके लिए उन्हें प्रतिवर्ती क्रियाओं पर ही निर्भर रहना पड़ता है। कुछ अपने परिवारों के साथ बड़े होते हैं और दूसरे सदस्यों की नकल करना सीख जाते हैं।

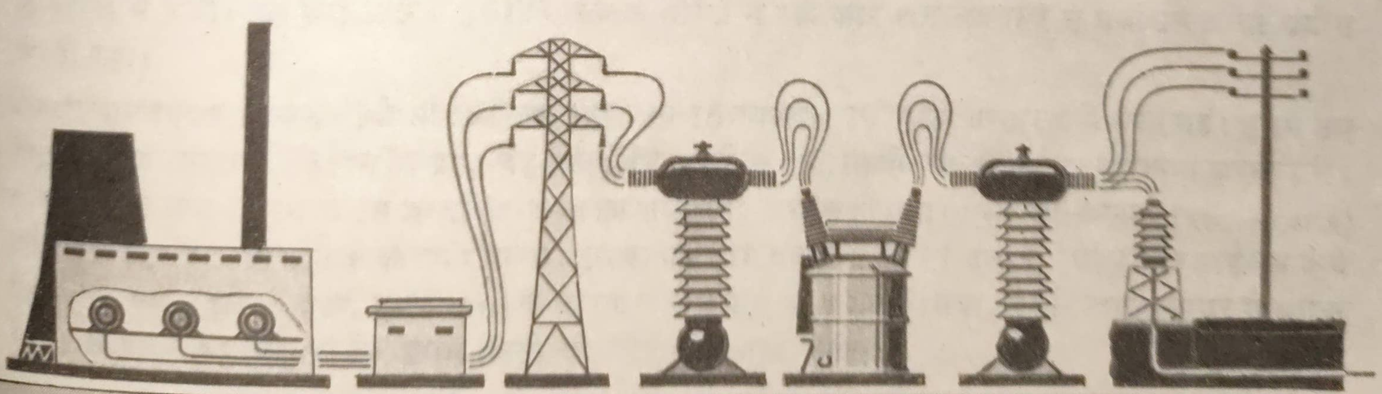
बन्दर विचित्र आवाजें निकालकर अपना तनाव दूर करता है। इसी प्रकार कुत्ता भौंक कर अपना तनाव दूर करता है। विभिन्न जानवरों के तनाव दूर करने के विभिन्न तरीके हैं। इन व्यवहारों से उन्हें जीवित रहने में मदद मिलती है।



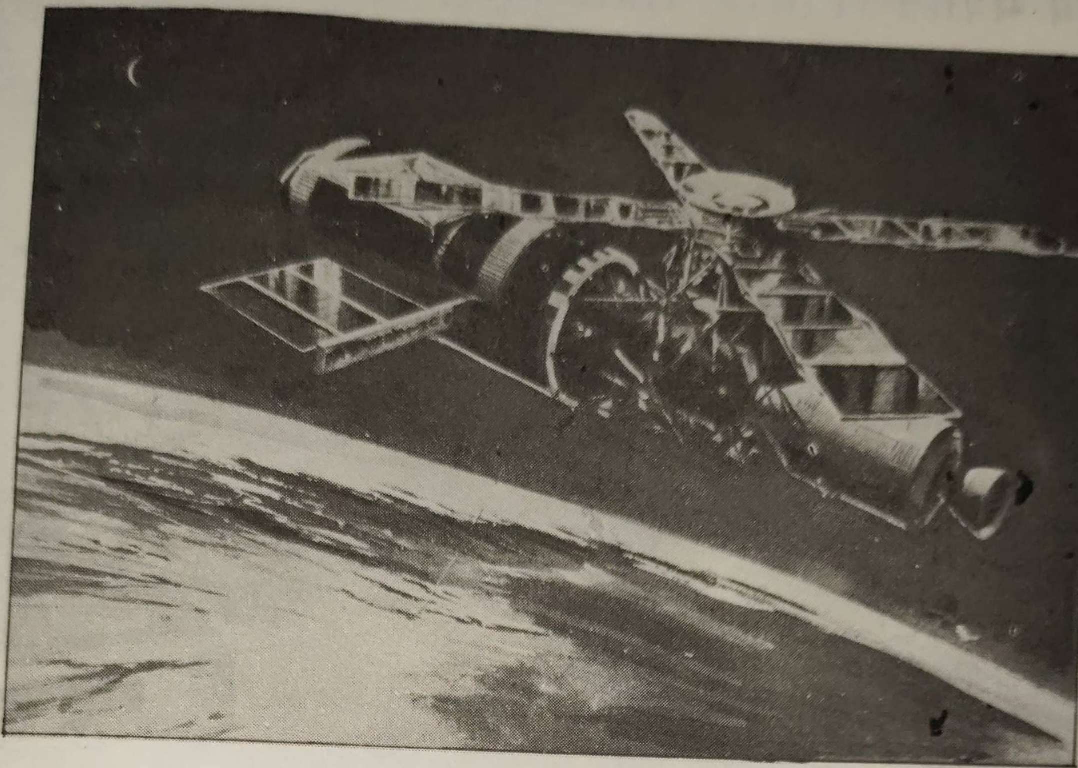


2

आधुनिक विज्ञान



स्काईलैब (Skylab) कार्यक्रम क्या था?



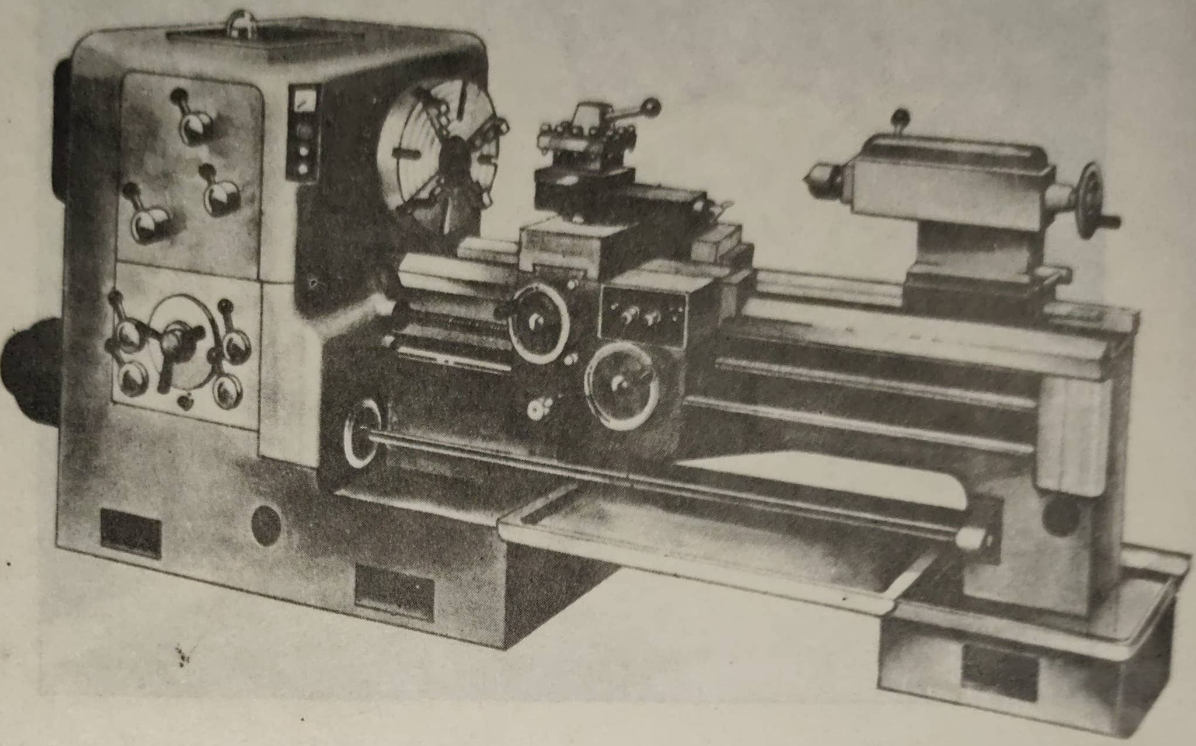
सन् 1957 से ही अंतरिक्ष-अनुसंधान के संबंध में कोई न कोई नयी बात हमारे सामने आती रही है। आज मानव की सीमा-रेखा आकाश नहीं रह गई है। अन्तरिक्षयात्री चन्द्रमा पर पहुंच चुके हैं। अब मनुष्य लम्बे अरसे तक अन्तरिक्ष में भी रह सकता है। वैज्ञानिक अन्तरिक्ष में विभिन्न अनुसंधान-केन्द्र स्थापित करने के कार्यक्रम बना रहे हैं। स्काईलैब कार्यक्रम भी एक ऐसा ही कार्यक्रम था, जिसमें इस संभावना का परीक्षण किया गया था कि क्या हम धरती के चारों ओर घूमते हुए अन्तरिक्ष-केन्द्र स्थापित कर सकते हैं।

स्काईलैब कार्यक्रम सन् 1973 से सन् 1974 तक चला। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अमरीका ने अपनी प्रथम अन्तरिक्ष प्रयोगशाला 14 मई, 1973 को अन्तरिक्ष में भेजी थी। पहली स्काईलैब या अन्तरिक्ष प्रयोगशाला के द्वारा भारहीनता और जीवविज्ञान से संबंधित जानकारी प्राप्त की गई। इस कार्यक्रम में ऐसे अन्तरिक्ष यात्रियों की आवश्यकता थी, जो लम्बे समय तक अन्तरिक्ष में रह सकें।

दूसरी स्काईलैब में कुछ व्यक्तियों को भी अन्तरिक्ष में भेजा गया। यह लैब 28 दिन तक अन्तरिक्ष में रही और इसमें गए यात्रियों ने अनेक वैज्ञानिक परीक्षण किए। इसकी सफलताओं से संतुष्ट होकर नासा (National Aeronautics and Space Administration) ने उसके तुरंत बाद तीसरी स्काईलैब 28 जुलाई, 1973 को अन्तरिक्ष में भेजी। यह प्रयोगशाला 59 दिन तक अन्तरिक्ष में रही और खगोलशास्त्र से संबंधित अनेक प्रयोग करती रही।

तीसरी मानवयुक्त, लेकिन चौथी और अन्तिम स्काईलैब 16 नवम्बर, 1973 को अन्तरिक्ष में भेजी गई। इसमें गए यात्रियों ने अन्तरिक्ष में 84 दिन बिताए। यह स्काईलैब धरती से 480 किमी. की ऊंचाई पर परिक्रमा करती रही। पांच साल के बाद 77 टन के इस अन्तरिक्ष-केन्द्र का क्षय होना आरम्भ हो गया। ऐसा सूर्य-कलंकों (sun-spots) की अत्यधिक क्रियाशीलता के कारण हुआ था। इसका परिणाम यह हुआ कि 11 जुलाई, 1979 को स्काईलैब के वे हिस्से, जो वायुमंडल के घर्षण (friction) के कारण जल न पाए थे, वे आस्ट्रेलिया और हिन्दमहासागर में आकर गिरे। सौभाग्य की बात थी कि इससे किसी को कोई चोट नहीं लगी।

लेथ मशीन (Lathe machine) कैसे काम करती है?



लेथ कार्यशालाओं (workshops) में प्रयोग होने वाली एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण मशीन है। यह मशीन लकड़ी, धातु और प्लास्टिक को विभिन्न आकार देने के लिए प्रयोग की जाती है। इसकी सहायता से चूड़ियां (threads) भी काटी जा सकती हैं। क्या तुम जानते हो कि लेथ मशीन कैसे काम करती है?

ऊपर के चित्र में एक आधुनिक लेथ मशीन दिखाई गई है। इसमें एक विद्युत चालित मोटर लगी होती है, जिसकी गति को कम या अधिक किया जा सकता है। इस मोटर का संबंध एक चक (chuck) के साथ होता है। जब मोटर घूमती है तो चक भी घूमता है। वर्कपीस (workpiece) को चक में लगा दिया जाता है। इस घूमते हुए वर्कपीस के पास एक काटने वाला टूल (tool) लाया जाता है। यह टूल लेथ के हैड में फिट कर दिया जाता है। यह टूल वर्कपीस से पदार्थ को तब तक काट कर अलग करता रहता है, जब तक कि वांछित रूप न प्राप्त हो जाए। काटने वाले टूल को कई दिशाओं में घुमाया जा सकता है। इसे ऊपर-नीचे किया जा सकता है तथा आगे-पीछे भी किया जा सकता है।

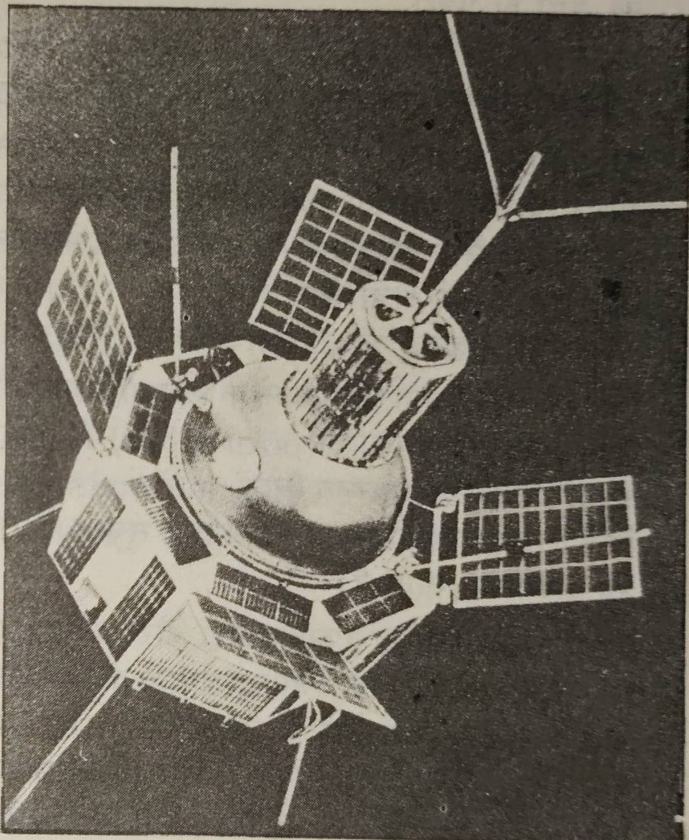
लेथ में खिसकने वाला एक टेलस्टॉक (tailstock) होता है, जो वर्कपीस का केन्द्र स्थापित करने के काम आता है। इसी टेलस्टॉक के साथ ड्रिलबिट (drill bit) लगाकर वर्कपीस में छेद भी किया जा सकता है।

लेथ मशीनें इतना सही काम करती हैं कि काटने और रूप देने की क्रियाएं एक सेमी. के हजारवें भाग तक ठीक-ठीक कर सकती हैं। सबसे अधिक प्रयोग में आने वाली लेथ को सैण्टर लेथ या इंजन लेथ कहते हैं। एक दूसरे प्रकार की प्रसिद्ध लेथ को टरैट (turret) लेथ कहते हैं। काटने के लिए टरैट में छह टूल लगाए जा सकते हैं। इनका लाभ यह है कि मशीन को बिना बन्द किए अलग-अलग टूलों का प्रयोग किया जा सकता है। इस मशीन का दूसरा लाभ यह है कि एक बार टूल को समायोजित करके बहुत से वर्कपीस काटे जा सकते हैं। जब इस प्रकार की कई हजार क्रियाओं की आवश्यकता होती है तो कई स्पिंडलों (spindles) वाली मशीन प्रयोग की जाती है। इस प्रकार की लेथ में काटने की छह विभिन्न प्रक्रियाएं छह वर्कपीसों पर एक-साथ की जा सकती हैं। एक विशाल स्वचालित फैक्टरी में बहुत-सी लेथ मशीनें हो सकती हैं, जो एक कम्प्यूटर द्वारा भी नियंत्रित हो सकती हैं। एक व्यक्ति लेथों

में पुर्जे लगाता जाता है तथा काम समाप्त होने पर उन्हें हटाता जाता है। यह समस्त क्रिया कम्प्यूटर द्वारा भी नियंत्रित की जा सकती है।

लेथ का विचार प्राचीन काल से ही मानव के मन में रहा है। इसका विचार सम्भवतः कुम्हार के चाक से पैदा हुआ। सन् 1800 तक बनी लेथ मशीनें बहुत से दृष्टिकोणों से अपूर्ण थीं। इनसे केवल कुछ ही कार्य हो सकते थे। इनसे चूड़ियां नहीं काटी जा सकती थीं। सन् 1800 के आसपास इंगलैंड के हैनरी मोड्स्ले (Henry Moudslay) ने प्रथम चूड़ी काटने वाली मशीन का आविष्कार किया। सन् 1873 में अमरीका के सी. एम. स्पैंसर ने पूर्णतया स्वचालित प्रथम लेथ मशीन का आविष्कार किया। सन् 1900 तक संख्यात्मक नियंत्रित स्वचालित लेथ मशीनें विकसित हो चुकी थीं। इनमें चुम्बकीय टेपों का प्रयोग किया जाता था।

मौसम संबंधी उपग्रह (Weather satellite) क्या हैं?



अन्तरिक्ष में किसी बड़े खगोलीय पिंड के चारों ओर एक निश्चित कक्षा में परिक्रमा करने वाले एक छोटे पिंड को उपग्रह कहते हैं। उपग्रह दो प्रकार के होते हैं—प्राकृतिक तथा कृत्रिम। हमारी धरती सूर्य का एक प्राकृतिक उपग्रह है। इसी प्रकार सौर-परिवार के दूसरे ग्रह भी सूर्य के उपग्रह हैं क्योंकि वे सभी सूर्य की परिक्रमा करते हैं। चन्द्रमा पृथ्वी का उपग्रह है क्योंकि यह पृथ्वी की परिक्रमा करता है। नौ ग्रहों में से बुध और शुक्र को छोड़कर शेष सभी सात ग्रहों के अपने-अपने उपग्रह हैं। बड़े ग्रहों के छोटे ग्रहों की तुलना में अधिक उपग्रह हैं। बृहस्पति के 14, शनि के 10 और यूरेनस के 5 उपग्रह हैं। मंगल और नेपच्यून के दो-दो उपग्रह हैं। पृथ्वी और प्लूटो का एक-एक उपग्रह है।

कृत्रिम उपग्रह, मानव निर्मित उपग्रह हैं, जिनको धरती पर निर्मित कर रॉकेटों की सहायता से पृथ्वी की कक्षा में भेज दिया जाता है। स्पुतनिक-1 प्रथम कृत्रिम उपग्रह था, जिसे रूस द्वारा 4 अक्तूबर, 1957 को छोड़ा गया था। तब से अब तक विभिन्न देशों द्वारा विभिन्न कार्यों के लिए 1500 से अधिक कृत्रिम उपग्रह छोड़े जा चुके हैं। इन उपग्रहों में संचार उपग्रह, वैज्ञानिक उपग्रह, संचालन उपग्रह तथा मौसम संबंधी उपग्रह मुख्य हैं। यहां हम केवल मौसम संबंधी उपग्रहों की चर्चा करेंगे।

मौसम संबंधी उपग्रह वे उपग्रह हैं, जिनसे मौसम संबंधी तथ्यों का विस्तृत रूप से अध्ययन किया जाता है। मौसम-उपग्रह धरती से सैकड़ों मील की ऊंचाई पर ही परिक्रमा करते हैं। वे तापमान तथा वायु में नमी की मात्रा मापते हैं। बादल वाले क्षेत्रों की तस्वीर लेकर वे टेलीविजन द्वारा पृथ्वी की ओर भेजते हैं। इनसे आने वाले तूफानों

और चक्रवातों का पहले से ही पता लग जाता है। इनसे प्राप्त सूचनाओं के आधार पर लोगों को आने वाले खतरों से आगाह करके उनकी रक्षा की जा सकती है।

वेनगार्ड-2 (Vanguard II) प्रथम मौसम संबंधी उपग्रह था, जो 17 फरवरी, 1959 को अन्तरिक्ष में भेजा गया था। यह मौसम संबंधी सूचना पृथ्वी की ओर भेजता था। 1 अप्रैल, 1960 को टायरोस-1 नामक मौसम संबंधी उपग्रह छोड़ा गया। यह वास्तव में पृथ्वी के वायुमंडल के विस्तृत चित्र लेता था। उसी वर्ष नवम्बर को टायरोस-2 छोड़ा गया। यह पृथ्वी से आने वाले अवरक्त विकिरणों (infrared radiations) को मापता था तथा मौसम संबंधी चित्र लेता था। 12 जुलाई, 1961 को टायरोस-3 ऐसा प्रथम उपग्रह छोड़ा गया, जो अन्धमहासागर में आने वाले तूफानों की सूचना दे सकता था। इससे यह संभव हो पाया कि तूफानों के रास्तों में आने वाले लोगों को सावधान किया जाने लगा। इसके बाद इसी श्रृंखला में और भी बहुत से मौसम संबंधी उपग्रह छोड़े गए, जो अन्तरिक्ष में तापमान और इलेक्ट्रॉन घनत्व माप सकते थे। सन् 1965 में टायरोस-10 छोड़ने के बाद इस श्रृंखला का अन्त हो गया।

इसके पश्चात् ऐस्सा (Essa) और निम्बस (Nimbus) नामक श्रृंखलाएं शुरू हुई। निम्बस-I से डोरा नामक चक्रवात का पता लगाया गया। 15 मई, 1966 को छोड़े गए निम्बस-II ने पृथ्वी के ऊष्मा-संतुलन की माप की।

सन् 1966 तक अमरीका ने विस्तृत मौसम-उपग्रह प्रणाली विकसित कर ली थी, जो संसार के समस्त मौसम-केन्द्रों को सूचना प्रदान करती थी। मिटियोर उपग्रहों (meteor satellite) द्वारा रूस ने भी एक ऐसी ही प्रणाली विकसित कर ली थी। रूस के उपग्रहों से बादलों के वितरण, बादलों के समूहों का रंग-रूप, वायु की दिशा, और नम वायु के क्षेत्रों, वायु के विभिन्न द्रव्यमानों के वाताग्रों (the fronts between air masses) तथा बादलों की गहराई की संरचना के विषय में सूचनाएं प्राप्त होती थीं।

विश्वभर की सूचना प्राप्त करने के लिए अधिकतर मौसम संबंधी उपग्रहों को 800 से एक हजार किमी. की मध्यम ऊंचाई की ध्रुवीय कक्षाओं (polar orbits) में स्थापित किया जाता है। ये उपग्रह पृथ्वी के प्रत्येक स्थान को दिन में दो बार देखते हैं। अवरक्त सैंसरों (infrared sensors) द्वारा रात और दिन दोनों में ही ये बादलों से युक्त क्षेत्रों के चित्र लेते रहते हैं। उपग्रहों द्वारा संचित सूचनाओं को पृथ्वी के सैकड़ों केन्द्रों पर स्वचालित चित्र संचरण यंत्रों द्वारा टेप कर लिया जाता है।

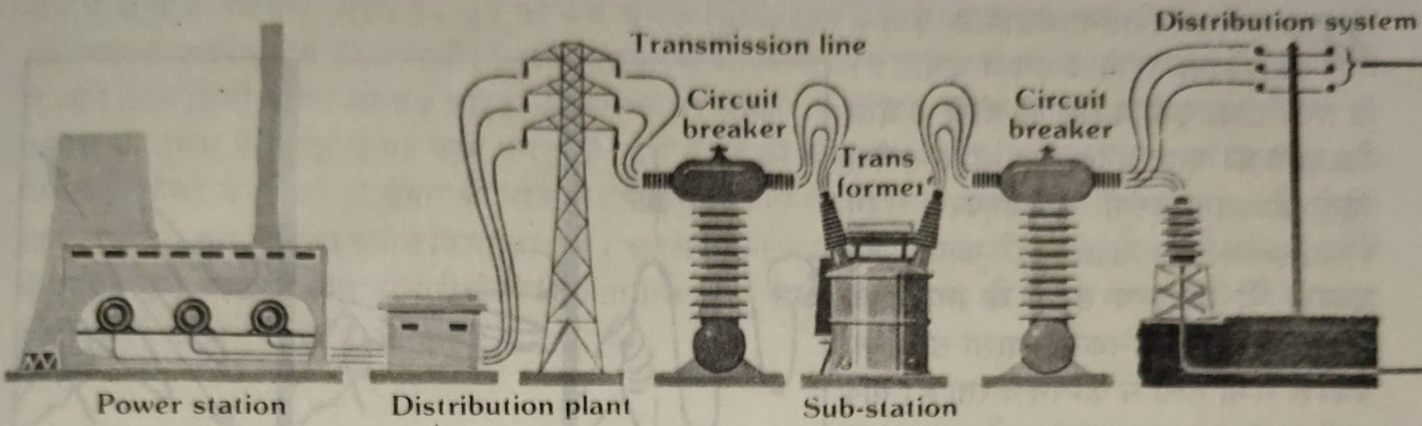
मौसम संबंधी उपग्रह तूफानों, बाढ़ों और आग लगने की पूर्व सूचना दे देते हैं, जिससे जान-माल की हानि को रोका जा सकता है। अधिकतर उपग्रह बादलों के चित्र लेकर उस सूचना को एक चुम्बकीय टेप पर अंकित कर लेते हैं और फिर उसे धरती के केन्द्रों की ओर भेजते हैं। इन केन्द्रों पर इन सूचनाओं को कम्प्यूटर में भेज दिया जाता है। कम्प्यूटर इस सूचना को फिर से चित्र में बदल कर बादलों का चित्रण कर देता है। ऐस्सा-II में स्वचालित चित्रसंचरण प्रणाली लगी थी, जो जमीन पर लगे ग्राहियों और रिकार्डरों को प्रत्येक 208 सेकंड में चित्र भेजती रहती थी।

मौसम संबंधी तकनीकी में एस. एम. एस. (synchronous meteorological satellite) प्रणाली का हाल में ही विकास हुआ है। इस प्रकार के उपग्रह सिनक्रोनस कक्षा में भूमध्य रेखा के ऊपर स्थापित कर दिए जाते हैं। ये प्रत्येक 30 मिनट में धरती के एक स्थान का अवलोकन करते हैं।

गुब्बारों, उपग्रहों और वायुयानों की सहायता से एकत्रित की गई अधिक से अधिक जानकारी को कम्प्यूटरों की सहायता से पढ़कर वायुमंडल के विषय में अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त किया जा रहा है।

भारत भी संचार उपग्रहों के क्षेत्र में पीछे नहीं है। हमारा उपग्रह इनसैट-बी मौसम के विषय में प्रतिदिन बहुत महत्त्वपूर्ण आंकड़े प्रदान कर रहा है।

विद्युत को दूरस्थ स्थानों तक कैसे ले जाया जाता है?



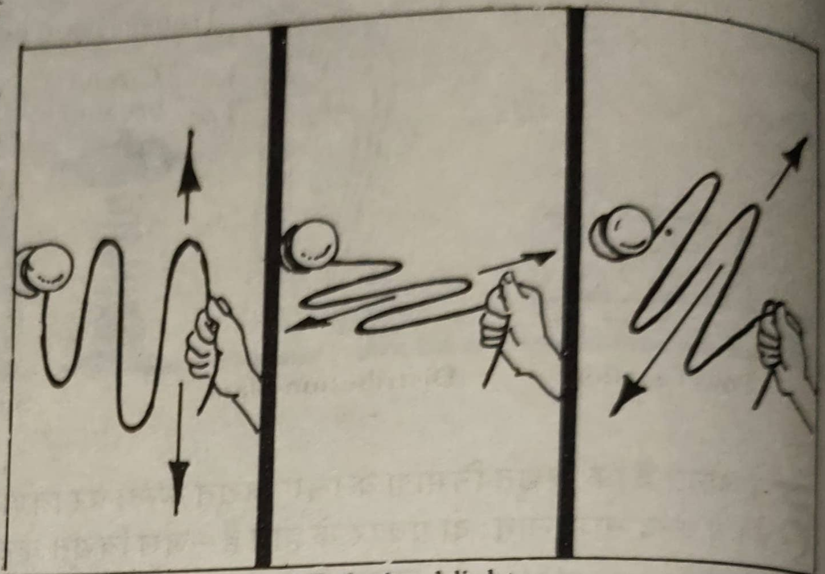
हम जानते हैं कि विद्युत निर्माण के लिए विद्युत केन्द्रों पर विशाल जनित्र (generator) प्रयोग किए जाते हैं। ये केन्द्र सामान्यतः दो प्रकार के होते हैं—जल विद्युत केन्द्र तथा ताप विद्युत केन्द्र (hydraulic and thermal power station)। विद्युत पैदा करने वाले ये केन्द्र शहरों से काफी दूर होते हैं। इन दूरस्थ केन्द्रों से तारों के द्वारा विद्युत को गांवों तथा शहरों तक लाया जाता है। क्या तुम.जानते हो कि इन दूरस्थ स्थानों से वांछित स्थान तक विद्युत को किस प्रकार ले जाया जाता है?

विद्युत संचार के लिए दो समानान्तर तार (parallel wires) प्रयोग किए जाते हैं। इन विद्युत वाहक तारों में बिजली की ऊष्मा के रूप में होने वाली क्षति को रोकने के लिए सबसे पहले विद्युत केन्द्र पर पैदा होने वाली विद्युत वोल्टता को ट्रांसफार्मर द्वारा कई गुना बढ़ाया जाता है। ट्रांसफार्मर कम वोल्टता और अधिक विद्युत धारा की शक्ति को उच्च वोल्टता और कम विद्युत धारा की शक्ति में बदल देता है। विद्युत धारा का मान कम हो जाने से तारों में होने वाली विद्युत शक्ति की क्षति कम हो जाती है। इस तथ्य को हम नीचे दिये गये उदाहरण से अधिक स्पष्ट कर सकते हैं।

मान लो कि हमारे पास 25 किलोवॉट शक्ति का एक विद्युत जनित्र है, जो 250 वोल्ट पर 100 एम्पीयर की विद्युत धारा पैदा करता है। मान लो कि इस शक्ति को एक किलोमीटर की दूरी तक एक ओम (विद्युत इकाई) प्रतिरोध (resistance) की लाइन पर ले जाना है। विद्युत-क्षति के मानक सूत्र (standard formula of power loss) के अनुसार इस शक्ति में से 10 किलोवॉट की शक्ति तारों पर ही समाप्त हो जाएगी। इस प्रकार लाइन पर ही 40 प्रतिशत विद्युत का व्यय हो जाएगा। यदि हम इसकी वोल्टता को ट्रांसफार्मर द्वारा 2500 वोल्ट में बदल दें तो लाइन पर होने वाली विद्युत की क्षति केवल 100 वॉट ही रह जाएगी, जो न के बराबर है।

एक सामान्य विद्युत जनित्र 6600 वोल्ट पर 100 किलोवॉट विद्युत शक्ति पैदा करता है। इससे प्राप्त होने वाली वोल्टता को 132000 वोल्ट तक बढ़ा कर तारों पर संचरित (transmit) किया जाता है। ये तार पायलोन्स (pylons) पर लगे होते हैं। ऐसे तारों का जाल-सा बिछा रहता है। तारों के इस जाल को ग्रिड (grid) कहते हैं। ग्रिड से विद्युत को 33000 वोल्ट पर शहरों में भेजा जाता है। इसके बाद उपकेन्द्र पर इस विद्युत को 6600 वोल्ट तक कम कर दिया जाता है। अधिक विद्युत खर्च करने वाले संस्थानों में इसी वोल्टता पर विद्युत को भेज दिया जाता है। जहां इसे ट्रांसफार्मरों द्वारा 220 वोल्ट में परिवर्तित कर दिया जाता है। घरों के लिए 6600 वोल्ट को 220 वोल्ट में बदलकर भेजा जाता है। इस प्रकार विद्युत-उत्पादन केन्द्र (power station) से बिजली हमारे घरों तक पहुंच जाती है।

प्रकाश का ध्रुवण (Polarization) क्या है?



Polarized light

यह एक जाना-माना वैज्ञानिक तथ्य है कि प्रकाश तरंगों के रूप में चलता है। ये तरंगें ठीक उसी प्रकार की होती हैं जैसी कि पानी की सतह पर पत्थर मारने से पैदा होती हैं। इन तरंगों को अनुप्रस्थ तरंगें (transeverse waves) कहते हैं। प्रकाश भी अनुप्रस्थ तरंगों के रूप में ही चलता है। सूर्य से निकलने वाला साधारण प्रकाश सभी तलों में कम्पन करता है। यदि सभी तलों में कम्पन करने वाले इस प्रकाश से एक ही तल और एक ही दिशा में कम्पन करने की स्थिति पैदा कर दी जाए तो ऐसे प्रकाश को हम ध्रुवित (polarized) प्रकाश कहते हैं।

प्रकाश के ध्रुवण के लिए यह आवश्यक है कि तरंगें अनुप्रस्थ हों। अनुप्रस्थ तरंगें, वे तरंगें होती हैं, जिनमें माध्यम के कण तरंग की गति की दिशा के लम्बवत् रूप में कम्पन करते हैं। जब ये कम्पन किसी विधि द्वारा एक ही दिशा में सीमाबद्ध कर दिए जाते हैं तो इसे हम प्लेन पोलेराइज्ड (plane polarised) प्रकाश कहते हैं।

प्लेन पोलेराइज्ड प्रकाश कई तरीकों से पैदा किया जा सकता है। जब कोई प्रकाश की किरण कांच की सतह से टकराती है तो इसका कुछ हिस्सा परावर्तित (reflect) हो जाता है तथा कुछ हिस्सा कांच के अन्दर प्रवेश कर जाता है। कांच के अन्दर प्रवेश करने वाला भाग अपने मार्ग से विचलित हो जाता है। इसे हम प्रकाश का अपवर्तन (refraction) कहते हैं। यदि अपवर्तित और परावर्तित किरणें एक दूसरे की लम्बवत् (perpendicular) दिशा में हैं तो परावर्तित किरणें प्लेन पोलेराइज्ड होती हैं।

पोलेराइज्ड प्रकाश पैदा करने के लिए प्लास्टिक से बनी पोलेराइज्ड शीट भी प्रयोग की जाती है। ये चादरें हेरापैथाइट (herapathite) नामक पदार्थ के मणिभों (crystals) से बनाई जाती हैं। इनका विकास सन् 1934 में लैण्ड (Land) नामक वैज्ञानिक ने किया था। इन शीटों का निर्माण करने के लिए हेरापैथाइट के मणिभों को एक विशेष क्रम में व्यवस्थित कर दिया जाता है ताकि उन सब मणिभों के प्रकाशीय अक्ष (optic axis) एक दूसरे के समानान्तर हो जाएं। इन मणिभों को सैल्यूलोज़ एसिटेट (acetate) में व्यवस्थित कर दिया जाता है। इस प्रकार से बनी पोलेराइज्ड चादरों को कांच की प्लेटों के बीच में रख दिया जाता है ताकि वे खराब न हों। ऐसी दो शीटों को यदि इस प्रकार रखा जाए कि उनके मणिभों का क्रम एक दूसरे के समानान्तर हो तो उनसे निकलने वाला प्रकाश प्लेन पोलेराइज्ड होगा। यदि इन शीटों को एक दूसरे को काटती (cross) स्थिति में रखा जाए तो कोई भी प्रकाश उनमें से बाहर नहीं निकलेगा।

निकोल प्रिज्म (Nicol prism) नामक प्रक्रम से भी प्रकाश को पोलेराइज किया जा सकता है। निकोल प्रिज्म कैल्साइट (calcite) नामक खनिज के दो पारदर्शी टुकड़ों को कनाडा बाल्सम (Canada balsam) से चिपका कर बनाया जाता है। जब कैल्साइट में प्रकाश प्रवेश करता है तो यह दो प्लेन पोलेराइज्ड किरणों में टूट जाता है। इनमें से एक किरण तो कनाडा बाल्सम द्वारा परावर्तित कर दी जाती है तथा दूसरी किरण, जो बाहर निकलती है,

प्लेन पोलेराइज्ड होती है। प्लेन पोलेराइज्ड प्रकाश के अतिरिक्त दो प्रकार का पोलेराइजेशन और भी होता है। इन्हें हम वृत्तीय (circular) पोलेराइजेशन और दीर्घवृत्तीय (elliptical) पोलेराइजेशन कहते हैं।

पोलेराइज्ड प्रकाश के हमारे जीवन में बहुत से उपयोग हैं। पोलेराइज्ड चादरों को प्रयोग में लाकर धूप के चश्मे बनाए जाते हैं, जिससे आंखो पर धूप की कम चमक (glaze) पड़ती है। हवाईजहाज की खिड़कियों में भी पोलेराइज्ड चादरें प्रयोग की जाती हैं। कारों के सामने के शीशे भी पोलेराइज्ड चादरों से बनाए जाते हैं ताकि आगे से आने वाले किसी वाहन की हैड लाइटों की चालक की आंखों पर अधिक चमक न पड़े। पोलेराइज्ड कैमरा भी प्रकाश के ध्रुवण के सिद्धान्त पर काम करता है। इस कैमरे की विशेषता यह है कि किसी वस्तु का चित्र कुछ ही मिनटों में कैमरे के अन्दर ही तैयार हो जाता है। पोलेराइज्ड फिल्मों को तीन विमाओं (three dimensional) वाले चलचित्र बनाने में भी प्रयोग किया जाता है। ध्रुवण के आधार पर बने प्रकाशीय यंत्र बहुत से वैज्ञानिक कार्यों में प्रयोग किए जाते हैं। जैसे पोलारीमीटर (polarimeter) नामक यंत्र चीनी की मिलों में चाशनी की सान्द्रता (density) परखने में काम आता है।

उत्तम ध्वनि-प्रणाली से युक्त भवन कैसे बनाए जाते हैं?

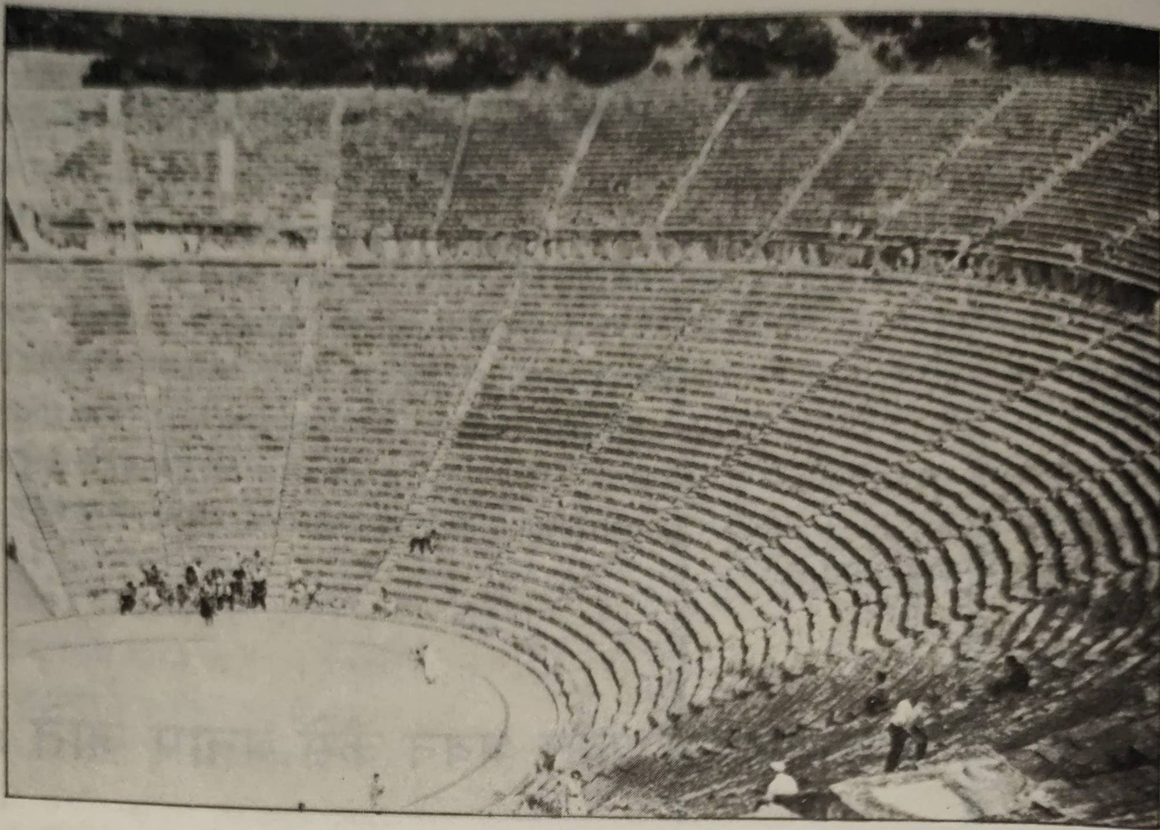
सिनेमाहॉल, लैक्चरहॉल तथा संगीत-कक्षों का निर्माण इस प्रकार किया जाता है कि किसी वक्ता का भाषण या संगीत-कार्यक्रम सभी उपस्थित व्यक्तियों को स्पष्ट सुनाई दे सके। इन कक्षों के निर्माण में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि बोलने वाले की आवाज से कोई गूंज (echo) पैदा न हो। क्या तुम जानते हो कि अच्छी ध्वनि के गुणों से युक्त भवनों का निर्माण कैसे किया जाता है?

सिनेमाघरों और भाषणगृहों में स्पष्ट रूप से ध्वनि को सुनने के लिए प्रयोग में आने वाले विज्ञान को स्थापत्य ध्वानिकी (architectural acoustics) कहते हैं। इन भवनों के निर्माण में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि बोलने वाले की ध्वनि न तो बहुत तेज सुनाई दे और न ही बहुत धीमी और हाल में बैठने वाले सभी लोगों को समान रूप से एक-सी स्पष्ट ध्वनि सुनाई दे।

किसी भी भवन में प्लास्टर जैसे कुछ पदार्थ जहां एक ओर ध्वनि को परावर्तित करते हैं, वहीं दूसरी ओर कुछ अन्य पदार्थ जैसे कालीन, कपड़े, पर्दे तथा उपस्थित व्यक्ति ध्वनि को अवशोषित (absorb) करते हैं। सभा भवन के निर्माण में ध्वनि के परावर्तन और अवशोषण में एक संतुलन बनाना पड़ता है। इसी संतुलन से ध्वनि का फैलाव समान रूप से होता है।

उत्तम गुणों वाली ध्वानिक प्रणाली के कक्षों के निर्माण के लिए ध्वनि के दो गुण बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। ये दो गुण हैं, गूंज (echo) तथा अनुरणन (reverberation)। गूंज ध्वनि के परावर्तित होने से पैदा होती है। जो पदार्थ ध्वनि को परावर्तित करते हैं, वे शक्तिशाली गूंज पैदा करते हैं। एक सभा भवन में हमें वक्ता के मुंह से निकलने वाली ध्वनि सीधी ही सुनाई देती है। चूंकि गूंज के रूप में आने वाली ध्वनि को अधिक दूरी तय करनी होती है, अतः यह हमारे कानों तक सीधी ध्वनि की तुलना में कुछ देर बाद पहुंचती है। ध्वनि के लिए उत्तम प्रकार से निर्मित भवनों में ये दोनों ध्वनियां लगभग एक ही साथ कानों तक पहुंचती हैं। यही कारण है कि ध्वनि स्पष्ट सुनाई देती है।

शृंखलाबद्ध गूंजों को अनुरणन कहते हैं। प्रत्येक गूंज अपने से पहली गूंज की तुलना में कम ध्वनि वाली होती है। अनुरणन गूंजों से छुटकारा पाने के लिए अवशोषक पदार्थों को प्रयोग में लाकर भवनों का निर्माण किया जा सकता है लेकिन ऐसे भवन में ध्वनि लगभग मृत हो जाएगी। उत्तम ध्वनि के लिए कुछ अनुरणन का होना भी अत्यावश्यक है। अनुरणन काल 1 और 2.5 सेकंड के बीच में होना चाहिए। इस अन्तराल में लगभग सभी गूंजें



समाप्त हो जाती हैं। संगीत के लिए प्रयोग में आने वाले कक्षों का अनुरणन काल भाषण कक्षों की तुलना में कुछ अधिक होना चाहिए।

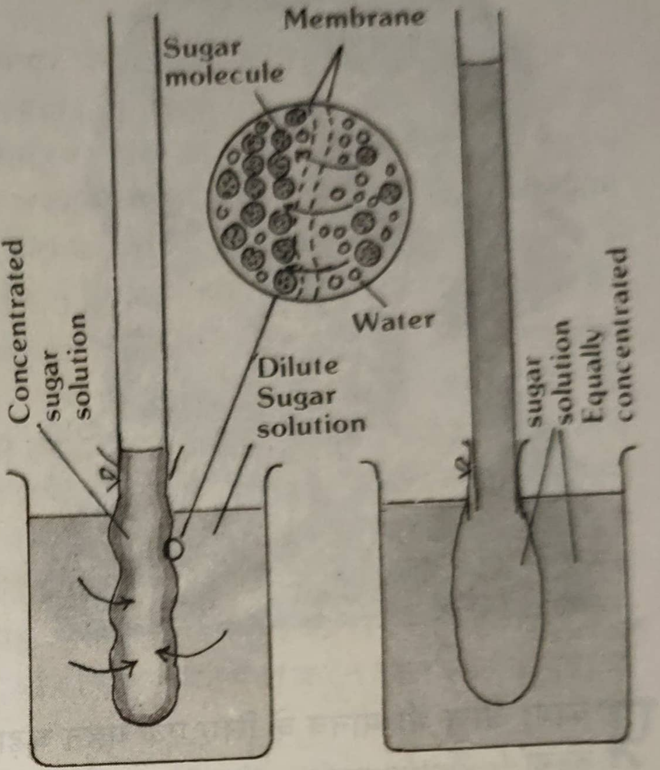
किसी सभा भवन के निर्माण के डिजाइन में एक दूसरी समस्या ध्वनि के आयतन की आती है। किसी भी सभा भवन में पीछे बैठे हुए व्यक्तियों को भी ध्वनि स्पष्ट रूप से सुनाई देनी चाहिए। इस काम के लिए कभी-कभी ध्वनि को लाउडस्पीकरों की सहायता से आवर्धित करना होता है। लाऊडस्पीकरों से ध्वनि का आवर्धन बहुत ज्यादा संतोषजनक नहीं होता है क्योंकि इन यंत्रों से ध्वनि को बहुत शुद्धता के साथ पुनः उत्पादित (reproduce) नहीं किया जा सकता।

उत्तम ध्वनि प्रणाली के सभा भवनों के निर्माण में ध्वनि की आवृत्ति (frequency) या आयाम (pitch) को ध्यान में रखना भी अत्यावश्यक है। विभिन्न आवृत्ति की ध्वनियां भवन के विभिन्न तलों से विभिन्न मात्राओं में परावर्तित होती हैं। इन भवनों में अनुनाद (resonance) का न होना अत्यावश्यक है। अनुनाद के कारण कोई एक विशेष आवृत्ति दूसरी आवृत्तियों की तुलना में अधिक तेजी से सुनाई देती है। इन दोनों प्रभावों के कारण उच्च आवृत्ति या निम्न आवृत्ति की ध्वनियां अधिक तेजी से सुनाई देने लगती हैं।

प्राचीन यूनान निवासी पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने ध्वनि के उत्तम गुणों से युक्त रंगशालाओं (theatres) का निर्माण किया। उनके श्रोतागण पहाड़ी ढलानों पर बैठते थे ताकि ध्वनि सीधी उन तक पहुंच सके। इन थियेटरों को एम्पीथियेटर कहते थे। भाषण मंच ढलानों के निचले हिस्से में होते थे। दर्शकों के सभी सदस्य बक्ता को स्पष्ट रूप से देख और सुन सकते थे। इसी विचारधारा की नकल रोम के निवासियों ने की। कैलीफोर्निया का हॉलीवुड बाउल नामक एक आधुनिक थियेटर वास्तव में एक एम्पीथियेटर ही है।

आज के भवन निर्माता नयी-नयी पद्धतियों को प्रयोग में लाकर ध्वनि के उत्तम गुणों से युक्त सभाकक्ष निर्मित करने में दक्ष हो गए हैं। इसके बावजूद, इस कला को अभी तक पूर्णता प्राप्त नहीं हो पायी है। भवन के निर्माण के समय ही उसके ध्वनि गुणों का परीक्षण किया जाता है। कभी-कभी भवन का डिजाइन बदलना पड़ता है या भवन-निर्माण सामग्री को बदलना पड़ता है। ध्वनि के इंजीनियर इस काम के लिए अक्सर भवनों के मॉडल प्रयोग में लाते हैं ताकि वे ध्वनि-परीक्षण कर सकें।

परासरण (Osmosis) क्या है?



यह एक सामान्य अनुभव की बात है कि यदि किशमिशों को पानी में डाल दिया जाए तो वे फूलकर मोटी हो जाती हैं। ऐसा इसलिए होता है कि किशमिश की बाहरी परत से पानी अन्दर प्रवेश कर जाता है। इसी प्रकार यदि अंगूरों को चीनी के घोल में डाल दिया जाए तो वे पिचक जाते हैं। इसका कारण यह है कि अंगूरों के अन्दर उपस्थित पानी अंगूरों की परत से निकलकर चीनी के विलयन (sugar solution) में चला जाता है। किशमिशों के फूलने और अंगूरों के सिकुड़ने की दोनों ही क्रियाएं जिस तथ्य पर आधारित हैं, उसे परासरण (osmosis) कहते हैं।

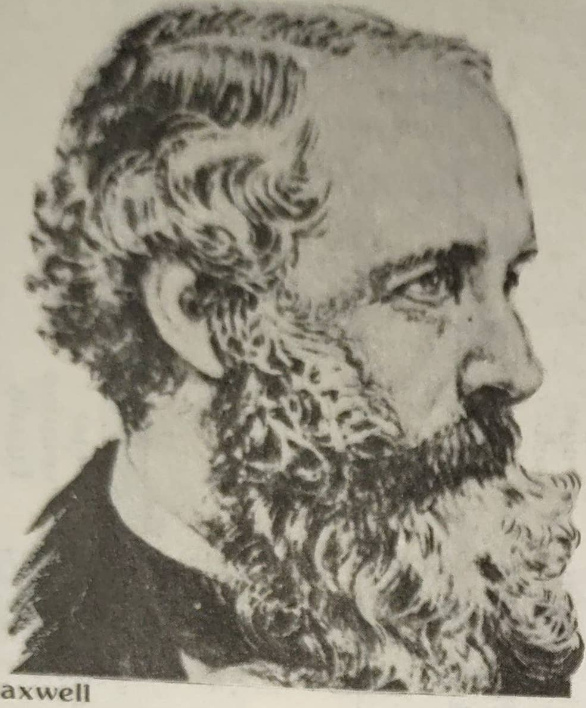
परासरण वह क्रिया है, जिसमें एक कम सान्द्रता (concentration) का द्रव एक अर्ध-पारगम्य झिल्ली (semipermeable membrane) से गुजरता हुआ अधिक सान्द्रता वाले द्रव की ओर गतिशील हो जाता है। अर्ध-पारगम्य झिल्ली की विशेषता है कि वह कुछ पदार्थों को अपने में से गुजर जाने देती है। इसमें अत्यन्त सूक्ष्म छिद्र होते हैं। किशमिशों को जब पानी में डाला जाता है तो किशमिशों का छिलका अर्ध-पारगम्य झिल्ली का काम करता है। पानी की सान्द्रता किशमिश के अन्दर के पदार्थ से कम होती है। इसलिए परासरण द्वारा पानी किशमिश में अन्दर प्रवेश कर जाता है। इसी प्रकार अंगूरों के अन्दर तरल पदार्थ की सान्द्रता चीनी के विलयन से कम होती है। इसलिए अंगूरों के छिलके से होता हुआ अंगूरों के अन्दर का द्रव चीनी के विलयन में आ जाता है। परासरण की क्रिया सदा ही कम सान्द्रता वाले विलयन से अधिक सान्द्रता वाले विलयन की ओर होती है। इस क्रिया के परिणामस्वरूप अधिक सान्द्रता के विलयन की सान्द्रता कम होती जाती है। परासरण की दर विलयनों की सान्द्रता के अन्तर पर निर्भर करती है।

परासरण की क्रिया समस्त जीव-जगत में होती है। कोशिकाओं (living cells) की झिल्लियां अर्ध-पारगम्य होती हैं। पौधे मिट्टी से जल और घुले हुए खनिजों का अवशोषण परासरण क्रिया द्वारा ही करते हैं। एक कोशिका से दूसरी कोशिका में होता हुआ जल परासरण द्वारा ही गतिशील होता है। कोशिका के अन्दर जल का दाब भी परासरण द्वारा ही नियंत्रित होता है। इससे कोशिका को आकार और बल मिलता है। जब स्फीति दाब (turgor pressure) कम हो जाता है तो पौधा झुक जाता है और उसकी सख्ती कम हो जाती है।

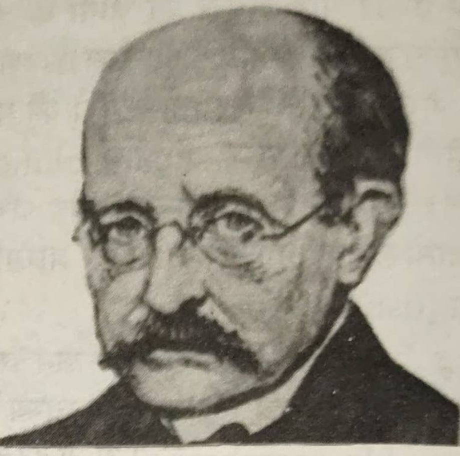
मानव शरीर में भी परासरण की क्रिया द्वारा रक्त में उपस्थित जल और घुले हुए पोषक तत्त्व कोशिकाओं में प्रवेश करते हैं। इसी क्रिया से कोशिकाओं में उपस्थित अतिरिक्त जल और अपशिष्ट पदार्थ (waste materials) बाहर निकलते हैं। परासरण द्वारा ही रक्त से अपशिष्ट पदार्थ और अतिरिक्त पानी गुर्दों में जाता है।

किसी प्रणाली पर दाब बढ़ाकर परासरण के विपरीत क्रिया भी की जा सकती है। उदाहरण के लिए, यदि ताजा पानी और समुद्र के पानी को एक अर्ध-पारगम्य झिल्ली द्वारा अलग-अलग कर दिया जाए तो परासरण की क्रिया द्वारा स्वच्छ पानी नमक के पानी की ओर गतिशील हो जाएगा और संतुलन की अवस्था प्राप्त करने का प्रयास करेगा। यदि नमक के पानी पर दाब लगा दिया जाए तो नमक के पानी की गति ताजे पानी की ओर हो जाएगी।

क्वाण्टम सिद्धान्त (Quantum theory) क्या है ?



Maxwell



Planck

प्रकाश आज भी मानव के लिए एक बहुत बड़ा रहस्य बना हुआ है। हम जानते हैं कि विद्युत चुम्बकीय तरंगों (electro-magnetic wave) के रूप.में प्रकाश चलता है। प्रकाश तरंगों में विद्युत और चुम्बकीय बल एक दूसरे के लम्बवत् (perpendicular) दिशा में होते हैं। प्रकाश का विद्युत चुम्बकीय सिद्धान्त मैक्सवैल नामक वैज्ञानिक ने दिया था। इस सिद्धान्त के आधार पर भौतिकी के अधिकतर तथ्यों की विवेचना हो सकी लेकिन इससे भौतिकी के कुछ प्रभावों (effects) की विवेचना न हो सकी। इनमें से एक प्रभाव निम्नलिखित था। लाल गर्म वस्तुएं अधिकतर लाल रंग का प्रकाश उत्सर्जित करती हैं। इस प्रकाश की आवृत्ति गर्म किए जाने वाले पदार्थ पर नहीं बल्कि उसके तापमान पर निर्भर करती है। इस तथ्य की प्रकाश के तरंग सिद्धान्त के आधार पर विवेचना करने का यह प्रयास किया गया कि तापमान और आवृत्ति का आपस में क्या संबंध है लेकिन यह सिद्धान्त पराबैंगनी किरणों (ultraviolet rays) की आवृत्तियों की विवेचना न कर सका।

इस समस्या का समाधान सन् 1900 में जर्मन भौतिकशास्त्री मैक्स प्लांक (Max Planck) द्वारा किया गया। उन्होंने सुझाव दिया कि प्रकाश समूहों (packets) के रूप में उत्सर्जित होता है। यह निरन्तर धारा के रूप में नहीं निकलता। प्रकाश के प्रत्येक समूह को उन्होंने क्वाण्टम का नाम दिया। इसी को हम प्लांक का क्वाण्टम सिद्धान्त कहते हैं। प्लांक के अनुसार प्रत्येक क्वाण्टम की ऊर्जा उसकी आवृत्ति के समानुपाती (proportionate) होती है।

सन् 1905 में क्वाण्टम के आधार पर भौतिकी के प्रकाशवैद्युत प्रभाव (Photoelectric effect) की विवेचना संभव हो पाई। इस प्रभाव की विवेचना क्वाण्टम सिद्धान्त के आधार पर विश्वविख्यात भौतिकशास्त्री एलबर्ट आइन्स्टीन द्वारा की गई थी। उन्होंने प्रकाश क्वाण्टम का नाम फोटोन (Photon) दिया।

इसके बाद, इस सिद्धान्त के आधार पर परमाणु के बहुत से रहस्यों को समझा गया। आज क्वाण्टम सिद्धान्त के आधार पर भौतिकी के अनेक प्रभावों की विवेचना संभव हो पाई है। आधुनिक भौतिकशास्त्री प्रकाश को कुछ विषयों में तरंगों के रूप में लेते हैं तथा दूसरे प्रभावों की विवेचना के लिए क्वाण्टम सिद्धान्त को अपनाते हैं। दोनों में से कोई भी सिद्धान्त भौतिकी के सभी प्रभावों की विवेचना करने में पूर्णतया सक्षम नहीं है।

प्रतिहिम (Antifreeze) पदार्थ क्या हैं?

प्रतिहिम ऐसे पदार्थ हैं, जो किसी द्रव के साथ मिलाए जाने पर उसका हिमांक (freezing point) कम कर देते हैं। ठंडे देशों में कारों और बसों की शीतलीकरण प्रणालियों (cooling systems) में काम आने वाले द्रव पदार्थ जम जाते हैं। इन द्रवों को जमने से रोकने के लिए ही प्रतिहिम पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। ठंडे देशों में उड़ने वाले वायुयानों के पंखों पर बर्फ जम जाती है। बर्फ को जमने से रोकने के लिए प्रतिहिम पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। ठंडे गोदामों में औषधियों और शृंगार प्रसाधनों को जमने से रोकने के लिए विशेष प्रकार के प्रतिहिम पदार्थ प्रयोग में लाए जाते हैं। क्या तुम जानते हो कि ये विभिन्न प्रकार के प्रतिहिम पदार्थ क्या हैं?

सभी प्रतिहिम पदार्थों का मुख्य अवयव किसी न किसी प्रकार का एल्कोहल होता है। इथाइलीन ग्लाइकोल अधिकतर सामान्य प्रतिहिम पदार्थों का आधार होता है। इस पदार्थ का उपयोग अन्तर्दहन इंजनों की शीतलीकरण प्रणाली में किया जाता है। जाड़े के ठंडे महीनों में इस प्रतिहिम पदार्थ को अकेले ही या पानी के साथ शीतलीकरण प्रणाली को जमने से रोकने के लिए प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी अन्तर्दहन इंजनों में प्रतिहिम पदार्थों के रूप में मिथानोल प्रयोग किया जाता है। मिथानोल से पानी का हिमांक नीचे गिर जाता है। सामान्य रूप से जमने का खतरा समाप्त होने पर प्रतिहिम पदार्थों को प्रणाली से बाहर निकाल लिया जाता है। वाष्पन के कारण प्रतिहिम पदार्थ अक्सर अपनी शक्ति क्षीण कर लेता है और यह शीतलन प्रणाली को जंग लगने से रोक नहीं पाता है। यह प्रतिहिम तरल इंजन के ब्लॉक तक जा सकता है और चिकनाहट पैदा करने वाले स्नेहक पदार्थों (lubrication) में समस्या पैदा कर सकता है।

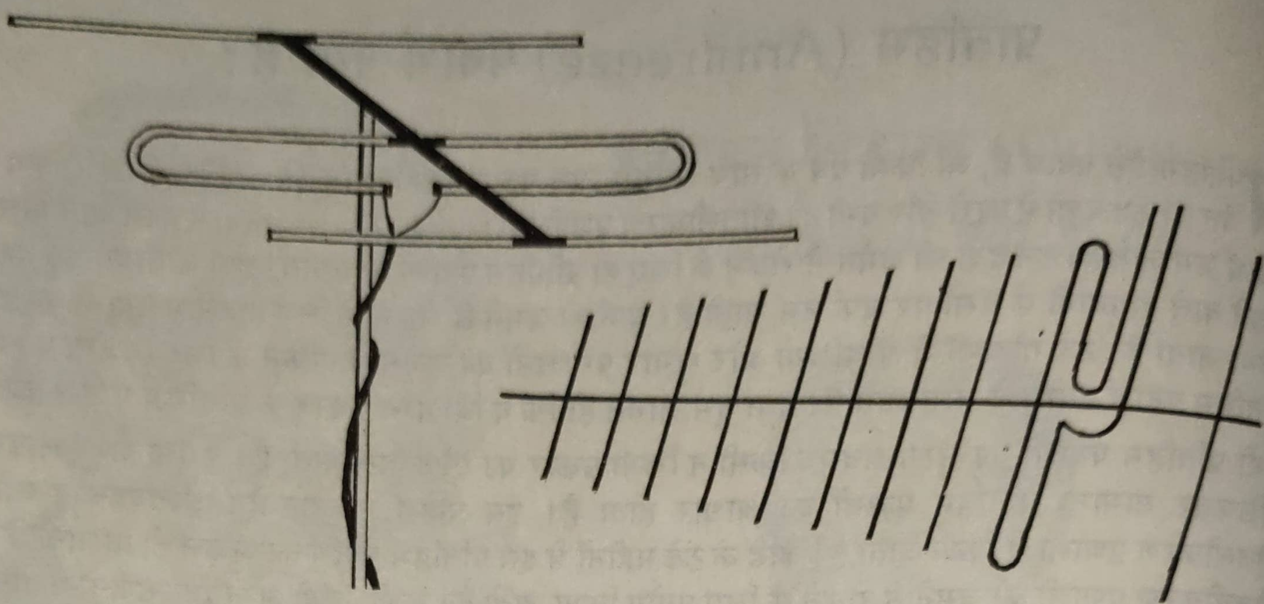
वायुयान के पंखों और प्रोपैलरों पर बर्फ को जमने से रोकने के लिए भी इथाइलीन ग्लाइकोल प्रयोग किया जाता है। ग्लिसरोल और इथाइल एल्कोहल जैसे पदार्थों का औषधियों और श्रृंगार प्रसाधनों के गोदामघरों में जमने से रोकने के लिए प्रयोग किया जाता है। कैल्शियम क्लोराइड और सोडियम क्लोराइड जैसे ठोस पदार्थों को प्रशीतन (freezing) में प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार बहुत से और भी पदार्थ हैं, जिन्हें प्रतिहिम पदार्थों के रूप में प्रयोग किया जाता है।

एण्टीना (Antenna) कैसे काम करता है?

रेडियो और टेलीविजन में लगे एण्टीना हम सभी ने देखे हैं। इन्हें सामान्यतः लोग एरियल (aerial) भी कहते हैं। राडार और रेडियो दूरदर्शियों में भी एण्टीना प्रयोग किए जाते हैं। वास्तव में एण्टीना किसी भी इलेक्ट्रॉनिक संचार प्रणाली का मूल भाग होता है।

एण्टीना विद्युत ले जाने वाला एक चालक होता है। इसके मुख्य रूप से दो कार्य होते हैं–विद्युत चुम्बकीय बिकिरणों को प्रेषित करना और विद्युत चुम्बकीय संदेशों को प्राप्त करना। ट्रांसमीटरों के साथ लगे एण्टीना विद्युत संदेशों को प्रेषित करते हैं तथा रेडियो, टेलीविजन आदि के साथ लगे एण्टीना, ऐसे ही संदेशों को प्राप्त करते हैं।

मूल रूप से एण्टीना दो प्रकार के होते हैं। डाइपोल (dipole) एण्टीना उसे कहते हैं, जिसमें धातु ब तार के दो टुकड़े चालक का काम करते हैं। मोनोपोल (monopole) एण्टीना उसे कहते हैं, जिसमें धातु का एक टुकड़ा या तार होता है। इसका एक सिरा धरती के साथ संबंधित होता है।



जब किसी एण्टीना को रेडियो आवृत्ति (frequency) की ऊर्जा दी जाती है तो आवृत्ति के अनुसार उसमें विद्युत धारा एक सेकंड में कई हजार बार परिवर्तित होती है। इस परिवर्तनशील विद्युत क्षेत्र से एक चुम्बकीय क्षेत्र पैदा होता रहता है। इस प्रकार एण्टीना से विद्युत चुम्बकीय विकिरण ऊर्जा के रूप में अलग होकर अन्तरिक्ष में प्रेषित होते रहते हैं। विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा केवल तभी अलग होती है, जब परिपथ में विद्युत धारा परिवर्तित होती है।

एण्टीना अनेक रूपों और आकारों के होते हैं। रेडियो तरंगें प्रेषित करने वाले एण्टीना सामान्यत: ऊंची मीनारों के रूप में लगाए जाते हैं। ट्रांजिस्टर रेडियो के एण्टीना का आकार अंगुली के नाखून से बड़ा नहीं होता। राडार और रेडियो दूरदर्शी के एण्टीना अक्सर धातु की तश्तरियों के रूप में होते हैं। टेलीविजन ट्रांसमीटरों के एण्टीना बहुत ही ऊंचे भवनों पर लगाए जाते हैं। पनडुब्बियों और पृथ्वी पर बने केन्द्रों के बीच संचार व्यवस्थाओं के लिए प्रयोग होने वाले एण्टीना धरती के नीचे लगाए जाते हैं।

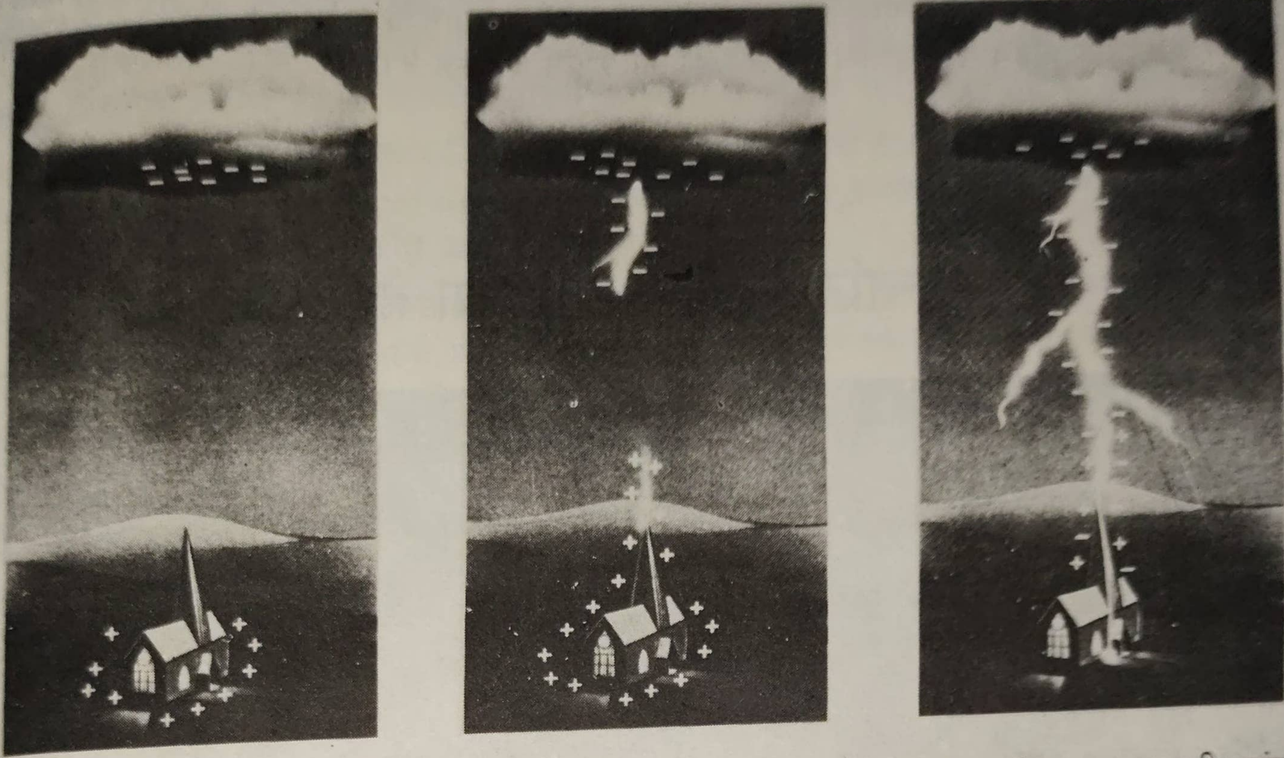
एण्टीना का आकार-प्रकार इस बात पर निर्भर करता है कि कोई एण्टीना किस प्रकार का इलेक्ट्रॉनिक संदेश भेजता या प्राप्त करता है। कुछ संदेशों के लिए गोल या लूप एण्टीना की आवश्यकता होती है तथा दूसरे को संदेशों के लिए ऊर्ध्वाधर (vertical) या क्षैतिज (horizontal) एण्टीना की आवश्यंकता होती है।

एण्टीना की संरचना का संदेश की आवृत्ति या तरंग की दीर्घता (wave-length) के साथ-साथ तालमेल होना चाहिए। ए. एम. (AM) रेडियो तरंगों के एण्टीना कम आवृत्ति के संदेशों के लिए प्रयोग किए जाते हैं। कम आवृत्ति के संदेशों की तरंग-दीर्घता अधिक होती है। टेलीविजन के एण्टीना अधिक आवृत्ति के संदेशों के लिए प्रयोग होते हैं। अधिक आवृत्ति के संदेशों की तरंग-दीर्घता छोटी होती है। राडार और रेडियो दूरदर्शियों के एण्टीना अत्यधिक उच्च आवृत्ति के लिए प्रयोग किए जाते हैं। अत्यधिक उच्च आवृत्ति के संदेशों की तरंग-दीर्घता बहुत ही कम होती है। इन्हें हम सूक्ष्म तरंगें कहते हैं।

विश्व के प्रथम एण्टीना का निर्माण सन् 1887 के लगभग जर्मन भौतिकशास्त्री हाइनरिख हर्ट्ज ने किया था। इसी एण्टीना के आधार पर इटली के इंजीनियर गूलीलमो मार्कोनी ने सन् 1896 में एक नया एण्टीना विकसित किया, जिसके द्वारा वह रेडियो संदेशों को भेजने और प्राप्त करने में सफल हुए।

भांति-भांति के एण्टीना डिजाइन करने के लिए जटिल गणितीय सूत्रों (formulae) का प्रयोग किया जाता है। एण्टीना से प्रसारित होने वाले विकिरणों के नमूने बहुत ही जटिल होते हैं। प्रत्येक एण्टीना का एक विशेष विकिरण प्रतिरोध तथा एक विशेष ऊंचाई होती है। अलग-अलग कार्यों के लिये अलग-अलग एण्टीना प्रयोग किए जाते हैं। इनमें लूप एण्टीना, परवलयी एण्टीना, हार्न एण्टीना, वी (V) एण्टीना, आदि मुख्य हैं।

प्रघाती तरंगें (Shock waves) क्या हैं?



वायु, गैस या द्रव पदार्थ में किसी वस्तु के तेज गति से चलने पर पैदा होने वाली उच्च दाब की तरंगों को
प्रघाती तरंगें (shock waves) कहते हैं। ये तरंगें गैस या द्रव के किसी वस्तु के चारों ओर तीव्र गति से
चलने पर भी पैदा हो जाती है। प्रघाती तरंगें तब पैदा होती हैं, जब वस्तु, गैस या द्रव का वेग ध्वनि के वेग के बराबर
या उससे अधिक होता है। प्रघाती तरंगों को दाब तरंगें भी कहते हैं।
प्रघाती तरंगें बहुत से तरीकों से पैदा होती हैं। प्रकृति में इनके पैदा होने के बहुत से स्रोत हैं। इन्हें कृत्रिम विधियों से
भी पैदा किया जाता है। बादलों के गरजने और बिजली के चमकने से भी प्रघाती तरंगें पैदा होती हैं। बिजली गिरने
से पैदा होने वाली प्रघाती तरंगों से संसार में हर वर्ष सैकड़ों व्यक्तियों की मृत्यु और करोड़ों रुपये की सम्पत्ति नष्ट
हो जाती है। ज्वालामुखियों के फटने से उत्पन्न प्रघाती तरंगें भी बड़ी हानिकारक होती हैं। इन्हें दूर-दूर तक सुना
जा सकता है। जावा और सुमात्रा के बीच के मानवरहित क्रेकाटोवा नामक द्वीप पर फटने वाले एक ज्वालामुखी से
ऐसी प्रघाती तरंगें पैदा हुईं; जिनके प्रभाव 4800 किमी. से भी अधिक दूरी तक दर्ज किए गए।
भूकम्पों से भी प्रघाती तरंगें पैदा होती हैं। ये भी बड़ी भयानक होती हैं। कलकत्ता शहर में अक्तूबर, 1734 में आए
एक भूकम्प से तीन लाख लोग मर गए थे। संसार में ऐसे बहुत से भयानक भूकम्पों के उदाहरण हैं। लिखित प्रमाणों
के अनुसार भूकम्पों के कारण अब तक लगभग एक करोड़ चालीस लाख लोग मर चुके हैं।
अन्तरिक्ष से गिरती उल्काओं के जमीन से टकराने पर भी प्रघाती तरंगें पैदा होती हैं। विशाल उल्कापातों के कारण
जमीन पर बहुत बड़े-बड़े गड्ढे बन जाते हैं। साइबेरिया में 1908 में एक ऐसा विशाल उल्कापात हुआ था, जिससे
इतनी तीव्र प्रघाती किरणें पैदा हुईं, जिन्होंने 2048 वर्ग किमी. क्षेत्रफल के जंगल को जलाकर राख कर दिया था।
ऊपर हमने जितने भी उदाहरण दिए हैं, वे सभी प्राकृतिक प्रघाती तरंगों के हैं। कृत्रिम विधियों से उत्पन्न प्रघाती
तरंगों में रासायनिक, नाभिकीय और ताप्र-नाभिकीय बमों के विस्फोट ऐसे उदाहरण हैं, जिनसे बहुत शक्तिशाली
प्रघाती तरंगें पैदा होती हैं। ये प्रघाती तरंगें मानव विनाश के लिए तो प्रयोग की ही जाती हैं, इसके साथ ही इन्हें

शान्तिपूर्ण कार्यों के लिए भी प्रयोग किया जा रहा है। परमाणु ऊर्जा को विद्युत उत्पादन के लिए प्रयोग किया जा रहा है। इन विस्फोटों को खानें खोदने, कृषि, मशीनों, अन्तरिक्ष योजनाओं आदि में भी काम में लाया जा रहा है। खान उद्योग में विस्फोटकों द्वारा खुदाई की जाती है। इनसे रेलगाड़ियों के मार्ग और सड़कें बनाने में भी मदद ली जाती है। विस्फोटकों को नहर के निर्माण और बन्दरगाह बनाने में भी प्रयोग किया जाता है। आज प्रघाती तरंगों के आधार पर वैज्ञानिक जीवन की उत्पत्ति समझने का भी प्रयास कर रहे हैं।

अन्तरिक्ष (Space) क्या है?



हम जानते हैं कि हमारी धरती चारों ओर से एक प्रकार के वायु के कम्बल से घिरी हुई है। जैसे-जैसे हम धरती से ऊपर जाते हैं, वैसे-वैसे वायु में उपस्थित गैसों की मात्रा कम होती जाती है। एक विशेष ऊंचाई के बाद ये गैसें इतनी कम हो जाती हैं कि किसी गुजरती वस्तु पर कोई घर्षण बल नहीं लगता। इस ऊंचाई को हम वायुमंडल की सीमा कहते हैं। इसके ऊपर का समस्त विस्तृत क्षेत्र ही अन्तरिक्ष कहलाता है। वैज्ञानिकों का मत है कि अन्तरिक्ष का आरम्भ धरती से लगभग एक हजार किमी की ऊंचाई के बाद से होता है।

अन्तरिक्ष की परिभाषा आमतौर पर उस विस्तृत क्षेत्र के रूप में दी जाती है, जिसकी सीमाएं अभी तक ज्ञात नहीं हैं। यह सभी दिशाओं में अरबों-खरबों किमी. तक फैला हुआ है तथा सौर-परिवार, मंदाकिनियों (galaxies) और

मंदाकिनियों के बीच के स्थान को घेरे हुए है। हम धरती से किसी अन्तरिक्षयान द्वारा कितनी ही दूर चले जाएं या कितने ही शक्तिशाली दूरदर्शी से देखने का प्रयत्न करें तो भी अन्तरिक्ष की सीमा के परे नहीं पहुंच सकते।

खगोलशास्त्री अन्तरिक्ष के विभिन्न स्थानों को किसी पास के खगोलीय पिण्ड के गुरुत्वबल (gravitational force) के प्रभाव के अनुसार परिभाषित करते हैं। उदाहरण के लिए ग्रहों के बीच के क्षेत्र को अन्तरग्रहीय (interplanetary) अन्तरिक्ष कहते हैं। अन्तरग्रहीय अन्तरिक्ष वह क्षेत्र है, जहां तक सूर्य के गुरुत्वबल का अनुभव किया जा सकता है। अन्तरग्रहीय अन्तरिक्ष प्लूटो से भी परे कई करोड़ किमी. तक फैला हुआ है।

तारों के बीच के क्षेत्र को अन्तरतारकीय (interstellar) अन्तरिक्ष कहते हैं। सूर्य और सबसे पास के तारे प्रोक्सिमा सैण्टोरी (Proxima centauri) के बीच की दूरी लगभग 4.3 प्रकाश वर्ष है। इसी प्रकार दूसरे तारों के बीच के स्थान को भी अंतरतारकीय अन्तरिक्ष कहते हैं।

मंदाकिनियों के बीच के क्षेत्र को अंतरमंदाकिनीय अन्तरिक्ष (intergalactic space) कहते हैं। अंतरमंदाकिनीय अन्तरिक्ष इतनी दूरी तक फैला हुआ है, जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। सम्भवतः यह अनन्त (infinity) तक फैला हुआ है। इस प्रकार यह सीमारहित आकाश ही अन्तरिक्ष है।

यद्यपि हम अन्तरिक्ष को रिक्त स्थान मानते हैं लेकिन इसमें भी तारों की धूल और उल्का कण मिलते हैं। अन्तरिक्ष में कॉस्मिक किरणों के कण और एक्स-किरणें भी होती हैं। वहां अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा में गैसें भी हो सकती हैं।

आज का मानव बाहरी अन्तरिक्ष के अध्ययन के लिए अत्यन्त प्रयत्नशील है। वह अनेक प्रकार के रॉकेटों, उपग्रहों, अन्तरिक्षयानों और अन्तरिक्ष प्रोबों (probes) द्वारा इसके विषय में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करता जा रहा है। वह चन्द्रमा की सतह तक जा पहुंचा है और दूसरे ग्रहों, उपग्रहों के विषय में जानने का प्रयास कर रहा है। हो सकता है कि निकट भविष्य में अन्तरिक्ष के बहुत से रहस्यों का उद्घाटन हो सके।

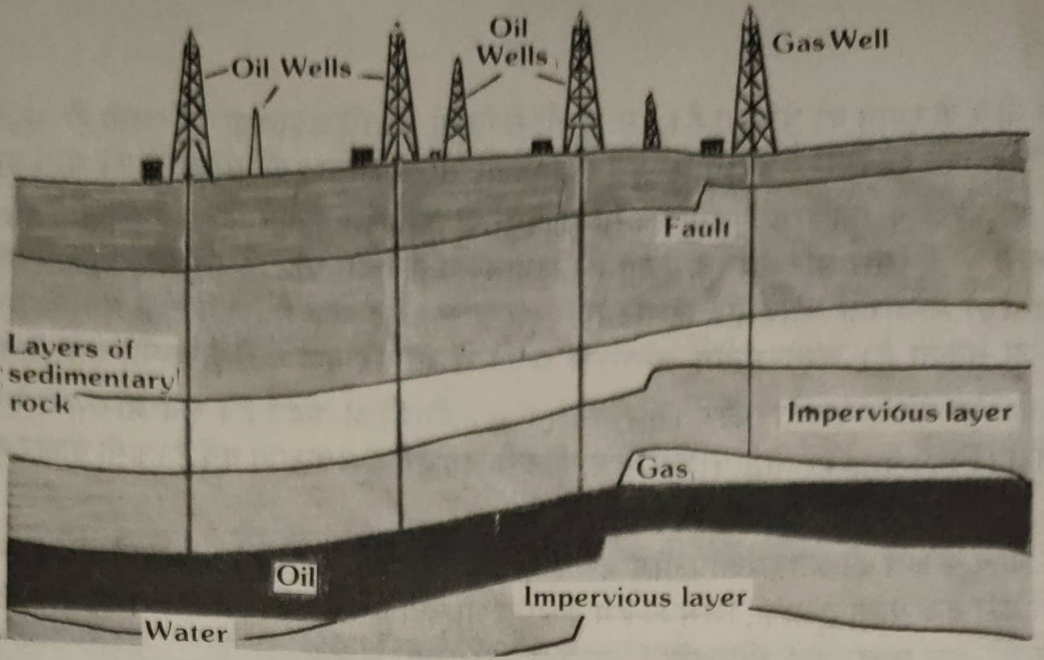
ईंधन गैसें (Fuel Gases) क्या हैं?

भोजन पकाने और गर्मी पैदा करने के लिए गैसों का प्रयोग उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में शुरू हो गया था। वास्तव में यह शुरुआत सन् 1840 में गैस स्टोव के आविष्कार और सन् 1855 में गैस-अग्नि के आविष्कार से हुई।

प्राकृतिक गैस, कोल गैस और वाटर गैस—तीन मुख्य गैसीय ईंधन हैं। अब कुछ स्थानों पर तेल से भी गैसों का उत्पादन होने लगा है। आजकल ऐसे प्रक्रम विकसित किए जा रहे हैं, जिनके द्वारा संश्लेषित (synthetic) विधियों से कोयले से ऐसी गैस का निर्माण हो सकता है, जिसे प्राकृतिक गैस के स्थान पर प्रयोग किया जा सकता है।

प्राकृतिक गैस धरती के अन्दर जमा तेल-भंडारों से प्राप्त होती है। शुरू-शुरू में तेल प्राप्त करने वाले स्थानों पर इस गैस को जला दिया जाता था लेकिन आजकल तेल उत्पादन करने वाले देशों में इस गैस को एकत्रित किया जाने लगा है। इस गैस को तरल अवस्था में परिवर्तित करके बहुत से देश इसका निर्यात करते हैं या अपने निजी उद्योगों में भी प्रयोग करते हैं। सऊदी अरब पहले इस गैस को जला देता था लेकिन अब इसे एकत्रित करने की योजनाएं बना रहा है।

प्राकृतिक गैस में मुख्य रूप से मीथेन (methane) गैस होती है। इसके साथ ईंधन और कुछ मात्रा में प्रोपेन, ब्यूटेन और नाइट्रोजन गैसें भी होती हैं। इसके जलने से काफी मात्रा में ऊष्मा पैदा होती है। कोल गैस उन कई गैसों का



मिश्रण होती है, जो कोल को जलाकर कोक में परिवर्तित होने पर पैदा होती है। इस गैस को वायु की अनुपस्थिति में कोयले को गर्म करके बनाया जाता है।

कोयले को लगभग 1350° सेल्सियस तक भट्ठियों में गर्म किया जाता है। इस तापमान पर कोयला मुलायम हो जाता है और उससे यह गैस निकलने लगती है। इस गैस का रंग कोलतार (coal-tar) की उपस्थिति के कारण भूरा होता है। इस गैस में मुख्य रूप से हाइड्रोजन गैस होती है। हाइड्रोजन की मात्रा आयतन (volume) के हिसाब से लगभग 50% होती है। कोल गैस में 25% से 35% तक मीथेन और 10% तक नाइट्रोजन तथा लगभग 6% कार्बन मोनोआक्साइड होती है। इसमें कुछ मात्रा गैसीय हाइड्रोकार्बनों की भी होती है। इस गैस का उपयोग मुख्य रूप से घरों और उद्योगों में किया जाता है। आजकल इस गैस के स्थान पर अधिकतर प्राकृतिक गैस प्रयोग की जाने लगी है। इससे न तो धुआं निकलता है, और न ही राख।

वाटर गैस हाइड्रोजन और कार्बन मोनोआक्साइड का मिश्रण होती है। इसे लाल गर्म कोक पर भाप गुजारकर बनाया जाता है। इस गैस का उद्योगों में प्रयोग किया जाता है। इसका रंग हल्का नीला होता है। इस गैस के साथ यदि कोल गैस मिला दी जाए, तो इस मिश्रण का नाम टाउन गैस पड़ जाता है।

तेल गैस के निर्माण के लिए कच्चे तेल का भंजन (crack) किया जाता है। इस गैस में अशुद्धियां बहुत ही कम होती हैं। इसमें मुख्य रूप से मीथेन, एसिटलीन और बैंजीन होती है। इसे टाउन गैस के साथ मिश्रित करके शहरों में भेजा जाता है। विकसित देशों में तो गैस की पाइप लाइन ठीक उसी प्रकार की होती है जैसी कि हमारे देश में पानी की पाइप लाइन होती है। अब तो हमारे देश में भी कुछ शहरों में गैस की पाइप लाइन पड़ गई है।

क्या सागर से पीने का पानी प्राप्त हो सकता है?

हम सभी जानते हैं कि सागर का पानी खारा होता है। पानी का यह खारापन उसमें उपस्थित लवणों के कारण होता है। सागर के विभिन्न स्थानों पर लवणों की मात्रा अलग-अलग होती है। औसतन सागर के पानी के 1000 भाग में 35 भाग लवण होते हैं। अब प्रश्न उठता है कि क्या हम इस पानी से लवणों को अलग करके इसे पीने योग्य बना सकते हैं।

संसार के बहुत से स्थानों पर लवणयुक्त पानी से पीने का पानी ऊंचे पैमाने पर बनाया जाता है लेकिन समुद्र से पीने का पानी प्राप्त करना काफी महंगा प्रक्रम है। फिर भी पीने के पानी की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को देखते हुए वैज्ञानिक ऐसी विधियों का विकास करने में लगे हुए हैं, जिससे पीने का पानी कम कीमत पर प्राप्त किया जा सके।

समुद्र से पीने का पानी प्राप्त करने के कई तरीके हैं। एक तरीके में पानी को उबालकर और भाप को ठंडा करके शुद्ध पानी प्राप्त किया जाता है। इस कार्य के लिए नाभिकीय ईंधनों से या सूर्य की ऊर्जा से प्राप्त होने वाली ऊष्मा को प्रयोग में लाया जाता है। इस तरीके में पानी तो वाष्पित हो जाता है और लवण नीचे रह जाते हैं।

विद्युत ऊर्जा को प्रयोग में लाकर भी समुद्र के पानी को पीने योग्य बनाया जा सकता है। इस तरीके में जब समुद्र के पानी में विद्युत धारा प्रवाहित की जाती है तो लवणों के धनात्मक आयन (ions) एक दिशा में और ऋणात्मक आयन दूसरी दिशा में प्रवाहित होते हैं। वास्तव में लवण सोडियम और क्लोरीन के ही यौगिक होते हैं। विद्युत धारा गुजारने पर सोडियम के आयन कैथोड की तरफ आते हैं और क्लोराइड के आयन एनोड की तरफ जाते हैं। इस प्रकार पानी से लवण अलग हो जाता है और पानी पीने योग्य हो जाता है।

एक और विधि में समुद्र के नमकीन पानी को पीने योग्य बनाने के लिए बहुत पतली झिल्लियों (membranes) द्वारा छाना जाता है। इन झिल्लियों में बहुत ही सूक्ष्म छिद्र होते हैं, जिसमें से केवल पानी ही निकल सकता है और लवणों के कण नहीं निकल पाते। इस प्रकार इन झिल्लियों में से छना हुआ पानी पीने योग्य हो जाता है।

एक और विधि में समुद्र के पानी को बर्फ में परिवर्तित किया जाता है। बर्फ बनने के प्रक्रम में लवण पानी से अलग होने लगते हैं। बर्फ में से लवणों को अलग करके इसे पुनः पिघला लिया जाता है। इस प्रकार हमें शुद्ध पानी प्राप्त हो जाता है। इन सभी विधियों से शुद्ध पानी प्राप्त करने की एक और सर्वोत्तम विधि है। इस विधि को मल्टीस्टेज फ्लैश डिस्टीलेशन (multistage flash distillation) कहते हैं। इस विधि में पानी को अत्यधिक निर्वात (vacuum) और कम तापमान पर तीव्रता के साथ वाष्पित किया जाता है। हर बार की वाष्पीकरण क्रिया में निर्वात को अधिक और तापमान को और भी कम कर दिया जाता है। इस प्रकार से प्राप्त पानी लवणरहित हो जाता है।

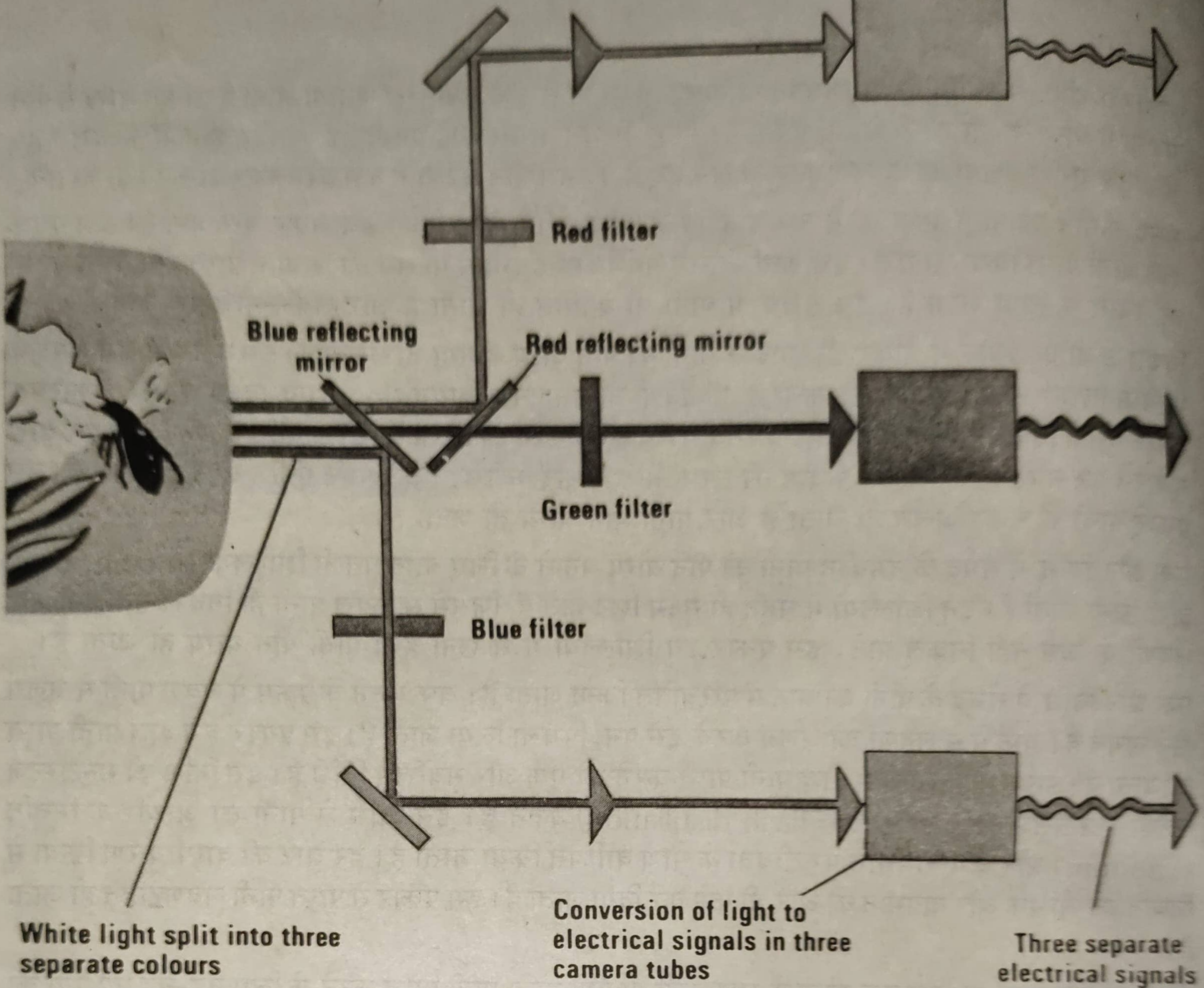
विश्व के कई देशों के वैज्ञानिक समुद्र के खारे पानी से पीने योग्य पानी प्राप्त करने के लिए नई-नई विधियों का विकास करने में लगे हुए हैं। समुद्र के पानी को पीने योग्य बनाने का सबसे बड़ा जल-संयंत्र कुवैत में लगा है।

रंगीन टेलीविजन कैसे काम करता है?

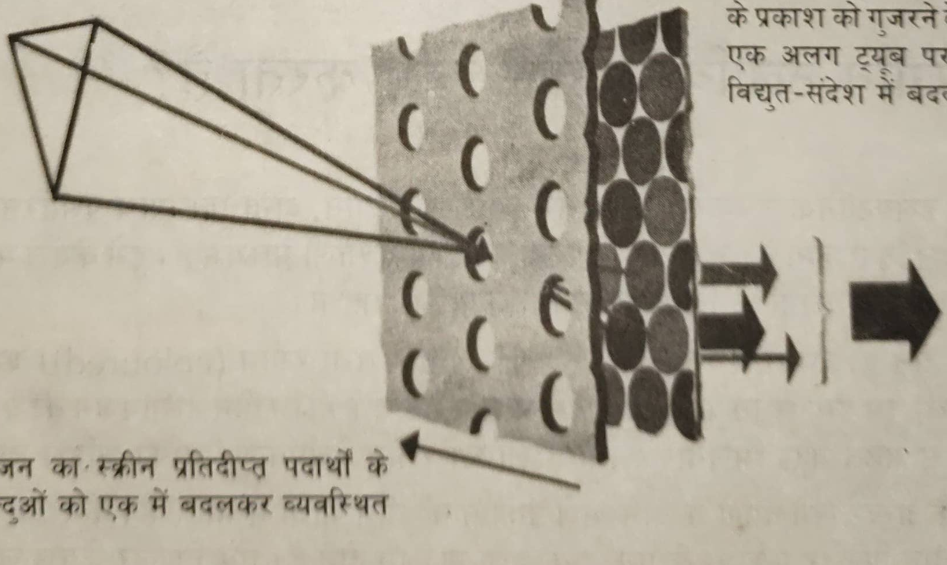
टेलीविजन एक ऐसा इलेक्ट्रॉनिक उपकरण है, जिसमें चित्र और ध्वनि, दोनों एक साथ प्रसारित किए जाते हैं तथा एक साथ प्राप्त किए जाते हैं। मनोरंजन का यह बड़ा प्रभावशाली माध्यम है। इसे केवल मनोरंजन के लिए ही नहीं बल्कि शिक्षात्मक कार्यों के लिए भी प्रयोग किया जा रहा है।

टेलीविजन दो प्रकार के होते हैं: श्याम-श्वेत (black and white) तथा रंगीन (coloured)। श्याम-श्वेत टेलीविजन की कार्य-प्रणाली तुम इस पुस्तक माला के प्रथम भाग में पढ़ चुके हो। रंगीन टेलीविजन की कार्य-प्रणाली श्याम-श्वेत टेलीविजन से बहुत कुछ मिलती-जुलती है लेकिन रंगीन टेलीविजन काफी जटिल होता है।

रंगीन टेलीविजन कैमरे के अन्दर लगे दर्पण से आने वाले प्रकाश को तीन भागों में बांटते हैं। कैमरे के अन्दर तीन फिल्टर लगे होते हैं। ये तीन फिल्टर प्रकाश के एक-एक भाग के लिए होते हैं। एक फिल्टर केवल लाल रंग को



रंगीन टेलीविजन में विशिष्ट दर्पणों तथा फिल्टरों की सहायता से प्रकाश को रंगों के समुचित अनुपातों में विभाजित किया जाता है। दर्पण अपने निजी रंगों का परावर्तन कर देते हैं तथा शेष रंगों को अपने में से गुजर जाने देते हैं। जबकि फिल्टर केवल अपने ही रंग के प्रकाश को गुजरने देते हैं। प्रत्येक रंग को कैमरे की एक अलग ट्यूब पर डाला जाता है, जिससे यह विद्युत-संदेश में बदल जाता है।



रंगीन टेलीविजन का स्क्रीन प्रतिदीप्त पदार्थों के तीन-तीन बिन्दुओं को एक में बदलकर व्यवस्थित होता है।

अपने में से गुजरने देता है, दूसरा फिल्टर केवल नीले प्रकाश को तथा तीसरा फिल्टर केवल हरे प्रकाश को जाने देता है। प्रत्येक रंग अलग-अलग कैमरा-ट्यूबों पर गिरता है। प्रत्येक ट्यूब में एक अलग ग्लास प्लेट और इलेक्ट्रॉन किरणावली या बीम (beam) होती है। ट्यूबों से तीन सिगनल प्रेषित्र (transmitter) में पहुंचते हैं।

रंगीन टेलीविजन का प्रेषित्र इन तीनों संदेशों को मिलाकर एक कर देता है। इस मिले हुए संदेश के साथ एक श्याम-श्वेत संदेश और जोड़ दिया जाता है। उसके पश्चात् संदेश को प्रसारित करने वाले एण्टीना में भेज दिया जाता है। वहां से यह संदेश यात्रा करता हुआ हमारे टेलीविजन तक पहुंचता है।

रंगीन टेलीविजन सेट में तीन इलेक्ट्रॉन किरणों का प्रयोग किया जाता है। एक इलेक्ट्रॉन किरण लाल रंग के लिए, दूसरी नीले रंग के लिए और तीसरी हरे रंग के लिए होती है। रंगीन टेलीविजन का पर्दा लगभग 12.5 लाख प्रकाश संवेदी बिन्दुओं (light sensitive dots) से ढका रहता है। ये प्रकाश संवेदी बिंदु तीन के समूहों में व्यवस्थित होते हैं। प्रकाश संवेदी एक ऐसा पदार्थ होता है, जो इलेक्ट्रॉन बीम पड़ने पर प्रकाश उत्सर्जित (emit) करता है। प्रकाश संवेदी बिंदुओं में एक बिंदु लाल, दूसरा हरा तथा तीसरा नीला प्रकाश पैदा करता है। इस प्रकार नीला प्रकाश संवेदी बिंदु नीले रंग का प्रकाश पैदा करता है, जब उस पर नीले रंग को लाने वाली इलेक्ट्रॉन बीम पड़ती है। यही बात दूसरे रंगों के लिए भी होती है। प्रत्येक बिंदु के समूह द्वारा पैदा होने वाले रंग की तीव्रता उस पर पड़ने वाली इलेक्ट्रॉन बीम की तीव्रता पर निर्भर करती है। यही तीनों रंग विभिन्न अनुपातों में मिलकर मूल चित्र को टेलीविजन के पर्दे पर प्रस्तुत करते हैं।

वीडियो टेलीफोन कैसे काम करता है?

वीडियो टेलीफोन एक ऐसी संचार-व्यवस्था है, जिसमें एक साथ बातचीत और चित्र दोनों ही प्रेषित होते हैं तथा प्राप्त होते हैं। दूसरे शब्दों में, इस व्यवस्था द्वारा एक ओर बैठा हुआ व्यक्ति दूसरी ओर बैठे हुए व्यक्ति की तस्वीर देख सकता है तथा साथ ही उसकी बात भी सुन सकता है। इसी प्रकार दूसरी ओर का व्यक्ति भी इस ओर के व्यक्ति की तस्वीर देख सकता है और बात सुन सकता है। क्या तुम जानते हो कि यह टेलीफोन प्रणाली कैसे काम करती है?

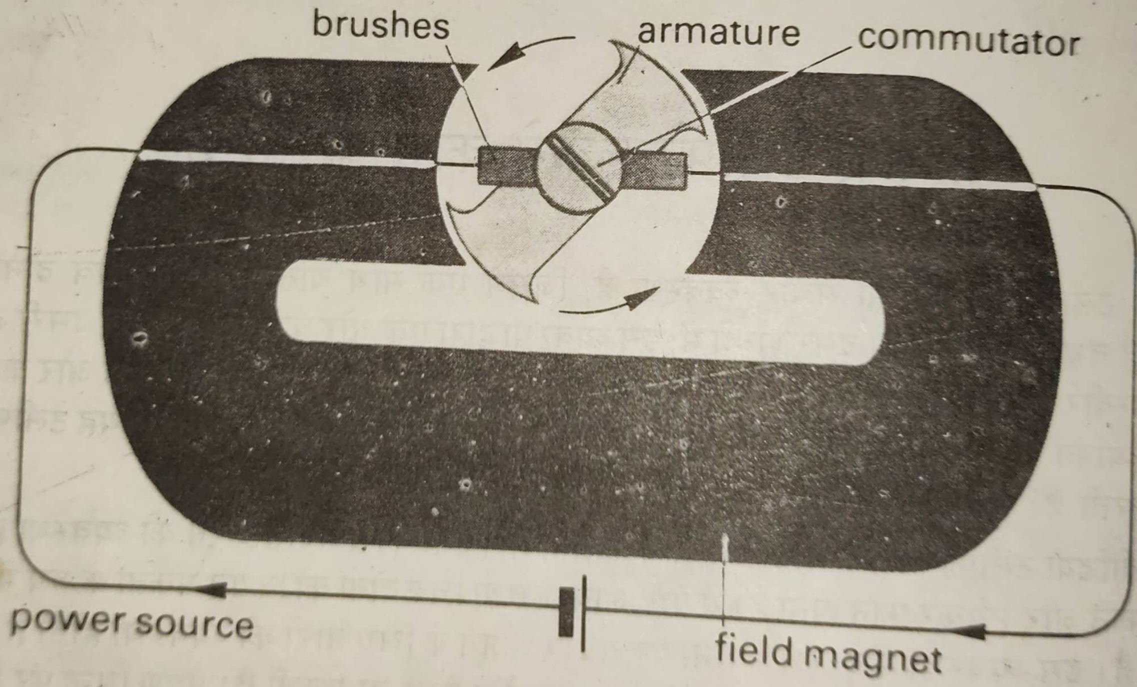
एक समूची वीडियो टेलीफोन व्यवस्था में एक कैमरा होता है, चित्रों को प्रदर्शित करने की व्यवस्था होती है और एक माइक्रोफोन और स्पीकर फोन होता है। ये यंत्र, आवाज तथा चित्र दोनों को विद्युत संकेतों के रूप में भेजते तथा प्राप्त करते हैं। इस व्यवस्था में दूरस्थ स्थानों पर संदेश भेजने के लिए तारों की व्यवस्था होती है। इसमें एक स्विचिंग पद्धति भी होती है, जिसके द्वारा मनचाहे रूप में तस्वीर देखी जा सकती है। प्रेषण बिन्दु पर आवाज और तस्वीर दोनों ही विद्युत संदेशों में बदल जाती हैं। ये संदेश संचरण व्यवस्था द्वारा दूरस्थ स्थान तक प्रेषित हो जाते हैं। ग्राही (receiver) पर ये संदेश फिर से ध्वनि और तस्वीर में बदल जाते हैं, जो दूरस्थ स्थान पर बैठे हुए व्यक्ति द्वारा सुन और देख लिए जाते हैं। यही प्रक्रम दूसरी ओर के व्यक्ति की आवाज और चित्र के लिए होता है। इस प्रकार आवाज और चित्रों का आदान-प्रदान होता रहता है।

वीडियो टेलीफोन व्यवस्था का विकास सन् 1927 में एच. ई. ईव्स (H.E. Ives) द्वारा किया गया था। वे पहले व्यक्ति थे, जो वाशिंगटन डी.सी. से न्यूयार्क तक एक ओर से प्रतिबिम्ब भेजने में सफल हुए। उसी साल न्यूजर्सी से

न्यूयार्क तक रेडियो तरंगों द्वारा सदेश भेजने में सफलता प्राप्त की गई। इन प्रयोगों का उद्देश्य, जैसे भी हो मनुष्य के चेहरे को प्रेषित करके उसे पुनः उत्पादित करना था। सन् 1930 में ईव्स महोदय ने न्यूयार्क शहर में दोनों ओर से वीडियो संदेश भेजने में सफलता प्राप्त की। सन् 1936 से 1940 तक जर्मन पोस्ट आफिस ने अंतर्नगरीय जनता वीडियो टेलीफोन सेवा जारी रखी। इसके अंतर्गत बर्लिन, लिपजिंग, न्युरेमबर्ग और म्यूनिख शहरों में बैठे कोई दो व्यक्ति अपनी कॉल बुक करा सकते थे। इसी प्रकार की प्रणाली का सन् 1961 में रूस में उद्‌घाटन किया गया। इस सेवा की व्यवस्था रूस के आठ शहरों में थी, जिनमें मास्को, कीव और लेनिनग्राद भी सम्मिलित थे।

सन् 1960 के दशक से विश्व की अधिकतर संचार संस्थाएं इस बात की संभावना पर कार्य करती रही हैं कि क्या वीडियो टेलीफोन सेवा को व्यावसायिक रूप दिया जा सकता है? ऐसी एक सीमित सेवा सन् 1970 में बैल सिस्टम (Bell System) द्वारा आरम्भ की गई थी। इस सेवा के अन्तर्गत साधारण टेलीफोन तारों को वीडियो संदेश भेजने के लिए प्रयोग में लाया गया था। वीडियो-पद्धति में दोनों ओर के प्रेषण के लिए तारों के दो जोड़ों की आवश्यकता होती थी। आरम्भ में यह सेवा शिकागों और पिट्सबर्ग के बीच में शुरू की गई थी। इस सेवा से लोगों को जो आशाएं थीं, वे पूरी न हो पाईं। आजकल भी वीडियो टेलीफोन पद्धतियों पर विश्व के कई देशों में विकास कार्य किया जा रहा है।

विद्युत का पंखा कैसे काम करता है?



विद्युतचालित पंखा आज शहरी जीवन का एक अभिन्न अंग बन चुका है। गर्मियों और बरसातों में इसके माध्यम से निकलती वायु से शरीर को ठंडक मिलती है। क्या तुम जानते हो कि पंखा कैसे काम करता है?

विद्युत पंखा एक ऐसा प्रक्रम है, जो विद्युत ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में बदल देता है। यह विद्युत धारा के चुम्बकीय प्रभावों (magnetic effects) के आधार पर काम करता है।

विद्युत पंखे का सबसे आवश्यक अंग एक विद्युत मोटर होती है। पंखे की कार्य प्रणाली जानने से पहले मोटर की कार्य प्रणाली जानना अत्यावश्यक है।

विद्युत मोटर में एक आयताकार तारों की कुंडली (coil) होती है, जिसे आर्मेचर (armature) कहते हैं। इसका संबंध एक धुरी (spindle) के साथ होता है। यह कुंडली एक शक्तिशाली चुम्बक के ध्रुवों के बीच में रखी होती है। जब इस कुंडली से विद्युत धारा गुजरती है तो विद्युत के चुम्बकीय प्रभाव के कारण यह घूमने लगती है। इस मोटर में एक स्पिलिट रिंग कम्युटेटर (split ring commutator) लगा होता है, जिसके साथ दो कार्बन ब्रुश भी लगे होते हैं।

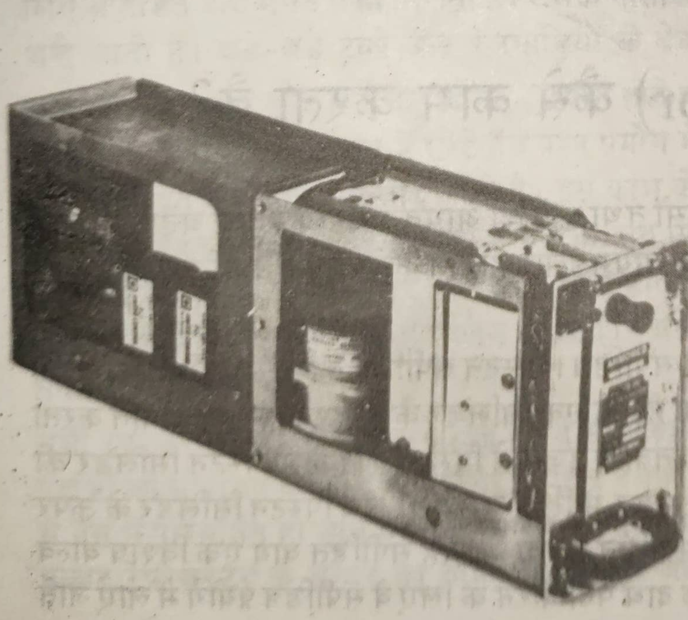
मोटर के आर्मेचर का संबंध धातु की एक शैफ्ट के साथ कर दिया जाता है। शैफ्ट के दूसरे सिरे पर हल्की धातु से बनी तीन पंखुड़ियां लगा दी जाती हैं। जब मोटर घूमती है तो ये पंखुड़ियां भी घूमती हैं। ये पंखुड़ियां एक ओर से हवा को खींचती हैं तथा दूसरी ओर हवा को फेंकती हैं। इस प्रकार एक विद्युत पंखा हवा की धाराओं की गति को बढ़ा देता है।

पंखे की गति को कम या अधिक करने के लिए एक नियंत्रक (regulator) प्रयोग किया जाता है। इस नियंत्रक में एक प्रतिरोध (resistance) होता है, जो पंखे में लगी कुंडली में से बहने वाली विद्युत धारा को कम या अधिक करता है।

सामान्यतः विद्युत पंखे दो प्रकार के होते हैं। एक वे जो छत पर लगाए जाते हैं तथा दूसरे नीचे रखने वाले, जिन्हें 'टेबल फैन' (table fan) कहते हैं। घरेलू विद्युत के पंखे 60 से 120 वॉट तक विद्युत शक्ति प्रयोग करते हैं। रसोईघरों, सिनेमाघरों तथा गोदामघरों में से दूषित वायु को बाहर निकालने के लिए हम एक तीसरे प्रकार का पंखा प्रयोग करते हैं जिसे एक्स्हास्ट (exhaust fan) कहते हैं। इन पंखों की पंखुड़ियां इस प्रकार से बनाई जाती हैं कि वे हवा को आगे से खींचकर पीछे की ओर धकेलती हैं। इन पंखों का उपयोग कूलरों में भी किया जाता है।

अब प्रश्न उठता है कि पंखे की हवा से हमें ठंडक क्यों महसूस होती है। पंखे की हवा वायु की गति को बढ़ा देती है, जिससे शरीर पर उपस्थित पसीने का वाष्पन (evaporation) बढ़ जाता है। हम जानते हैं कि वाष्पन से ठंडक पैदा होती है। यही कारण है कि पंखे की हवा से हमें ठंडक का अनुभव होता है।

ब्लैक बॉक्स (Black Box) क्या है?



जब भी कोई विमान-दुर्घटना होती है तो अक्सर उसके मलबे में विमान के ब्लैक-बॉक्स की खोज की जाती है। 23 जून, 1985 को एयर इण्डिया के विमान 'कनिष्क' के साथ हुई दुर्घटना के बारे में तुमने अवश्य सुना होगा। तुम इस बात से भी भली भांति परिचित होगे कि किस प्रकार क्रैब नामक रोबोट ने इस विमान के ब्लैक-बॉक्स को सागर की गहराई से खोज निकाला था। क्या तुम जानते हो कि यह ब्लैक-बॉक्स क्या होता है तथा विमान-दुर्घटना के विषय में किन-किन तथ्यों पर प्रकाश डालता है?

अन्तर्राष्ट्रीय उड़ानों के अधिकतर विमानों में सन् 1960 के बाद दो बड़े ही महत्त्वपूर्ण यंत्र प्रयोग में लाए जाने लगे हैं। इन यंत्रों को डिजिटल फ्लाइट डाटा रिकार्डर (Digital Flight Data Recorder) और कॉकपिट वाइस रिकार्डर (Cockpit Voice Recorder) कहते हैं। इन दोनों यंत्रों को सुरक्षित रखने के लिए स्टील के दो अलग-अलग बक्सों में बंद कर दिया जाता है। बक्सों में बंद इन्हीं यंत्रों को ब्लैक बॉक्स के नाम से जाना जाता है। स्टील के ये बक्स ऐसे रोधी पदार्थों से बनाए जाते हैं, जो एक हजार डिग्री सेल्सियस के तापमान को आधे घंटे तक सहन कर सकते हैं। भारी भार के झटकों से भी इन पर कोई असर नहीं पड़ता। इनमें प्रयुक्त होने वाला टेप समुद्र के पानी के सम्पर्क में आने पर भी दो दिन तक खराब नहीं होता। फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर सामान्यतः यान के पिछले भाग में रखा जाता है, जबकि कॉकपिट वाइस रिकार्डर कॉर्कपिट में रखा जाता है।

फ्लाइट डाटा रिकार्डर एक प्रकार का मल्टीचैनल रिकार्डर होता है। इसमें प्रयुक्त होने वाला टेप शक्तिशाली और लचीली स्टेनलैस स्टील से बना होता है। इस टेप की लम्बाई लगभग छः हजार फुट होती है, जो 25 घंटे की उड़ान के आंकड़े अंकित कर सकती है। यह यंत्र यान का तापमान, वेग, उड़ने की दिशा,ऊंचाई, इंजन की आवाज, यान में लगे यंत्रों का पाठ्यांक, वायु का वेग आदि जैसे 64 पैरामीटरों के विषय में आंकड़े रिकार्ड करता रहता है। ये ही सब आंकड़े यान के दुर्घटनाग्रस्त होने पर महत्त्वपूर्ण सूचनाएं देते हैं। इस यंत्र के टेप से आंकड़ों को प्राप्त करने के लिए कम्प्यूटर को इतने अधिक पैरामीटरों का विश्लेषण करने में कई सप्ताह लग सकते हैं।

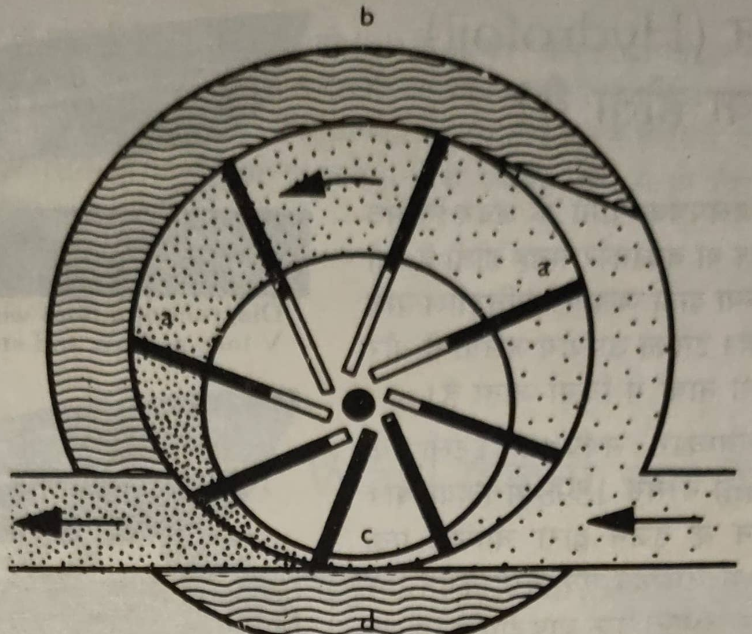
कॉकपिट वाइस रिकार्डर इस प्रकार का टेपरिकार्डर होता है, जिसमें एक चुम्बकीय टेप चलता है। यह यंत्र कॉकपिट में उपस्थित चालक दल के सदस्यों में हो रही आपसी बातचीत तथा नियंत्रण कक्ष से होने वाले वार्तालाप को अंकित करता रहता है। विमान में होने वाले विस्फोट की आवाज भी इसमें अंकित हो जाती है। इन आवाजों को रिकार्डर तक भेजने के लिए कॉकपिट में माइक्रोफोन लगे होते हैं। इस यंत्र के टेप में केवल पिछले आधे घंटे का ही लेखा-जोखा रहता है। इससे पहले की बात अपने आप ही टेप से मिटती जाती है। इस प्रकार इस यंत्र में एक ही टेप बार-बार प्रयोग होता रहता है।

यदि वायुयान दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है तो दुर्घटना के कारणों का पता लगाने के लिए इन दोनों यंत्रों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। इन दोनों यंत्रों में अंकित सूचनाओं को प्राप्त किया जाता है। उनका आपस में तालमेल बिठाकर विमान की दुर्घटना के कारणों का पता लगाया जाता है।

संपीडित्र (Compressor) कैसे काम करता है?

संपीडित्र या कंप्रैसर एक ऐसी मशीन है, जो वायु गैसों तथा द्रवों का आयतन घटाकर दाब बढ़ाने के लिए काम आती है। इस मशीन द्वारा तरल पदार्थों का दाब वायुमंडलीय दाब से कई गुना अधिक किया जा सकता है। क्या तुम जानते हो कि संपीडित्र कैसे काम करता है?

संपीडित्र दो प्रकार के होते हैं: पिस्टन संपीडित्र और रोटरी संपीडित्र। पिस्टन संपीडित्र का ही सबसे अधिक प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के संपीडित्र में एक पिस्टन होता है, जो एक सिलिंडर के अन्दर ऊपर-नीचे गति करता है। इस पिस्टन की गति लगभग उतनी होती है जितनी अन्तर्दहन इंजन में पिस्टन की। जब पिस्टन सिलिंडर की तली की ओर गति करता है तो वायु इसके ऊपर के खाली स्थान में खिंच जाती है। जब पिस्टन सिलिंडर के ऊपर की ओर जाता है तो यह सिलिंडर में उपस्थित वायु को संपीडित करता है। यह संपीडित वायु एक विशेष वाल्व द्वारा रबर की नलिका या होस में भेज दी जाती है। अधिक दाब पैदा करने के लिए वे संपीडित्र प्रयोग में लाए जाते



हैं, जिनमें कई सिलिंडर लगे होते हैं। संपीडित वायु एक सिलिंडर से दूसरे सिलिंडर में आती है और हर बार संपीडित होकर इसका दाब बढ़ता जाता है।

रोटरी प्रकार के वायु संपीडित्र पिस्टन संपीडित्रों की तुलना में कम शक्तिशाली होते हैं। एक रोटरी संपीडित्र में एक घूमता हुआ पंखा होता है, जो वायु को कमानी के रूप में व्यवस्थित धातु द्वारों से अन्दर धकेलता है। प्रवेश बिन्दु पर ये वायु द्वार चौड़े होते हैं लेकिन निकास बिन्दु पर ये काफी संकुचित होते हैं। इस संरचना के कारण इन द्वारों से प्रवाहित होने वाली वायु संपीडित हो जाती है।

उच्च दाब की संपीडित वायु के बहुत से उपयोग हैं। संपीडित वायु को चट्टान तोड़ने वाली न्यूमैटिक ड्रिलों (pneumatic drills) में प्रयोग किया जाता है। मोटर गाड़ियों के गेराजों में प्रयोग होने वाले शक्तिचालित रिंचों में भी अति उच्च दाब की संपीडित वायु की आवश्यकता होती है। कीटनाशक औषधियां छिड़कने वाले पम्पों और पेण्ट करने वाले पम्पों में भी संपीडित वायु प्रयोग की जाती है। अधिकतर पेट्रोल पम्पों पर पहियों में हवा भरने के लिए संपीडित वायु मुफ्त में ही मिलती है। समुद्री गोताखोरों के सूटों और हैल्मेटों में भी उच्च दाब की संपीडित वायु भरी जाती है। बड़े-बड़े ट्रकों और रेलगाड़ियों के ब्रेक भी संपीडित वायु द्वारा प्रचालित किए जाते हैं।

साइकिल के टायरों और खेल के मैदानों में प्रयोग होने वाली गेंदों में भी वायु को संपीडित करके भरा जाता है। इस काम के लिए संपीडित्र के रूप में छोटे हैंड पम्प प्रयोग में लाए जाते हैं। वायुयान के जेट-इंजनों में ईंधन जलाने के लिए संपीडित वायु प्रयोग में लाई जाती है। इस काम के लिए प्रयोग होने वाले संपीडित्रों में एक सिलिंडर के अन्दर बहुत से ब्लेड लगे होते हैं। इन ब्लेडों में एक के बाद एक ब्लेड स्थिर और गतिशील होता है। जिस स्थान पर वायु प्रवेश करती है, उस स्थान पर लगे ब्लेड छोटे होते हैं तथा दूर-दूर होते हैं। पीछे की ओर के ब्लेड लम्बे और एक-दूसरे के पास-पास होते हैं। ब्लेड इस प्रकार बने होते हैं कि वे वायु को पीछे की ओर धकेलते हैं, जहां यह संपीडित हो जाती है।

सभी रेफ्रीजरेटरों में संपीडित्र लगे होते हैं। ये संपीडित्र अमोनिया, इथाइल क्लोराइड और फ्रीऑन जैसे प्रशीतक पदार्थों को संपीडित करके द्रव अवस्था में बदल देते हैं। ये द्रवित पदार्थ बहुत-सी बन्द नलियों में जाते हैं और फिर से गैस में परिवर्तित हो जाते हैं। इस समस्त प्रक्रम के अन्तर्गत वे ऊष्मा अवशोषित करके ठंडक पैदा करते हैं। इस प्रकार रेफ्रीजरेटर के अन्दर का तापमान कम हो जाता है, जिससे खाद्य पदार्थ सुरक्षित रहते हैं।

हाइड्रोफोइल (Hydrofoil) यान क्या होता है?

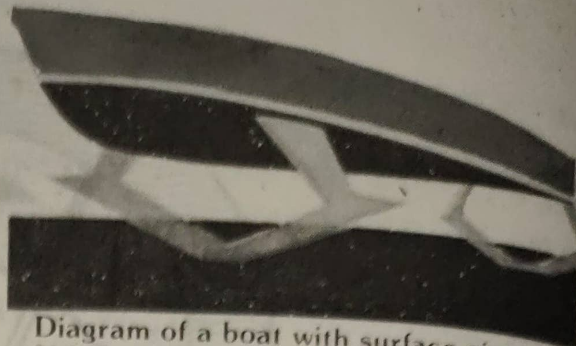


Diagram of a boat with surface piercing V-foils at bow and stern.

हाइड्रोफोइल या जलपत्रक पानी के अंदर निर्मित एक ऐसी समतल या वक्राकार सतह होती है, जो अपनी एक विशेष प्रक्रिया द्वारा जल पर गतिशील यान को ऊपर उठाए रहती है। इनका उपयोग जलयानों और तेज गति से चलने वाली नावों में किया जाता है।

हाइड्रोफोइल का आविष्कार सर्वप्रथम इटली के फोरलनिनि (Forlanini) ने सन् 1898 में किया था। सन् 1918 में वायुयान के इंजन द्वारा चालित एक हाइड्रोफोइल ने विश्व में वेग का एक नया कीर्तिमान स्थापित किया था। सन् 1950 तक हाइड्रोफोइलों का उपयोग बहुत अधिक प्रचलन में नहीं था। सन् 1950 के बाद सैनिक और व्यापारिक यानों में इनका तेजी से प्रयोग होने लगा। सन् 1970 तक हाइड्रोफोइलयुक्त यान संसार के बहुत से भागों में प्रयोग होने लगे थे। इनकी गति 80 नाट (knot) तक थी। सन् 1950 के दौरान अमरीका, कनाडा और रूस में हाइड्रोफोइलयुक्त यानों का निर्माण होने लगा था। प्रश्न उठता है कि हाइड्रोफोइल के काम करने की प्रक्रिया क्या है?

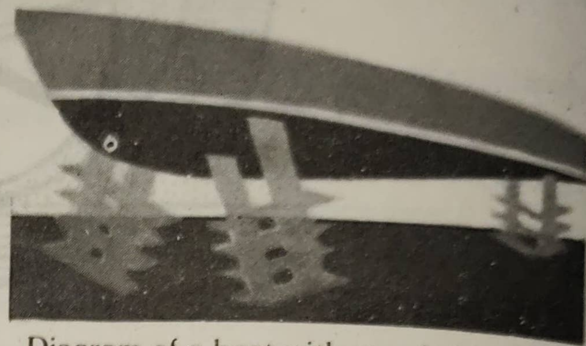


Diagram of a boat with stop-ladder foils at bow and stern.

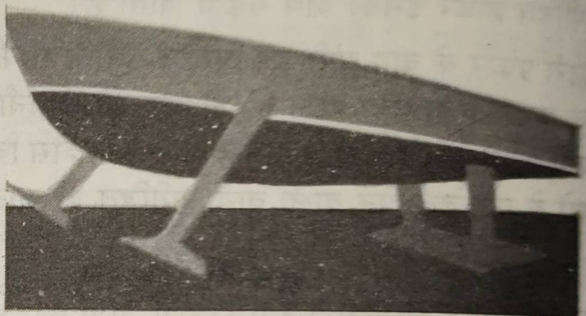


Diagram of one type of incidence controlled foil system.

हम जानते हैं कि पानी वायु से 775 गुना अधिक भारी होता है। अतः हाइड्रोफोइल के छोटे-छोटे पंख भी भारी बोझ संभाल सकते हैं। चूंकि पानी में चलने वाली नावों पर प्रायः काफी बोझ होता है, इसीलिए इन नावों के हल (hull) शक्तिशाली इस्पात से बनाए जाते हैं।

हाइड्रोफोइल का काम यान को जल से ऊपर उठाये रखना है ताकि यान को तेज गति से चलाने के लिए कम शक्ति की आवश्यकता पड़े, क्योंकि इस क्रिया में घर्षण (friction) के कारण उत्पन्न जल का प्रतिरोध (resistance) कम हो जाता है। हाइड्रोफोइल का एक दूसरा लाभ यह भी है कि इसका प्रयोग अशांत जल में भी बड़ी सरलता से किया जा सकता है और इसकी गति पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

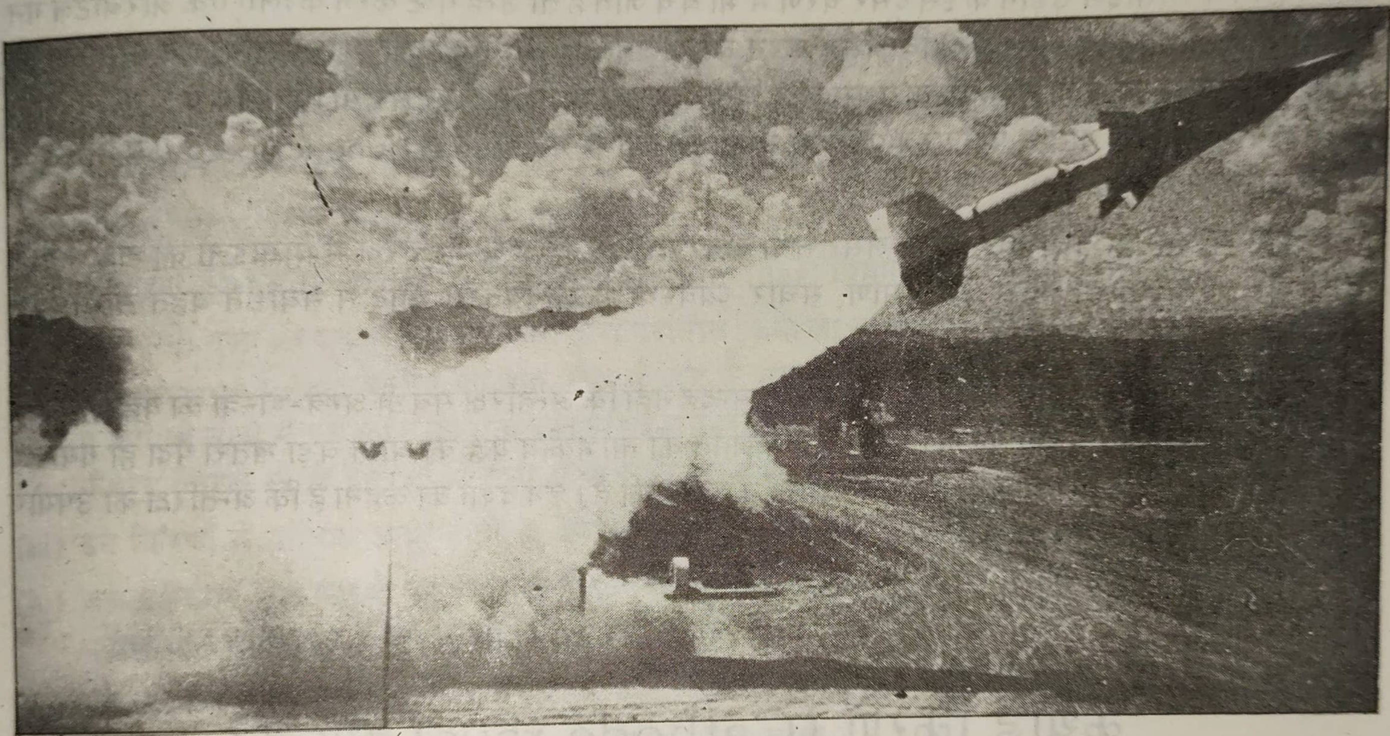


A hydrofoil craft skimming across the sea at high speed—the craft is lifted above the water on the foils.

हाइड्रोफोइल का आकार ऐसा होता है कि पानी के बहाव से यान में एक उठाव आ जाता है। जैसे-जैसे यान का वेग बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे यान का हल (पेटा) ऊपर उठता जाता है। इस दशा में पानी के सम्पर्क में केवल हाइड्रोफोइल को साधने वाले स्ट्रट (struts) तथा प्रोपैलर शेफ्ट ही होते हैं।

हाइड्रोफोइल कई प्रकार के होते हैं। कुछ यानों में वी (V) के आकार के हाइड्रोफोइल लगे होते हैं तथा कुछ में परिवर्तनशील कोण के हाइड्रोफोइल लगे होते हैं। इन सभी का कार्य यान को जल से ऊपर उठाना है ताकि यान की गति पर पानी का प्रतिरोध बहुत कम हो जाए। हाइड्रोफोइलयुक्त नावें बहुत तेजी से चल सकती हैं। आजकल हाइड्रोफोइलों का उपयोग नौसेना तथा व्यापारिक जलयानों में व्यापक रूप से हो रहा है।

स्टार वार (Star War) योजना क्या है?



स्टार वार अमरीकी सरकार की एक ऐसी युद्ध-योजना है, जिसका उद्देश्य वहां के नागरिकों तथा उससे संबंधित देशों को शत्रु देशों के नाभिकीय मिसाइलों (Nuclear missiles) के आक्रमण के खतरे से सुरक्षा प्रदान करना है। स्टार वार योजना की घोषणा 23 मार्च, 1983 को अमरीका के राष्ट्रपति श्री रोनाल्ड रीगन ने की थी। स्टार वार का वास्तविक नाम एस.डी.आई. अर्थात् स्ट्रेटेजिक डिफेंस इनिशिएटिव (strategic defence initiative) है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत उन तकनीकी क्षमताओं का विकास किया जायेगा, जो संयुक्त राज्य अमरीका के विकास के इतिहास में सबसे महत्त्वपूर्ण सिद्ध होंगी। इस योजना पर लगभग 26 अरब डालर का खर्च आने का अनुमान है।

यह एक दीर्घकालीन योजना है। इस योजना के अन्तर्गत ऐसी युद्ध-पद्धतियों और प्रक्रमों का विकास किया जायेगा, जिनके द्वारा नाभिकीय मिसाइलों का अन्तरिक्ष में उड़ान भरते ही या उड़ान के रास्ते में अथवा नियत स्थान पर हमला करने से पहले ही पता लगा लिया जाएगा और उन पर हमला करके उन्हें नष्ट कर दिया जायेगा। मिसाइलों के पता लगाने तथा नष्ट करने का यह कार्य अन्तरिक्ष में उड़ते संयंत्रों और उपग्रहों की सहायता से किया जायेगा।

मिसाइलों को नष्ट करने के लिए अमरीका के वैज्ञानिकों ने कई प्रकार की सुरक्षा-प्रणालियां विकसित करने की योजनाएं बनाई हैं। इनमें से एक प्रणाली में लेसर किरणों को प्रयोग में लाया जायेगा। लेसर किरणें बहुत ही शक्तिशाली किरणें होती हैं, जो बिना फैले एक सेकण्ड में तीन लाख किमी. की दूरी तय कर लेती हैं। यह गति अन्तरिक्ष में उड़ने वाले मिसाइलों की गति से लगभग 50 हजार गुना अधिक है। इन किरणों की सहायता से मिसाइलों का पल भर में पता लगाया जा सकेगा। मिसाइलों का पता लगाकर रासायनिक तथा गैस डायनामिक जैसे महाशक्तिशाली लेसरों के प्रयोग से उड़ान के आरम्भ में ही नष्ट कर दिया जायेगा। इस कार्य के लिए दूसरे लेसर भी प्रयोग में लाये जा सकेंगे।

यदि कोई मिसाइल उड़ान भरते समय ही नष्ट किये जाने से बच जाती है तो उसके विनाश के लिए अनाभिकीय अस्त्रों को प्रयोग में लाया जा सकेगा। उनसे उड़ान के रास्ते में मिसाइल नष्ट की जा सकेगी। इस कार्य के लिए अवरक्त किरणों (infrared rays) पर आधारित नयी तकनीकों का विकास किया जायेगा।

यदि दुश्मन के मिसाइल उड़ान के इस दूसरे चरण में भी बच जाते हैं तो उन्हें नष्ट करने के लिए एक ऑरबीटल गन सिस्टम (orbital gun system) विकसित करने की योजना है। यह एक ऐसी प्रणाली होगी, जो मिसाइल को केवल अन्तिम चरण में ही नहीं बल्कि प्रथम और द्वितीय चरणों में भी नष्ट कर सकेगी। इस गन से 10 किमी. प्रति सेकण्ड से भी अधिक गति से प्रक्षेपास्त्र छोड़े जा सकते हैं। इनकी गतिज ऊर्जा (kinetic energy) से मिसाइलों को नष्ट किया जा सकेगा।

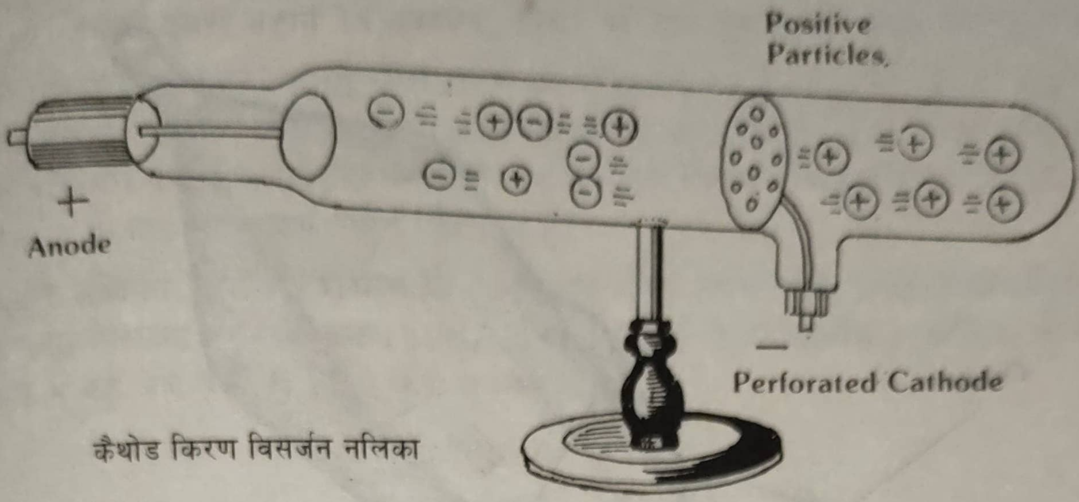
स्टार वार योजना के अन्तर्गत राडार, लेसर तथा अवरक्त किरणों द्वारा अन्तरिक्ष में मिसाइलों की टोह, गतिज ऊर्जा पर आधारित हथियारों का निर्माण, संचार-व्यवस्थाओं का विकास आदि से संबंधित बहुत से कार्यक्रम अमरीका ने आरम्भ कर दिये हैं।

इस योजना के परिणाम चाहे जो भी हों, इसमें कोई सन्देह नहीं कि अन्तरिक्ष संबंधी अस्त्र-शस्त्रों की यह दौड़ आम आदमी के लिए बहुत मंहगी पड़ेगी। इससे मानव जाति को नाभिकीय युद्ध का बहुत बड़ा खतरा पैदा हो गया है। कई देशों ने तो स्टार वार योजना पर रोक लगाने की मांग की है। इन देशों का कहना है कि अन्तरिक्ष का उपयोग शान्ति और मानव-विकास के लिए ही किया जाना चाहिए।

कैथोड किरणें (Cathode rays) क्या हैं?

कैथोड किरणें ऋण आवेशित इलेक्ट्रॉनों (negatively charged electrones) की धाराएं होती हैं। ये किरणें कैथोड से निकलती हैं, इसलिए इन्हें कैथोड किरणें कहते हैं।

कैथोड किरणों को पैदा करने के लिए एक कांच की नलिका प्रयोग की जाती है। इस नली के दोनों सिरों पर दो इलेक्ट्रॉड लगा दिए जाते हैं। इन इलेक्ट्रॉडों का संबंध उच्च वोल्टता के विद्युत स्रोत से कर दिया जाता है। जिस इलेक्ट्रॉड को विद्युत स्रोत के धनात्मक टर्मिनल (positive terminal) से जोड़ा जाता है, उसे एनोड (anode) कहते हैं तथा जिस इलेक्ट्रॉड को ऋणात्मक टर्मिनल (negative terminal) से जोड़ा जाता है, उसे कैथोड कहते हैं। कांच की इस नली का संबंध एक निर्वात पम्प (vacuum pump) से होता है ताकि नली के अन्दर का वायुदाब कम किया जा सके। जब नली में लगे इलेक्ट्रॉडों पर उच्च वोल्टता लगायी जाती है तथा निर्वात पम्प चलाकर अन्दर का दाब 10^{-3} मिमी. से कम किया जाता है तो नली में लगे कैथोड से एक प्रकार की किरणें निकलने लगती हैं। ये ही कैथोड किरणें हैं। इनके कारण कांच की नली की दीवारें एकदम से चमकने लगती हैं। कैथोड से



कैथोड किरण विसर्जन नलिका

निकलकर ये किरणें स्रोत की तरफ जाती हैं। प्रयोगों से पता चला है कि इन किरणों के गुण नलिका में उपस्थित गैस पर निर्भर नहीं करते। किरणों के ऋण आवेशित इलेक्ट्रॉनों का आवेश तथा द्रव्यमान (mass) सदैव ही एक जैसा रहता है। इन किरणों के कुछ विशेष गुण होते हैं,-जो निम्न प्रकार हैं–

(i) कैथोड किरणें सरल रेखाओं में चलती हैं।

(ii) ये किरणें कैथोड के तल की लम्बवत् (perpendicular) दिशा में उत्सर्जित होती हैं।

(इन दोनों गुणों को एक साधारण प्रयोग द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है। कैथोड किरण विसर्जन नलिका (discharge tube) में धातु का एक क्रॉस कैथोड के समानान्तर लगा दो। जब इस पर कैथोड किरणें पड़ेंगी तो नली में इस क्रॉस का एक प्रतिबिम्ब बन जाएगा। इस प्रतिबिम्ब से यह प्रदर्शित होता है कि कैथोड किरणें सीधी रेखाओं में तथा कैथोड की लम्बवत् दिशा में चलती हैं।)

(iii) इन किरणों में यांत्रिक ऊर्जा होती है, जिसके कारण ये कि णें दाब डालती हैं।

(iv) जब ये किरणें कुछ पदार्थों पर पड़ती हैं तो प्रतिदीप्ति (fluorescence) पैदा करती हैं। प्रतिदीप्ति का रंग पदार्थ के स्वभाव पर निर्भर करता है।

(v) जब ये किरणें किसी पदार्थ से टकराती हैं तो उसका तापमान बढ़ जाता है।

(vi) ये किरणें धातु की पतली चादरों के आर-पार निकल जाती हैं।

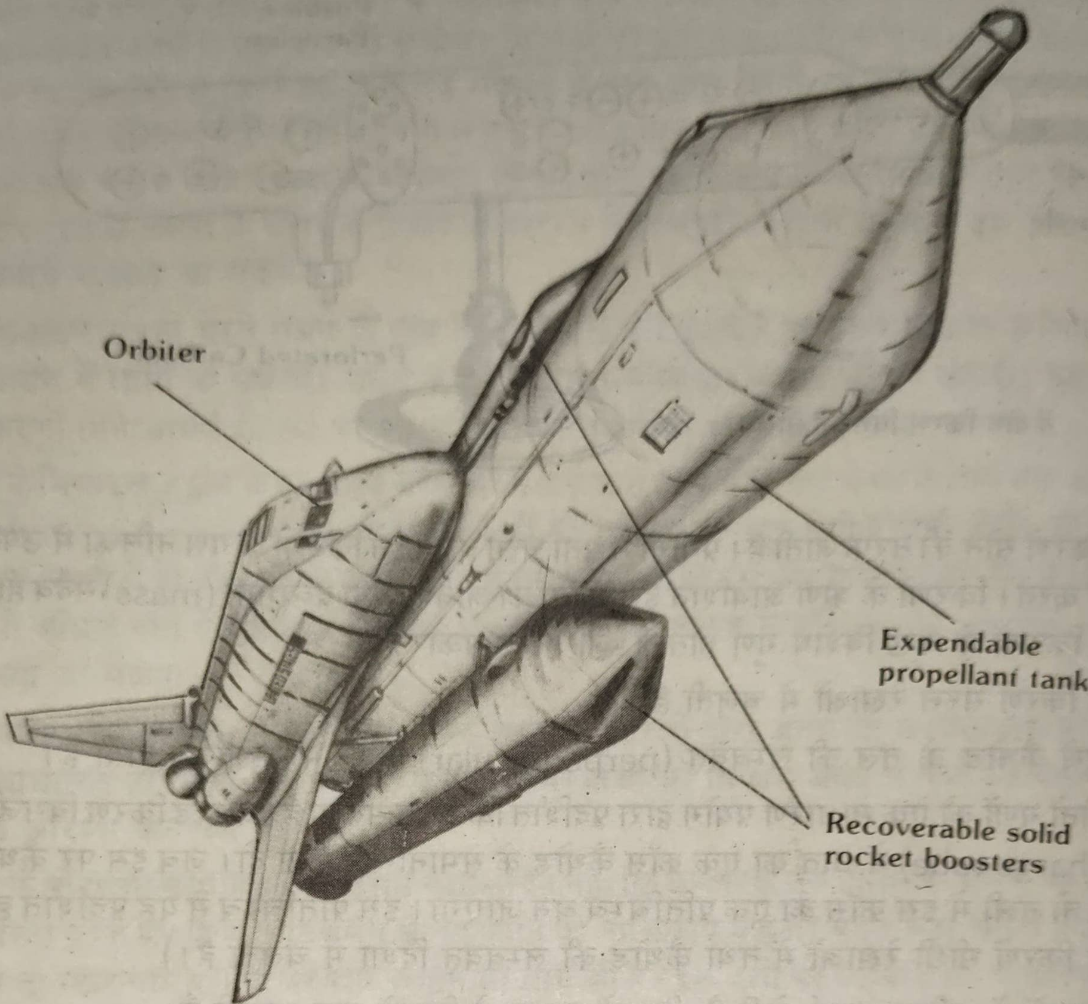
(vii) जिस गैस पर ये पड़ती हैं, उस गैस को आयनित (ionize) कर देती हैं।

(viii) इन किरणों का वेग प्रकाश के वेग का 1/3 से लेकर 1/10 तक होता है।

(ix) ये किरणें चुम्बकीय क्षेत्र द्वारा विक्षेपित (deflect) हो जाती हैं।

(x) ये किरणें विद्युत क्षेत्र द्वारा भी प्रभावित हो जाती हैं।

ये किरणें हमारे लिए बहुत उपयोगी हैं। जब ये किरणें प्लेटिनम या टंगस्टन जैसी धातुओं पर पड़ती हैं तो एक्स-किरणें पैदा होती हैं। एक्स-किरणें विज्ञान, उद्योग तथा चिकित्सा क्षेत्रों में बहुत ही उपयोगी हैं।



स्पेस शटल (Space shuttle) क्या है?

अमरीका द्वारा विकसित 'स्पेस शटल' एक ऐसा यान है, जिसे बार-बार अन्तरिक्ष में भेजा जा सकता है। इसकी विशेषता यह है कि यह एक वायुयान की भांति धरती पर आसानी से उतर सकता है। इस अन्तरिक्ष यान द्वारा लोग अन्तरिक्ष में भ्रमण के लिए जा सकते हैं। इसका प्रयोग व्यापारिक, वैज्ञानिक और रक्षा कार्यों के लिये भी किया जा सकता है।

सबसे पहला स्पेस शटल 12 अप्रैल, 1981 को अन्तरिक्ष में भेजा गया था। इसका नाम कोलम्बिया था। पृथ्वी के 36 चक्कर लगाने के बाद यह 14 अप्रैल, 1981 को सफलतापूर्वक धरती पर उतर आया। विज्ञान के इतिहास में यह एक ऐसी उपलब्धि थी, जिसने सिद्ध कर दिया कि अन्तरिक्ष में उड़ान भरने के लिये वायुयान जैसे यान भी बनाये जा सकते हैं। इस प्रकार कोलम्बिया नामक यह स्पेस शटल अपने उद्देश्यों की पूर्ति में पूरी तरह सफल रहा।

एक कक्ष वाले कोलम्बिया में तीन मुख्य इंजन थे। इसे अन्तरिक्ष में ले जाने के लिये दो बूस्टर रॉकेट थे। यान छोड़े जाने के 122 सेकण्ड बाद 46 किमी. की ऊंचाई पर पहुंच कर, इसके बूस्टर रॉकेट यान से अलग हो गये। इसके पश्चात् लगभग 116 किमी. की ऊंचाई पर इसके मुख्य इंजन भी बन्द हो गये। फिर यह एक अंडाकार कक्षा (orbit) में घूमने लगा। अपनी निर्धारित यात्रा पूरी करने के बाद कोलम्बिया किसी वायुयान की तरह ही धरती पर उतर

आया। इसके कक्ष में चार आदमियों को ले जाने की सुविधा थी। वैसे इसमें सात व्यक्तियों तक के बैठने का प्रावधान था। इसकी दूसरी उड़ान 14 नवम्बर, 1981 को हुई। इसके बाद इसने दो उड़ानें और भरीं।

कोलम्बिया के बाद 'चैलेंजर' नामक स्पेस शटल का अभियान शुरू हुआ। इसने भी कई सफल उड़ानें भरीं। 'डिस्कवरी' नामक एक अन्य स्पेस शटल भी अन्तरिक्ष की कई बार यात्रा कर चुका है। इन यानों की विशेषता यह है कि इन्हें बार-बार प्रयोग में लाया जा सकता है। इन यानों की सहायता से अन्तरिक्ष में उपग्रह भी छोड़े जा चुके हैं। इनसे और भी कई महत्त्वपूर्ण प्रयोग किये गये हैं।

अमरीका द्वारा प्रक्षेपित, 'चैलेंजर' शृंखला का 46वां स्पेस शटल 28 जनवरी, 1986 को अन्तरिक्ष में भेजे जाने के कुछ ही देर बाद विस्फोट से नष्ट हो गया। इसमें सात व्यक्ति सवार थे, जिनमें एक अध्यापिका भी थी। स्पेस शटल के इतिहास में यह अब तक की सबसे बड़ी दुर्घटना है।

बोलोमीटर (Bolometer) क्या होता है?

बोलोमीटर एक ऐसा यंत्र है, जो विकिरणों (radiations) के तापमान को मापने के काम आता है। यह एक प्रकार का प्रतिरोध सेतु (resistance bridge) है, जिसमें धातु की एक पतली-सी काली पत्ती लगी होती है। इस काली पत्ती पर विकिरण पड़ते हैं, जिससे इसका तापमान बढ़ जाता है। इसी वृद्धि को यह यंत्र मापता है।

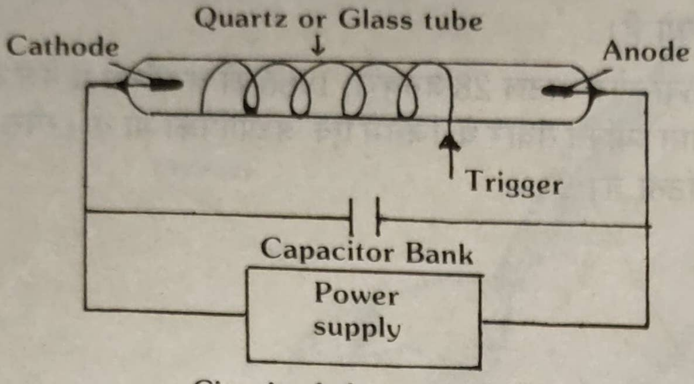
इस यंत्र का आविष्कार अमरीका के एस. पी. लेंगले (S. P. Langley) ने सन् 1880 में किया था। आरम्भ में इस यंत्र में एक व्हीटस्टोन ब्रिज (Wheatstone bridge) प्रयोग किया गया था, जिसमें एक गैलवैनोमीटर लगा था। इस गैलवेनोमीटर का विक्षेपण (deflection) विकिरण की तीव्रता के समानुपाती (proportional) था। तब से अब तक कई दूसरे तापीय प्रक्रम (thermal devices) विकसित हो चुके हैं लेकिन बोलोमीटर आज भी अवरक्त विकिरणों (infrared radiations) का पता लगाने वाला अपनी तरह का एक महत्त्वपूर्ण यंत्र है। इस यंत्र को ठंडा करने की आवश्यकता नहीं होती। इस यंत्र की एक विशेषता यह भी है कि इसे आसानी से प्रयोग किया जा सकता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि इस यंत्र का कार्य करने का सिद्धांत क्या है? बोलोमीटर का कार्य-सिद्धांत यह है कि विकिरण के अवशोषण से होने वाले तापमान परिवर्तन से बोलोमीटर के निर्माण के लिए प्रयोग किए गए पदार्थ का विद्युत प्रतिरोध भी बदलता है। बोलोमीटर में इसी विद्युत-प्रतिरोध-परिवर्तन को मापा जाता है।

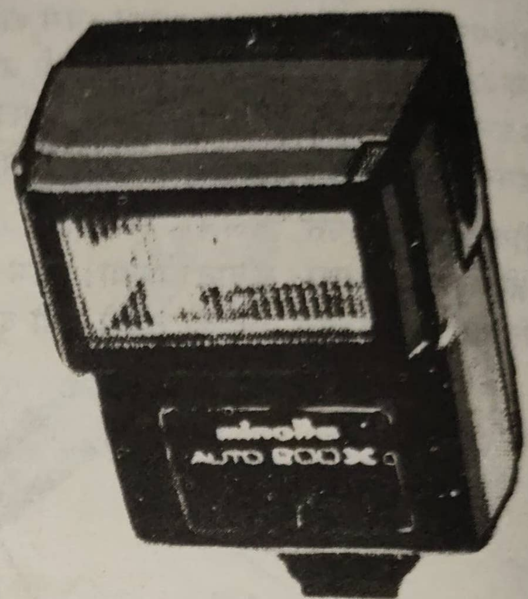
आजकल कई प्रकार के बोलोमीटर प्रयोग किए जाते हैं। इस प्रकार के बोलोमीटर में प्लेटिनम धातु की दो पत्तियां होती हैं। विकिरणों से जब प्लेटिनम धातु की पत्तियां गर्म होती हैं तो उनका प्रतिरोध बदल जाता है। इसी प्रतिरोध परिवर्तन के आधार पर तापमान मापा जाता है। यह यंत्र इतना संवेदनशील होता है कि इससे तापमान के 0.0001° सेल्सियस तक के अंतरों को ज्ञात किया जा सकता है।

एक दूसरे प्रकार के बोलोमीटर को स्पैक्ट्रम बोलोमीटर कहते हैं। इसमें धातु की केवल एक ही पत्ती होती है। इसका प्रयोग विकिरणों के स्पैक्ट्रम में तीव्रता का वितरण (distribution) ज्ञात करने के लिए किया जाता है।

कैमरे की फ्लैश लाइट कैसे काम करती है?



Circuit of electronic flash



अंधेरे या कम प्रकाश में कैमरे से फोटो खींचने के लिए हम फ्लैश-गन प्रयोग में लाते हैं। कैमरे का शटर दबाते ही फ्लैश की लाइट जल उठती है और प्रकाश हो जाता है। क्या तुम जानते हो कि कैमरे के फ्लैश की लाइट कैसे काम करती है?

एक आधुनिक कैमरा फ्लैश-गन में एक प्रकाश-स्रोत होता है तथा इस प्रकाश-स्रोत को चलाने के लिए विद्युत परिपथ (circuit) होते हैं। यह विद्युत परिपथ एक प्रकार का ऊर्जा-स्रोत होता है, जो किसी सेल या विद्युत-स्रोत से ऊर्जा लेकर प्रकाश-स्रोत को देता है। यही विद्युत ऊर्जा प्रकाश में परिवर्तित हो जाती है।

फ्लैश-गन का प्रकाश-स्रोत एक ज़ीनान फ्लैश-ट्यूब (Xenon flash tube) होती है। सामान्यतः यह लगभग दो इंच लम्बाई की कांच की एक नली होती है, जिसका व्यास पांच-छः मिलीमीटर होता है। इस नलिका के दोनों सिरों पर टंग्स्टन धातु के दो इलेक्ट्रॉड लगे होते हैं। इस नली को निर्वात् पम्प (vacuum pump) से जोड़कर वायुरहित कर दिया जाता है। फिर इसमें 400–500 मिलीमीटर दाब पर ज़ीनान गैस भर दी जाती है। कांच की नली के ऊपर एक तार लपेट दिया जाता है, जो तीसरे इलेक्ट्रॉड का काम करता है। फ्लैश ट्यूब के दोनों इलेक्ट्रॉडों को विद्युत परिपथ से जोड़ दिया जाता है। विद्युत परिपथ में एक धारित्र (capacitor) होता है, जो ऊर्जा संचय का काम करता है। जब शटर दबाने के साथ विद्युत परिपथ का स्विच दबता है तो तीसरे इलेक्ट्रॉड पर एक उच्च वोल्टता लगती है। इस वोल्टता के कारण फ्लैश ट्यूब में भरी ज़ीनान गैस आयनित (ionize) हो जाती है, जिससे वह विद्युत की सुचालक (good conductor) बन जाती है। इस स्थिति में धारित्र में संचित ऊर्जा इलेक्ट्रॉडों से होती हुई गैस में प्रवाहित हो जाती है। यही ऊर्जा प्रकाश में परिवर्तित हो जाती है और इस प्रकार ज़ीनान लैम्प से प्रकाश निकल पड़ता है। फ्लैश लैम्प के पीछे एक परावर्तक (reflector) लगा होता है, जो प्रकाश को परावर्तित कर व्यक्ति या दृश्य की ओर फेंक देता है। इस प्रकार दृश्य प्रकाशित हो जाता है और कैमरा उस दृश्य का चित्र ले लेता है।

फ्लैश-गन से निकलने वाला प्रकाश क्षणिक होता है। यह एक सेकण्ड के एक हजारवें भाग तक ही चमकता है। ज़ीनान फ्लैश लैम्प से निकला प्रकाश बहुत तीव्र होता है। आजकल लगभग सभी आधुनिक कैमरों में फ्लैश-गन लगे होते हैं।



मिक्सर और ग्राइण्डर कैसे काम करते हैं?

मिक्सर और ग्राइण्डर आम प्रयोग में आने वाले महत्त्वपूर्ण घरेलू उपकरण हैं। मिक्सर की सहायता से हम मैंगो-शेक, लस्सी, ठण्डी कॉफी आदि कई प्रकार के पेय थोड़ी देर में ही तैयार कर सकते हैं। इस से दही को मथकर मक्खन भी निकाला जा सकता है। ग्राइण्डर की सहायता से सूखे मसाले, दाल की पिट्ठी तथा चटनी आदि आसानी से पीसी जा सकती है। क्या तुम जानते हो कि मिक्सर और ग्राइण्डर कैसे काम करते हैं?

इस उपकरण के मुख्यतः दो भाग होते हैं। एक भाग को हम इसका आधार (base) कहते हैं। इस भाग में एक तीव्र वेग से घूमने वाली मोटर लगी होती है, जो एक मिनट में पन्द्रह से बीस हजार घूर्णन (rotations) कर सकती है। इसी भाग में एक स्विच लगा होता है, जिससे मोटर की गति को कम या अधिक किया जा सकता है। मोटर की धुरी आधार से थोड़ी ऊपर निकली होती है। उपकरण के दूसरे भाग में मिक्सर और ग्राइण्डर आते हैं, जो सामान्यतः स्टेनलेस स्टील या प्लास्टिक से बने जार के आकार में बने होते हैं। मिक्सर और ग्राइण्डर में अलग-अलग तरह के ब्लेड लगे रहते हैं जो क्रमशः मिक्सिग और ग्राइण्डिग की क्रिया सम्पन्न करते हैं। ये दोनों ही आधार के साथ इस प्रकार फिट हो जाते हैं कि मोटर की गति के साथ इनका ब्लेड भी तेजी से घूमने लगता है। तेजी से घूमता हुआ यह ब्लेड खाद्य पदार्थों को काटकर छोटे-छोटे टुकड़ों या लुगदी में बदल देता है या मसाले आदि को पीस देता है।

आधुनिक उपकरणों में मिक्सर और ग्राइण्डर के अतिरिक्त जूसर नामक एक और अटैचमैण्ट (attachment) भी आता है, जिससे टमाटर, गाजर, सेब, संतरे आदि फल और सब्जियों का रस निकाला जा सकता है। इस उपकरण की यह विशेषता है कि इसमें एक ओर से रस निकलता है और दूसरी ओर से बीज और छिलके आदि।

अत्याधुनिक उपकरणों में आटा गूंधने, सलाद काटने, अण्डा फेंटने, आलू के चिप्स काटने, आदि की सुविधाएं भी होती हैं। अब तो ऐसे उपकरण भी उपलब्ध हैं, जिनकी सहायता से गेहूं का आटा और चने का बेसन कुछ देर में ही पीसकर तैयार किया जा सकता है।

इन विद्युत-चालित उपकरणों की सहायता से महिलाओं को रसोई के कामकाज में काफी सुविधा हो गई है। इनसे समय की तो बचत होती ही है, साथ ही स्वादिष्ट और स्वच्छ भोज्य पदार्थ भी तैयार किये जा सकते हैं। इन उपकरणों के प्रयोग में बिजली भी बहुत अधिक खर्च नहीं होती।

द्रव मणिभ (Liquid crystal) अंकों को कैसे दर्शाते हैं?

अंक दर्शाने वाली हाथ की घड़ियां और कैल्क्यूलेटर (calculator) हम सभी ने देखे हैं। इनमें अंकों को दर्शाने के लिए द्रव मणिभों (liquid crystals) का उपयोग किया जाता है। द्रव मणिभीय अवस्था पदार्थ की वह अवस्था है, जो ठोस और द्रव दोनों के गुणों का सामंजस्य प्रदर्शित करती है। द्रव मणिभ को हम द्रव की संघनित (condensed) अवस्था क़ह सकते हैं।

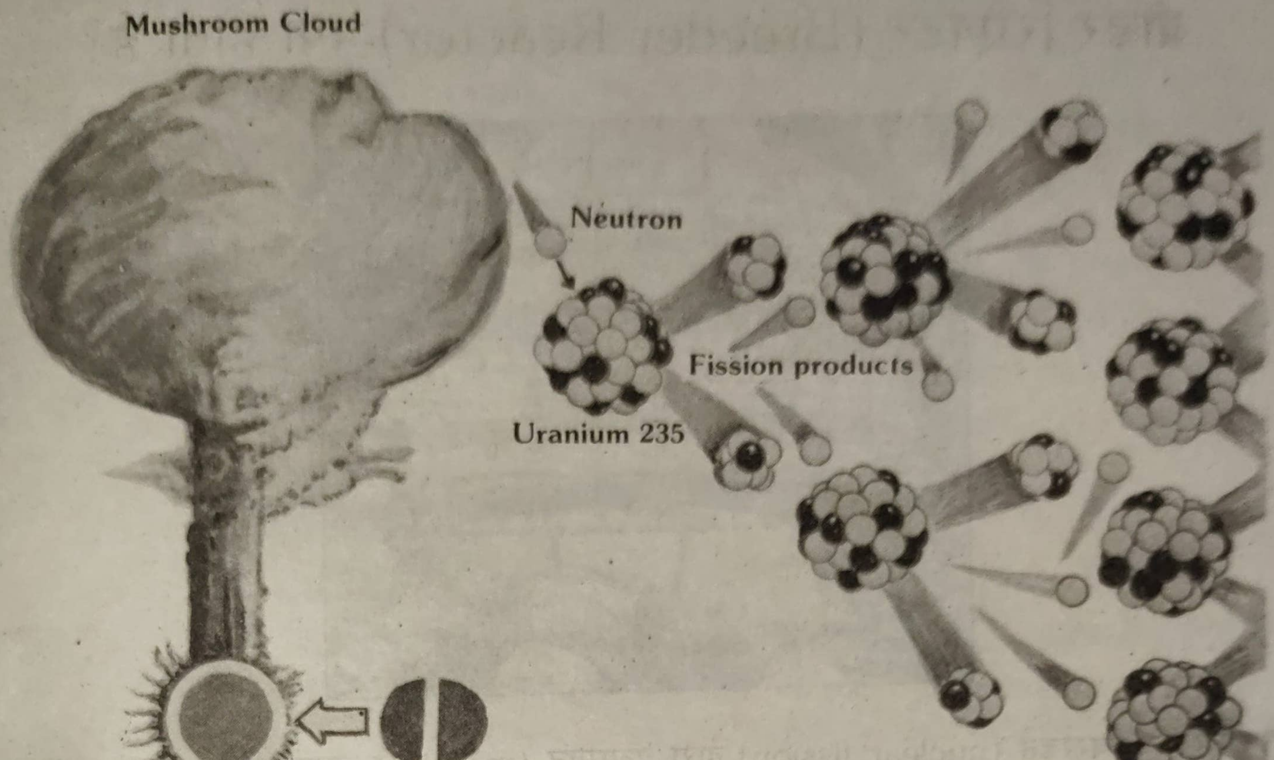


द्रव मणिभ दो प्रकार के होते हैं: थर्मोट्रॉपिक (thermotropic) और लायोट्रॉपिक (lyotropic)। पहले प्रकार के द्रव मणिभ, पदार्थों को गर्म करके बनाये जाते हैं। इस प्रकार के मणिभों में पी-एजोक्सिनीसोल (p-azoxyanisole), कोलिस्टेरिल नोनानोएट (cholesteryl nonanoate) तथा पी एन-ऑक्टी-लोयाबेंजोइक एसिड (pn-octyloabenzoic acid) आदि मुख्य हैं। लायोट्रॉपिक श्रेणी में सोडियम स्टिऐरेट (Sodium stearate) और आर-लेसिथिन (r-lecithin) आदि प्रमुख हैं।



ये द्रव मणिभीय पदार्थ केवल घड़ियों और कैल्क्यूलेटरों में ही नहीं, बल्कि बहुत से दूसरे यंत्रों, जैसे टेलीविजन आदि में भी अंक दर्शाने के लिए प्रयोग में आते हैं। इस कार्य के लिए प्रकाश उत्सर्जित करने वाले डॉयोड (light emitting diodes) भी प्रयोग में लाये जाते हैं लेकिन द्रव मणिभों में कम विद्युत-शक्ति की आवश्यकता होती है और ये तेज़ चमकीले प्रकाश में भी बहुत ही स्पष्ट दिखाई देते हैं।

द्रव मणिभों से दो प्रकार से अंक दर्शाये जाते है: गतिज प्रकीर्णन (dynamic scattering) द्वारा और विद्युत क्षेत्र-प्रभाव द्वारा। द्रव मणिभों द्वारा अंक दर्शाने के लिये धातु की तह चढ़ी कांच की प्लेट के बीच में छह से 25 माइक्रोन (मीटर का दस लाखवां भाग) मोटी द्रव मणिभ की सात पट्टियां लगा दी जाती हैं। ये सात पट्टियां मिल-जुल कर शून्य से नौ तक का कोई भी अंक प्रदर्शित कर सकती हैं। गतिज प्रकीर्णन में जब कोई विद्युत-क्षेत्र नहीं लग रहा होता तो ये मणिभीय पट्टियां पारदर्शक रहती हैं लेकिन विद्युत-क्षेत्र लगते ही ये मणिभ अपारदर्शी हो जाते हैं और अंक दीखने लगते हैं। विद्युत-प्रभाव-क्षेत्र से इन मणिभों के अणुओं की व्यवस्था बदल जाती है और अंक सामने आ जाते हैं। इस विधि में दो ध्रुवक (polarizer) भी काम में लाये जाते हैं। अंक दर्शाने की इन द्रव मणिभीय प्रणालियों ने आज के यंत्र निर्माण में क्रांति ला दी है। अब तो अंकों में तापमान प्रदर्शित करने वाले थर्मामीटर भी बाजार में मिलने लगे हैं।



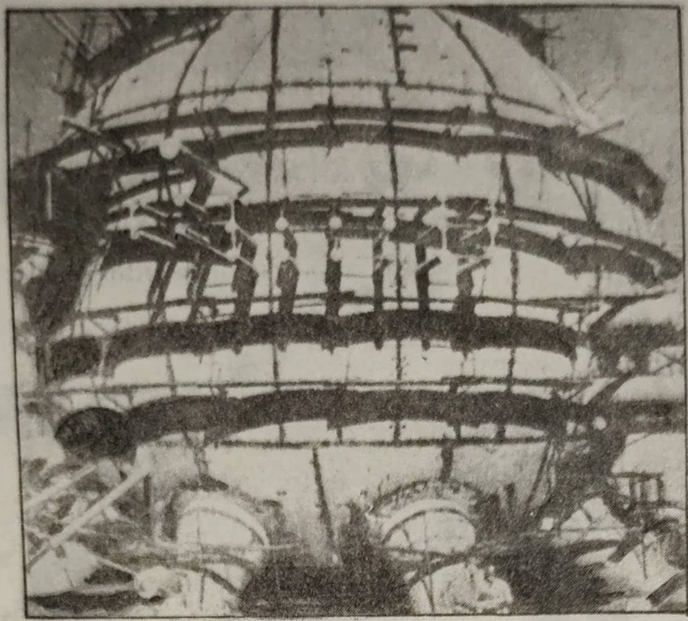
न्यूट्रॉन बम (Neutron Bomb) क्या है?

परमाणु बम (Atom Bomb) और हाइड्रोजन बम (Hydrogen Bomb) का नाम हम सबने सुना है। परमाणु बम नाभिकीय विखण्डन (nuclear fission) के सिद्धांत पर आधारित है, जबकि हाइड्रोजन बम नाभिकीय संगलन (nuclear fusion) के सिद्धांत पर काम करता है। ये दोनों ही बड़े शक्तिशाली बम हैं। हाइड्रोजन बम, परमाणु बम की तुलना में कहीं अधिक घातक होता है। अभी पिछले कुछ वर्षों में अमरीका और फ्रांस जैसे देशों ने एक नया बम विकसित किया है, जिसे न्यूट्रॉन बम कहते हैं। क्या तुम जानते हो कि न्यूट्रॉन बम क्या होता है?

न्यूट्रॉन बम का दूसरा नाम न्यूट्रॉन विकिरण (Neutron radiation) अस्त्र भी है। न्यूट्रॉन बम एक छोटा-सा नाभिकीय अस्त्र है, जो परमाणु और हाइड्रोजन बम की तुलना में बहुत ही कम शक्तिशाली होता है। इसकी शक्ति एक से दो किलो टन टी.एन.टी. के तुल्य होती है। इस बम में एक ऐसा पदार्थ होता है, जिससे अधिक मात्रा में न्यूट्रॉन पैदा होते हैं। जब इस बम का विस्फोट किया जाता है तो 130 से 350 मीटर के अर्धव्यास में एक तीव्र प्रघात (shock) और ऊष्मा पैदा होती है। इस बम के विस्फोट से न्यूट्रॉन और गामा विकिरण पैदा होते हैं, जो एक से दो किलोमीटर के अर्धव्यास में विनाशकारी प्रभाव पैदा करते हैं।

सिर्फ इसी बम की एक विशेषता यह भी है कि इससे भवनों और पेड़-पौधों का विनाश नहीं होता। इससे केवल मानव मात्र ही मौत के घाट उतरता है। मनुष्यों की मौत उनके शरीर में अत्यधिक संख्या में प्रवेश करने वाले न्यूट्रॉनों और गामा विकिरण से होती है। चूंकि न्यूट्रॉन बम से केवल मानव की ही मौत होती है, इसलिए इसका प्रयोग सेनाओं की अग्रिम टुकड़ियों द्वारा किया जाता है।

ब्रीडर रिऐक्टर (Breeder Reactor) क्या होता है?



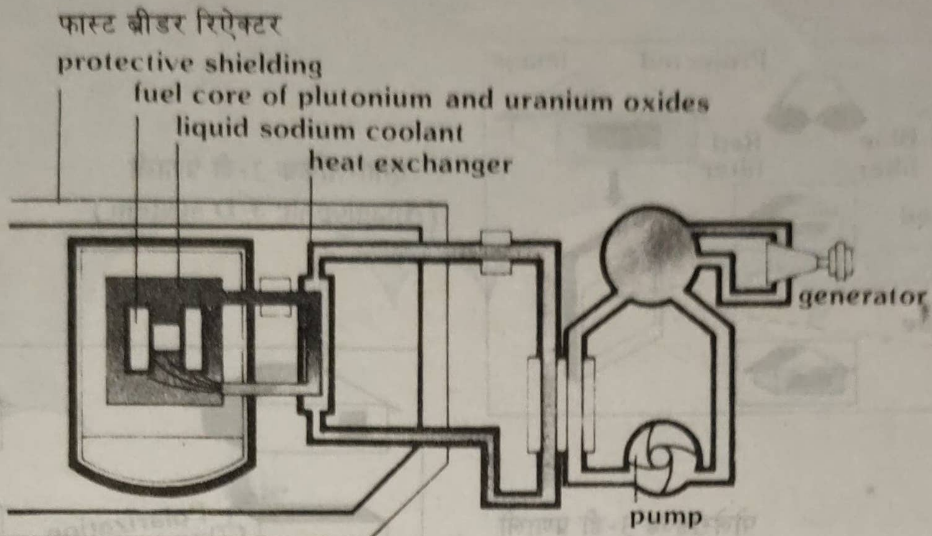
नाभिकीय विखंडन (nuclear fission) द्वारा द्रव्यमान (mass) को ऊर्जा (energy) में बदला जा सकता है। इस ऊर्जा को दो रूपों में प्रयोग में लाया जा सकता है—परमाणु बम (atom bomb) और नाभिकीय भट्टी या रिऐक्टर (nuclear reactor)। जहां परमाणु बम में विखंडन एक अनियंत्रित शृंखला में होता है, वहां नाभिकीय भट्टी में नियंत्रित शृंखला में। विखंडन की क्रिया में सामान्यत: यूरेनियम-235 प्रयोग में लाया जाता है। इसके नाभिकों (nucleus) पर न्यूट्रॉनों के प्रहार करवा कर विखंडन क्रिया कराई जाती है। जब न्यूट्रॉन के टकराने से यूरेनियम का परमाणु टूटता है तो विशाल ऊर्जा पैदा होती है।

नाभिकीय विखंडन के फलस्वरूप पैदा होने वाली ऊर्जा से विद्युत-शक्ति पैदा की जा सकती है। ऐसे प्रक्रमों को नाभिकीय विद्युत रिऐक्टर (nuclear power reactor) कहते हैं। सामान्यत: नाभिकीय विद्युत रिऐक्टरों में नाभिकीय ऊष्मा से पानी गर्म किया जाता है, जिससे भाप बनती है। इस भाप से टरबाइन (turbine) चलाया जाता है, टरबाइन से विद्युत जनिभ चलता है और विद्युत निर्माण करता है।

ब्रीडर रिऐक्टर (Breeder reactor) इनसे कुछ भिन्न है। इसमें विखंडन की क्रिया में जितनी मात्रा में नाभिकीय पदार्थ प्रयोग में आते हैं, उससे कहीं अधिक मात्रा में वे पैदा हो जाते हैं। इन रिऐक्टरों को विद्युत पैदा करने और ईंधन के निर्माण के लिए प्रयोग किया जाता है। इन रिऐक्टरों को हम ईंधन पैदा करने का एक ऐसा अनंत स्रोत कह सकते हैं, जिनमें ईंधन कभी समाप्त ही नहीं होता। क्या तुम जानते हो कि यह रिऐक्टर कैसे काम करता है?

रिऐक्टर में यूरेनियम-235 के विखंडन के फलस्वरूप जो न्यूट्रॉन पैदा होते हैं, वे विखंडन शृंखला को जारी रखते हैं तथा यूरेनियम-238 से क्रिया करके यूरेनियम-239 निर्मित करते हैं। यूरेनियम-239 के क्षय (decay) द्वारा नेप्च्यूनियम-239 निर्मित होकर प्लूटोनियम-239 बन जाता है। प्लूटोनियम-239 भी एक विखंडनीय ईंधन (fissile fuel) है, जिसे विद्युत पैदा करने के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। इस रिऐक्टर में द्रव सोडियम (liquid sodium) को प्रशीतक (coolent) के रूप में प्रयोग किया जाता है।

विश्व में प्रथम ब्रीडर रिऐक्टर सन् 1951 में अमरीका द्वारा बनाया गया था। इसके पश्चात् फ्रांस, इंगलैंड और रूस ने कुछ ब्रीडर रिऐक्टर बनाये। आजकल फ्रांस एक 1250 मेगावॉट विद्युत-शक्ति का ब्रीडर रिऐक्टर विकसित कर रहा है।



अभी कुछ महीने पहले, सन् 1985 में मद्रास के पास कलपक्कम (Kalpakkam) नामक स्थान पर रिऐक्टर रिसर्च सेण्टर (Reactor Research Centre) ने एक ब्रीडर टेस्ट रिऐक्टर (Breeder test reactor) विकसित किया है। यह 15 मैगावॉट विद्युत क्षमता का रिऐक्टर है। इसके विकास में भारतीय वैज्ञानिकों का विशेष योगदान है। इसके अतिरिक्त भारत में कुछ दूसरे सामान्य नाभिकीय विद्युत संयंत्र (nuclear power plant) भी हैं। ये संयंत्र तारापुर और कोटा में हैं। नरोरा में एक ऐसा ही और विद्युत संयंत्र बनाया जा रहा है।

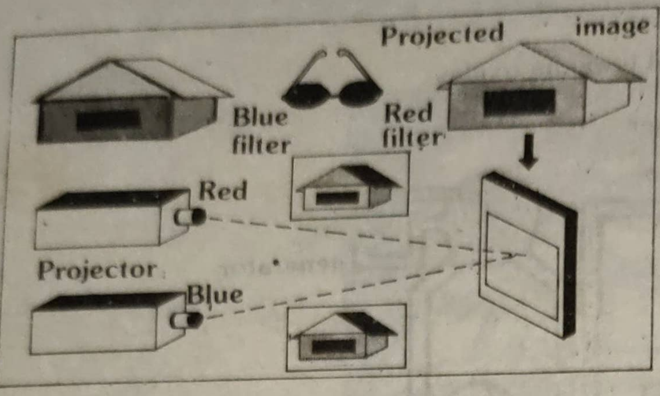
त्रिविमीय फिल्में (3-D Films) कैसे बनाई जाती हैं?

सामान्यत: जो फिल्में हम सिनेमाघरों में देखते हैं, वे केवल दो विमाओं वाली (two dimensional) होती हैं चित्रों में केवल लम्बाई और चौड़ाई ही दीखती है। त्रिविमीय फिल्मों में गहराई या मोटाई का भी आभास होता है। गहराई के कारण कोई भी दृश्य हमें अपने मूल रूप में दिखाई देने लगता है। क्या तुम जानते हो कि त्रिविमीय फिल्में कैसे बनाई जाती हैं।

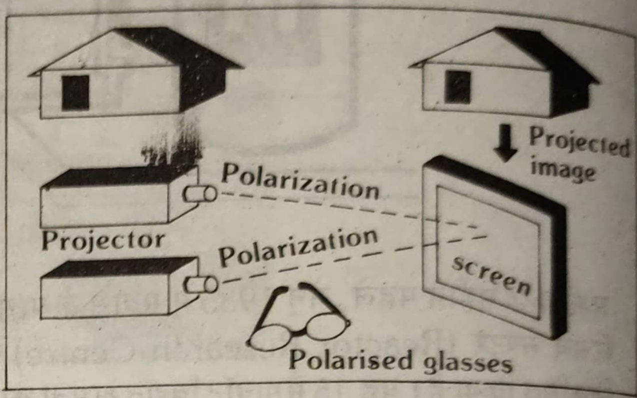
यद्यपि त्रिविमीय सिद्धान्त यूनानी दार्शनिक यूक्लिड (Euclid) ने ईसा से चार शताब्दी पूर्व ही दे दिया था लेकिन इस क्षेत्र में फिल्म निर्माण का कार्य सन् 1920 और 1930 के बीच में ही हुआ। संसार की सबसे पहली त्रिविमीय फ़िल्म सन् 1952 में बनाई गई। इस अंग्रेजी फिल्म का नाम बी'वाना डेविल (B'Wana Devil) था।

शुरू-शुरू में त्रिविमीय फिल्में दो कैमरों के प्रयोग से बनाई जाती थीं। इन्हें देखने के लिए एक विशेष चश्मे का प्रयोग किया जाता था। आजकल इन फिल्मों के निर्माण के लिए ऐनाग्लिफिक 3-डी (Anaglyphic 3-D) तथा पोलेराइज्ड 3-डी (Polarised 3-D) नामक दो प्रणालियां काम में लाई जाती हैं।

ऐनाग्लिफिक 3-डी प्रणाली में दो प्रोजेक्टर प्रयोग में लाए जाते हैं। इनमें एक प्रोजेक्टर पर लाल फिल्टर तथा दूसरे प्रोजेक्टर पर नीला फिल्टर लगाया जाता है। फिल्म देखते समय भी इन्हीं रंगों का चश्मा प्रयोग में लाया जाता है जिसमें बायीं आंख पर लाल फिल्टर और दायीं आंख पर नीला फिल्टर लगा होता है। आंखों द्वारा देखे गए लाल



ऐनाग्लिफिक 3-डी प्रणाली
(Anaglyphic 3-D system)



पोलेराइज्ड 3-डी प्रणाली
(Polarised 3-D system)

और नीले प्रतिबिम्ब हमारे मस्तिष्क में मिश्रित होकर श्याम और श्वेत (black and white) त्रिविमीय प्रतिबिम्ब बनाते हैं। इस प्रणाली द्वारा रंगीन फिल्म नहीं बनाई जा सकती।

पोलेराइज्ड 3-डी प्रणाली में प्रोजेक्टर तथा दर्शक द्वारा ध्रुवित (polarised) फिल्टर प्रयोग किए जाते हैं। जब प्रकाश फिल्टर से गुजरता है तो ध्रुवण के फलस्वरूप दो प्रतिबिम्ब अलग-अलग हो जाते हैं। इन फिल्टरों का रंग धूसर (grey) होता है। इस प्रणाली द्वारा सभी रंगों की त्रिविमीय फिल्में बनाई जा सकती हैं। इन फिल्मों को दिखाने के लिए ऐल्यूमिनाइज्ड सिल्वर स्क्रीन (aluminized silver screen) नामक एक विशेष प्रकार का चमकदार पर्दा काम में लाया जाता है।

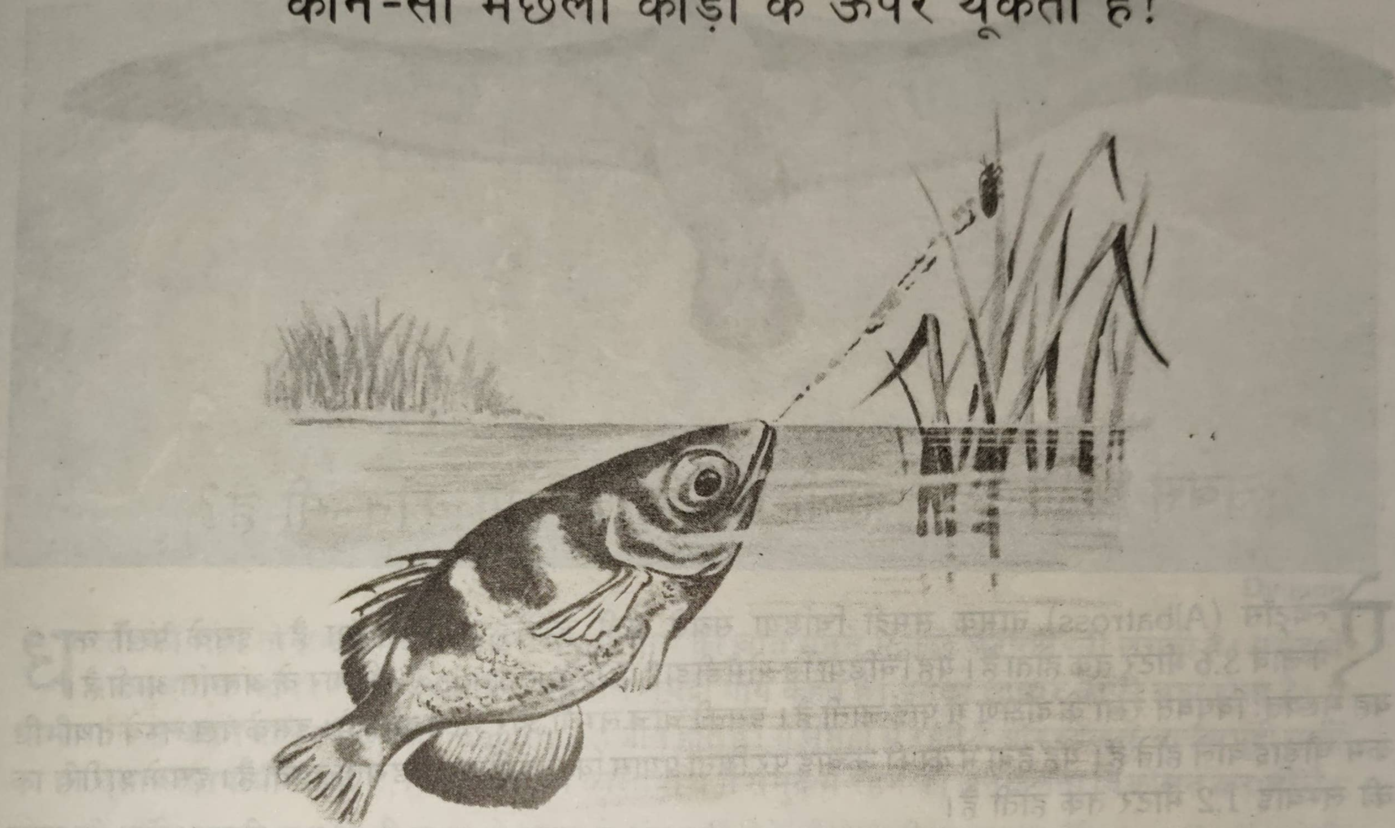


3

पेड़-पौधे और जीव-जन्तु



कौन-सी मछली कीड़ों के ऊपर थूकती है?



मछलियों की बहुत-सी जातियां हैं। इन सभी जातियों के शिकार करने के अपने-अपने तरीके भी हैं। आर्कर फिश (Archer fish) अर्थात् धनुर्धर मछली एक ऐसी मछली है, जो छोटे-छोटे समुद्री पौधों पर लटके हुए कीड़ों पर थूक सकती है। इसका निशाना बहुत ही सही होता है और यह 1.8 मीटर की दूरी से कीड़ों और मक्खियों पर थूककर, उन्हें पानी में गिरा देती है। इस प्रकार पानी में गिरे हुए कीड़ों पर यह मछली तेजी से झपटती है और उन्हें खा जाती है।

यह मछली इतनी दूर तक किस प्रकार ठीक निशाने तक थूक फेंक पाती है, यह अपने आप में एक बड़ी रोचक प्रक्रिया है। इसके मुंह के ऊपरी हिस्से में एक लम्बी नली जैसी संरचना होती है। यदि यह मछली अचानक ही अपने गिल ढक्कनों को बन्द करती है तो गिल कक्ष से दबाव के साथ पानी मुंह में आ जाता है। इसी समय जीभ ऊपर उठा दी जाती है, जिससे मुंह में बनी नली का आकार एक लम्बी नलिका (pipe) जैसा हो जाता है, जिससे पानी थूक के रूप में एक सीधी रेखा में बाहर निकल पड़ता है।

आर्कर फिश ताजे पानी की मछली है, जो टोक्सोटायडी (Toxotidae) परिवार में आती है। यह भारत और इण्डोनेशिया में भी पाई जाती है। इसका यह नाम इसके शिकार पकड़ने के इस तरीके के आधार पर ही पड़ा है। इस जाति की मछलियां खारे पानी में भी रह सकती हैं। इस जाति की सर्वाधिक परिचित मछली टोक्सोटेस जैकुलेटर (Toxotes jaculator) है, जिसकी लम्बाई 18 सेमी. तक होती है। इस मछली की पांच जातियों का अध्ययन किया जा चुका है। ये मछलियां अक्सर कीड़े-मकौड़े खाकर ही जिन्दा रहती हैं।



सबसे बड़ी उड़ने वाली समुद्री चिड़िया कौन-सी है?

एल्बेट्रॉस (Albatross) नामक समुद्री चिड़िया सबसे बड़ी उड़नें वाली चिड़िया है। इसके पंखों का फैलाव 3.6 मीटर तक होता है। यह चिड़िया डिओमैडीडाइ (Diomedeidae) परिवार के अंतर्गत आती है। यह मुख्यतः विषुवत रेखा के दक्षिण में पाई जाती है। इसकी चोंच लम्बी और भारी होती है। इसके पंख लम्बे तथा कम चौड़ाई वाले होते हैं। यह हवा में काफी ऊंचाई पर बिना प्रयास किए घंटों तक मंडराती रहती है। इसके शरीर की लम्बाई 1.2 मीटर तक होती है।

इस परिवार की चिड़ियों की एक दर्जन से भी अधिक किस्में पाई जाती हैं। एल्बेट्रॉस को उड़ान आरम्भ करने में कुछ कठिनाई होती है। उड़ान भरने के लिए इन्हें हवा की आवश्यकता होती है। इसके लिए इन्हें कुछ दूरी तक जमीन पर दौड़ लगानी होती है या पानी पर अपने पैरों को चप्पुओं की भांति लम्बी दूरी तक मारना पड़ता है। दूसरे समुद्री पक्षियों की भांति यह चिड़िया भी समुद्र का पानी पीकर जिन्दा रहती है। यद्यपि यह सामान्यतः मछलियों के चारे पर जीवित रहती है लेकिन यह जलयानों से फेंके गए भोजनयुक्त कूड़े-करकट की ओर भी आकर्षित हो जाती है। यह समुद्री टापुओं या किनारों पर केवल अंडे देने के लिए आती है और खुली जमीन पर सफेद रंग का एक बड़ा अण्डा देती है। इसे सेने का कार्य नर और मादा द्वारा बारी-बारी से किया जाता है। इसके बच्चों की वृद्धि बहुत ही धीमी गति से होती है। इसके बच्चों को उड़ान भरने के लिए तीन से दस महीने का समय लगता है। इसके पश्चात् वे अगले पांच से दस वर्षों तक उड़ान भरना और भोजन करना सीखते हैं। यह एक ऐसी चिड़िया है, जो काफी लम्बे समय तक जीवित रहती है और वृद्धावस्था में मरती है। कभी-कभी मल्लाह इन्हें खाने के लिए पकड़ लाते हैं।

इसके अतिरिक्त यदि हम उन पक्षियों पर विचार करें, जो अपने पंखों को उड़ने की बजाय तैरने के लिए इस्तेमाल करते हैं तो सबसे बड़े पक्षियों में पेन्गुइन (Penguin) है। ये अंटार्कटिका में पाये जाते हैं। इनकी ऊंचाई एक मीटर से भी अधिक होती है तथा भार 40 कि.ग्रा. के लगभग होता है।

सबसे भारी चिड़ियों में दक्षिण अफ्रीका की पाव (Paauw) है। पंखों के क्षेत्रफल के अनुसार सबसे बड़ा पक्षी दक्षिण अमरीका की चील है।

समुद्री गाय (Sea-cow) क्या है?



Dugong

धरती की गाय तो हम सबने देखी है। समुद्री गाय की बात सुनने में कुछ अटपटी-सी लगती है। समुद्र में सचमुच एक जानवर ऐसा होता है, जिसे हम समुद्री गाय कहते हैं। इनका आकार काफी बड़ा होता है। ये धीमी गति से चलने वाले स्तनपायी (mammals) जीव होते हैं। ये समूहों में रहते हैं और व्हेल के बाद समुद्री गायों का ही ऐसा स्तनपायी समूह है, जिन्होंने लंबी कालावधि में समुद्र में रहने की अनुकूलता विकसित कर ली है।

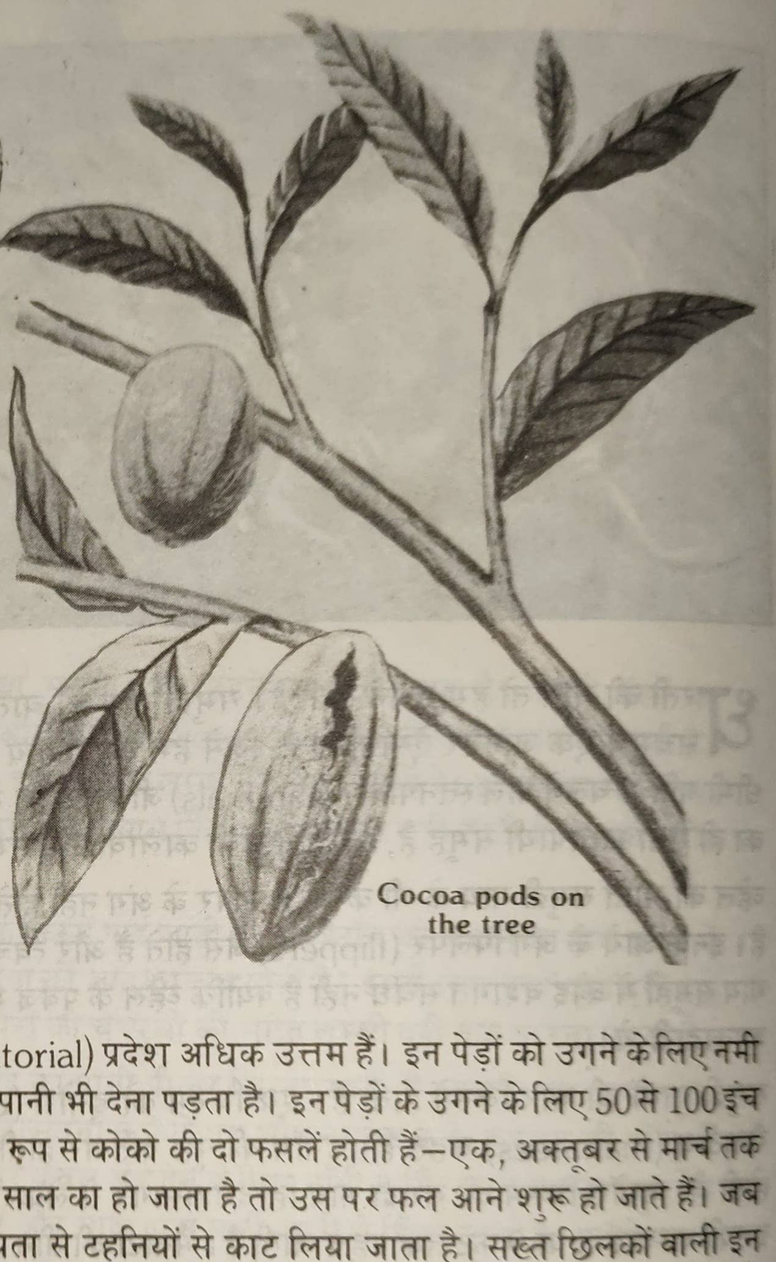
व्हेल की भांति समुद्री गाय के भी कमर के ऊपर के अंग नहीं होते और इसकी जगह एक क्षैतिज समतल पूंछ होती है। इनके आगे के अंग फ्लिपर (flippers) जैसे होते हैं और त्वचा पर कोई भी बाल नहीं होता। व्हेल और समुद्री गाय समूहों में कोई वंशगत संबंध नहीं है क्योंकि व्हेल के पूर्वज मांसाहारी थे, जबकि समुद्री गायों के पूर्वज पूर्णतः शाकाहारी थे।

समुद्री गायों की चार किस्में होती हैं। एक किस्म को डुगोंग (dugong) कहते हैं और दूसरी तीन किस्मों को मैनाटीज (manatees) कहते हैं। डुगोंग की पूंछ दांतेदार होती है जबकि मैनाटी की पूंछ गोल और पैडलनुमा होती है। डुगोंग किस्म की समुद्री गाय हिन्दमहासागर से लेकर आस्ट्रेलिया के उत्तरी किनारों तक मिलती है। इसकी लम्बाई 8 या 9 फुट तक पहुंच जाती है। मैनाटी की तीन जातियां उत्तरी अमरीका, दक्षिण अमरीका और पश्चिमी अफ्रीका में पाई जाती हैं। मैनाटी की लम्बाई 15 फुट तक हो सकती है तथा इसका भार 500 पौण्ड तक हो सकता है। इनकी पूंछ तो मछलियों जैसी होती है और चेहरा आदमी से मिलता-जुलता है। कभी-कभी लोगों को इन्हें देखकर समुद्री परियों का आभास होने लगता है। चूंकि ये स्तनपायी जीव हैं, इसलिए अपने बच्चों को स्तनों से दूध पिलाती हैं। इनके विषय में हजारों लोककथाएं प्रचलित हैं।

डुगोंग और मैनाटी के चरने के तरीके अलग-अलग हैं। डुगोंग का ऊपर का ओष्ठ काफी बड़ा होता है। यह समुद्री घास के ऊपर इस ओष्ठ का लपेटा देकर नीचे के ओष्ठ की सहायता से घास को झटक लेती है। मैनाटी का ऊपर का ओष्ठ दांतेदार होता है और वह दो हिस्सों में बंटा होता है। ये दोनों हिस्से एक दूसरे को दबा सकते हैं। यह एक दिन में सौ पौण्ड तक घास खा जाती है। चूंकि समुद्री गाय चरने वाले प्राणी हैं, इसलिए इनके दांत गिरते रहते हैं। इनके आगे के पुराने दांत गिरते जाते हैं और पीछे से नये दांत आते रहते हैं।

कोको (Cocoa) कहां पैदा होता है?

कोको के बीज कॅकेओ (Cacao) नामक वृक्ष से प्राप्त होते हैं। पहले ये वृक्ष केवल मध्य और दक्षिणी अमरीका में पाये जाते थे। वहां से लाकर इसके बीज सन् 1879 में घाना (Ghana) में बोये गये। सन् 1891 तक घाना में इसके बहुत सारे पौधे विकसित हो गये। सन् 1913 तक घाना विश्व में कोको का निर्यात करने वाला एक मुख्य देश बन गया। लगभग 15 लाख एकड़ जमीन पर इसकी खेती की जाती है।



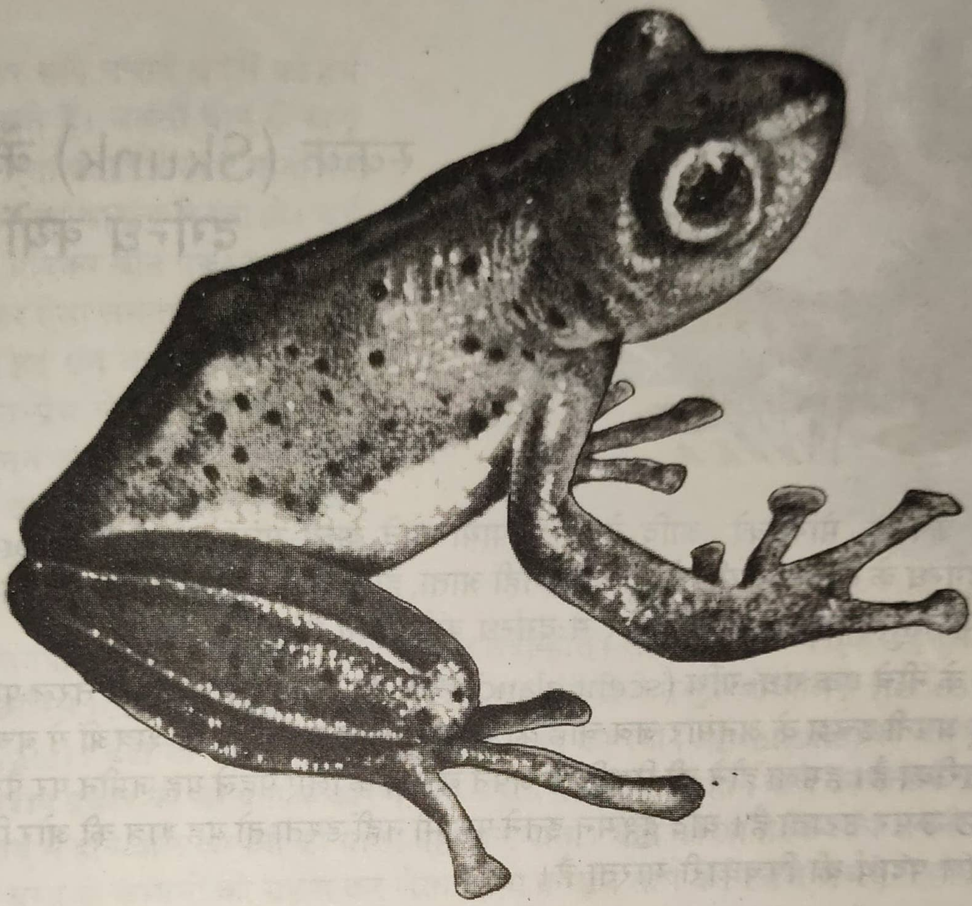
Cocoa pods on the tree

कोको के पेड़ का आकार एक सामान्य सेब के पेड़ के बराबर होता है। यह एक सदाबहार (evergreen) पौधा है। इस पेड़ पर साल में दो बार तारों जैसे दिखाई देने वाले पीले और गुलाबी फूल आते हैं। कुछ समय बाद इनमें फलों के रूप में अंडाकार फलियां (pods) निकल आती हैं, जिनकी लम्बाई छह से दस इंच तथा चौड़ाई तीन से चार इंच तक होती है। इन फलियों को पकने में लगभग छह माह लग जाते हैं। इस अवधि में इनका रंग क्रमशः हरे से भूरा और बाद में पीला हो जाता है।

इन पेड़ों के उगने के लिए विषुवतरेखीय (Equatorial) प्रदेश अधिक उत्तम हैं। इन पेड़ों को उगने के लिए नमी की आवश्यकता होती है तथा कुछ देशों में इन्हें पानी भी देना पड़ता है। इन पेड़ों के उगने के लिए 50 से 100 इंच तक वर्षा वाले क्षेत्र काफी उपयोगी हैं। सामान्य रूप से कोको की दो फसलें होती हैं—एक, अक्तूबर से मार्च तक और दूसरी, मई से अगस्त तक। पौधा जब पांच साल का हो जाता है तो उस पर फल आने शुरू हो जाते हैं। जब फलियां पक जाती हैं तो उन्हें चाकुओं की सहायता से टहनियों से काट लिया जाता है। सख्त छिलकों वाली इन फलियों को आमतौर पर स्त्रियां और लड़कियां टोकरों में इकट्ठा करके दूसरी जगह ले जाती हैं, जहां इनमें से कोको के बीज बाहर निकाल लिये जाते हैं। अब इन बीजों में खमीर उठाया (fermentation) जाता है। इस काम के लिए इन्हें छिद्रयुक्त बक्सों में एक निश्चित तापमान पर रखकर बार-बार उलटा-पलटा जाता है। इस प्रक्रम में बीजों के साथ लगी लुगदी तथा दूसरी अशुद्धियां अलग हो जाती हैं। इस प्रक्रिया में लगभग छह दिन लग जाते हैं। इसके बाद इन बीजों को चटाइयों पर फैलाकर धूप में सुखाया जाता है। इन बीजों को पीसकर एक प्रकार की लुगदी (paste) बनायी जाती है। इसी लुगदी को सुखाकर कोको पाउडर बनाया जाता है।

बहुत से खाद्य पदार्थों में कोको का इस्तेमाल होता है। मुख्य रूप से चॉकलेटों में इसका प्रयोग किया जाता है। कोको के बीजों से वसा (fat) निकालकर कोकोबटर बनाया जाता है। आइसक्रीम में भी स्वाद के लिए कोको का प्रयोग किया जाता है। कुछ औषधियों के निर्माण में भी कोको का प्रयोग किया जाता है।

क्या किसी मेंढक की त्वचा कांच जैसी पारदर्शी होती है?



मेंढक हम सभी ने देखे हैं। जीव-विज्ञान की भाषा में इन्हें 'राना टिग्रीना (Rana Tigrina) कहते हैं। इनकी त्वचा काफी चिकनी और टांगें बहुत मजबूत होती हैं। दुनिया भर में मेंढकों की बहुत सी किस्में पाई जाती हैं। अफ्रीका, मेडागास्कर, भारत और मलाया को छोड़कर सभी देशों में एक विशेष प्रकार का मेंढक पाया जाता है, जिसकी त्वचा कांच जैसी पारदर्शक होती है। इस मेंढक को 'कांच-मेंढक' (Glass Frog) कहते हैं। इसकी त्वचा में से शरीर के सभी अंग दिखाई देते हैं।

कांच-मेंढक, मेंढकों के सेण्ट्रोलेनाइडी (Centrolenidae) परिवार के अन्तर्गत आने वाली एक प्रजाति है, जो मुख्यतः वृक्षों पर रहती है। इस मेंढक की त्वचा से टांगों की भीतरी हड्डियां, यहां तक कि शिराओं और धमनियों में दौड़ता रक्त भी साफ दिखाई देता है। हृदय तथा अन्दर के दूसरे अंग भी साफ दिखाई देते हैं। ये मेंढक मध्य और दक्षिण अमरीका में अधिक संख्या में पाये जाते हैं।

वृक्षों पर रहने वाले मेंढकों की दो प्रजातियां और भी हैं—अफ्रीका की रैकोफोराइडी (Rhacophoridae) और एशिया की हाइलाइडी (Hylidae)। इन सभी के पैर गद्देदार और चिपकने वाले होते हैं। इन की सहायता से ये मेंढक आसानी से एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर कूद सकते हैं। इन मेंढकों में रंग बदलने का गुण भी होता है ताकि शत्रु की दृष्टि इन पर न पडे।



स्कंक (Skunk) के शरीर से दुर्गन्ध क्यों आती है?

अमरीका, कनाडा, मेक्सिको, आदि देशों में पाया जाने वाला मांसाहारी (carnivorous) पशु स्कंक अपनी दुर्गन्ध के कारण किसी को भी पसंद नहीं आता, हालांकि इसे आसानी से पालतू भी बनाया जा सकता है। क्या तुम जानते हो कि स्कंक के शरीर से दुर्गन्ध क्यों आती है?

स्कंक की पूंछ के नीचे एक गंध-ग्रंथि (scent gland) होती है। इसमें एक बदबूदार तरल पदार्थ भरा होता है, जिसे यह जन्तु अपनी इच्छा के अनुसार जब चाहे काफी दूर तक फेंक सकता है। शत्रुओं से बचाव का यह इसका एक निराला तरीका है। हमला होने की स्थिति में अपने बचाव के लिए पहले यह जमीन पर पैर पटकता है, फिर यह अपनी पूंछ ऊपर उठाता है। यदि दुश्मन इतने पर भी नहीं डरता तो यह शत्रु की ओर निशाना बांध कर दुर्गन्धमय तरल पदार्थ की पिचकारी मारता है।

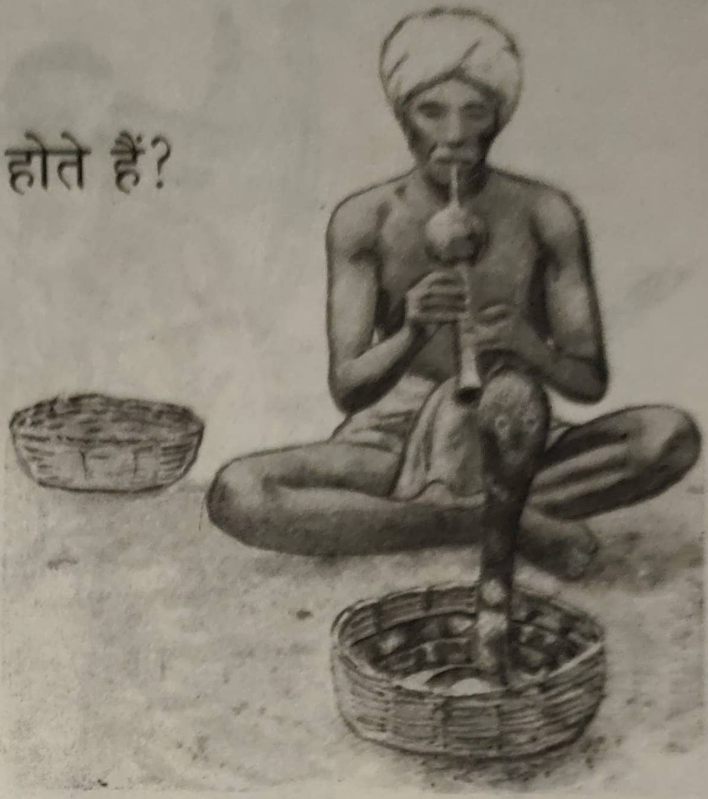
इस मांसाहारी स्तनपायी (mammal) पशु की विभिन्न प्रजातियों के विभिन्न आकार होते हैं लेकिन लगभग सभी के शरीर पर सफेद और काली धारियां होती हैं। स्कंक प्रजाति का गंध-बिलाव (civet cat) अपने दुश्मन को विचित्र ढंग से डराता है। यह अपनी अगली टांगों पर खड़ा होकर अपने शरीर के पिछले हिस्से को उठा लेता है और फिर अपनी दुम को लहराता हैं। स्कंक की इस विचित्र मुद्रा को देखकर दुश्मन डरकर भाग जाता है। तब इसे दुर्गन्ध फेंकने की आवश्यकता भी नहीं पड़ती।

स्कंकों की अधिकतर प्रजातियां रात्रि में ही क्रियाशील होती हैं। यह जन्तु अपना घर खोखले पेड़ों और चूहे आदि के बिलों में बनाता है। मुख्य रूप से कीड़े-मकौड़े, चूहे, गिलहरी, अंडे और चिड़िया इनका भोजन है। मादा स्कंक का गर्भकाल 40 से 70 दिन का होता है। यह एक बार में 2 से 10 बच्चे तक पैदा कर सकती है।

यदि कोई आदमी स्कंक पालना चाहे तो वह शल्यक्रिया द्वारा इसकी दुर्गन्ध ग्रन्थि निकलवा सकता है। यूं तो गंध-ग्रन्थियों के कारण स्कंक का व्यापारिक महत्त्व भी है। इनकी गंध-ग्रंथियों से निकले पदार्थ का इत्र बनाने में प्रयोग किया जाता है। स्कंक का मांस भी खाया जाता है।

बनावट के आधार पर स्कंक तीन प्रकार के होते हैं: (1) धारीदार (Striped), (2) सुअर जैसी नाक वाले (Hog-nosed) और (3) धब्बेदार (Spotted)। स्कंक की अधिकतम लम्बाई लगभग 30 इंच होती है, जिसमें 9 इंच की पूंछ भी शामिल है। इसका वजन लगभग 12 किग्रा. होता है।

क्या सांप (Snake) संगीत-प्रेमी होते हैं?



बीन बजा कर सांप नचाते सपेरों को हम अक्सर देखते हैं। बजती बीन के साथ फन हिलाता सांप ऐसा प्रतीत होता है मानों वह झूम-झूम कर संगीत का आनन्द ले रहा हो। कई बार वह फुंफकार मारकर बीन पर झपटता भी है। यह सब देखकर ऐसा लगता है जैसे सांप को बीन से निकलती हुई धुन बहुत अच्छी लगती है। सांप के संगीत-प्रेम के संबंध में बहुत-सी किवदंतियां भी सुनने को मिलती हैं। कुछ लोगों का तो यहां तक दावा है कि वे बीन बजाकर सांपों को बुला सकते हैं। तो क्या सांप सचमुच संगीत-प्रेमी होते हैं?

मनुष्य या दूसरे स्तनपायी जीवों के विपरीत सांप के कान नहीं होते। सांप के शरीर में एक छड़नुमा हड्डी होती है, जिसे कोलुमेला ऑरिस (columella auris) कहते हैं। यह हड्डी फेनेस्ट्रा ओवालिस (fenestra ovalis) से क्वडरेट (quadrate) हड्डी की ओर जाती है। इसी से सांप को कम्पनों (vibrations) का अनुभव होता है। इस हड्डी की एक विशेष प्रकार की संरचना के कारण सांप धरती की सतह पर होने वाले कम्पनों के प्रति संवेदनशील होता है लेकिन वायु में होने वाले कम्पनों को ग्रहण नहीं कर पाता। यही कारण है कि सांप अपनी दिशा में जमीन पर लुढ़कती हुई वस्तु के कम्पनों को ग्रहण कर लेता है। ये कम्पन सांप के निचले जबड़े से होते हुए कोलुमेला ऑरिस तक पहुंच जाते हैं।

इस तथ्य का पता लगाने के लिए कि सांप वायु में तथा धरती पर पैदा हुई ध्वनियों को सुनता है या नहीं, बम्बई स्थित हाफकिन इंस्टीट्यूट (Haffkine Institute) में श्रीं पी.जे. देवरस (P.J. Deoras) ने बहुत से प्रयोग किए। उन्होंने एक नाग (Cobra) को टीन के एक बक्से में बंद किया और उस पर संगीत का प्रभाव देखा। जिस संगीत से टीन के डिब्बे में कम्पन पैदा होते थे, उससे सांप फौरन ही अपना फन उठा लेता था। वे अपने सर्पोद्यान (snake-farm) में एक सपेरे को ले गए और उससे बीन बजवायी। बीन जब तक हवा में बजती रही तब तक सांप ने कोई प्रतिक्रिया नहीं की लेकिन जमीन के पास बीन लाने से सांप ने फन उठा लिया।

सांप की अन्य पांच प्रजातियों पर भी ऐसे ही प्रयोग किए गए और उनसे यह निष्कर्ष निकाला गया कि वायु में होने वाली ध्वनि के कम्पनों के प्रति सांप की प्रतिक्रिया बहुत ही कम होती है जबकि ढोल आदि से होने वाले जमीन के कम्पनों के प्रति सांप बहुत संवेदनशील होता है। जमीन में होने वाले कम्पनों से संभवतः सांप के समक्ष एक आकस्मिक भय की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

अतः संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि सांप उन संगीत-ध्वनियों के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील होता है, जो धरती में कम्पन पैदा कर सकती हैं। यही कारण है कि सपेरा नाग का फन उठाने के लिए बीन का एक सिरा सांप से छुआता है या जमीन पर मारता है, जिससे सांप कम्पनों को ग्रहण कर अपना फन उठा लेता है।



क्या कोई मकड़ी चिड़िया भी खा सकती है?

सामान्यतः हम मकड़ियों को छोटे-छोटे कीड़ों को अपने जाल में फंसाकर खाते देखते हैं। कोई मकड़ी चिड़िया भी पकड़कर खा सकती है, यह बात सुनने में जरूर अटपटी लगती है लेकिन उष्णकटिबन्धीय क्षेत्र के कुछ देशों (tropical countries) में कुछ ऐसी बृहताकार मकड़ियां पायी जाती हैं, जो चिड़ियों को पकड़कर खा जाती हैं। इन्हें चिड़िया खाने वाली मकड़ियां (bird eating spiders) कहा जाता है।

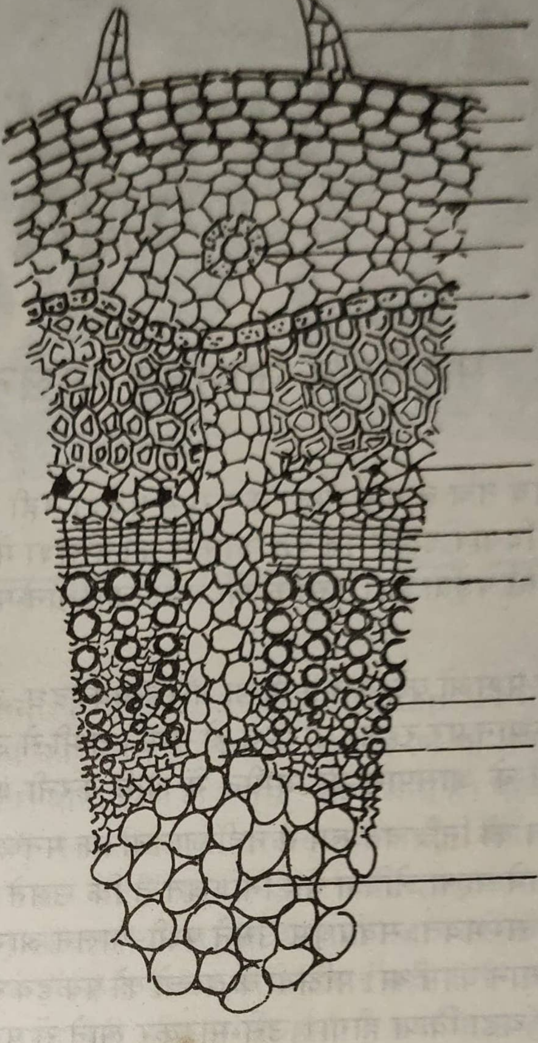
चिड़िया खाने वाली इन मकड़ियों की टांगों का फैलाव लगभग 25 सेमी. तथा शरीर की लम्बाई नौ सेमी. होती है। चिड़ियों के अलावा ये दूसरे छोटे-छोटे जन्तुओं को भी चट कर जाती हैं। ये मकड़ियां मनुष्य के लिए अधिक हानिकारक नहीं हैं लेकिन इनके काटने से बहुत तेज दर्द होता है।

अब तक प्राणी विज्ञान में मकड़ियों की लगभग 30,000 प्रजातियों का अध्ययन हो चुका है। अभी भी मकड़ियों की 20,000 प्रजातियों का अध्ययन होना बाकी है। इनमें से मकड़ियों की कुछ प्रजातियां तो मनुष्य के लिए भी खतरनाक हैं। ब्राऊन रैक्लूज (brown recluse), ब्लैक विडो (black widow), ब्राऊन विडो (brown widow), टैरैनट्यूल (tarantula) आदि कुछ ऐसी मकड़ियां हैं, जो मनुष्य के लिए काफी घातक होती हैं। दक्षिणी यूरोप में पायी जाने वाली वुल्फ स्पाइडर (wolf spider) नामक बृहताकार मकड़ी के काटने से मनुष्य की मृत्यु भी हो सकती है।

चिड़िया खाने वाली मकड़ियां पेड़ की टहनियों या खोखलों में अपने जाले बनाती हैं। कुछ तो जमीन में दो फुट गहरे गड्ढे बनाकर उन्हें अपने जालों से ढक देती हैं। जालों के तन्तु बहुत मजबूत होते हैं। यदि इन जालों में शिकार एक बार फंस जाए तो वह बच कर नहीं जा सकता। जैसे ही शिकार फंसता है, मकड़ी उस पर एक विषैला गंदा तरल पदार्थ फेंकती है। इस पदार्थ के विषैले प्रभाव से शिकार मर जाता है और धीरे-धीरे मकड़ी उसे खा जाती है।

तने का क्या काम है?

सामान्यतः पौधे के उस भाग को, जो जमीन के ऊपर बढ़ता है, हम पौधे का तना कहते हैं। यह परिभाषा मूल रूप से फूल वाले पौधों पर लागू होती है। तना कुछ ऊंचाई तक सीधा ही बढ़ता है फिर यह शाखाओं और टहनियों में बंट जाता है। टहनियों पर ही पत्तियां आती हैं। तने का सिरा भी एक प्रकार की कली होता है, जिससे औक्सिन (Auaxin) नामक हारमोन पैदा होता है। यह हारमोन पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि का नियंत्रण करता है। सिरे की कली में मेरिस्टेम (Merystem) नामक ऊतक (tissue) होता है। यही ऊतक तने की वृद्धि के लिए जिम्मेदार होता है। क्या तुम जानते हो कि तना पेड़ के लिए क्या काम करता है?



पौधे के जीवन के लिए जड़ें और पत्तियां जितनी महत्त्वपूर्ण हैं, तना उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है। लेकिन निश्चय ही यह पौधे को ऊपर उठाता है। इससे पौधा जीवित रहने के लिए उचित मात्रा में वायु और प्रकाश प्राप्त कर पाता है। वास्तव में तने के दो कार्य होते हैं—एक तो पौधे को सीधे रखना और दूसरा पौधे के विभिन्न भागों तक आवश्यक जल और खनिज पदार्थों को पहुंचाना। वास्तव में तना पत्तियों और जड़ों के बीच में एक पुल का काम करता है। तने का आकार बहुत छोटा भी हो सकता है और बहुत विशाल भी लेकिन तना ये दोनों काम अवश्य करता है।

तने दो प्रकार के होते हैं। इन्हें हम हरबेसिअस और वूडी (Herbaceous and Woody) तने कहते हैं। इनमें हरबेसिअस तना वूडी तने की तुलना में कमजोर होता है। इसकी अधिकतर शक्ति इसकी कोशिकाओं में उपस्थित द्रव-दाब से प्राप्त होती है। वूडी तने अधिक मजबूत होते हैं। इन तनों में विशेष प्रकार के तंतु होते हैं, जो इन्हें मजबूती प्रदान करते हैं। इसी शक्ति के कारण तने शेष पेड़ को सीधा रखते हैं।

तने का दूसरा कार्य जड़ों से जल और खनिज पदार्थ लेकर पेड़ के ऊपरी भाग में पहुंचाना होता है। इस कार्य के लिए तने में नलिकाओं जैसी संरचनाएं होती हैं, जो द्रव पदार्थों को ऊपर ले जाती हैं। तने के केन्द्र में जायलम (Xylem) होता है, जो खनिज लवणों से युक्त जल को जड़ों से पत्तियों तक पहुंचाता है। तने की छाल के नीचे फ्लोएम (phloem) होता है, जो कार्बनिक पदार्थों से युक्त घोलों को पत्तियों से पौधे के दूसरे भागों में पहुंचाता है। इस प्रकार हम देखते हैं, कि जायलम द्वारा तरल पदार्थ पौधे के ऊपरी भागों में पहुंचते हैं तथा फ्लोएम द्वारा तरल पदार्थ नीचे की ओर प्रवाहित होते हैं। कुछ तने ऐसे भी होते हैं, जो जमीन के नीचे बढ़ते हैं और कुछ तने जमीन के ऊपर क्षैतिज अवस्था में भी बढ़ते हैं।



मनुष्य ने जानवर पालना कब शुरू किया?

आदिमानव तब तक सभ्यता के युग में प्रवेश नहीं कर पाया जब तक उसने पशुओं को पालना शुरू न कर दिया। इससे पूर्व वह शिकार की तलाश में जंगलों में भटका करता था। इस काम के लिए उसे दूर-दूर तक जाना पड़ता था। इस कारण वह एक स्थान पर ठहर नहीं पाता था और खानाबदोशों की जिन्दगी जीता था।

जैसे ही मानव ने पशुओं को पालना सीखा और उनका दूध, अंडे तथा मांस प्रयोग करना आरम्भ किया, उसी समय से उसका एक स्थान पर रहना आरम्भ हो गया। तभी से उसने अपने हाथों से काम करना शुरू कर दिया और अपनी झोंपड़ियों के आसपास की जमीन में खेती करनी शुरू कर दी।

कोई भी इस बात को निश्चित रूप से नहीं जानता कि मनुष्य ने जानवरों को कब पालना शुरू किया और कौन-से जानवरों को उसने पाला लेकिन यह निश्चित है कि उसने जानवरों का पालना इतिहास-लेखन के शुरू होने से पहले ही किया। सम्भवतः सर्वप्रथम उसने पक्षी-पालन आरम्भ किया क्योंकि जमीन और पेड़ों से पक्षियों के बच्चे प्राप्त करना आसान काम था। पक्षियों के बच्चों को पकड़कर मानव अपनी झोंपड़ी में लाया होगा, जहां उसने उन्हें खिला-पिलाकर बड़ा किया होगा। उसे मारकर खाने से पहले उससे बहुत-से अंडे प्राप्त किए होंगे। पक्षियों को पालतू बनाना बड़े स्तनपायी जन्तुओं की तुलना में उसके लिए बहुत ही आसान काम रहा होगा।

डारविन के एक सिद्धांत के अनुसार यह माना जाता है कि अंडे देने वाली सभी पालतू जातियों का जन्म गैलस बंकिवा (gallus bankiva) नामक एक चिड़िया से हुआ। यह चिड़िया उत्तरी भारत, बर्मा और मलेशिया के कुछ हिस्सों में पाई जाती है। डारविन अपने इस सिद्धान्त के लिए कोई ठोस सबूत न दे पाए। कबूतर, मुर्गियां और बतख आदि भी बहुत पहले मनुष्य ने पालतू बना लिए थे।

गुफाओं पर खुदे कुछ पुराने चित्रों से पता चलता है कि कुत्ता वह सबसे पहला स्तनपायी जन्तु था, जिसे मनुष्य ने पालतू बनाया। इसकी सहायता से वह शिकार करता था। कुत्ते को पालतू बनाने के बाद उसने भेड़, बकरी और सूअरों को पालना आरम्भ किया। ये जानवर सबसे पहले सम्भवतः मध्य एशिया में पाले गए। जानवरों को पालतू बनाने के पीछे आदमी का मुख्य उद्देश्य भोजन प्राप्त करना था। कुत्ते को वह शिकार के लिए प्रयोग करता था तो अन्य जानवरों से वह मांस और दूध प्राप्त करता था। इसके पश्चात् आदमी ने घोड़े को पालतू बनाया। कई शताब्दियों पहले मनुष्य ने हाथी को भी पालतू बनाकर उससे काम लेना शुरू कर दिया। ऐसा विश्वास किया जाता है कि मनुष्य ने लगभग 3600 वर्ष पहले बिल्ली को पालतू बना लिया था। यह काम सबसे पहले मिस्र में किया गया था। यह एक ध्यान देने की बात है कि पिछली कुछ सदियों में मनुष्य ने बहुत ही कम नये जानवरों को पालतू बनाया है। आधुनिक युग में उसकी दिलचस्पी जानवरों में न होकर मशीनों में अधिक हो गई है।



जीव-जन्तु अपने को वातावरण के अनुकूल कैसे ढालते हैं?

सभी प्राणियों में स्वयं को प्राकृतिक परिस्थितियों के अनुसार अनुकूलित (adapt) करने का नैसर्गिक गुण होता है। यहां तक पेड़-पौधे भी अपने आप को अपने आसपासी वातावरण के अनुकूल ढाल लेते हैं। उदाहरण के लिए बलूत (Oak) का पेड़ अपने आपको वातावरण के अनुसार ढाल लेता है। यदि इसे नमी वाले क्षेत्र में उगाया जाए तो इसकी बड़ी-बड़ी पत्तियों से पानी का अधिक वाष्पीकरण होता है। रेगिस्तान में उगने वाले कैक्टस (Cactus) के पौधे अपने तने में जल संचित कर लेते हैं क्योंकि उन्हें पानी बहुत कम मात्रा में मिल पाता है। उनकी पत्तियां भी नहीं होतीं, जिससे उनके जल का वाष्पीकरण नहीं हो पाता। जानवरों की चोंचों की संरचना भी इस प्रकार की होती है कि उन्हें अपना भोजन करने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती। जैसे, कठफोड़ा और किंगफिशर (Kingfisher) की चोंच तलवार की तरह पैनी और लम्बी होती है क्योंकि उन्हें अपने शिकार को छेदना पड़ता है।

प्राकृतिक अनुकूलन दो प्रकार का होता है—व्यक्तिगत अनुकूलन तथा सामूहिक अनुकूलन। व्यक्तिगत अनुकूलन किसी एक प्राणी में होता है और जीवन में एक बार होता है। सामूहिक अनुकूलन किसी समस्त प्राणी वर्ग में होता है और एक लम्बे समय में होता है। मान लो, किसी आदमी को लम्बे समय तक रात में काम पर जाना पड़ता है। स्वाभाविक है कि उसे स्वयं को अपनी नई परिस्थिति के अनुसार ढालना पड़ेगा। आरम्भ में उसे दिन में सोने में कठिनाई अवश्य होगी लेकिन कुछ समय बाद उसे दिन में सोने की आदत पड़ जाएगी।

जिराफ जाति में सामूहिक अनुकूलन हुआ है। हजारों वर्ष पहले जिराफ की गर्दन घोड़ों की तरह छोटी होती थी और वे घास खाते थे। एक बार अफ्रीका में सारी घास सूख गई। जिराफों को जीवित रहने के लिए पेड़ों की पत्तियां खानी पड़ीं। इस संकटपूर्ण परिस्थिति में वही जिराफ जीवित रह पाए जिनकी गर्दन कुछ लम्बी थी। इन जिराफों से पैदा हुए बच्चों की गर्दनें भी लम्बी ही हुईं। जैसे-जैसे समय बीतता गया, पेड़ों की लम्बाई बढ़ती गई और उनकी पत्तियां खाने के लिए उन्हें और ऊंचा होना पड़ा। इस तरह जिराफों की गर्दन लम्बी होती गई और जिराफों ने एक लम्बे समय में अपने आप को वातावरण के अनुकूल ढाल लिया।

यह आवश्यक नहीं कि सभी प्राणी अपने आपको वातावरण के अनुसार ढाल ही लें। जो प्राणी ऐसा नहीं कर पाते, वे विलुप्त हो जाते हैं। डायनोसोर प्राणियों के साथ ऐसा ही हुआ। वे जल्दी ही विलुप्त हो गए।



पतझड़ के मौसम में पत्तियों का रंग क्यों बदल जाता है?

पतझड़ को ध्यान में रख कर हम पेड़ों को दो वर्गों में बांट सकते हैं। पहले वर्ग में वे पेड़ आते हैं, जिनके पत्ते हर वर्ष एक विशेष मास में झड़ते हैं। दूसरे वर्ग में वे सदाबहार पौधे आते हैं, जिनके पत्ते धीरे-धीरे झड़ते हैं और वे पूरे वर्ष हरे-भरे बने रहते हैं। सदाबहार पेड़ों का भी पतझड़ होता है लेकिन एक समय में इनकी कुछ ही पत्तियां झड़ती हैं और यह प्रक्रिया पूरे वर्ष चलती रहती है।

प्रत्येक वर्ष पतझड़ का मौसम आता है। यह समय पेड़ों के विश्राम करने का होता है। इस मौसम में धीरे-धीरे उनकी पत्तियां पीली होने लगती हैं और ऐंठन खाकर जमीन पर गिर जाती हैं। इसके पश्चात् पेड़ लगभग निष्क्रिय रहते हैं। इसके पश्चात् वसन्त ऋतु आने पर ही वे सक्रिय हो पाते हैं। पत्ते झड़ने पर पेड़ों के ठूंठ बहुत ही भद्दे लगते हैं किन्तु पेड़ों के लिए यह बहुत ही आवश्यक है। इस क्रिया के बाद ही पेड़ को नवजीवन प्राप्त होता है। पतझड़ से पहले पत्तियों का रंग पीला, भूरा और लाल हो जाता है। क्या तुम जानते हो कि ऐसा क्यों हो जाता है?

इस तथ्य की विवेचना बहुत ही सरल है। हम जानते हैं कि पौधे जीव वर्ग में आते हैं और जीवित प्राणियों को भोजन की आवश्यकता होती है। यह भोजन उन्हें पत्तियों के कार्बनिक पदार्थों से प्राप्त होता है। जिस तरह जीवित जन्तु अपशिष्ट पदार्थ (waste material) पैदा करते हैं, वैसे ही पेड़-पौधे भी अपशिष्ट पदार्थ बनाते हैं।

जन्तुओं की तरह पेड़-पौधों को भी अपशिष्ट पदार्थों का त्याग करना पडता है। वे तत्काल ऐसा करने में असमर्थ होते हैं। पतझड़ की ऋतु तक उन्हें अपशिष्ट पदार्थों को अपनी पत्तियों के ऊतकों (tissues) में रखना पड़ता है। जब पत्तियों के गिरने का समय आता है, तब तक पौधे पत्तियों के सभी उपयोगी पदार्थों को अवशोषित कर लेते हैं और उनमें केवल अपशिष्ट पदार्थ ही छोड़ते हैं। इन्हीं अपशिष्ट पदार्थों के कारण पत्तियों का रंग पीला, भूरा और लाल हो जाता है।

पेड़ों के लिए पतझड़ एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके द्वारा वे अपने अपशिष्ट पदार्थों का त्याग करते हैं। जब पुरानी पत्तियां गिर जाती हैं तो पत्तों के गिरने के स्थान पर एक पतली-सी परत बन जाती है। यहां पर एक छोटा-सा निशान बन जाता है। यह निशान जाड़ों में आसानी से देखा जा सकता है।



संसार का सबसे बड़ा और सबसे छोटा फूल कौन-सा है?



प्रकृति की दुनिया में हमें भांति-भांति के फूल देखने को मिलते हैं। शायद ही कोई ऐसा रंग होगा, जिस रंग का फूल हमें देखने को न मिलता हो। कुछ फूलों की तो बनावट ही इतनी सुन्दर होती है कि बरबस हमारा मन अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। कुछ फूलों की बनावट कीड़ों और छिपकलियों जैसी भी होती है। अधिकतर फूलों में मनमोहक सुगन्ध होती है। फूलों से पराग-सेचन (pollination) द्वारा फल बनते हैं और फलों से बीज पैदा होते हैं और इस प्रकार पौधे अपने वंश को चलाते रहते हैं। फूलों की इस विशाल दुनिया में क्या तुम जानते हो कि कौन-सा फूल सबसे बड़ा होता है और कौन-सा फूल सबसे छोटा?

संसार का सबसे बड़ा पुष्प रफ्लेसिया आरनोल्डी (Rafflesia Arnoldi) माना जाता है। यह आमतौर पर सुमात्रा के जंगलों में पाया जाता है। इसका व्यास लगभग एक मीटर से कुछ कम होता है। यह दो सेमी. मोटा होता है और इसका भार 11 किलोग्राम तक हो सकता है। यह पांच से सात दिन तक खिला रहता है। इसका रंग लालिमा लिए हुए या संतरे का रंग लिये भूरा होता है। इसमें हल्की-सी मन को अच्छी न लगने वाली गंध होती है, जिसके कारण कुछ मक्खियां आकर्षित हो जाती हैं और संभवतः पराग-सेचन की क्रिया सम्पन्न करती हैं। रफ्लेसिया का पौधा परजीवी होता है अर्थात् यह दूसरे पेड़ों की जड़ों से भोजन लेकर जीता है। इस पौधे में पत्तियां नहीं होती हैं।

संसार का सबसे छोटा फूल अमरीकी पौधे गेलिनसोगा पार्विफ्लोरा (Galinsoga Parviflora) को माना जाता है। इसके पुष्प लगभग एक मिमी. लम्बे होते हैं। इस फूल का रंग सफेद होता है। कुछ नये आंकड़ों के अनुसार पश्चिमी भारत का पिली माइक्रोफाइला (Pilea microphylla) व्यास के अनुसार सबसे छोटा फूल माना जाता है। इस फूल का व्यास 0.35 मिमी. होता है।

इनके अतिरिक्त कुछ और भी फूल हैं, जो अपने आप में बहुत ही विचित्र हैं। जैसे श्वेत गेंदे (White Marigold) का फूल बड़ी मुश्किल से मिलता है। इस पुष्प को सन् 1945 में अमरीका की बर्पी कम्पनी ने 20 हजार डालर का पुरस्कार दिया था, जो एलिसवोंक (Alicevonk) ने प्राप्त किया था। इसी प्रकार सबसे धीरे-धीरे फलने वाले पौधों में पुयु रेमोण्डी (Puyu Raimondi) का पौधा है। इस पौधे पर 150 साल बाद फूल आता है। सेंचुअरी प्लाण्ट्स (Centuary plants) नामक पौधों पर लगभग 40 वर्ष बाद फूल आने शुरू होते हैं। कुछ फूलों की शक्ल बड़ी विचित्र होती है जैसे डुवालिया (Duvalia) नामक फूल का आकार स्टार मछली से मिलता-जुलता है। शूटिंग स्टार नामक फूल ऐसा दीखता है, जैसे तारे टूटकर गिर रहे हों।

जानवरों के पूंछ क्यों होती है?

रीढ़ की हड्डी वाले प्राणियों में मनुष्य को छोड़कर लगभग सभी के पूंछ होती है। वैज्ञानिक विचारधारा के अनुसार, एक समय था जब मनुष्य के पूंछ होती थी लेकिन प्रयोग में न आने के कारण धीरे-धीरे मनुष्य के शरीर से यह लुप्त हो गई। पूंछ का निशान अभी भी हमारे शरीर पर मिलता है। क्या तुम जानते हो कि रीढ़ की हड्डी वाले जानवरों के लिए पूंछ की क्या उपयोगिता है?

सभी जानवरों में गुदा के अन्तिम भाग (post-anal) के पास ही पूंछ होती है। अलग-अलग जीवों के लिए इसकी अलग-अलग उपयोगिता है। मछलियों में पूंछ के चारों ओर पख (fin) होते हैं। मछली को जल में आगे धकेलने के लिए ये बहुत ही महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। इस अंग के विकास और संरचना के विषय में बहुत से लोगों ने अध्ययन किया है। मछलियों की पूंछ कई आकारों की होती है। यह पूंछ मछलियों को तैरने और उछलने में भी मदद करती है।

इसी प्रकार मगरमच्छ, व्हेल आदि की पूंछ आगे बढ़ने में उनकी मदद करती है। मेंढक और टोड में पूंछ केवल लार्वा की अवस्था में होती है। बाद में जैसे-जैसे ये जन्तु बड़े होते जाते हैं, इनके शरीर से पूंछ लुप्त होती जाती है। एक अवस्था विशेष में इनकी पूंछ जमीन एवं पानी में चलने में भी मदद करती है।

रेंगने वाले सभी प्राणियों में ठीक तरह से विकसित पूंछ होती है। पूंछ की यह लम्बाई अलग-अलग जन्तुओं में अलग-अलग होती है। कछुए की पूंछ की लम्बाई बहुत ही कम होती है, जबकि छिपकलियों में यह लम्बाई काफी होती है। छिपकलियों के विषय में यह प्रसिद्ध है कि जब उन पर कोई हमला करता है तो वे पूंछ छोड़कर भाग जाती हैं। पूंछ के कारण ही रेंगकर चलने वाले ये जन्तु टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता तय कर पाते हैं। रेंगने वाले जन्तु पूंछ को अपनी सुरक्षा के लिए भी प्रयोग करते हैं। छिपकलियों की यदि पूंछ कट जाए तो दोबारा से उग आती है। गिरगिट की पूंछ बहुत लम्बी होती है, जिससे यह अपने शिकार को पकड़ने में अतिरिक्त सहायता लेता है। सांप की पूंछ तैरने में सहायता करती है। समुद्री सांपों की पूंछ चप्पू के आकार की होती है।



चिड़ियों की पूंछ बहुत ही छोटी होती है। यह पूंछ परों के आधार का काम करती है। परों की सहायता से ही पक्षियों को उड़ने में सहायता मिलती है।

स्तनपायी जानवरों (mammals) की पूंछ विकसित होती है। इस पूंछ से ये जानवर मक्खियां उड़ाने का काम करते हैं। मनुष्य और एप (ape) के पूंछ नहीं होती है। व्हेल की पूंछ के अन्त में दो हिस्से होते हैं। यह पूंछ उसे तैरने में सहायता देती है। घोड़े की पूंछ पर बहुत लम्बे-लम्बे बाल होते हैं। गिलहरी और कंगारू की पूंछ उन्हें घूमने और कूदने में संतुलन प्रदान करती है। जाड़े के मौसम में जब गिलहरियां शीतस्वाप (hibernation) में होती हैं तो उनकी पूंछ कम्बल का काम करती है। खरगोश अपनी पूंछ का इस्तेमाल खतरे का संदेश देने के लिए करता है। मोर की पूंछ मादा मोर को आकर्षित करती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न जन्तुओं की पूंछ अलग-अलग कार्य करती है।

गर्मियों में कुत्तों की जीभ बाहर क्यों निकली रहती है?

कुत्ता, गाय, हाथी, घोड़े आदि हमारी तरह ही स्तनपायी जीव (mammal) हैं। सभी स्तनपायी प्राणी गर्म रक्त वाले होते हैं। समस्त जन्तु वर्ग में स्तनपायी जीव और पक्षी ही गर्म रक्त वाले प्राणी हैं। इनके अतिरिक्त सभी दूसरे प्राणी ठंडे रक्त वाले प्राणियों की श्रेणी में आते हैं। गर्म रक्त वाले प्राणियों का तापमान स्थिर रहता है जबकि ठंडे रक्त वाले प्राणियों का तापमान वातावरण के तापमान के अनुसार बदलता रहता है।

हमारे शरीर में निरन्तर रूप से ऊष्मा पैदा होती रहती है। इस ऊष्मा का कुछ भाग त्वचा द्वारा वातावरण में जाता रहता है। हमारी त्वचा के नीचे स्वेद-ग्रंथियां (sweat glands) होती हैं। त्वचा में छोटे-छोटे छिद्र होते हैं, जिनसे



पसीना बाहर आता रहता है। पसीने के वाष्पीकरण द्वारा शरीर की ऊष्मा वातावरण में जाती रहती है, जिससे हमें ठंडक का अनुभव होता है।

दुर्भाग्यवश सभी स्तनपायी जीव इस क्रिया द्वारा शरीर की गर्मी बाहर नहीं निकाल सकते। उदाहरण के लिए कुत्ते के अन्दर बहुत ही कम स्वेद-ग्रंथियां होती हैं। इसलिए उसे हमारी तरह पसीना नहीं आता। पक्षी और चूहों को भी पसीना नहीं आता है। अतः यह स्पष्ट है कि अपने शरीर के तापमान-नियंत्रण के लिए कुत्ते को किसी दूसरे तरीके पर निर्भर रहना पड़ता है। शरीर के तापमान को नियंत्रित रखने के लिए ही कुत्ता अपनी जीभ बाहर निकालता है। जब कुत्ता अपनी जीभ बाहर निकालता है तो नाक द्वारा वह वायु को अन्दर ले जाता है और मुंह द्वारा बाहर निकालता है। इस प्रक्रम में मुंह की लार का वाष्पीकरण हो जाता है। इस वाष्पीकरण से कुत्ते को ठंडक का अनुभव होता है और उसे गर्मी से कुछ सीमा तक मुक्ति मिल जाती है। इस प्रकार कुत्ता जीभ बाहर निकालकर अपने शरीर के तापमान को नियंत्रित करता है।

शरीर के तापमान को नियंत्रित रखने का हाथी का तरीका बड़ा ही दिलचस्प है। हाथी की त्वचा बहुत मोटी होती है इसीलिए उसकी त्वचा से अधिक ऊष्मा बाहर नहीं जा सकती। उसके कानों की त्वचा प्रकृति ने बहुत पतली बनाई है, इसलिए हाथी अपने शरीर की ऊष्मा कानों की त्वचा द्वारा निकालकर अपने शरीर का तापमान नियंत्रित करता है। हाथी के कान बहुत बड़े होते हैं, जिन्हें वह पंखे की तरह हिला सकता है और शरीर की ऊष्मा निकाल सकता है। हमारे कानों की त्वचा भी बहुत पतली होती है, जिससे ऊष्मा का काफी अधिक क्षय होता है। यही कारण है कि शरीर की तुलना में हमारे कान अधिक ठंडे रहते हैं।

अतः हम देखते हैं कि यदि किसी व्यक्ति को पसीना आ रहा है या कोई कुत्ता जीभ निकाल कर हांफ रहा है या कोई हाथी कान हिला रहा है तो इसका तात्पर्य है कि वे इन तरीकों द्वारा अपने शरीर का तापमान नियंत्रित करने की चेष्टा कर रहे हैं।

सबसे सुन्दर रेंगने वाला जन्तु कौन-सा है ?



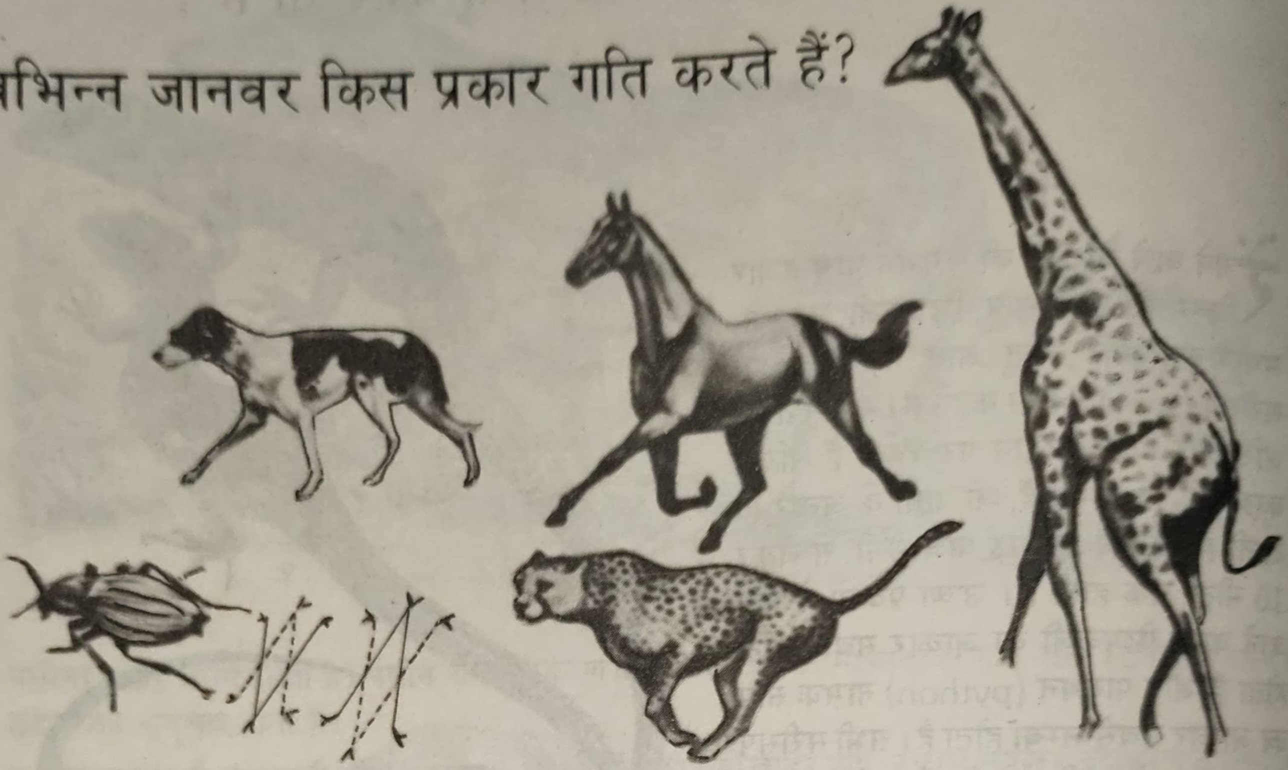
रेंगने वाले जन्तुओं की लगभग पांच हजार किस्में हैं। इनमें सांप, छिपकली, कछुआ, मगरमच्छ आदि जन्तु आते हैं। इन्हें हम सरीसृप (reptiles) भी कहते हैं। सरीसृपों की अधिकतर किस्में जमीन पर रहती हैं लेकिन कुछ ऐसी भी किस्में हैं, जो पानी के अन्दर ही रहती हैं। इनकी लम्बाई पांच सेमी. से लेकर 10 मीटर तक होती है। उष्ण प्रदेशों में पाई जाने वाली छिपकली का आकार सबसे छोटा होता है और पायथन (python) नामक सांप का आकार सबसे लम्बा होता है। सभी सरीसृप ठंडे रक्त वाले प्राणी होते हैं। वैसे तो ये धरती पर सभी जगह पाए जाते हैं लेकिन उष्ण प्रदेशों में ये अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। क्या तुम जानते हो कि इन रेंगने वाले जन्तुओं में सबसे सुन्दर प्राणी किसे माना जाता है?

सरीसृपों में सबसे सुन्दर जन्तु यूरोप की हरी छिपकली है। यूरोप में पाई जाने वाली छिपकलियों में लम्बाई की दृष्टि से इसका दूसरा स्थान है। इस जाति की नर छिपकली की लम्बाई 16 इंच तक पायी जाती है, जिसमें 10 इंच तो इसकी पूंछ की ही लम्बाई होती है। यूरोप में पाई जाने वाली सबसे लम्बी छिपकली का नाम आईडलिजार्ड (Eyedlizard) है, जिसकी लम्बाई दो फुट तक होती है।

यह हरे रंग की छिपकली ग्रेट ब्रिटेन को छोड़कर यूरोप में सभी जगह पाई जाती है। ग्रेट ब्रिटेन में भी इनके पालने का प्रयास किया गया लेकिन असफलता ही हाथ लगी। शायद तेज ठंड के कारण वहां ये अधिक दिन जीवित नहीं रह पातीं।

हरे रंग की यह मोहक छिपकली पालतू जन्तु बेचने वाली दुकानों पर बेची जाती है। इसके आकर्षक रंग और सुन्दर बनावट के कारण लोग इसे चाव से खरीदते हैं। इन्हें पालतू बनाना कोई कठिन कार्य नहीं है लेकिन इन्हें उचित देखभाल की आवश्यकता होती है। ये कीड़े-मकौड़े खाकर जिन्दा रहती हैं।

विभिन्न जानवर किस प्रकार गति करते हैं?



हमारी धरती पर लाखों प्रकार के जन्तु पाए जाते हैं। वे सैंकड़ों प्रकार से गति करते हैं जैसे—घूमना, दौड़ना, कूदना, रेंगना, तैरना, उड़ना, ग्लाइड करना, आदि। विभिन्न जानवरों की विभिन्न प्रकार की गतियां हैं। इस लेख में विभिन्न जानवरों की गति करने की विधियों का वर्णन किया गया है।

सबसे पहले हम जमीन पर चलने वाले जानवरों की गतियों का वर्णन करेंगे।

घूमना : कुत्ते जैसे चार टांगों वाले जानवर अपनी एक ओर की आगे की टांग के साथ दूसरी ओर की पीछे की टांग को गति कराते हैं। जिन कीड़ों की छः टांगें होती हैं, वे एक ओर की आगे और पीछे की टांगों को गति कराते हैं, जबकि दूसरी ओर की बीच की टांग को जमीन पर टिकाए रहते हैं, जिससे उनका शरीर दूसरी तीन टांगों पर भली-भांति संतुलित रहता है।

कदम चाल से चलना : हाथी, जिराफ, ऊंट और कुछ दूसरे ऐसे ही जानवर अपनी एक तरफ की दोनों टांगों को एक साथ चलाते हैं।

दुलकी चाल : इस प्रकार की चाल घोड़ों, पशुओं और बहुत से दूसरे चार टांगों वाले जानवरों द्वारा चली जाती है। इस प्रकार गति करने में कम शक्ति लगानी पड़ती है। यह चाल काफी दूरी तक समान रूप से चली जा सकती है।

चौकड़ी भरना : इस प्रकार की गति में थोड़ी दूरी के लिए चारों पैर हवा में रहते हैं। यह थकान पैदा करने वाली गति है। हिरण प्रायः इसी प्रकार से गति करता हुआ दौड़ता है।

कूदना : कंगारू, मेंढक, टिड्डा और पिस्सु कूदकर चलने वाले जन्तुओं की श्रेणी में आते हैं। ये विभिन्न ऊंचाइयों तक कूद सकते हैं। पिस्सु को तो लंबी कूद का चैम्पियन माना जाता है।

सिकुड़कर और फैलकर गति करना : केंचुआ और घोंघा आदि ऐसे जन्तु हैं, जो अपने शरीर को सिकोड़कर और फैलाकर गति करते हैं। मांसपेशियों के सिकुड़ने और फैलने से इनके शरीर में आगे से पीछे की ओर एक लहर-सी पैदा होती है।

रेंगना : रेंगने वाले जन्तुओं में सांप सबसे प्रसिद्ध हैं। रेंगने के लिए यह जन्तु अपने शरीर को सिकोड़ता है और फिर ढीला छोड़ देता है। सांप के शरीर पर बने शल्क (scales) इस प्रकार की गति करने में उसकी सहायता करते हैं।

तरंगमय गति : छिपकली तरंगमयी या लहराती हुई गति करती है। यह अपनी टांगों को एक रेंगते हुए बच्चे की तरह प्रयोग में लाती है। इसके पेट के जमीन के साथ लगे होने के कारण इसकी गति लहरदार हो जाती है। मगरमच्छ, गोह आदि भी इसी प्रकार की गति करते हैं।

अब हम जल में विचरण करने वाले जन्तुओं की गति पर विचार करते हैं।

मछली का तैरना : मछली अपनी पूंछ तथा पखों (fins) को गति देकर तैरने की क्रिया करती है।

अमीबा जैसी गति : अमीबा एक छोटा-सा जन्तु है, जिसका शरीर जेली जैसा होता है। यह अपने शरीर से एक लचीला अंग बाहर निकालता है और फिर अपने समस्त शरीर को इसमें प्रवेश करा देता है। इस प्रकार यह गति करता है।

सिलिअरी (Ciliary) गति : प्रोटोजोआ जैसे जन्तुओं में बहुत ही पतले तन्तु होते हैं, जिन्हें सिलिया या फ्लेजला कहते हैं। वे पानी में इन्हीं के सहारे तैरते हैं।

लहरदार गति : ईल और सांप जैसे जन्तु समस्त शरीर की लहरदार गति के द्वारा पानी में तैरते हैं। यह गति उनके शरीर के लचीलेपन के कारण ही संभव हो पाती है।

नाव जैसी गति : बतख, कछुआ आदि ऐसे जन्तु हैं, जो अपने पैरों से चप्पुओं का काम लेकर तैरते हैं।

डोर्सल फिन (Dorsal fin) के द्वारा गति : एक समुद्री घोड़ा अपने डोर्सल फिन की गति द्वारा लहरदार तरीके से पानी में तैरता है।

अब हम वायु में उड़ने वाले जन्तुओं की उड़ान पर विचार करते हैं।

उड़ान : पक्षी, चमगादड़ और बहुत से कीड़े हवा में अपने पंखों को ऊपर-नीचे फड़फड़ाकर उड़ान भरते हैं। चूंकि पंखों का क्षेत्रफल काफी होता है, इसलिए वे जन्तु को वायु में संतुलित रखने और आगे बढ़ने में मदद करते हैं।

हवा में तैरना (Gliding) : उड़ने वाली गिलहरी और उड़ने वाले सांपों के शरीर के दोनों ओर त्वचा की एक पतली-सी चादरनुमा झिल्ली होती है। यह झिल्ली इन जन्तुओं को हवा में तैरते समय संतुलित रखती है। इसके सहारे ये एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर ग्लाइड करते हुए जा सकते हैं। कई प्रकार की छिपकलियां भी इसी प्रकार हवा में ग्लाइड करती हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न प्रकार के थल, जल और वायु के जानवर विभिन्न प्रकार की गतियां करते हैं।

क्या पक्षी मरने के लिए अपने आपको समर्पित करते हैं?

हमारे देश के असम राज्य में जटिंगा (Jatinga) नामक गांव में एक बड़ी ही रहस्यमय बात देखने को मिलती है। वहां रात्रि में बहुत से पक्षी प्रकाश से आकृष्ट हो लैम्पों के पास आ बैठते हैं। ग्रामवासी इन पक्षियों को पकड़कर खा जाते हैं। यह रहस्यमय बात संसार में केवल इसी गांव में होती है। किसी को आज तक नहीं मालूम हो

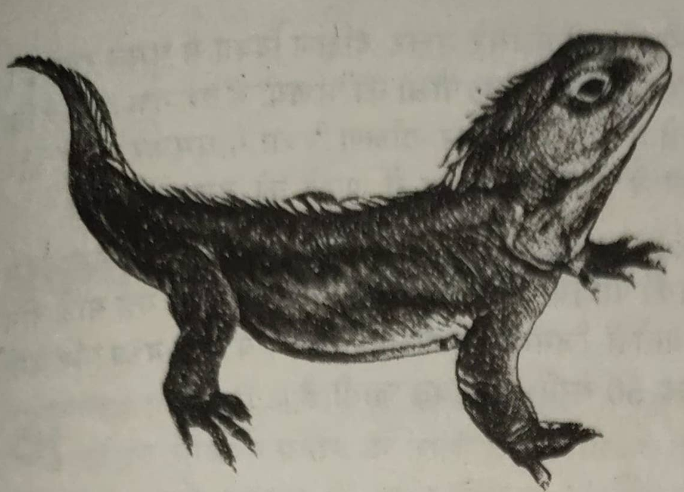


पाया कि ऐसा क्यों होता है? यह गांव 1895 में बसा और इस रहस्य की जानकारी लोगों को 1905 में हुई। जटिंगा का क्षेत्रफल लगभग दो वर्ग किमी. है। यहां लगभग डेढ़ हजार लोग रहते हैं।

सन् 1978 में भारत के जीवविज्ञान सर्वेक्षण विभाग, कलकत्ता (Zoological Survey of India, Calcutta) के श्री सुधिन सेनगुप्ता (Shri Sudhin Sengupta) इस गांव में गए और सितम्बर-अक्तूबर में 18 दिन तक उन्होंने इस रहस्य के बारे में जानकारी पाने की कोशिश की। रात के समय उन्होंने कई जगहों पर लैम्प जलाकर रख दिए। लैम्प डेढ़ मीटर लम्बे बांसों पर लटकाए गए थे। पांच-दस मिनट बाद ही पक्षियों ने जलते लैम्पों की ओर आना शुरू कर दिया। कुछ मिनटों तक प्रकाश के चारों ओर मंडराने के बाद ये पक्षी जमीन पर आकर बैठ गए। उन्हें आसानी से पकड़कर खुली टोकरियों में डाल दिया गया फिर भी उन्होंने उड़कर भागने की कोशिश नहीं की। लगातार कई रात तक यह क्रम दोहराया गया।

अपने इन प्रेक्षणों (observations) के आधार पर श्री सेनगुप्ता ने निष्कर्ष निकाला कि प्रकाश की ओर पक्षियों के आने के लिए आकाश में घने बादल छाए होने चाहिएं। दक्षिण से उत्तर की ओर तेज हवा चलनी चाहिए। रात अंधेरी होनी चाहिए। एक अन्य विशेष बात यह भी देखी गई कि जटिंगा रेलवे स्टेशन और गांव के स्वास्थ्य केन्द्र (Health Centre) के बीच पक्षी कहीं अधिक संख्या में आते हैं। इन पक्षियों में कबूतर, कोयल, सारस, कठफोड़ा, पेंडुकी (dove), बुलबुल तथा कई अन्य पक्षी भी थे।

ये पक्षी रात्रि में अपनी जान देने के लिए प्रकाश की ओर क्यों खिंचे चले आते हैं। इस विषय में कोई विशेष जानकारी नहीं है। हो सकता है कि उस क्षेत्र के पक्षी प्रकाश के प्रति संवेदनशील हों या अवरक्त किरणों (infrared rays) के प्रति संवेदी (sensitive) हों। प्रामाणिक तथा वैज्ञानिक दृष्टि से इस विचित्र प्रक्रिया की व्याख्या अभी तक नहीं हो पायी है।



क्या किसी प्राणी के तीन आंखें भी होती हैं?

टुआटेरा (Tuatara) या स्फेनोडोन पंक्टेटस (sphanodon punctatus) छिपकली जैसा एक ऐसा विचित्र जन्तु है, जिसके तीन आंखें होती हैं। सरीसृप वर्ग में यह एक मात्र प्राणी है जिसे एक अलग प्रजाति रिंकोसिफैलिया (Rhynchocephalia) में रखा गया है। यद्यपि यह छिपकली से मिलता-जुलता है लेकिन इसकी आन्तरिक संरचना काफी भिन्न होती है। यह विचित्र जन्तु न्यूजीलैंड और उसके समीपवर्ती द्वीपों में पाया जाता है। यह जन्तु 70 सेमी. तक लम्बा और लगभग एक किग्रा. वजन तक होता है।

यह जन्तु आज से 20 करोड़ वर्ष पूर्व भी धरती पर पाया जाता था लेकिन तब इसकी संरचना आज की तुलना में काफी भिन्न थी। इस जन्तु की सबसे बड़ी विचित्रता यह है कि इसके तीन आंखें होती हैं। शंकु आकृति की तीसरी आंख को पाइनिअल आई (Pineal eye) कहते हैं। यह सिर के बीच मस्तिष्क के ऊपर एक छेद में स्थित होती है। इस आंख के ऊपर एक झिल्ली होती है, जो क्षैतिज (horizontal) अवस्था में बन्द होती है। इस आंख का इस प्राणी के लिए क्या महत्त्व है इस विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता लेकिन निश्चित रूप से आदि जन्तुओं में इसका महत्त्व अवश्य रहा होगा।

यह प्राणी रात्रि में क्रियाशील होता है। यह आमतौर पर बिलों में रहता है। यह एक डरपोक किस्म का जंतु है। इसका मुख्य भोजन कीड़े-मकोड़े, चिड़ियों के अंडे, मेंढक, चूहे जैसे छोटे जन्तु होते हैं।

टुआटेरा की उम्र 77 वर्ष से भी अधिक होती है। कुछ टुआटेरा तो 100 वर्ष तक भी जिन्दा रहते हैं। मादा टुआटेरा बसन्त ऋतु में अपने बिल से कुछ दूर 8 से 15 तक अंडे देती है। अगली बसन्त ऋतु में इन अंडों से बच्चे निकलते है अर्थात् अंडों से बच्चे निकलने में एक वर्ष से भी अधिक का समय लग जाता है।

यह विचित्र जन्तु अब विलुप्त होता जा रहा है। न्यूजीलैंड सरकार इनकी सुरक्षा के लिए काफी प्रबन्ध कर रही है ताकि इन्हें लुप्त होने से रोका जा सके।

किस पौधे की पत्तियां उत्तर-दक्षिण दिशा में रहती हैं?

चुम्बकीय सुई के दो सिरों की उत्तर-दक्षिण में ठहरने की बात तो हम सबने सुनी है। किसी पौधे की पत्तियां भी हमेशा उत्तर-दक्षिण दिशा की ओर इंगित करती हैं–सुनने में यह बात कुछ अटपटी सी लगती है लेकिन है यह बिलकुल सच! कम्पास प्लाण्ट (Compass Plant) नामक पौधे की पत्तियां सदैव उत्तर-दक्षिण दिशा में ठहरती हैं। क्या तुम जानते हो ऐसा क्यों होता है?

कम्पास प्लाण्ट एक प्रकार की घास है, जिसकी नीचे वाली पत्तियों के सिरे उत्तर-दक्षिण दिशा में घूमते रहते हैं। वास्तव में यह क्रिया प्रकाश के प्रति संवेदनशीलता के कारण होती है। कुछ पौधों की पत्तियों में यह गुण होता है कि वे प्रकाश की ओर बढ़ती हैं। इसी गुण के कारण इस पौधे की पत्तियां उत्तर-दक्षिण दिशा में घूमकर सुबह और दोपहर बाद पूरी तरह प्रकाश प्राप्त कर लेती हैं लेकिन वे दोपहर की धूप से अपने को बचा लेती हैं।

कम्पास प्लाण्ट का एक दूसरा नाम पायलट वीड (Pilot Weed) भी है। यह पौधा सिलफीयम लेसिनाइटम (Silphium Laciniatum) परिवार में आता है। इसकी पत्तियां भाले के आकार की होती हैं। यह साढ़े तीन मीटर ऊंचाई तक बढ़ सकता है। इस पर बड़े-बड़े फूल आते हैं, जिनका रंग पीला होता है। ये पौधे मध्य पश्चिमी अमरीका में मिलते हैं। इस पौधे की पत्तियों की लम्बाई 50 सेमी. तक बढ़ जाती है।



स्किंक (Skink) आंखें बंद करके कैसे देखते हैं?

स्किंक नामक जन्तु का संबंध छोटी छिपकलियों की एक प्रजाति से है। यह जन्तु संसार के गर्म देशों में पाया जाता है। प्राणी विज्ञान की दृष्टि से यह सिंसिडाई (cincidae) परिवार के अन्तर्गत आता है। इसकी लगभग 600 किस्में हैं। यह एक बहुत ही डरपोक किस्म का जन्तु है।

इस जन्तु की टांगें बहुत छोटी और पतली होती हैं। इसके शरीर की ऊपरी त्वचा काफी चिकनी होती है। इसका सिर छोटा और नुकीला होता है। यह लहरा-लहरा कर चलता है। इसका एक गुण यह भी है कि मिट्टी में धंसते समय यह अपने अंगों को सिकोड़ सकता है। स्किंकों की कुछ प्रजातियों की टांगें उनके शरीर के अनुपात में बहुत छोटी होती हैं। कुछेक में तो टांगों के केवल चिह्न भर ही होते हैं।

स्किंक की सबसे बड़ी विचित्रता यह है कि यह अपनी आंखें बन्द करके भी देख सकता है। यह जन्तु अधिकतर जमीन के अन्दर रहता है तथा कीड़े-मकोड़े खाता है। जमीन में बिल बनाते समय या कूड़े-करकट में से कीड़े-मकोड़े पकड़ते समय यह अपनी आंखें बन्द कर लेता है। इसकी आंख में एक स्थायी पारदर्शक झिल्ली होती है, जो आंखें बन्द करने पर काम करती है। चूंकि यह झिल्ली पारदर्शक होती है, इसलिए स्किंक आंखें बंद करके भी देख सकता है। दूसरे शब्दों में, स्किंक की आंखें बंद होने पर भी खुली रहती हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि स्किंक आंखें बन्द क्यों करता है? जब कूड़े-करकट और मिट्टी में यह प्रवेश करता है तो इसे आंखों में धूल-मिट्टी जाने का डर रहता है। धूल-मिट्टी से सुरक्षा के लिए यह आंखें बंद करता है। पलकों के पारदर्शी होने के कारण इसे आंख बंद करके भी काम करने में किसी प्रकार की कठिनाई महसूस नहीं होती।

अफीम का पौधा कहां उगता है?



अफीम एक ऐसी औषधि है, जो सारे संसार में बहुत अधिक मात्रा में प्रयोग की जाती है। विशेष रूप से पूर्वी देशों में इसे तम्बाकू की भांति पीया या चूसा जाता है। अफीम, पोपी (Poppy) नामक पौधे के कच्चे फलों के दूधिया रस से प्राप्त होती है। पोपी से जब दूधिया रस निकाला जाता है तो प्रकाश पड़ने पर इसका रंग काला होता जाता है और यह गाढ़ा और सख्त होता जाता है। इस गाढ़े रस को गोलियों के रूप में बदलकर रिफाइनरी में भेज दिया जाता है, जहां इससे बहुत सी औषधियां बनाई जाती हैं।

कच्ची अफीम टुकड़ों के रूप में बाजार में बेची जाती है लेकिन इसके बेचने पर सभी जगह प्रतिबन्ध लगा हुआ है। अफीम का सबसे अधिक उपयोग औषधि क्षेत्र में है। शुद्ध अफीम से मॉरफीन और कोहीन जैसी औषधियां बनाई जाती हैं। कच्ची और शुद्ध अफीम तथा इससे बनी हेरोइन गैर-कानूनी रूप से भी बेची जाती है।

अफीम का दर्दनाशक प्रभाव इसके ऐलकालायड्स (alkaliods) में होता है। मॉरफीन इसका एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण ऐलकालायड है। इसके ऐलकालायड दो प्रकार के होते हैं—पहले प्रकार के ऐलकालायड्स में मॉरफीन, कोहीन और थायडीन आते हैं। ये सभी औषधियां तंत्रिका संस्थान पर प्रभाव डालती हैं। ये दर्दविनाशक औषधियां हैं। पैपावरिन नौसकैपिन आदि दूसरे प्रकार के ऐलकालायड हैं, जो मांसपेशियों के अनैच्छिक तनाव को ढीला करने के काम आते हैं। बड़े लम्बे अरसे से डाक्टर लोग तेज दर्द से छुटकारा पाने के लिए मॉरफीन का इस्तेमाल करते आ रहे हैं।

दर्द के उपचार के लिए अफीम के ऐलकालायड्स मुंह के द्वारा या इंजेक्शनों के द्वारा दिए जाते हैं। दस्तों को रोकने के लिए भी अफीम का प्रयोग किया जाता है।

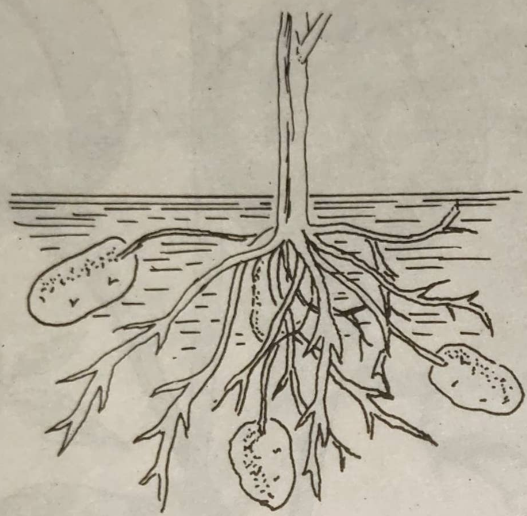
अफीम के एक औषधि के रूप में प्रयुक्त होने के विषय में बहुत से प्राचीन ग्रंथों में प्रमाण मिलते हैं। ऐसा कहा जाता है कि पोपी के पौधे यूनान और मैसोपोटामिया से समस्त विश्व में फैल गए। भारत और चीन में अफीम के विषय में जानकारी बहुत पुरानी नहीं है। इन देशों में इसके पौधे उगाने का रिवाज तुलनात्मक रूप से कुछ नया है। अफीम की खेती का ज्ञान चीन में लगभग सातवीं शताब्दी में पहुंचा लेकिन जापान में इसकी काश्त पन्द्रहवीं शताब्दी में ही आरम्भ हो पायी।

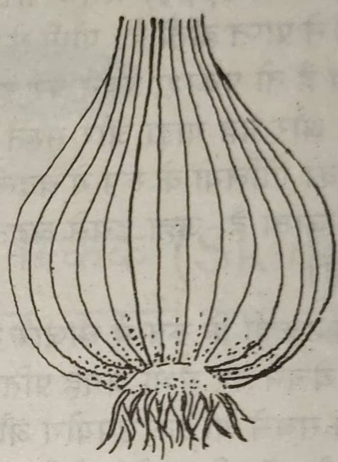
प्रथम और द्वितीय महायुद्धों के दौरान पश्चिमी मैक्सिको के पर्वतों की घाटियों में अफीम की गैरकानूनी खेती होने लगी थी। इसके बाद कुछ हद तक यह खेती पेरू (Peru) में भी होने लगी थी।

अफीम की कानूनी और गैरकानूनी खेती एशिया में मुख्य रूप से होती है। तुर्की और भारत विश्व में सबसे अधिक अफीम उत्पादन करने वाले देश हैं तथा ये ही सबसे अधिक अफीम का निर्यात भी करते हैं। विश्व बाजार में अफीम की खपत अब 750 टन प्रति वर्ष से भी अधिक हो गई है।

अफीम के निरन्तर प्रयोग से शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। लत पड़ जाने पर इसे छोड़ पाना लगभग असंभव होता है। औषधि के अतिरिक्त इसका प्रयोग किसी भी हालत में नहीं किया जाना चाहिए।

पाले (Frost) से पौधे अपनी रक्षा कैसे करते हैं?


Tuber of potato


Bulb of onion

संसार में लाखों किस्म के पौधे देखने को मिलते हैं। ये सभी पौधे आंधी, वर्षा, धूप और बर्फ के आक्रमणों से अपने-आपको बचाए रखने के लिए संघर्ष करते रहते हैं। कुछ पौधे शीतकाल आने पर पाले के कारण मर जाते हैं लेकिन शरद काल में वे अपने बीज जमीन पर बिंखेर देते हैं। बसन्त ऋतु में इनसे नये पौधे उगकर इनका स्थान ग्रहण कर लेते हैं। कुछ पौधे ऐसे भी हैं, जो शीतकाल की ठंड से अन्य तरीकों से अपनी रक्षा कर लेते हैं।

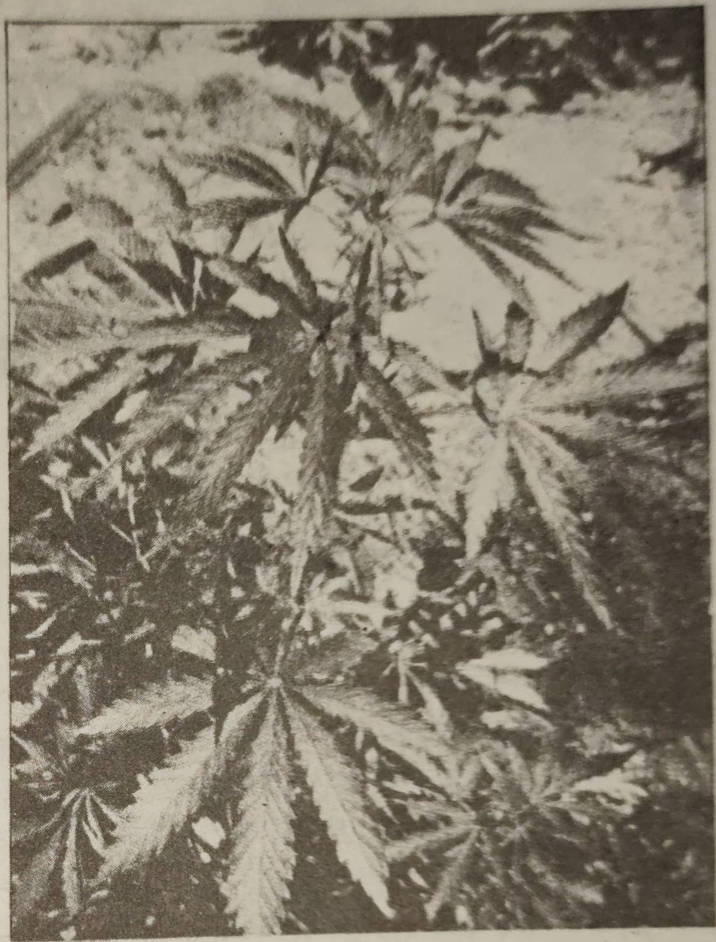
शीतकालीन पाले से अपने को बचाने के लिए पौधे एक विशेष तरीका अपनाते हैं। इस तरीके में वे अपनी पत्तियां फैलाकर जमीन के साथ सटा लेते हैं। इससे जमीन की गर्मी पत्तियों में आती रहती है जिससे जाड़े की ऋतु की ठंड से उनकी रक्षा हो जाती है। वायलट (violet) नाम का पौधा ऐसा ही करता है।

मेंहदी (myrtle) और हीथर (heather) नामक झाड़ीदार पौधे अपने ऊपरी भाग को तो मर जाने देते हैं लेकिन तने वाले भाग को जीवित रखते हैं। इसी तने वाले भाग से वे उपयुक्त मौसम आने पर नई कलियों को जन्म देते हैं और इस प्रकार वे अपने वंश को जीवित रखते हैं।

बहुत से दूसरे पौधे अपने आपको ठंड से बचाने के लिए स्वयं को मिट्टी में धंसा लेते हैं। इस श्रेणी में ट्यूबर (tuber), बल्ब (bulbs) और कुछ जड़े आती हैं, जो अपना भोजन आवश्यकतानुसार अपने अन्दर जमा कर लेती हैं। जब गर्मी का मौसम आता है तो जमीन से हरी पत्तियां और नई कलियां बाहर निकलने लगती हैं।

पौधों को पाले से बचाने के लिए कभी-कभी मानव अपने बनाए हुए साधनों का प्रयोग करता है। उन क्षेत्रों में जहां खट्टे फल उगाए जाते हैं, वहां तेल के हीटर प्रयोग में लाए जाते हैं। कहीं-कहीं विशाल पंखे भी प्रयोग में लाए जाते हैं। इनकी हवा से ठंडी हवा इधर-उधर फैल जाती है, जिससे पाला फलदार पेड़ों पर जमा नहीं हो पाता है।

हशीश (Hashish) किस पौधे से प्राप्त की जाती है?



हशीश शब्द अरबी भाषा का है, जिसका अर्थ है–सूखा हुआ पौधा। हशीश को हैम्प (Hemp) नामक पौधे से प्राप्त किया जाता है। वास्तव में मरिजुआना (marijuana) और हशीश दोनों ही 'हैम्प' नामक पौधे से प्राप्त किये जाते हैं लेकिन मरिजुआना की तुलना में हशीश का प्रभाव तीव्रतर होता है। इन दोनों ही पदार्थों में टैट्राहाइड्रोकैनेबिनोल नामक कार्बनिक पदार्थ होता है।

हैम्प एक लम्बा, साल भर जीवित रहने वाला पौधा है, जिसकी खेती सामान्यतः इसके रेशे और बीज प्राप्त करने के लिए की जाती है। इस पौधे से एक विशेष प्रकार का तेल भी निकलता है, जिसका इन दोनों औषधियों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है। इस पौधे से टैट्राहाइड्रोकैनेबिनोल से युक्त रेजिन प्राप्त होता है, जिसका हशीश बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

हैम्प का पौधा उष्ण प्रदेशों में बड़ी तेजी के साथ बढ़ता है। इसकी जड़ें लम्बी होती हैं। इसका तना खोखला होता है, जो छह मीटर की लम्बाई तक बढ़ सकता है। एक डाल पर पांच से सात पत्तियों का समूह होता है। हैम्प के रेशे बहुत लम्बे होते हैं, जिनकी वृद्धि छाल के अन्दर होती रहती है। इन रेशों से रस्सी, नौका के पालों का कपड़ा, तम्बू और कालीन बनाये जाते हैं। हैम्प के बीज व्यापारिक पैमाने पर चिड़ियों के भोजन के लिए भी प्रयोग किये जाते हैं। इसके बीजों में 30% तक तेल होता है, जिसका पेण्ट और साबुन उद्योग में प्रयोग किया जाता है।

हशीश और मरिजुआना के प्रभाव व इनकी तीव्रता, मात्रा तथा प्रयोग करने वाले के माद्दे पर निर्भर करते हैं। इन नशीली औषधियों का प्रयोग करने में एक प्रकार की कृत्रिम प्रसन्नता का अनुभव होता है। अधिक मात्रा में इनके सेवन से दृष्टि, समय और दूरियों से संबंधित विकार पैदा हो जाते हैं। मिनटों का समय घंटों जैसा लगने लगता है और छोटी दूरियां बहुत लम्बी दीखने लगती हैं। इनके प्रयोग से संवेदनशीलता और भावुकता बहुत अधिक बढ़ जाती है। यदि कोई व्यक्ति उदासी और अवसाद की स्थिति में है तो इनके प्रयोग से ये स्थितियां और भी बढ़ सकती हैं। इन औषधियों के लेने से आंखें लाल हो जाती हैं, दिल की धड़कन बढ़ जाती है, रक्तचाप गिर जाता है और भूख बढ़ जाती है। हशीश का प्रयोग करने और इसे निजी रूप से रखने पर कई देशों की सरकारों ने कड़ा प्रतिबन्ध लगा रखा है। हशीश के लाने-ले जाने पर भी प्रतिबंध है।



रात की रानी के फूल रात को ही क्यों खिलते हैं?

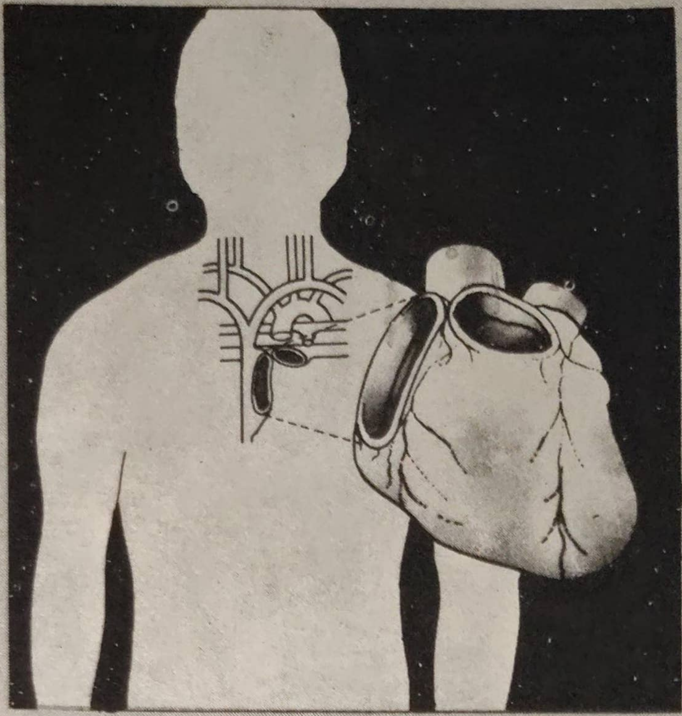
बहुत से जीव रात्रि को ही क्रियाशील होते हैं। इन्हें हम सामान्य भाषा में निशाचर कहते हैं। इसी प्रकार बहुत से पौधों के फूल केवल रात्रि में ही खिलते हैं। ऐसे पौधों को रात्रि में खिलने वाले पौधे कहा जाता है। रात की रानी का पौधा भी ऐसा ही होता है। हनि-सकल (honey suckle) और नाइटशेड परिवारों के पौधे भी ऐसे ही होते हैं। क्या तुम जानते हो कि रात की रानी जैसे पौधों के फूल रात को ही क्यों खिलते हैं?

जिन पौधों के फूल रात में खिलते हैं, उन फूलों में बहुत ही मनमोहक सुगन्ध होती है। इस सुगन्ध के कारण पतंगे (moth) जैसे रात्रि में क्रियाशील प्राणी इन पौधों की ओर आकर्षित हो जाते हैं। जब ये कीड़े फूल पर आकर बैठते हैं तो इनके पंखों से परागकण चिपक जाते हैं। जब कोई कीड़ा एक पौधे से दूसरे पौधे पर जाता है तो ये परागकण दूसरे फूल तक पहुंच जाते हैं। इस प्रकार पराग-सेचन (pollination) की क्रिया सम्पन्न हो जाती है। अतः हम कह सकते हैं कि रात की रानी के फूल रात में उन कीड़ों को आकर्षित करन के लिए ही खिलते हैं, जो पराग-सेचन की क्रिया में सहायक होते हैं। फूलों से बने फल और फलों से प्राप्त बीजों से ही नए पौधों का जन्म होता है और इस प्रकार पौधों का वंश चलता रहता है।

रात्रि में अक्सर वे फूल खिलते हैं, जो दिन के समय सूर्य की गर्मी और प्रकाश को सहन नहीं कर सकते। रात की रानी के फूल भी ऐसे ही होते हैं। सूरज की गर्मी से ये जल्दी ही मुरझा जाते हैं, इसीलिए ये रात्रि में खिलते हैं।

रात्रि में खिलने वाले फूलों के विषय में एक तथ्य और भी है। इन फूलों का रंग बहुत चमकीला नहीं होता क्योंकि यह रंग रात्रि के अंधेरे में दिखाई नहीं देते। इसलिए कीड़ों को आकर्षित करने में इन रंगों का कोई अधिक महत्त्व नहीं होता। रात्रि में खिलने वाले अधिकतर फूलों का रंग सफेद होता है क्योंकि सफेद रंग रात्रि के अंधेरे में भी स्पष्ट दिखाई देता है तथा कीड़ों को आकर्षित करने में सहायक होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रात्रि में वे ही फूल खिलते हैं, जो दिन की गर्मी को सहन नहीं कर पाते। इनका रंग अक्सर सफेद होता है तथा उनमें कीड़ों को आकर्षित करने के लिए एक मनमोहक सुगन्ध होती है।





4

मानव शरीर

सन्धिवात (Arthritis) रोग क्या है?



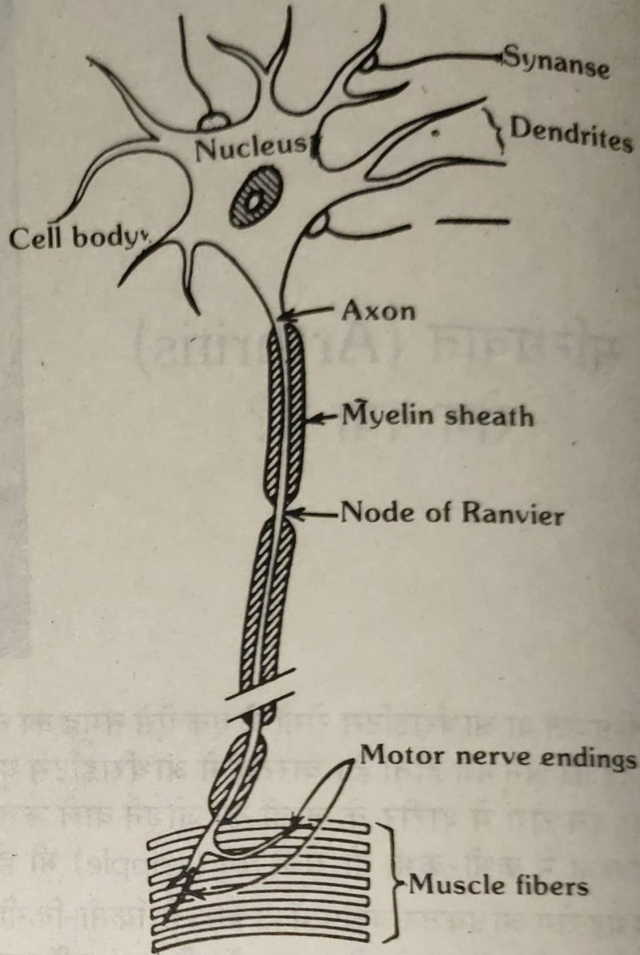
सन्धिवात या आर्थराइटिस रोगों के एक ऐसे समूह का नाम है, जिनमें शरीर के विभिन्न जोड़ों या सन्धियों में दर्द का अनुभव होता है। वास्तव में आर्थराइटिस यूनानी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है—जोड़ों की सूजन। इस रोग में शरीर के जोड़ों को जोड़ने वाले ऊतकों (tissues) में सूजन आ जाती है। इस रोग की चरमावस्था में कभी-कभी तो रोगी पंगु (cripple) भी हो जाता है।

यद्यपि यह रोग अधिकतर बढ़ापे में ही होता है, किसी-किसी को यह छोटी उम्र में भी हो जाता है। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार इस रोग से पुरुषों की तुलना में महिलाएं कहीं बहुत अधिक संख्या में प्रभावित होती हैं। यह रोग केवल मनुष्यों को ही नहीं, पशुओं को भी होता है। वैज्ञानिकों को इस बात के प्रमाण मिल चुके हैं कि प्रागैतिहासिक काल के डायनोसोर (Dinosaurs) नामक विशालकाय जीव भी इस रोग से पीड़ित हुए थे।

आर्थराईटिस कई प्रकार के होते हैं लेकिन इस रोग के सही कारणों का पता अभी नहीं चल पाया है। कुछ प्रकार के आर्थराईटिस चोट लगने से तथा कुछ प्रकार के आर्थराइटिस रक्त में विशेष रसायनों की मात्रा बढ़ जाने से होते हैं। यह रोग उपास्थियों (cartilage) के घिस जाने के कारण भी होता है। कुछ लोगों को दवाओं की एलर्जी के कारण यह रोग हो जाता है। कुछ विशेष प्रकार के जीवाणु (bacteria) तथा विषाणु (virus) भी इस रोग के लिए जिम्मेदार होते हैं। अभी हाल ही में वैज्ञानिकों ने विषाणुओं से होने वाले आर्थराइटिस का पता लगाया है। ये विषाणु मनुष्य के शरीर में चीचड़ (Tick) नामक एक कीट द्वारा काटे जाने पर प्रविष्ट होते हैं।

इस रोग में दर्द और सूजन के साथ-साथ प्रभावित जोड़ों पर लालिमा भी आ जाती है। इस रोग के इलाज और दर्द तथा सूजन कम करने के लिए एस्प्रिन जैसी औषधियां प्रयोग में लाई जाती हैं। इस रोग के इलाज में विभिन्न प्रकार के शारीरिक व्यायाम तथा योगासनों एवं भौतिक चिकित्सा (physiotheraphy) से लाभ मिलता है। इनसे सूजे हुए जोड़ों में गति आती है। शरीर की तीव्रता के साथ मालिश करने और शरीर में पराश्रव्य तरंगों के संचारण से भी इस रोग में बहुत लाभ पहुंचता है।

क्या मनुष्य के शरीर में बिजली पैदा होती है?



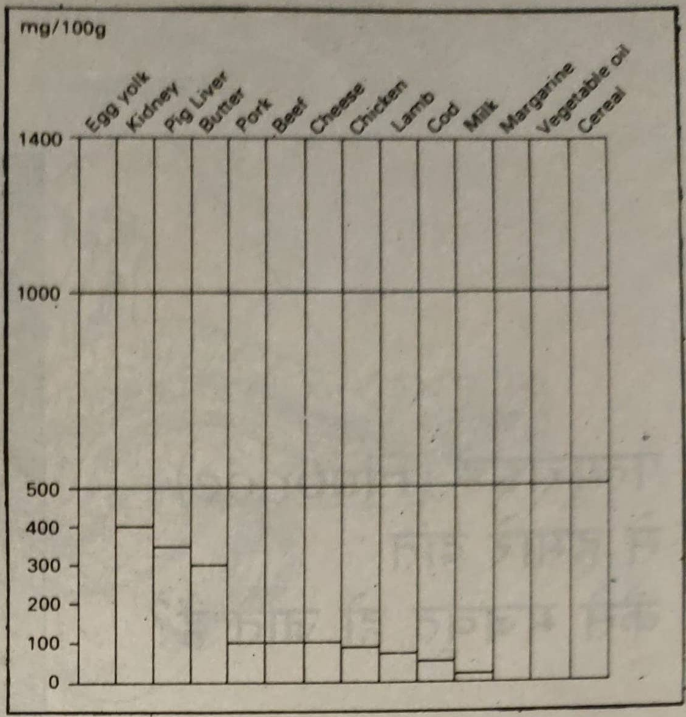
बिजली पैदा करने वाली मछलियों की बात तो हम सब ने सुनी है लेकिन आश्चर्य की बात तो यह है कि हमारे शरीर में भी बिजली पैदा होती है। केवल बिजली ही नहीं बल्कि चुम्बकीय सन्देश (magnetic message) भी हमारे शरीर के अंगों से संचरित होते रहते हैं। हमारे शरीर के अन्दर पैदा होने वाली विद्युत-धारा से शरीर की तंत्रिकाओं (nerves), मांसपेशियों (muscles) और दूसरे अंगों का नियंत्रण तथा संचालन होता है। वास्तविकता तो यह है कि शरीर के समस्त कार्यों और प्रक्रियाओं में विद्युत का किसी न किसी रूप में प्रयोग होता है। मांसपेशियों का बल विद्युत आवेश के आकर्षण और विकर्षण से ही पैदा होता है। मस्तिष्क की क्रिया तो मूल रूप से विद्युतीय रूप में ही होती है। मस्तिष्क से आने और जाने वाले सभी संदेश विद्युत-धारा के रूप में तंत्रिकाओं द्वारा आते-जाते हैं। शरीर द्वारा कुछ विशेष कार्यकलाप सम्पन्न करने के लिए बहुत से विद्युत-संदेश हमारे शरीर में पैदा होते हैं। ये विद्युत-संदेश कुछ विशेष प्रकार की कोशिकाओं (cells) की विद्युत रासायनिक प्रक्रिया (electrochemical action) के फलस्वरूप पैदा होते हैं।

इन विद्युत संदेशों को मापकर शरीर के बहुत से रोगों का पता लगाया जाता है। जैसे, हृदय से पैदा होने वाले विद्युत संदेशों को मापकर हृदय की असामान्यताओं को मापा जाता है। इसी प्रकार मांसपेशियों, मस्तिष्क, आंखों आदि से पैदा होने वाले विद्युत संदेशों को रिकार्ड किया जा सकता है। इन संदेशों के आधार पर इन अंगों की असामान्य क्रियाओं का पता लगाया जाता है।

मांसपेशियों से आने वाले संदेशों को इलेक्ट्रोमायोग्राम (E.M.G.) हृदय के विद्युत संदेशों को इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम (E.C.G.), मस्तिक के विद्युत संदेशों को इलेक्ट्रोएन्सफेलोग्राम (E.R.G.) से मापते हैं। इसी प्रकार हृदय के चुम्बकीय संदेशों को मैगनेटोकार्डियोग्राम (M.C.G.) से रिकॉर्ड करते हैं।

इन विद्युत संदेशों का लेखा-जोखा करके शरीर के विभिन्न अंगों के विशेषज्ञ शरीरगत असामान्यताओं का पता लगा लेते हैं। इस प्रकार रोग निदान (diagnosis) करके अनेक रोगों की उचित चिकित्सा की जा सकती है। विद्युत संदेशों से प्राप्त सूचनाएं डाक्टरों के लिए बड़ी ही महत्त्वपूर्ण होती हैं।

अधिक कोलेस्ट्रॉल (Cholesterol) क्यों हानिकारक है?



कोलेस्ट्रॉल एक वसीय (fatty) पदार्थ है, जो जानवरों और मनुष्यों के शरीर में निर्मित होता है। सामान्यतः शरीर में इसकी मात्रा मनुष्य के औसत भार का 0.3 प्रतिशत होती है। शरीर के लिए यह एक अत्यावश्यक पदार्थ है क्योंकि इससे बाइल अम्ल (bile acid) और कुछ हारमोन (hormones) निर्मित होते हैं। इसी के साथ एक विशेष स्तर से इसकी मात्रा का बढ़ना शरीर के लिए हानिकारक भी सिद्ध हो सकता है।

कोलेस्ट्रॉल की खोज सन् 1812 में हुई थी। इसका संश्लेषण शरीर के बहुत से ऊतकों (tissues) में होता है, जिनमें यकृत (liver) मुख्य है। यह रक्त, ऊतकों, मस्तिष्क, यकृत और धमनियों (arteries) में पाया जाता है। वसा और कोलेस्ट्रॉल दोनों मिलकर धमनियों की आन्तरिक दीवारों पर जमा हो सकते हैं। इससे धमनियां सख्त हो जाती हैं और रक्त के प्रवाह के लिए उनका रास्ता संकुचित हो जाता है। इस स्थिति को आर्टरिओस्क्लेरोसिस (arteriosclerosis) कहते हैं। रक्त के जमे हुए छोटे-छोटे थक्के, जो सामान्यतः रक्त-वाहिनियों में से बहकर निकल जाते हैं, अधिक कोलेस्ट्रॉल होने पर उनमें फंस जाते हैं। यदि यह स्थिति कोरोनरी (coronary) धमनी में हो जाए तो इसके परिणामस्वरूप दिल का दौरा पड़ सकता है। कोरोनरी धमनियां हृदय तक रक्त ले जाती हैं। ये बहुत ही महत्त्वपूर्ण होती हैं क्योंकि दिल को काम करने के लिए आवश्यक आक्सीजन इन्हीं धमनियों द्वारा प्रदान की जाती है। यदि विशेष भाग की कोरोनरी धमनियों में कहीं रुकावट आ जाए तो हृदय का वह हिस्सा मृत हो जाता है। इसी को हम दिल का दौरा कहते हैं, जो बहुत ही घातक सिद्ध हो सकता है।

रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा खुराक-नियंत्रण द्वारा कम की जा सकती है। चिकनाईयुक्त पदार्थों के कम सेवन करने से रक्त में इसकी मात्रा कम की जा सकती है। उचित व्यायाम करने से इसे धमनियों की दीवारों पर जमने से रोका जा सकता है।

रक्त का कोलेस्ट्रॉल शरीर में कई हारमोन पैदा करने में काम आता है। इसी से लैंगिक हारमोन (sex hormones) भी बनते हैं। इससे बाइल लवण भी बनते हैं, जो पाचन क्रिया में काम आते हैं। सख्त कोलेस्ट्रॉल के बाइल में जमा होने से पित्ताशय (gall bladder) में पथरी बन जाती है।

चिकित्सा-विशेषज्ञों की राय है कि भोजन में कोलेस्ट्रॉल की कुछ मात्रा अत्यावश्यक है लेकिन इसकी अधिक मात्रा हमारे लिए घातक सिद्ध हो सकती है। मक्खन, अंडे तथा वसायुक्त मांस कोलेस्ट्रॉल के मुख्य स्रोत हैं, इसलिए इनका सेवन उचित मात्रा में ही करना चाहिए।



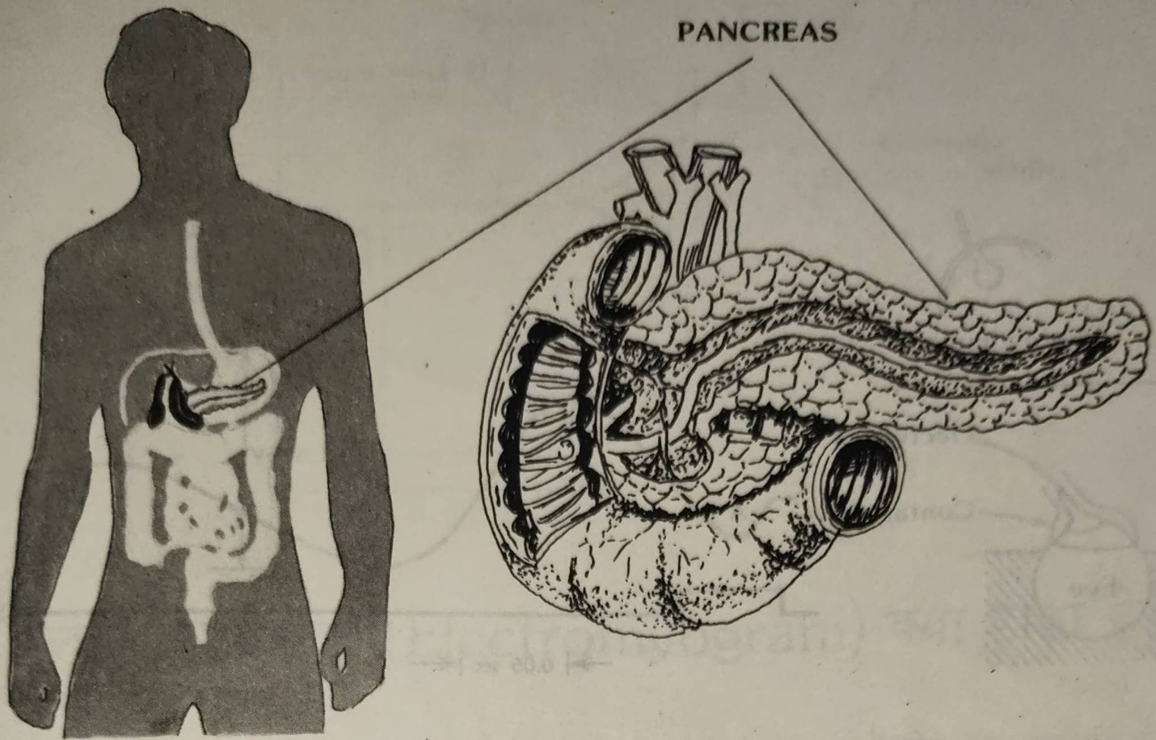
फ्ल्यूराइड (Fluoride) से हमारे दांत कैसे मजबूत हो जाते हैं?

प्रत्येक मनुष्य के जीवनकाल में दांत दो बार निकलते हैं। जन्म के कुछ महीनों बाद निकलने वाले दांत नौ-दस साल की उम्र में गिर जाते हैं। इन्हें दूध के दांत कहते हैं। इनके स्थान पर नये स्थायी दांत आ जाते हैं। दूध के दांतों की संख्या बीस होती है। स्थायी दांतों की संख्या बत्तीस होती है। प्रत्येक दांत में मसूढ़ों से ऊपर क्राउन (crown) नामक हिस्सा होता है और प्रत्येक दांत की एक से लेकर तीन तक जड़ें होती हैं, जो उसके आकार-प्रकार और स्थिति पर निर्भर करती हैं। दांत का अधिकांश भाग पीले रंग के एक सख्त पदार्थ से बना होता है, जिसे डेनटाईन (dentine) कहते हैं। दांत के क्राउन भाग पर एक सफेद रंग के पदार्थ की परत चढ़ी रहती है, जिसे इनेमल (enamel) कहते हैं। यह मानव-शरीर का सबसे सख्त ऊतक (tissue) है। यह चट्टान की भांति सुदृढ़ होता है। इस पदार्थ के अणु मणिभीय (crystalline) संरचनाओं में जुड़े होते हैं।

फ्ल्यूराइड एक ऐसा रासायनिक पदार्थ है, जो दांतों के इनेमल को और भी मजबूत बनाता है। जब हम अपने दांतों को फ्ल्यूराइडयुक्त टूथपेस्ट से ब्रुश करते हैं तो फ्ल्यूराइड के अणु एक मणिभीय संरचना में व्यवस्थित हो जाते हैं। चूंकि फ्ल्यूराइड के अणु दांत की ऊपरी संरचना में अधिक उपयुक्त रूप से फिट हो जाते हैं, वे दांतों की ऊपरी परत को और भी मजबूत बना देते हैं। दांतों का इनेमल जितना अधिक मजबूत होगा, दांतों के खोखले होने की संभावना उतनी ही कम हो जाएगी।

कई देशों में पानी की सप्लाई के साथ ही फ्ल्यूराइड मिला दिया जाता है। जब बच्चे इस पानी को पीते हैं तो उनके दांतों की मणिभीय संरचनाओं में फ्ल्यूराइड अपने-आप पहुंच जाता है। इससे उनके दांत और भी मजबूत हो जाते हैं। इस पदार्थ से बच्चों के दांतों की परत विशेष रूप से सख्त हो जाती है।

फ्ल्यूराइड फ्लोरीन (Fluorine) नामक पदार्थ के यौगिक (compound) होते हैं, जिनमें एक या एक से अधिक तत्त्व मिले होते हैं। अधिकतर फ्ल्यूराइड लवण (salt) होते हैं। इनका निर्माण हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल की धातु के आक्साइडों के साथ प्रतिक्रिया कराके किया जाता है। ध्यान रहे, फ्ल्यूराइड के आवश्यकता से अधिक प्रयोग से बच्चों की हड्डियों पर बुरा असर पड़ सकता है।



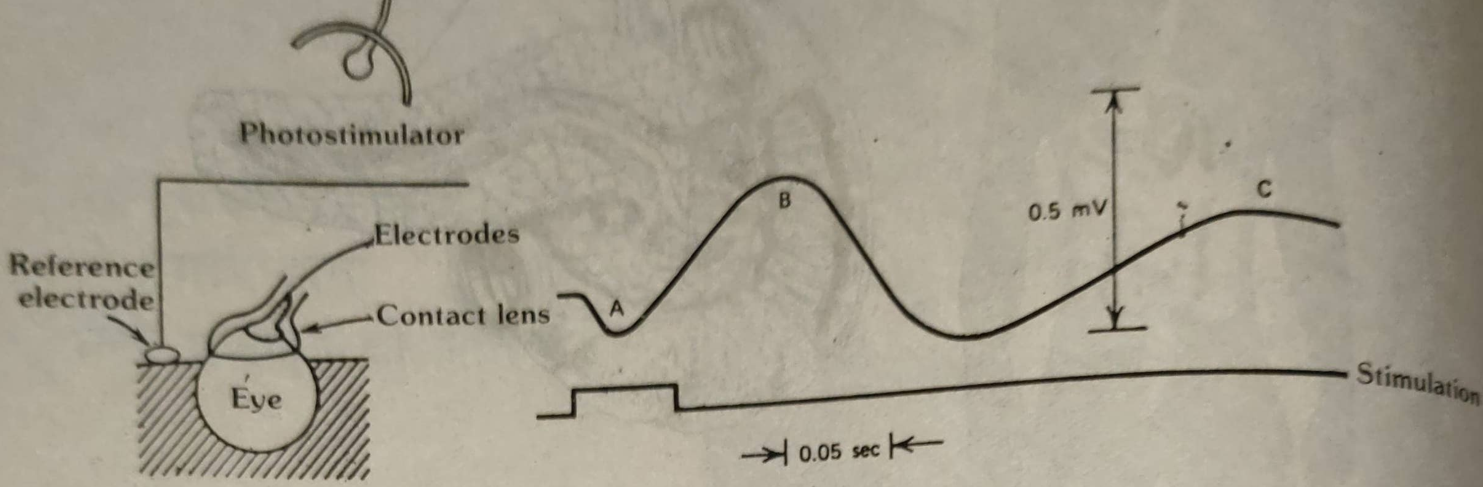
पेंक्रिआस (Pancreas) शरीर में क्या काम करते हैं?

पेंक्रिआस मानव शरीर सहित सभी रीढ़ की हड्डी वाले प्राणियों का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण अंग है। यह पेट के निचले भाग में स्थित होता है। यह अंग पार्श्व (side) से लेटे फ्लास्क की भांति होता है। इस ग्रंथि (gland) का रंग गुलाबीपन लिए पीला होता है। इसकी लम्बाई 15 से 20 सेमी., चौड़ाई लगभग 4 सेमी. तथा मोटाई 2.5 सेमी. होती है। क्या तुम जानते हो कि पेंक्रिआस शरीर में क्या काम करता है?

पेंक्रिआस एक बहुत ही शक्तिशाली पाचक रस पैदा करता है, जो भोजन को आंतों में तोड़ने का काम करता है। इससे इन्सुलिन (insulin) और ग्लूकैजन (glucagon) नामक हारमोन भी पैदा होते हैं। पेंक्रिआस प्रतिदिन 1200 से 1500 मिलीलिटर पेंक्रिऑटिक रस पैदा करता है। यह रस एक नली से होता हुआ छोटी आंत या ड्यूओडिनम (duodenum) तक आता है। इस रस में एंजाइम और लवण होते हैं, जो प्रोटीन, स्टार्च, चीनी और चिकनाई को पचाने में सहायता करते हैं। जैसे ही खाना मुंह में आता है, वैसे ही स्वाद नलिकाएं मस्तिष्क को संदेश भेजती हैं, जिसके द्वारा मस्तिष्क पेंक्रिआस को पाचक रस पैदा करने के लिए उत्तेजित कर देता है। इस पाचक रस में सोडियम बाइकार्बोनेट होता हैं, जो अम्ल को उदासीन करने का काम करता है।

पेंक्रिऑटिक रस में मुख्य रूप से पांच एंजाइम होते हैं। इनमें से तीन एंजाइम प्रोटीनों को पचाने का काम करते हैं। दूसरे दो में से एमायलेस (amylase) नामक एक एंजाइम कार्बोहाइड्रेट पचाता है तथा लाइपेस (lipase) चिकनाई को पचाने का काम करता है। प्रोटीन पचाने वाले मुख्य एंजाइम को ट्रिपसिन (tripsin) कहते हैं।

जैसा कि हम बता चुके हैं कि पाचन क्रिया के अतिरिक्त यह अंग इन्सुलिन और ग्लूकैजन नामक हारमोन भी पैदा करता है। ये हारमोन इस अंग की कोशिकाओं (cell) द्वारा पैदा किए जाते हैं। ग्लूकैजन द्वारा ग्लाइकोजन को ग्लूकोज में बदला जाता है, इससे रक्त में चीनी का स्तर बना रहता है। इन्सुलिन एक ऐसा हारमोन है, जो रक्त की चीनी का स्तर बढ़ने पर उसे कम करता है। यह हारमोन यकृत (liver) में ग्लूकोज को ग्लाइकोजन में बदल देता है। ये दोनों हारमोन एक साथ काम करते हुए शरीर की ऊर्जा पूर्ति पर नियंत्रण रखते हैं।



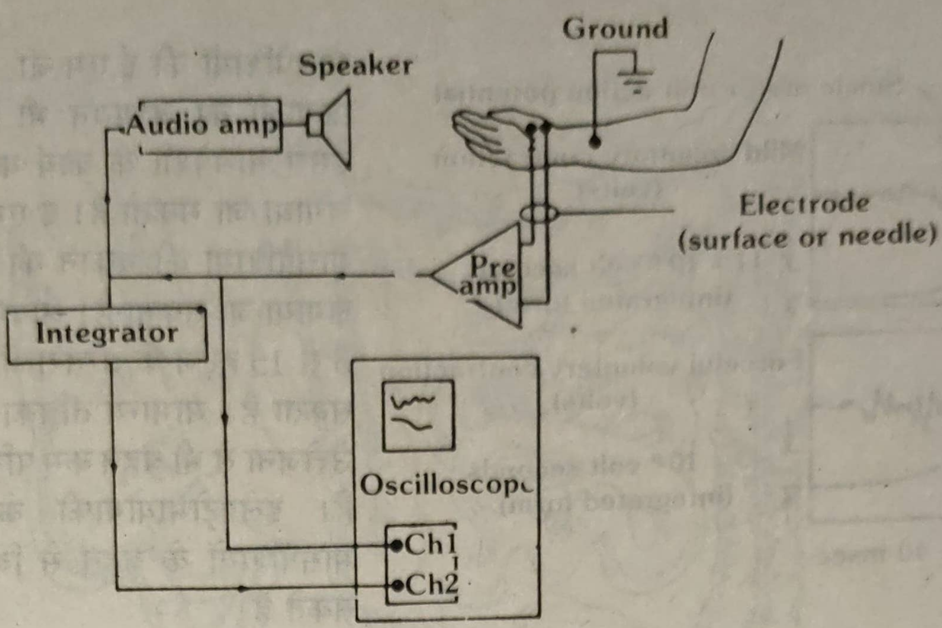
इलेक्ट्रोरेटिनोग्राम (Electro-retinogram) क्या है?

आंख के रेटिना पर प्रकाश पड़ने के कारण आंख में होने वाले स्थितिज परिवर्तनों को अंकित करना, इलेक्ट्रोरेटिनोग्राफी कहलाता है। जिस यंत्र से इन्हें अंकित करते हैं, उसे इलेक्ट्रोरेटिनोग्राम कहते हैं। इलेक्ट्रोरेटिनोग्राम का संक्षिप्त रूप ई.आर.जी. है। ई.आर.जी. अंकित करने के लिए एक इलेक्ट्रॉड को एक काण्टेक्ट लेंस के ऊपर लगाया जाता है, जो कार्निया के साथ फिट हो जाता है। दूसरा इलेक्ट्रॉड कान या माथे के ऊपर लगाया जाता है।

ई.आर.जी. के सन्देश मांसपेशियों से प्राप्त होने वाले संदेशों की तुलना में अधिक जटिल होते हैं क्योंकि ये आंख में होने वाले कई प्रभावों के मिले-जुले रूप होते हैं। ऊपर के चित्र में एक सामान्य ई.आर.जी दिखाया गया है। चिकित्सा के दृष्टिकोण से इसकी बी-तरंग (B-wave) बहुत ही महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह रेटिना से पैदा होती है। यदि कोई रेटिनाइटस पिगमैंटोसा (retinitis pigmentosa) नामक रोग से पीड़ित है तो इसके ई.आर.जी. में बी-तरंग अनुपस्थित होगी। इस रोग में आंख के रेटिना पर सूजन आ जाती है तथा धब्बे बन जाते हैं।

आंख की गति के कारण विद्युत विभवान्तर में होने वाले परिवर्तनों को अंकित करने के प्रक्रम को इलेक्ट्रो-ओक्यूलोग्राम (electrooculogram) कहते हैं। संक्षेप में इसे ई.ओ.जी. कहते हैं। ई.ओ.जी. अंकित करने के लिए आंख के पास दो इलेक्ट्रॉड लगा दिए जाते हैं। ई.ओ.जी. में आंख की क्षैतिज (horizontal) और ऊर्ध्वाधर (vertical) गतियां अंकित की जा सकती हैं। ई.ओ.जी. से हमें आंख के झुकाव, कोणीय वेग और कोणीय त्वरण के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। वैज्ञानिकों ने औषधियों के आंख की गति पर होने वाले प्रभावों का अध्ययन किया है। इनकी सहायता से नींद में होने वाले परिवर्तनों का भी अध्ययन किया जा सकता है। इलेक्ट्रोओक्यूलोग्राफी का प्रयोग आम चिकित्सा में कम होता है।

रेटिना हमारी आंख का बहुत ही महत्त्वपूर्ण भाग है। इसी पर वस्तुओं के प्रतिबिम्ब बनते हैं। ई.आर.जी. की सहायता से रेटिना की बहुत-सी स्थितियों का पता लगाया जा सकता है।



इलेक्ट्रोमायोग्राम (Electromyogram) क्या होता है?

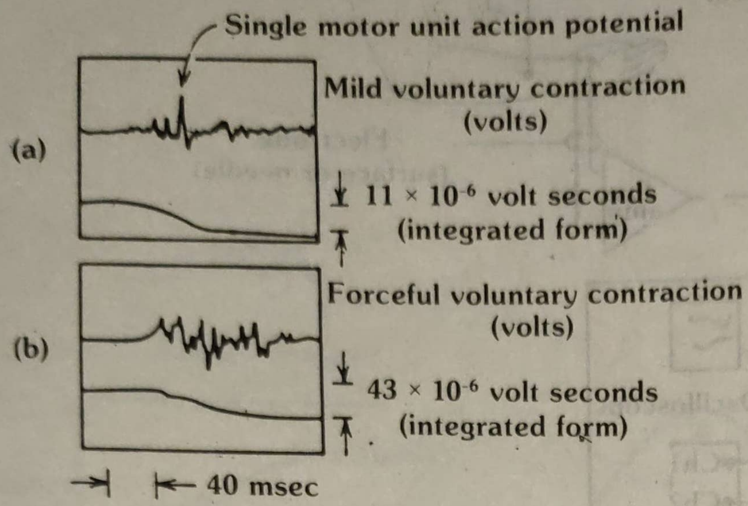
हमारे शरीर में बहुत-सी मांसपेशियां (muscles) हैं। ये मांसपेशियां शरीर की गतिविधियों के लिए जिम्मेदार हैं। जब ये मांसपेशियां क्रियाशील होती हैं—जैसा कि सिकुड़ने की क्रिया या उत्तेजना की क्रिया में होता है, तब इनसे विद्युत स्पंद (impulse) पैदा होते हैं। इन्हीं विद्युत स्पंदों को एक आरेख (graph) के रूप में चित्रित कर लेना इलेक्ट्रोमायोग्राफी कहलाता है। इस आरेख को इलेक्ट्रोमायोग्राम कहते हैं। संक्षेप में इसे ई.एम.जी. कहते हैं।

मांसपेशियों से संबंधित रोगों का निदान करने के लिए इलेक्ट्रोमायोग्राम बहुत ही महत्त्वपूर्ण सूचना प्रदान करते हैं। इस कार्य के लिए मांसपेशियों से पैदा होने वाले स्पंद तब प्राप्त किए जाते हैं, जब मांसपेशियां ऐच्छिक रूप से सिकुड़ती हैं। इस कार्य के लिए एक यंत्र प्रयोग में लाया जाता है, जिसके इलेक्ट्रॉड उस मांसपेशी के साथ लगा दिए जाते हैं, जिसका अध्ययन करना होता है। ये इलेक्ट्रॉड तार की सहायता से विद्युत स्पंद लाते हैं, जो एक पैन की सहायता से एक आरेख-पत्र पर अंकित हो जाते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि मांसपेशियों से विद्युत स्पंद कैसे पैदा होते हैं? हमारी एक मांसपेशी बहुत-सी मोटर-इकाइयों (motor units) से मिलकर बनी होती है। एक मोटर-इकाई में मेरुरज्जु (spinal cord) से पेशी-तंतुओं तक न्यूरोन (neuron) आते हैं। मांसपेशी की क्रिया एक विभवान्तर (potential difference) के कारण सम्पन्न होती है। इसी विभवान्तर को मायोग्राम में आरेखित किया जाता है।

मांसपेशी की एक-एक कोशिका (cells) के इलेक्ट्रोमायोग्राम लेना बहुत कठिन है क्योंकि मांसपेशी के तंतुओं को अलग नहीं किया जा सकता। आमतौर पर इलेक्ट्रॉड बहुत से तंतुओं की क्रियाशीलता का ही लेखा-जोखा करता है। इलेक्ट्रोमायोग्राम की सहायता से मांसपेशियों के बहुत से रोगों का पता लगाया जा सकता है।

किसी मांसपेशी का ई.एम.जी. अंकित करने का तरीका चित्रों में दिखाया गया है। इस आरेख से यह पता चल सकता है कि मांसपेशी की क्रिया के फलस्वरूप कितनी विद्युत धारा पैदा होती है। ई.एम.जी. की सहायता से मांसपेशी के सिकुड़ने की स्थिति का पता लगाया जा सकता है। विद्युत उत्तेजना (stimulation) द्वारा भी ई.एम.जी. आरेखित किए जाते हैं। जब विद्युत उत्तेजना दी जाती है तो उत्तेजना का समय 0.1 से 0.5 मिली. सेकंड का होता है और इस उत्तेजना प्रक्रिया में लगभग 100 वोल्ट की स्पंद देनी होती है।



मांसपेशियों की ई.एम.जी. द्वारा उनकी प्रतिवर्ती क्रियाओं का अध्ययन भी किया जा सकता है। इससे मांसपेशी के कार्य करने के स्तर का पता लगाया जा सकता है। ई.एम.जी. की सहायता से मांसपेशियों की थकान की स्थितियों का भी पता लगाया जा सकता है। आदमी की मांसपेशियों को 5 से 15 हर्ट्ज के अन्तरालों में उत्तेजित किया जा सकता है। सामान्य तंत्रिकाएं देर तक होने वाली उत्तेजना से भी बहुत कम परिवर्तन प्रदर्शित करती हैं। इलेक्ट्रोमायोग्राफी के आधार पर हम मांसपेशियों के बहुत से विकारों का पता लगा सकते हैं।

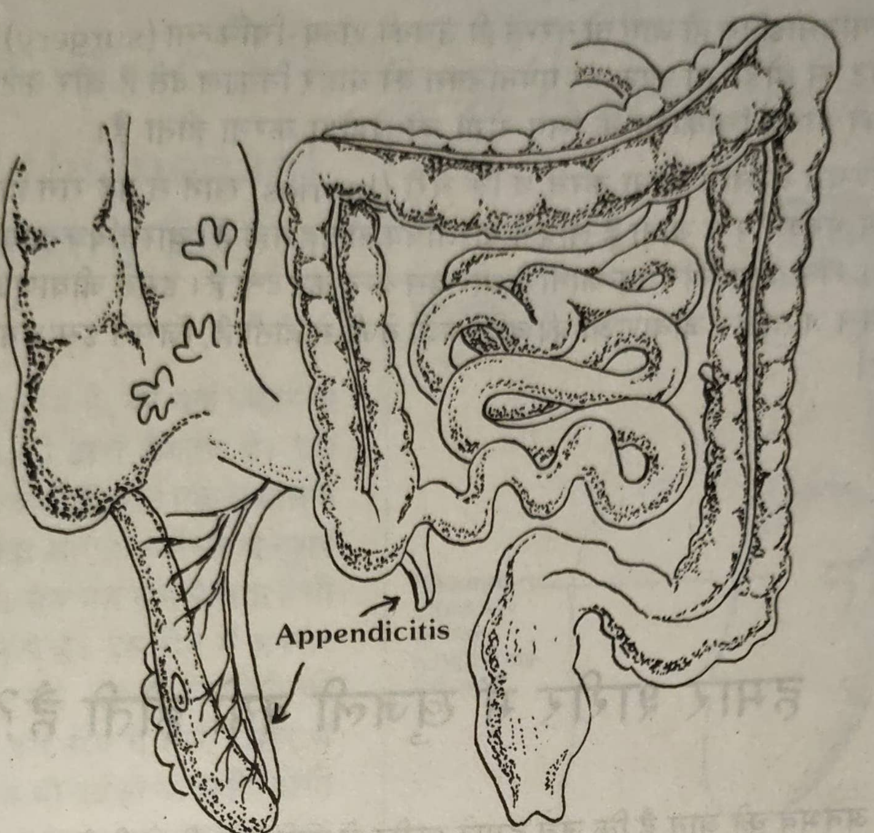
हमारे शरीर के लिए कौन-से पदार्थ ईंधन का काम करते हैं?

जिस प्रकार एक इंजन को चलाने के लिए पेट्रोल, कोयले या विद्युत की आवश्यकता होती है, ठीक उसी प्रकार मनुष्य की शरीर-रूपी मशीन को चलाने के लिए भी ईंधनों की आवश्यकता होती है। इन्हीं से शरीर को ऊर्जा मिलती है। ये ईंधन भोजन और पेय पदार्थों से प्राप्त होते हैं। इसके साथ ही साथ, शरीर को ऑक्सीजन और जल की भी आवश्यकता होती है। शरीर को ईंधन देने वाले पदार्थों में मुख्यतः कार्बन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, कैल्शियम, फास्फोरस, लोहा आदि होते हैं। कैल्शियम और फास्फोरस मुख्य रूप से हड्डियों में होता है। कार्बन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन शरीर के समस्त भागों में होते हैं। चीनी मुख्यतः यकृत (lever) और लोहा रक्त में होता है।

जब ये ईंधन शरीर में खर्च होते हैं तो इनसे अपशिष्ट पदार्थ (waste products) बनते हैं। प्रतिदिन हम अपने शरीर से दो किलोग्राम मल और मूत्र का त्याग करते हैं। सांस के द्वारा कार्बन डाइआक्साइड भी अपशिष्ट पदार्थ के रूप में बाहर निकल जाती है। पसीने तथा सांस के साथ लगभग 400 ग्राम पानी भी बाहर निकल जाता है। शरीर को सुचारु रूप से चलाने के लिए हमें इन पदार्थों की आपूर्ति करनी पड़ती है। मनुष्य इन पदार्थों को अपने भोजन से प्राप्त करता है। ये पदार्थ शरीर के अन्दर ऊर्जा में बदल जाते हैं और इनके अपशिष्ट अंश मल-मूत्र के रूप में शरीर के द्वारा त्याग दिए जाते हैं।

मानव शरीर का तापमान 98° से लेकर 99° फेरेनहाइट के बीच में बना रहता है। शरीर में पैदा होने वाली ऊष्मा और काम में खर्च होने वाली ऊष्मा के बीच में यह एक आश्चर्यजनक संतुलन है। शारीरिक प्रक्रियाएं इस प्रकार चलती हैं कि ईंधन से पैदा होने वाली ऊष्मा तथा शरीर में काम आने वाली ऊष्मा के बीच संतुलन बना रहता है और शरीर का तापमान स्थिर रहता है।

हमारा शरीर एक ऐसी मशीन है, जो बिना रुके चलती ही रहती है। यहां तक कि जब हम सोए होते हैं, तब भी हमारा शरीर बहुत से क्रियाकलापों में व्यस्त रहता है। सांस लेने की क्रिया, पाचन-क्रिया, दिल के धड़कने की क्रिया हमेशा ही चलती रहती है। इन सभी क्रियाओं में निरन्तर ईंधन खर्च होता रहता है।



एपेनडिसाइटिस (Appendicitis) क्या है?

एपेनडिक्स (appendix) मनुष्य की आंत का एक हिस्सा होता है। इसका पूरा नाम वर्मीफोर्म एपेनडिक्स (vermiform appendix) है। हिन्दी में इसे उण्डुकपुच्छ कहते हैं। इसका आकार कृमि (worm) जैसा होता है, इसलिए इसे यह नाम दिया गया है। यह अंग पेट के दाहिनी ओर के निचले भाग में होता है। इसका सही स्थान वह होता है, जहां छोटी आंत और बड़ी आंत एक दूसरे से मिलते हैं। इस स्थान को केकम (cacum) कहते हैं। इसका आकार एक नली जैसा होता है, जिसका एक सिरा बन्द और दूसरा सिरा केकम में खुलता है। आदमी के एपेनडिक्स की लम्बाई तीन से चार इंच होती है और इसकी मोटाई आधा इंच से कुछ कम होती है। इसका शरीर में कोई जाना-माना कार्य नहीं है। सम्भवत: हजारों वर्ष पहले यह मनुष्य के पाचन संस्थान का एक महत्त्वपूर्ण अंग था और यह सैलूलोज को पचाने का काम करता था। ऐसा विश्वास किया जाता है कि यह अंग मनुष्यों के शरीर से धीरे-धीरे विलुप्त होता जा रहा है, इसलिए इसे शरीर का निरर्थक अंग भी कहते हैं। एपेनडिक्स में मांसपेशियों से बने वाल्व होते हैं, जो म्यूकस (mucus) जैसे अपशिष्ट पदार्थों को केकम में भेजते रहते हैं। यदि कोई वस्तु एपेनडिक्स के खुले सिरे को रोक देती है तो अपशिष्ट पदार्थों के लगातार निकलने और इस अंग में जीवाणुओं की उपस्थिति से एक दबाव पैदा हो जाता है। इस अंग पर कीटाणु भी हमला कर सकते हैं। इन सबसे इस अंग में सूजन आ जाती है। इसी को हम एपेनडिसाइटिस कहते हैं। इस स्थिति में व्यक्ति को भयानक दर्द का अनुभव होता है। यह दर्द शरीर के दाहिने भाग में पेट के नीचे होता है। रोगी को चक्कर आने लगते हैं और उल्टी आने लगती है। कभी-कभी दस्त भी लग जाते हैं। सामान्यत: ऐसी स्थिति में बुखार कम होता है लेकिन एपेनडिक्स के फटने पर बुखार अधिक भी हो सकता है।

जब व्यक्ति को एपेन्डिसाइटिस हो जाए तो तुरन्त ही उसकी शल्य-चिकित्सा (surgery) कराना जरूरी है। ऐसी स्थिति में डाक्टर पेट को थोड़ा-सा काट कर एपेनडिक्स को बाहर निकाल देते हैं और कटे हुए छिद्रों में टांके लगा देते हैं। इस रोग की शल्य-चिकित्सा के लिए रोगी को बेहोश करना होता है।

प्राचीन काल में पश्चिम के लोग सोचा करते थे कि बैरी (berries) खाने से यह रोग हो जाता है क्योंकि उसके बीजों से एपेन्डिक्स भरकर फूल जाता है लेकिन वास्तविकता यह नहीं है। वास्तविकता यह है कि बिना पचा हुआ खाना एपेन्डिक्स के खुले भाग से चिपक जाता है और इसे बन्द कर देता है। इससे जीवाणुओं को बढ़ने के लिए गर्म और बन्द स्थान मिल जाता है। जीवाणुओं की वृद्धि बड़ी तेजी से होती है, जिससे इस अंग में दर्द पैदा करने वाली सूजन आ जाती है।

हमारे शरीर में खुजली क्यों होती है?

यह एक आम अनुभव की बात है कि जब हमारे शरीर में कहीं खुजली होती है तो उस स्थान को खुजलाने से हमें राहत मिलती है। यह खुजली क्यों होती है और खुजलाने से राहत क्यों मिलती है?

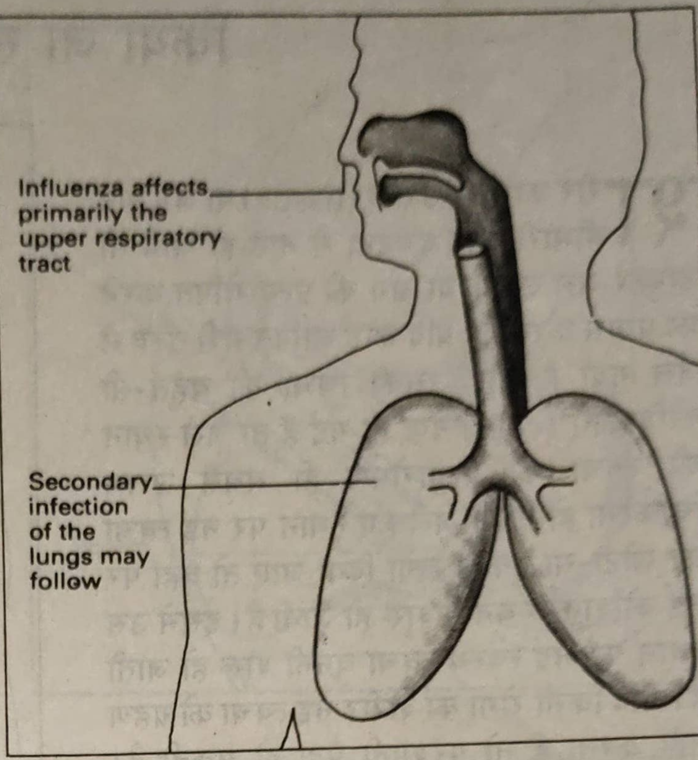
यदि हमारी त्वचा की दर्द-तंत्रिकाओं (pain nerves) में कुछ उत्तेजना पैदा हो जाती है तो हमें खुजलाहट का अनुभव होता है। ऐसी उत्तेजना में दर्द का अनुभव नहीं होता। शरीर की त्वचा के विभिन्न भागों में खुजलाहट पैदा होने के बहुत से कारण हो सकते हैं। एक मच्छर के काटने से दर्द-तंत्रिकाएं इतनी उत्तेजित हो जाती हैं कि हमें काटने वाले स्थान को खुजलाने का मन करने लगता है। शरीर में खुजलाहट पैदा होने के और भी कई कारण होते हैं। किसी एलर्जी के कारण भी त्वचा में खुजली होने लगती है। त्वचा यदि सूख जाए तो भी उसमें खुजली होने लगती है। विषैले प्रभावों तथा बहुत से दूसरे रोगों के कारण भी त्वचा में खुजली होने लगती है। कभी-कभी तो यहां तक भी देखा गया है कि खुजली के विचार से भी खुजलाहट होने लगती है। गुर्दे की बीमारी और कैंसर के कारण भी खुजलाहट पैदा हो सकती है।

यदि कोई व्यक्ति एक ही स्थान पर जोर से खुजलाता रहे तो त्वचा छिल सकती है। कुछ डॉक्टरों का तो कहना है कि मच्छर के काटने से होने वाली खुजलाहट को रोकने का सबसे उत्तम तरीका काटे हुए स्थान के चारों ओर खुजलाने का है। सीधे ही काटने वाले स्थान को खुजलाना नहीं चाहिए।

किसी एक ही स्थान को खुजलाने से कुछ समय के लिए राहत मिल सकती है लेकिन त्वचा के दूसरे स्थानों पर खुजलाहट आरम्भ हो सकती है। कुछ डाक्टरों का विचार है कि ऐसा इसलिए होता है कि खुजलाहट वाले स्थान की दर्द-तंत्रिकाएं अधिक उत्तेजित हो जाती हैं। खुजलाने से इन तंत्रिकाओं में इतनी अधिक उत्तेजना आ जाती है कि इससे नए स्थान पर खुजलाहट पैदा हो जाती है और इस प्रकार खुजलाने का एहसास फैलता जाता है।

अब प्रश्न उठता है कि खुजलाहट का अनुभव त्वचा पर ही क्यों होता है? यह एक बहुत बड़े रहस्य की बात है। रहस्य की बात तो यह है कि दर्द-तंत्रिकाएं हमारे समस्त शरीर में हैं लेकिन हमें अपने यकृत (liver) या दिल में खुजलाहट का अनुभव कभी भी नहीं होता। यह एक ऐसा तथ्य है, जिसका वैज्ञानिक अभी तक कोई संतोषजनक उत्तर नहीं ढूंढ पाए हैं।

इन्फ्लुएंजा (Influenza) कैसे हो जाता है?



इन्फ्लुएंजा एक ऐसा रोग है, जो कई प्रकार के विषाणुओं (viruses) द्वारा फैलता है। इस रोग को फ्लु (flue) भी कहते हैं। यह एक संक्रामक रोग है और बड़ी शीघ्रता से एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को लग जाता है। जब यह रोग फैलता है तो बड़े व्यापक रूप से फैलता है। इस रोग में अक्सर बुखार हो जाता है तथा ठंड लगती है। रोगी को कमजोरी आ जाती है। इस रोग में सारे शरीर में दर्द होने लगता है। गले में भी दर्द हो जाता है। रोगी के सिर में भी दर्द रहता है। क्या तुम जानते हो कि यह रोग कैसे फैलता है?

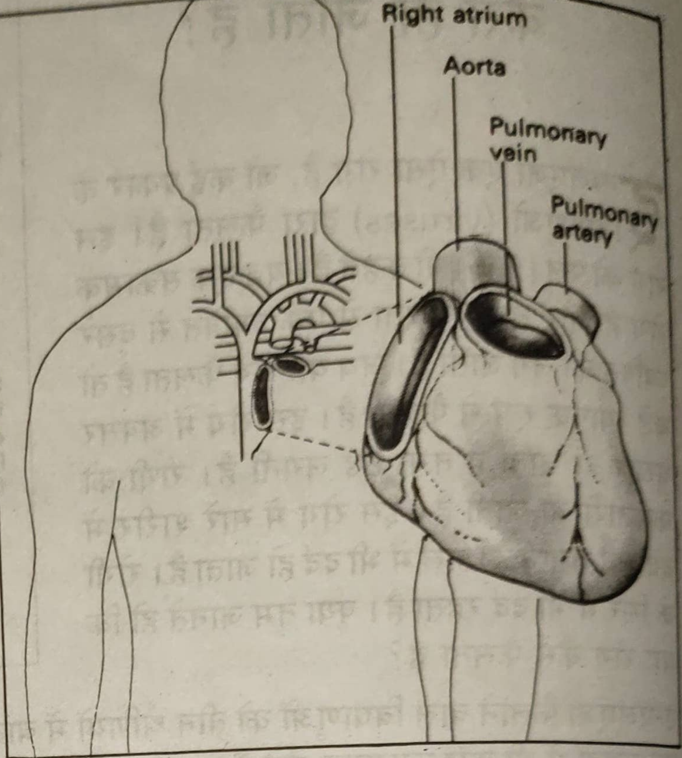
इन्फ्लुएंजा फैलाने वाले विषाणुओं को तीन श्रेणियों में बांटा जाता है। इन्हें हम ए, बी और सी समूहों में बांटते हैं। इन समूहों में भी कुछ उपसमूह होते हैं। समूह ए के विषाणुओं से होने वाले फ्लु के प्रकोप प्रत्येक दो से तीन साल के बाद होते हैं। बी समूह का प्रकोप चार-पांच साल के अन्तराल में होता है।

यह रोग सभी उम्र के व्यक्तियों पर हमला कर सकता है। इस रोग का प्रकोप जाड़ों में अधिक होता है। किसी रोगी के खांसने या छींकने से इस रोग के विषाणु स्वंस्थ व्यक्ति में चले जाते हैं और नाक तथा गले के अन्दर पहुंच जाते हैं। विषाणुओं के प्रकोप से छींक और खांसी आरम्भ हो जाती है तथा गला खराब हो जाता है। इससे बुखार, ठंड और सिर-दर्द हो जाता है। रोगी के सारे शरीर में बहुत अधिक दर्द हो जाता है। किसी भी काम करने को मन नहीं करता। सामान्यतः रोग का प्रकोप तीन दिन से एक सप्ताह तक रहता है। इस रोग से मरने वालों की संख्या बहुत ही कम होती है और जो मरते भी हैं, वे निमोनिया जैसी दूसरी जटिलताओं के कारण मरते हैं।

कुछ प्रकार के इन्फ्लुएंजा बहुत ही हल्के होते हैं लेकिन कुछ दूसरे प्रकार के फ्लु बहुत ही खतरनाक होते हैं। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद "स्पेनिश फ्लु" फैला था, जिसमें युद्ध में मरे व्यक्तियों से भी अधिक व्यक्तियों की मृत्यु हो गई थी। सौभाग्यवश, उसके पश्चात् अब तक कोई दूसरा ऐसा भयानक प्रकोप नहीं हुआ है। चूंकि आजकल एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाना लोगों के लिए एक सरल काम हो गया है, इसलिए यह रोग आसानी से संसार भर में फैल सकता है।

इन्फ्लुएंजा के उपचार के लिए कोई विशेष औषधि नहीं है लेकिन बुखार और शरीर के दर्द को कम करने के लिए एस्परीन (aspirin) और कोडीन सल्फेट (codeine sulphate) नामक औषधियां प्रयोग की जाती हैं। इन्फ्लुएंजा की रोकथाम के लिए टीका तैयार किया जा सकता है लेकिन इन्फ्लुएंजा बहुत प्रकार का होता है, इसलिए इस रोग के टीके तैयार करना बहुत ही कठिन कार्य है। जो लोग फ्लु के प्रकोप का अक्सर शिकार रहते हैं तथा शारीरिक रूप से कमजोर होते हैं उनके मामले में संक्रमण होने पर गम्भीर जटिलताएं उत्पन्न हो सकती हैं। सामान्यतः यह एक भयानक रोग नहीं है और इसका प्रकोप होने पर अधिक घबराना नहीं चाहिए।

शरीर के किन अंगों को प्रत्यारोपित (Transplant) किया जा सकता है?



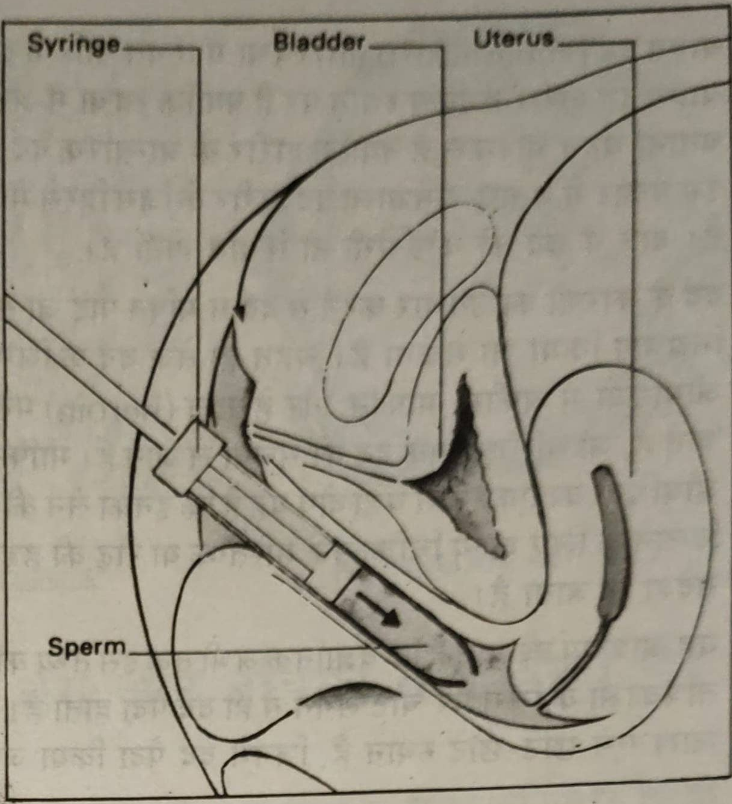
शरीर का कोई ऊतक (tissue) या अंग यदि बीमारी और दुर्घटना से नष्ट हो जाये तो डाक्टर उस ऊतक या अंग को प्रत्यारोपित करने का प्रयास करते हैं। यदि कोई व्यक्ति बुरी तरह से जल गया है और उसकी त्वचा की बहुत-सी कोशिकाएं (cells) नष्ट हो गई हैं तो जले स्थान की त्वचा का प्रत्यारोपण ही सबसे उत्तम चिकित्सा होती है। जले हुए स्थान पर नई त्वचा का छोटा-सा टुकड़ा लगा दिया जाए तो वहां पर नई कोशिकाएं बननी शुरू हो जाती हैं। इससे उस स्थान पर नई स्वस्थ त्वचा बननी शुरू हो जाती है। यदि किसी रोगी का शरीर नई त्वचा को ग्रहण नहीं करता है तो परेशानी पैदा हो सकती है। डाक्टरों के लिए अब त्वचा का प्रत्यारोपण एक आम बात है।

कुछ रोगों में व्यक्ति के गुर्दे (kidneys) खराब हो जाते हैं। गुर्दों के खराब होने पर उनका एकमात्र उपचार उन्हें नए गुर्दों द्वारा प्रत्यारोपित करना है। इस काम के लिए कोई गुर्दे देने वाला व्यक्ति होना चाहिए। गुर्दे देने वाला व्यक्ति अपने दो स्वस्थ गुर्दों में से एक गुर्दा दे सकता है। उसके जीने के लिए एक गुर्दा काफी है। गुर्दों का प्रत्यारोपण काफी सफलतापूर्वक किया जा चुका है। उचित उपचार से रोगी व्यक्ति का शरीर दान में मिले गुर्दे को स्वीकार कर लेता है और रोगी अपना शेष जीवन आराम के साथ बिता सकता है।

कुछ रोगों में रोगी का हृदय ऐसी अवस्था में पहुंच जाता है कि उसका कार्य करना लगभग असम्भव हो जाता है। ऐसी स्थिति में हृदय का प्रत्यारोपण ही एकमात्र उपचार रह जाता है। हर व्यक्ति के एक ही हृदय होता है, इसलिए हृदय का दान देना तो असम्भव बात है। हा, तुरन्त ही मरे हुए व्यक्ति का हृदय दूसरे व्यक्ति के लगाया जा सकता है। इस प्रकार की सफल शल्य-चिकित्सा कई देशों में हो चुकी है। संसार का सर्वप्रथम हृदय प्रतिस्थापन अफ्रीका के क्रिश्चन बरनार्ड ने किया था। 3 दिसम्बर, 1967 को उन्होंने 55 वर्ष के एक वृद्ध व्यक्ति का हृदय प्रत्यारोपित कर दिया था।

इसके अतिरिक्त रक्त, हड्डियां, फेफड़े, यकृत आदि को प्रत्यारोपित किया जा चुका है। अंग प्रत्यारोपण में सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि एक व्यक्ति के अंग को दूसरे व्यक्ति का शरीर अंगीकार करता है अथवा नहीं? यदि अंग को शरीर द्वारा अंगीकृत नहीं किया जाता तो संक्रमण (infection) हो जाता है और प्रत्यारोपण एक असफल प्रयास सिद्ध हो जाता है। यही कारण है कि बहुत से प्रत्यारोपण कुछ महीनों या सालों में असफल हो जाते हैं, यद्यपि संक्रमण को रोकने के लिए औषधियों और एक्स-किरणों का प्रयोग किया जाता है। यदि प्रतिस्थापित किए जाने वाले अंग या ऊतक जुड़वां व्यक्तियों के शरीर से लिए गए हों या रोगी के स्वयं के शरीर से लिए गए हों तो संक्रमण की समस्या पैदा नहीं होती है। ऐसे प्रत्यारोपण अक्सर सफल सिद्ध होते हैं।

कृत्रिम गर्भाधान (Artificial Insemination) क्या है?



पालतू पशुओं और जानवरों की अच्छी नस्ल पैदा करने के लिये मनुष्य बहुत लम्बे समय से गर्भाधान के लिए मजबूत और शक्तिशाली जानवरों का प्रयोग करता आया है। गर्भाधान की यह क्रिया जानवरों के आपसी समागम से होती आई है लेकिन पिछले कुछ वर्षों में मनुष्य ने गर्भाधान की कृत्रिम विधियां विकसित कर ली हैं। इन विधियों से जानवर तो जानवर, महिलाओं को भी गर्भवती बनाया जा सकता है। क्या तुम जानते हो कि कृत्रिम गर्भाधान की क्रिया कैसे संपन्न की जाती है?

कृत्रिम गर्भाधान की क्रिया में नर जीव के शुक्राणुओं (sperms) को मादा के गर्भाशय (uterus) में किसी कृत्रिम तरीके से प्रविष्ट कराया जाता है। यह तरीका अच्छी नस्ल के जानवर पैदा करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। गायों के लिए कृत्रिम गर्भाधान की क्रिया काफी प्रचलित है। इस काम के लिए किसी अच्छी नस्ल के सांड के शुक्राणु लेकर मादा गाय के जनन अंगों में प्रविष्ट करा दिये जाते हैं। इससे गाय में गर्भाधान की क्रिया सम्पन्न हो जाती है। किसी एक अच्छे सांड के शुक्राणुओं से कई गायों में गर्भाधान की क्रिया सम्पन्न करायी जा सकती है। इस प्रकार से गर्भवती होने वाली गायों की संख्या प्राकृतिक तरीके से गर्भवती होने वाली गायों की तुलना में कहीं अधिक होती है। कृत्रिम गर्भाधान के तरीके आजकल महिलाओं के लिए भी प्रयोग होने लगे हैं। विदेशों में जिन महिलाओं के पति किन्हीं कारणों से अपनी प्रजनन क्षमता खो बैठते हैं, उन महिलाओं के लिए कृत्रिम गर्भाधान के तरीके प्रयोग में लाये जा रहे हैं।

दर्द का पता कैसे चलता है?

दर्द एक अप्रिय अनुभूति है, जो सामान्यतः किसी चोट, रोग या शरीर की दूसरी असामान्यता के कारण पैदा होती है। यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इससे यह पता चलता है कि शरीर में कहीं कुछ गड़बड़ है। क्या तुम जानते हो कि दर्द का हमें कैसे पता चलता है?

दर्द की अनुभूति हमें शरीर की तंत्रिकाओं (nerves) के अन्तिम सिरों से होती है। इन्हें हम दर्द-ग्राही कहते हैं। ये दर्द-ग्राही तंत्रिकाएं समस्त शरीर में तथा त्वचा पर स्थित हैं। प्रत्येक दर्द-ग्राही एक तंत्रिका का हिस्सा होता है, जो दर्द के स्पंदों को मस्तिष्क तक ले जाता है।

बाह्य दर्द (superficial pain) त्वचा में स्थित ग्राहियों द्वारा पैदा होता है। कोई भी व्यक्ति यह बता सकता है कि बाह्य दर्द शरीर के किस स्थान पर है क्योंकि त्वचा में अनेक दर्द-ग्राही होते हैं। आन्तरिक अंगों के दर्द का स्थान बताना बहुत मुश्किल है क्योंकि शरीर के आन्तरिक दर्द की स्थिति को केवल मोटे रूप से बताया जा सकता है। इस प्रकार से बताए जाने वाला दर्द शरीर के जिस हिस्से में होता है, उसका मूल स्रोत उस स्थान से कुछ अलग होता है। दांत के दर्द की कुछ ऐसी ही स्थिति होती है।

दर्द के कारणों का उपचार करने से दर्द से मुक्ति पाई जा सकती है। एस्प्रीन (aspirin) जैसी औषधियों से दर्द पर नियंत्रण किया जा सकता है। बहुत ही तेज दर्द के लिए नारकोटिक औषधियां प्रयोग में लाई जाती हैं। इन औषधियों में अफीम, मार्फीन और हेरोइन (heroin) मुख्य हैं। इन औषधियों से उन तंत्रिकाओं के रास्ते बंद हो जाते हैं, जो मस्तिष्क तक दर्द की सूचना ले जाते हैं। मार्फिन एक बहुत ही शक्तिशाली दर्द-विनाशक दवा है। इन औषधियों का एक सबसे बड़ा दोष यह है कि इनको लेने की आदत बन जाती है। लगातार होने वाले दर्द से छुटकारा दिलाने के लिए शल्य चिकित्सक मस्तिष्क या रीढ़ की हड्डी के उस रास्ते को काट देते हैं, जो मस्तिष्क तक दर्द के संदेश ले जाता है।

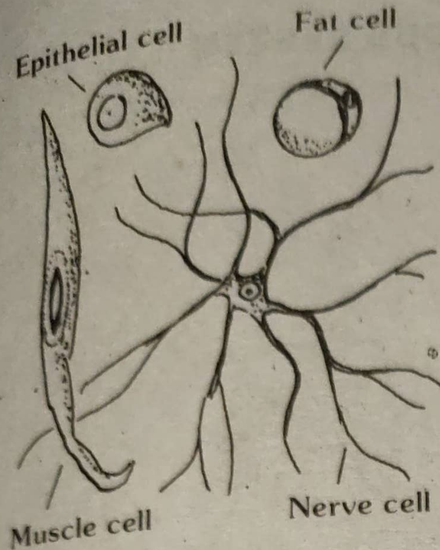
यह आश्चर्य की बात है कि वैज्ञानिक अभी तक इस तथ्य को नहीं जानते हैं कि दर्द क्यों होता है? ऐसा विश्वास है कि तंत्रिकाओं के सिरों पर चोट लगने से ही दर्द पैदा होता है। वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि त्वचा पर लगभग तीस लाख ऐसे छोटे-छोटे स्थान हैं, जिनमें दर्द पैदा किया जा सकता है।

क्या हर व्यक्ति के शरीर से एक विशेष गन्ध आती है?

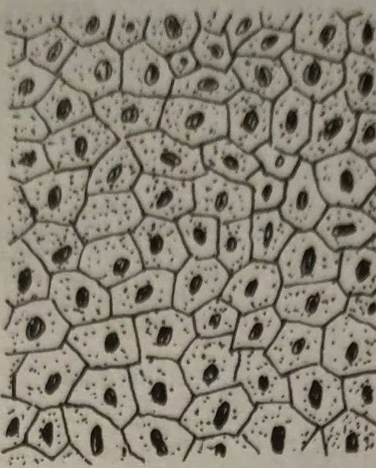
आमतौर से देखा गया है कि पुलिस के कुत्ते अपराधियों से आने वाली गन्ध के आधार पर उनकी पहचान कर लेते हैं। इस तथ्य से पता चलता है कि प्रत्येक व्यक्ति के शरीर से एक विशेष प्रकार की गन्ध आती है। कुछ प्रयोगों द्वारा यहां तक सिद्ध हो चुका है कि जुड़वां बच्चों के शरीर से भी अलग-अलग प्रकार की गन्ध आती है। पुलिस के कुत्तों को यदि विशेष प्रशिक्षण दिया जाये तो वे जुड़वां बच्चों में अन्तर स्थापित कर सकते हैं। क्या तुम जानते हो कि प्रत्येक व्यक्ति के शरीर से एक विशेष प्रकार की गन्ध क्यों आती है?

किसी व्यक्ति-विशेष के शरीर से आने वाली गन्ध कुछ सीमा तक उसके शरीर में स्थित स्वेद-ग्रन्थियों (sweat-glands) से पैदा होने वाले वसीय द्रव के ऊपर निर्भर करती है लेकिन गन्ध का मुख्य कारण वे जीवाणु हैं, जो व्यक्ति-विशेष के पसीने पर पलते हैं। जब कोई बच्चा पैदा होता है तो वह मां, नर्सों और डाक्टरों आदि के सम्पर्क में आता है। उनसे वह बहुत से जीवाणु प्राप्त कर लेता है। अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में आने पर इन जीवाणुओं की संख्या में क्रमशः वृद्धि होती जाती है। शरीर की त्वचा के गीले भागों में इन जीवाणुओं की संख्या सूखे भागों की तुलना में अधिक होती है।

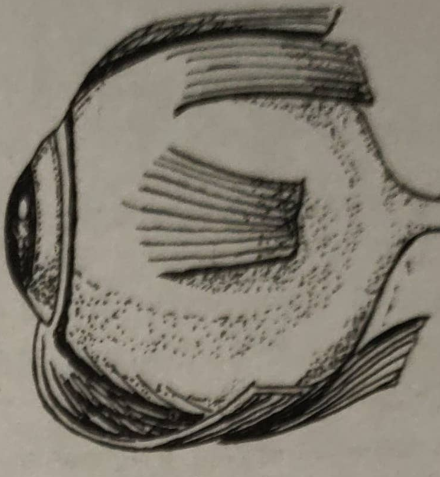
जन्म के कुछ दिनों बाद ही विभिन्न प्रकार के जीवाणु हमारी त्वचा को ढक लेते हैं और स्थायी रूप से जम जाते हैं। ये हमारी त्वचा पर जीवन भर जमे रहते हैं। दूसरे शब्दों में, विशेष प्रकार के जीवाणुओं के लिए हमारा शरीर एक स्थायी निवास बन जाता है। प्रकृति में लाखों, करोड़ों प्रकार के जीवाणु हैं। प्रत्येक व्यक्ति की त्वचा पर जमा होने वाले जीवाणुओं की अलग-अलग किस्में होती हैं। ये जीवाणु विभिन्न व्यक्तियों में विभिन्न प्रकार की गन्ध पैदा करते हैं। यही कारण है कि प्रत्येक व्यक्ति के शरीर से आने वाली गन्ध भी अलग-अलग होती है। कुत्ते इसी गन्ध के आधार पर अपराधियों की पहचान करते हैं।



VARIOUS CELL



TYPES TISSUE



AN ORGAN: THE EYE

शरीर में कोशिकाएं, ऊतक, अंग और तंत्रिका कैसे बनते हैं?

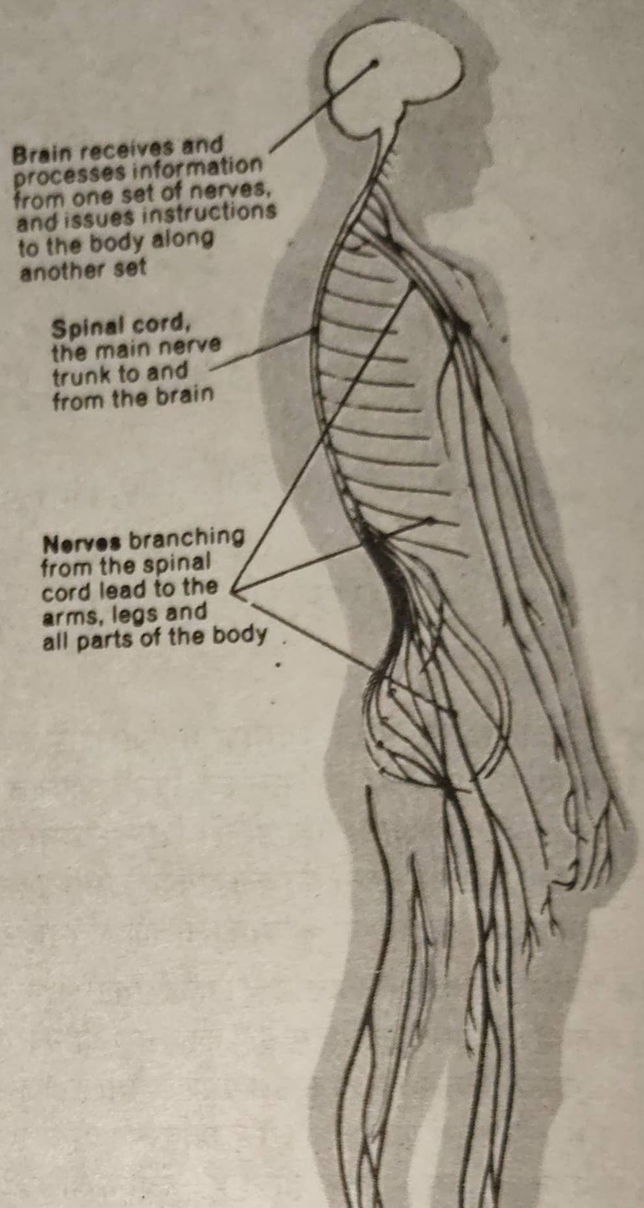
जिस प्रकार किसी भवन-निर्माण में हजारों ईंटों को प्रयोग में लाया जाता है, ठीक उसी प्रकार अरबों-खरबों कोशिकाओं से मिलकर किसी जीवित प्राणी की संरचना होती है। मानव-शरीर की सभी कोशिकाएं (cells) एक जैसी नहीं होतीं। भिन्न-भिन्न कार्यों के अनुसार वे एक-दूसरे से अलग-अलग होती हैं। उदाहरण के लिए, मांसपेशियों की कोशिकाएं समतल होती हैं क्योंकि सामान्यतः इन्हें शरीर की सतह को ढकना होता है। प्रकृति ने वास्तव में कोशिकाओं की रचना उनके कार्यों के अनुसार ही की है।

जब एक प्रकार या विभिन्न प्रकार की कोशिकाएं एक साथ व्यवस्थित हो जाती हैं तो ऊतकों (tissues) का निर्माण होता है। प्रत्येक ऊतक में इन कोशिकाओं को एक-दूसरे से जोड़ने वाला पदार्थ होता है, जिसे मैट्रिक्स कहते हैं। इस पदार्थ का काम ठीक उस प्रकार होता है, जिस प्रकार गारे या चूने का ईंटों को जोड़ने में होता है। किसी ऊतक का रूप मैट्रिक्स की मात्रा और कोशिकाओं के प्रकार पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, त्वचा के ऊतकों में बहुत ही कम मैट्रिक्स होता है, जबकि हड्डियों के ऊतकों में मैट्रिक्स बहुत अधिक मात्रा में होता है। मैट्रिक्स का निर्माण कैल्शियम फास्फेट और कार्बोनेट तथा मैगनीशियम फास्फेट और कार्बोनेट से होता है। इन पदार्थों के कारण हड्डियों की मजबूती बढ़ जाती है। हमारा रक्त भी एक प्रकार का ऊतक है, जिसका मैट्रिक्स एक द्रव होता है, जिसे प्लाज़्मा कहते हैं। इसी में रक्त-कोशिकाएं तैरती रहती हैं।

विभिन्न प्रकार के ऊतक एक साथ व्यवस्थित होकर शरीर के अंगों का निर्माण करते हैं। यही अंग शरीर में अलग-अलग कार्य करते हैं। उदाहरण के लिए, मनुष्य की आंख कई प्रकार के ऐसे ऊतकों से मिलकर बनी है, जो हमारी देखने के प्रक्रम में मदद करते हैं। यद्यपि आंख हमारे शरीर का एक छोटा-सा अंग है लेकिन यह बहुत ही जटिल है। इसके अलावा शरीर में यकृत (liver) जैसे दूसरे काफी बड़े अंग भी हैं, जो मुख्य रूप से एक ही प्रकार के ऊतकों से मिलकर बने हैं।

बहुत से अंगों के एक साथ मिलने से एक तंत्रिका या प्रणाली का निर्माण होता है। शरीर में ऐसी कई जटिल प्रणालियां हैं, जो कई जटिल काम करती हैं। पाचन-संस्थान, श्वसन-संस्थान, विसर्जन-संस्थान आदि विभिन्न अंगों से बने हैं, जो शरीर में भिन्न कार्य करते हैं। शरीर के सभी संस्थान एक दूसरे की सहायता करते हैं और उन्हें ऊर्जा प्रदान करते हैं। अनेक संस्थानों से मिलकर एक जीवन का निर्माण होता है।

चेतना क्या है?



मनोविज्ञान के अनुसार चेतना शब्द किसी प्राणी की जागरूक या सचेत अवस्था को प्रदर्शित करता है। अचेतन अवस्था नींद की सी स्थिति को कहते हैं। इन दोनों अवस्थाओं के बीच चेतनता की विभिन्न स्थितियां हो सकती हैं।

पूर्ण चेतना की अवस्था में जागरूकता बहुत अधिक होती है। उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति पिंगपोंग का खेल जीतने का प्रयास कर रहा है तो वह पूर्ण चेतनावस्था में कहा जाएगा। इसी प्रकार सर्कस में काम करने वाले व्यक्ति जब अपने कारनामे दिखाते हैं तो वे पूरी तरह से जागरूक या सचेत अवस्था में होते हैं।

यदि कोई व्यक्ति ऊंघने की स्थिति में है तो यह कहा जाता है कि उसकी चेतना का स्तर कम हो गया है। यदि कोई व्यक्ति गहरी सुप्तावस्था में है तो उसे अचेतन कहा जाएगा।

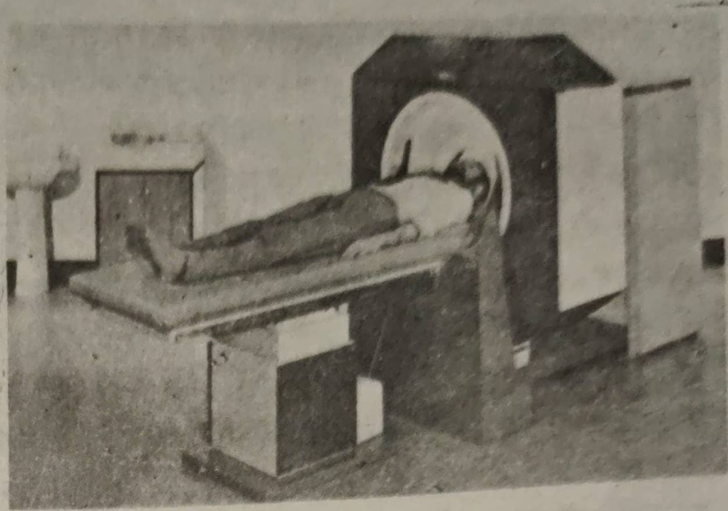
चेतना की ये दिन-प्रतिदिन की सामान्य स्थितियां हैं। इन अवस्थाओं को कृत्रिम रूप से भी पैदा किया जा सकता है। चेतना की उच्च अवस्था कुछ औषधियों द्वारा पैदा की जा सकती है। ये औषधियां केन्द्रीय नाड़ी संस्थान पर प्रभाव डालती हैं। कॉफ़ी और चाय में उपस्थित कैफीन कुछ लोगों के लिए शक्तिशाली उत्तेजक का काम करती है। अधिक शराब पीने से भी चेतना कम होती जाती है। अन्ततः व्यक्ति अचेतन अवस्था में आ जाता है।

व्यक्ति के चेतना स्तर पर कुछ रोगों का भी प्रभाव पड़ता है। कुछ ऐसी मानसिक बीमारियां हैं, जो मनुष्य के चेतना स्तर को कम कर देती हैं।

मनुष्य की भावुकता से भी चेतना पर प्रभाव पड़ता है। अत्यधिक भावुक लोगों की चेतना कम हो जाती है। जो व्यक्ति अधिक सोचते हैं, उनकी चेतना भी कम हो जाती है।

आजकल ऐसी औषधियां विकसित कर ली गई हैं, जिनके द्वारा चेतना नियंत्रित की जा सकती है। ऐसी औषधियां कम चेतना वाले व्यक्तियों के लिए लाभदायक सिद्ध हो सकती हैं लेकिन इनका प्रयोग डाक्टर की सलाह के बिना कभी नहीं करना चाहिए।

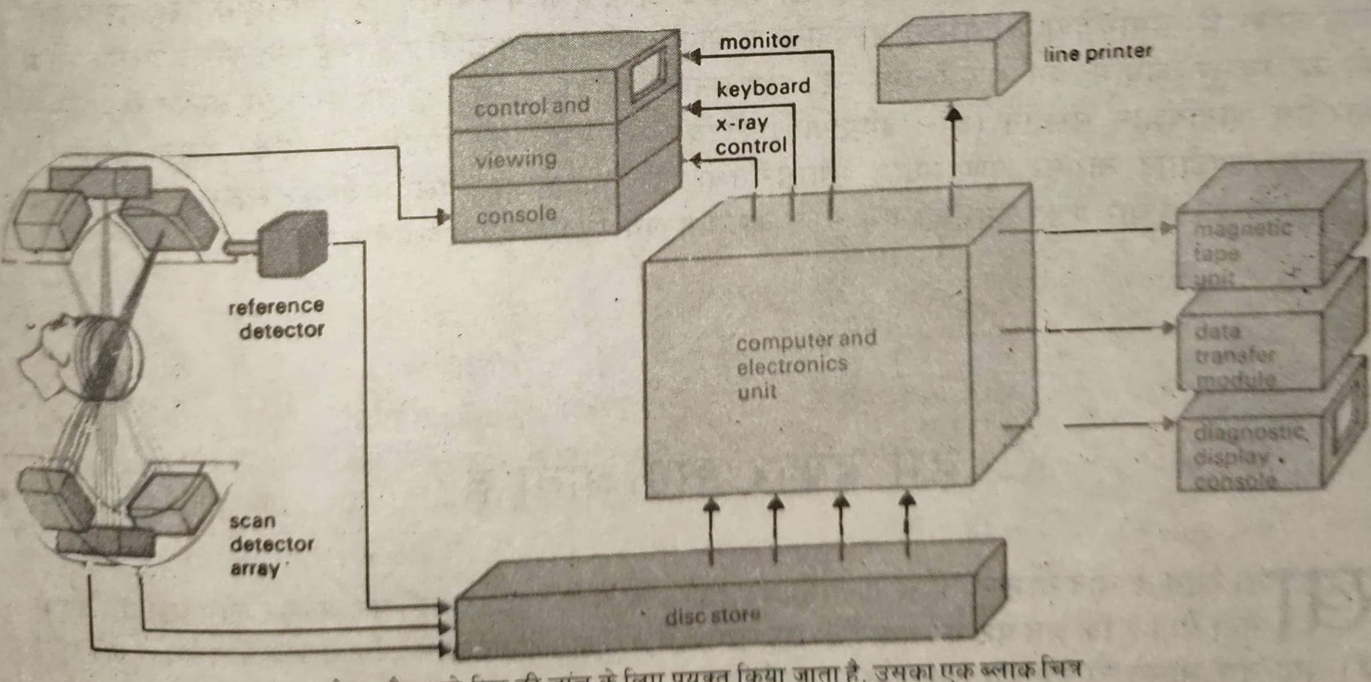
कैट स्कैनर (Cat Scanner) क्या है?



कैट स्कैनर रोगनिदान (diagnosis) का एक आधुनिकतम तरीका है। यह वास्तव में एक्स-किरणों द्वारा जांच करने की प्रणाली का ही एक अत्यन्त विकसित रूप है, जिसके द्वारा मस्तिष्क, गुर्दे, जिगर, पेट आदि की बीमारियों का पता लगाया जा सकता है।

कैट शब्द अंग्रेजी के तीन अक्षरों—सी, ए और टी से मिलकर बना है। ये तीनों—कम्प्यूटराइज्ड एक्सिअल टोमोग्राफी (computerized axial tomography) के प्रथम अक्षर हैं। कैट स्कैनर का आविष्कार सन् 1972 में ब्रिटेन के इलेक्ट्रॉनिक इंजीनियर गोडफ्रे हाउंसफील्ड और अमरीकी भौतिकशास्त्री एल. एन. कारमेक ने किया था। इस आविष्कार के लिए इन दोनों को संयुक्त रूप से सन् 1979 का चिकित्सा-विज्ञान का नोबेल पुरस्कार दिया गया था।

कैट स्कैनर दो प्रकार के होते हैं—हैड स्कैनर (head scanner) और बॉडी स्कैनर (body scanner)। हैड स्कैनर से मस्तिष्क संबंधी रोगों का पता लगाया जाता है। इससे मस्तिष्क में उपस्थित रसौली, ब्रेन हेमरेज, मस्तिष्क की नलिकाओं में रुकावट आदि का पता लगाया जाता है। बॉडी स्कैनर से पेट, जिगर, छाती आदि के रोगों का पता लगाया जाता है। यह उपकरण आधुनिक विज्ञान की एक महानतम देन है।



कैट-स्कैनर जो सिर की जांच के लिए प्रयुक्त किया जाता है, उसका एक ब्लाक चित्र

कैट स्कैनर में एक एक्स-किरण-स्रोत होता है, जिसमें एक घूमने वाला एनोड (anode) लगा होता है। इसकी सहायता से एक्स-किरणों को शरीर के किसी भी भाग पर किसी भी कोण से डाला जा सकता है। एक्स-किरण-स्रोत के सामने बहुत से डिटेक्टर लगे होते हैं, जो शरीर के विभिन्न हिस्सों से सूचनाएं प्राप्त करते हैं। बीच में रोगी के लिए एक मोटरचालित स्ट्रेचर होता है, जिससे रोगी के अंग-विशेष एक्स-किरणों के सामने लाये जाते हैं। डिटेक्टर आमतौर पर सोडियम आयोडाइड, कैल्शियम फ्ल्यूराइड तथा बिस्मथ जर्मीनेट के मणिभों (crystals) से बने होते हैं। आधुनिक यंत्रों में 300 डिटेक्टर तक लगे होते हैं।

एक्स-किरण-स्रोत से 2-3 सेकण्ड के अन्तराल से एक्स-किरण का स्पन्द (pulse) निकलता है, जो शरीर के विभिन्न ऊतकों (tissues) में से गुजरकर डिटेक्टरों पर पड़ता है। एक्स-किरणों द्वारा लायी गयी सूचना को डिटेक्टर विद्युत संदेशों में बदल देते हैं। डिटेक्टर का संबंध एक कम्प्यूटर से होता है और ये सन्देश कम्प्यूटर में पहुंच जाते हैं। कम्प्यूटर इनका विश्लेषण करता है तथा जटिल गणित सूत्रों (formula) का उपयोग करके इन्हें तीन विमाओं (three dimensional) वाले चित्र का रूप दे देता है। कम्प्यूटर का संबंध एक टेलीविजन स्क्रीन से होता है। कम्प्यूटर से आने वाले सन्देश विभिन्न ऊतकों के घनत्व (density) के अनुसार होते हैं, जो टी.वी. स्क्रीन पर तीन विमाओं वाले चित्र के रूप में उभरते दिखाई देने लगते हैं। विभिन्न कोणों पर क्रमवीक्षित (scanning) करने से शरीर के किसी भी अंग-विशेष का चित्र स्क्रीन पर आ जाता है। इसका अध्ययन करके रोग की जानकारी प्राप्त की जाती है। टी.वी. स्क्रीन पर उभरने वाले चित्रों को एक्स-किरण-फिल्म के ब्रोमाइड पेपर पर स्थायी रूप से भी चित्रित किया जा सकता है। इस चित्र से चिकित्सक को रोग का तुरन्त पता चल जाता है, जिससे इलाज के लिए आवश्यक कदम उठाये जा सकते हैं। इसके 300 डिटेक्टर एक साथ 300 एक्स-किरण-स्पन्दों को प्राप्त करके 300 × 300 = 90,000 सन्देश कम्प्यूटर को प्रेषित करते हैं। इन सभी सन्देशों का कम्प्यूटर द्वारा विश्लेषण किया जाता है, जो चित्रों के रूप में टी.वी. स्क्रीन पर प्राप्त होते हैं। कैट स्कैनर की एक और विशेषता यह है कि इससे यह भी पता लगाया जा सकता है कि किसी रोग-विशेष के उपचार के लिए दी जा रही औषधि प्रभावशाली सिद्ध हो रही है या नहीं? इस बात का पता रोगी के अंग-विशेषों को बार-बार स्कैन करके लगाया जाता है।

आज संसार के सभी विकसित तथा विकासशील देशों के अस्पतालों में रोग-निदान के लिए कैट स्कैनर प्रयुक्त किये जा रहे हैं। हमारे देश के विभिन्न अस्पतालों में भी हैड स्कैनर तथा बॉडी स्कैनर हैं। दिल्ली के अस्पतालों में भी कैट स्कैनर काम में लाये जाते हैं, जैसे—डा. राम मनोहर लोहिया अस्पताल, सर गंगाराम अस्पताल, अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (ऑल इण्डिया इंस्टीट्यूट ऑफ मेडीकल साइंसेज), आदि। इसके अतिरिक्त लखनऊ, चण्डीगढ़, नागपुर, पुणे, मद्रास, मंगलौर तथा हैदराबाद के अस्पतालों में भी कैट स्कैनर हैं। बंगलौर में दो तथा बम्बई में चार कैट स्कैनर हैं। एक स्कैन का व्यय लगभग एक हजार रुपये आता है।

हमें डकार क्यों आती है?

खाना खाने के बाद सामान्यत: सभी लोगों को डकार आती है। डकार आने पर अक्सर लोगों को यह कहते सुना गया है कि अब पेट भर गया है। कुछ लोगों को तो ऐसी आदत होती है कि वे जब चाहें डकार ले सकते हैं। क्या तुम जानते हो कि हमें डकार क्यों आती है?

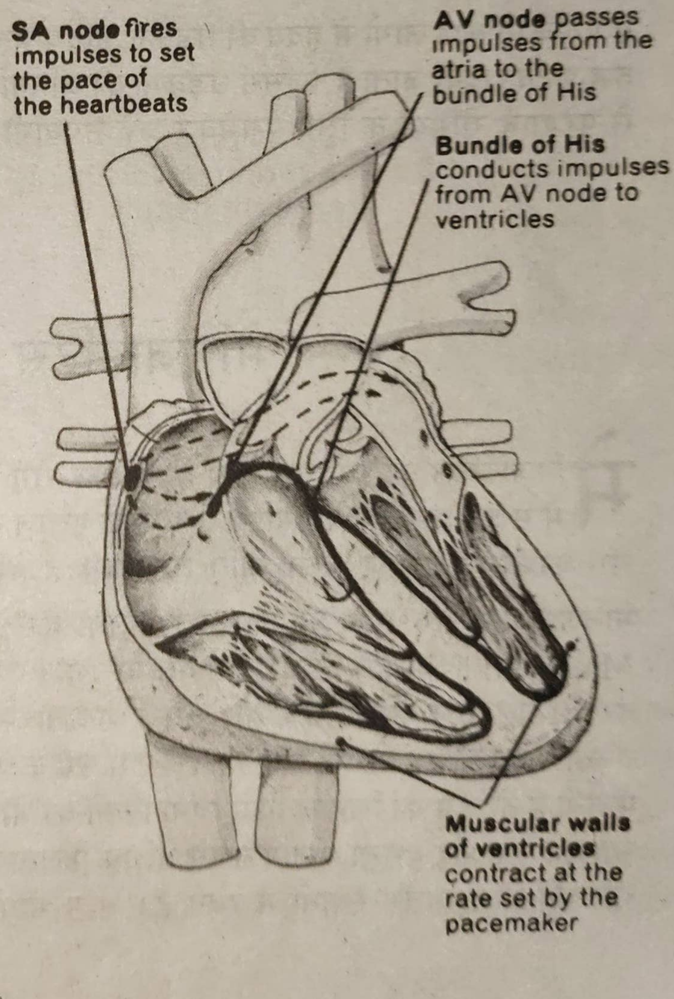
जब हम खाना खाते हैं तो भोजन के साथ कुछ वायु हमारे पेट के अन्दर चली जाती है। भोजन नली में छाती और पेट के बीच एक दरवाजा होता है, जो भोज्य पदार्थों को निगलते समय खुल जाता है और भोजन के पेट में प्रवेश करने के बाद तुरंत ही बन्द हो जाता है। यही दरवाजा पाचक रसों को बाहर आने से रोकता है। सिर के बल खड़े होने पर इसी दरवाजे के कारण पेट के अन्दर की वस्तुएं गले की ओर नहीं आ पातीं।

हमारे पेट में कुछ वायु होती है। भोजन के पचने से भी कुछ गैसें पेट में निकलती रहती हैं। सोडा जैसे पेय-पदार्थों के पीने पर भी पेट में गैसें पहुंचती रहती हैं। जब पेट में काफी वायु और गैस इकट्ठी हो जाती है तो मस्तिष्क से इन गैसों को बाहर निकालने का एक संदेश आता है। इस संदेश के परिणामस्वरूप पेट की मांस-पेशियां सख्त हो जाती हैं, जिससे यह दरवाजा क्षण भर के लिए खुलता है और डकार के रूप में वायु गले और मुंह से होती हुई बाहर आ जाती है। जब यह वायु पेट से नली में आती है तो कम्पन करने लगती है। इन्हीं कम्पनों के कारण डकार आने पर एक आवाज पैदा होती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि डकार आना एक ऐसी प्रक्रिया है, जिससे पेट में एकत्रित हुई वायु बाहर आ जाती है।

डकार लेने के लिए हमें सोचने की आवश्यकता नहीं होती। यह प्रक्रिया अपने आप ही सम्पन्न हो जाती है। संसार के कुछ हिस्सों में डकार लेने को असभ्यता का प्रतीक नहीं माना जाता है। कुछ दूसरे हिस्सों में माना जाता है कि भरपेट खाना खाने के बाद ही में डकार लेनी चाहिए ताकि भोजन खिलाने वाले को यह पता लग जाए कि व्यक्ति का पेट भर चुका है।

पेसमेकर (Pacemaker) हृदय की धड़कन कैसे नियंत्रित करता है?

हमारा हृदय जीवनभर अपने आप ही धड़कता रहता है। इस धड़कन के नियंत्रण में मस्तिष्क की कोई भूमिका नहीं होती। एक सामान्य, स्वस्थ व्यक्ति का हृदय एक मिनट में 72-80 बार धड़कता है। व्यायाम या भारी काम-काज करते समय हृदय की धड़कन प्रति मिनट 140 तक या उससे भी अधिक हो जाती है। क्या तुम जानते हो कि हृदय की धड़कन कैसे नियंत्रित होती है?



हृदय की निरंतर और नियमबद्ध धड़कन का नियंत्रण पेसमेकर (pacemaker) द्वारा किया जाता है। हृदय चार प्रकोष्ठों (chambers) के बीच स्थित होता है। ऊपर के दो प्रकोष्ठों को ऐट्रिया (atria) तथा बीच के प्रकोष्ठों को वेण्ट्रिकल्स (ventricles) कहते हैं। ऐट्रिया नामक ये मांसपेशियां कोशिकाओं के छोटे से समूह में स्थित होती हैं। यहीं से कम तीव्रता के विद्युत स्पंद (electrical impulse) पैदा होते हैं। इन विद्युत स्पंदों की संख्या एक सामान्य व्यक्ति में एक मिनट में 72 होती है। इन विद्युत संदेशों से ऐट्रिया सिकुड़ते (contract) हैं। जब ये संदेश वेण्ट्रिकल्स में पहुंचते हैं, तो वह भी सिकुड़ते हैं। हृदय की धड़कन का समय नियमित होता है। सिकुड़ने की इस क्रिया को सिस्टॉल (systole) कहते हैं। सिकुड़न के बाद की अल्प समय की क्रिया को डाएस्टॉल (diastole) कहते हैं। सिस्टॉल और डाएस्टॉल क्रियाओं का यह क्रम नियमित रूप से जीवन भर चलता रहता है।

कभी-कभी हृदय की धड़कन तेज और कभी-कभी धीमी हो जाती है। धड़कन का तेज और कम होना, दो तंत्रिकाओं पर निर्भर करता है। इन्हें हम क्रमशः वेगस (vagus) और सिम्पैथेटिक (sympathetic) तंत्रिकाएं कहते हैं। वेगस तंत्रिका हृदय द्वारा अधिक काम किये जाने के फलस्वरूप बढ़ने वाली धड़कनों की गति को कम करती है। यदि किसी व्यक्ति की वेगस तंत्रिका काट दी जाये तो उसके दिल की धड़कन बढ़ जाती है। सिम्पैथेटिक तंत्रिका उत्तेजना के समय हृदय की धड़कन की गति को बढ़ाती है। यह देखा गया है कि इस तंत्रिका के काटे जाने से हृदय की धड़कन पर भी प्रभाव पड़ता है।

हृदय रोगियों के लिए अब वैज्ञानिकों ने कृत्रिम पेसमेकर बना दिए हैं। ये कृत्रिम पेसमेकर हृदय को आवश्यक विद्युत संदेश देते रहते हैं, जिससे नियमित रूप से हृदय की धड़कन चलती रहती है। इन कृत्रिम पेसमेकरों में ऐसी बैटरी लगी होती है, जो छः वर्ष या उससे अधिक समय तक चल सकती है। इन पेसमेकरों को बायीं ओर, कांख के नीचे लगा दिया जाता है।

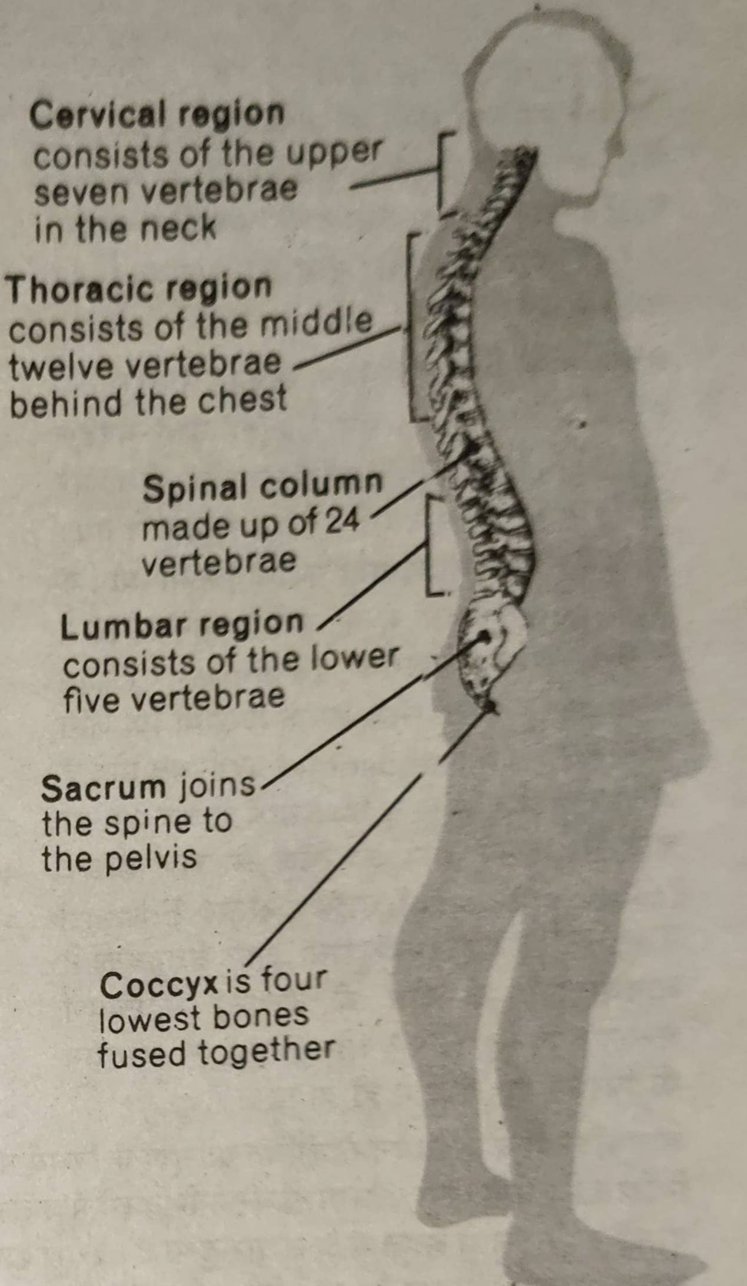
कभी-कभी कुछ लोगों में हृदय की धड़कन अनियमित हो जाती है। ऐसे रोगियों को विद्युत का एक अचानक और तेज झटका दिया जाता है, जिससे धड़कनों की अनियमितता दूर हो जाती है। हृदय की धड़कन की अनियमितताओं से परेशान रोगियों के लिए पेसमेकर बड़े उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

मेनिंजाइटिस का रोग क्या है?

मेनिंजाइटिस का रोग एक बड़ा ही भयंकर रोग है, जिसमें मस्तिष्क और रीढ़ की हड्डी के ऊपर की झिल्ली में सूजन आ जाती है। यदि इस रोग का इलाज न किया जाए तो रोगी की निश्चय ही मृत्यु हो जाती है। इस रोग का तुरन्त इलाज करना अति आवश्यक है। क्या तुम जानते हो कि यह रोग कैसे फैलता है?

मेनिंजाइटिस रोग एक जीवाणु द्वारा फैलता है। इस जीवाणु को नाईसीरिया मेनिंजाइटिडीस (Neisseria Meningitidis) कहते हैं। यह रोग महामारी के रूप में फैलता है। अध्ययनों से पता चला है कि इस रोग का प्रकोप हर 10–12 साल बाद होता है और उसके बाद चार-पांच साल तक चलता रहता है। इस रोग का प्रकोप मुख्यतः बच्चों पर अधिक होता है। पांच साल से कम उम्र के बच्चे इस रोग के अधिक शिकार होते हैं। लेकिन जब यह रोग फैलता है तो उम्र का लिहाज किए बिना किसी को भी हो सकता है। यह रोग गर्मियों में सबसे कम फैलता है लेकिन उतरती ठंड और वसन्त ऋतु में सबसे अधिक फैलता है। इस रोग का प्रकोप उन लोगों को अधिक होता है, जो गंदी बस्तियों में तथा तंग स्थानों में रहते हैं। आम भाषा में इसे गर्दन-तोड़ बुखार कहा जाता है।

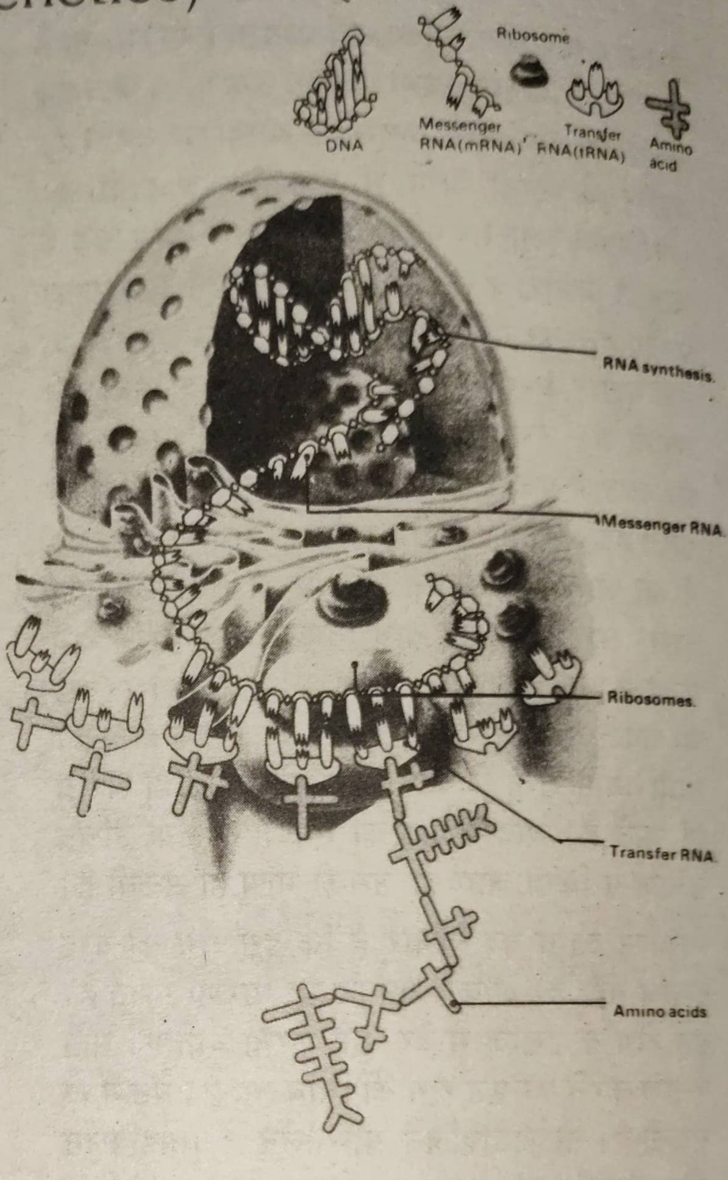
इस रोग से पीड़ित व्यक्ति जब छींकता है या खांसता है तो रोग के जीवाणु स्वस्थ व्यक्ति तक पहुंच जाते हैं। ये जीवाणु पहले नाक व गले को अपना घर बनाते हैं। शरीर के इन्हीं अंगों में इनकी वृद्धि होती है। जीवाणुओं के गले में प्रवेश करने के चार-पांच दिन के बाद ही बीमारी के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। रोग का प्रकोप होने पर गले में खराश, नाक का बहना, उल्टी, तेज बुखार, सिर में दर्द, कमर और गर्दन में पीड़ा होने लगती है। जब इस रोग के जीवाणु मस्तिष्क और मेरुदण्ड में प्रवेश कर जाते हैं तो गर्दन झुकाने में भी बहुत दर्द होता है। ठोड़ी को सीने से लगाना असम्भव ही हो जाता है। बुखार आने के दो-तीन दिन बाद शरीर पर छोटे-छोटे दाने निकल आते हैं। ये दाने कूल्हे से शुरू होकर पेट, छाती, बाहों व टांगों पर देखे जा सकते हैं। इस रोग में बुखार काफी तेज होता है। कभी-कभी रोगी के कान और आंख दोनों ही खराब हो जाते हैं। यदि मरीज का एक हफ्ते तक उचित इलाज न किया जाए तो उसकी मृत्यु हो सकती है। सामान्य लोगों का विचार है कि इस रोग का कोई इलाज नहीं है। लेकिन उनकी यह धारणा गलत है। इस रोग के इलाज में देर नहीं करनी चाहिए। सही इलाज करने पर इस रोग की चिकित्सा 24 घंटे में हो सकती है। सल्फाडाइजिन, पेन्सिलिन, टैट्रासाइक्लिन और एम्पिसिलिन, आदि इस रोग के उपचार के लिए बहुत लाभकारी हैं। एक ग्राम सल्फाडाइजिन दिन में दो बार तीन दिन तक अथवा रिफैम्पसिन 600 मि.ग्रा. प्रतिदिन पांच दिन तक लेने से इस रोग के प्रकोप से बचा जा सकता है।



इस रोग का प्रकोप संसार के लगभग सभी देशों में होता रहता है। भारत में भी इसका प्रकोप काफी जोर-शोर से हो चुका है। आधुनिक अनुसंधानों के आधार पर इस रोग के जीवाणुओं को तीन समूहों या ग्रुपों में बांटा गया है—ए, बी और सी। अमरीका में सन् 1915 से सन् 1963 तक यह रोग ग्रुप ए के कारण महामारी के रूप में फैला था। सन् 1964 से सन् 1968 तक यह रोग ग्रुप बी के कारण सक्रिय रहा। आजकल ग्रुप सी के जीवाणुओं का प्रकोप बढ़ता जा रहा है। दिल्ली में यह रोग ग्रुप ए के जीवाणुओं द्वारा फैला था। इस रोग को न फैलने देने के लिए अमरीका के वैज्ञानिकों ने ग्रुप ए, बी, सी के जीवाणुओं के लिए एक टीका विकसित कर लिया है, जिसके परिणाम काफी सन्तोषजनक रहे हैं। भारत में यह टीका अभी उपलब्ध नहीं है।

मेनिंजाइटिस के रोग को साधारण रोग नहीं समझना चाहिए। इसके कुछ भी लक्षण प्रकट होने पर रोगी को तुरन्त अस्पताल ले जाना चाहिए। रोग की चिकित्सा में किसी प्रकार का विलम्ब बहुत ही घातक सिद्ध हो सकता है।

आनुवंशिकी (Genetics) क्या है?



आनुवंशिकी वह विज्ञान है, जिसके अन्तर्गत हम उन गुणों का अध्ययन करते हैं, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी मां-बाप से अपने बच्चों में आते हैं। विज्ञान की इस शाखा के अन्तर्गत मनुष्य, जानवर और पेड़-पौधे, सभी का अध्ययन किया जाता है।

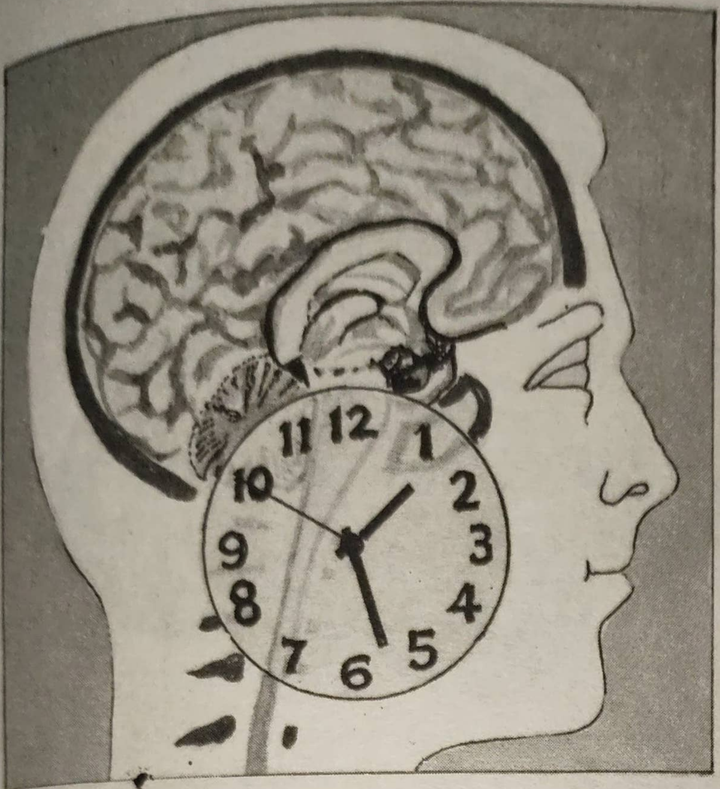
आनुवंशिकी का वास्तविक विकास पिछली दो सदियों में ही हुआ है। सन् 1860 में ग्रैगर मैण्डल (Gregor Mendal) द्वारा मटर के पौधों पर किये गये शोधों से बहुत से निष्कर्ष निकाले गये। इन प्रयोगों से पता लगाया गया है कि मां-बाप के जीन (gene) बच्चों में आ जाते हैं। सन् 1910 में थॉमस हण्ट मोरगन (Thomas Hunt Morgan) ने यह सिद्ध करके दिखाया कि जीन क्रोमोसोम (Chromosome) पर स्थित होते हैं और सभी जीन क्रोमोसोमों के साथ ही बच्चों में आ जाते हैं। इसके बाद अमरीका के जॉर्ज बीडल (George Beadle), एडवार्ड टाटूम (Edward Tatum), हरगोविन्द खुराना, आदि वैज्ञानिकों ने आनुवंशिकी के क्षेत्र में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अध्ययन किये। RNA और DNA का अध्ययन भी पिछले 40 वर्षों में ही हो पाया है।

आनुवंशिकी के अध्ययन से जीवित प्राणियों के विषय में हमारे ज्ञान में क्रान्तिकारी वृद्धि हुई है। आज के वैज्ञानिक मिश्रित विधियों द्वारा पेड़-पौधों की नयी किस्में पैदा कर सकते हैं। आनुवंशिकी के प्रयोग से भोज्य पदार्थ देने वाले पौधों की नस्ल में बहुत बड़ा सुधार हुआ है। इसी विज्ञान को उपयोग में लाकर आज अच्छी नस्ल के पशु पैदा करना सम्भव हो गया है। सारे विश्व में खेती की उपज का बढ़ना आनुवंशिकी में हुई प्रगति का ही परिणाम है।

आनुवंशिकी इंजीनियरिंग (genetic engineering) द्वारा किसी जीव की संरचना बदली जा सकती है। किसी जानवर की कोशिकाओं (cells) से डी-एन-ए लेकर और इसे किसी बैक्टीरिया की कोशिकाओं में मिलाकर इंसुलीन (Insulin) जैसा पदार्थ तैयार किया जा सकता है।

आनुवंशिकी के अध्ययन से बहुत से रोगों का पता लगाना सरल हो गया है। मां के गर्भ से इंजैक्शन द्वारा थोड़ा-सा गर्भ द्रव लेकर शुरू में ही यह पता लगाया जा सकता है कि गर्भ में विकसित होने वाला बच्चा लड़का है या लड़की। आनुवंशिकी के आधार पर अतिशय पित्त बनने की रक्तपित्तता (Haemophilia) जैसी बीमारियों का पता लगाया जा सकता है। इन रोगों का पता लगाकर डॉक्टर बच्चे की चिकित्सा का प्रयास कर सकते हैं।

आज के वैज्ञानिक तो ऐसी सम्भावनाओं पर भी गौर कर रहे हैं, जिनमें विशिष्ट लोगों के जींस लेकर एक अत्युत्तम नस्ल की विकसित संतति पैदा की जा सकती है।



क्या हमारे शरीर में भी कोई घड़ी है?

कुछ लोगों में यह अद्भुत क्षमता देखने को मिलती है कि यदि वे रात को सोते समय, सुबह किसी निश्चित समय पर उठने का निश्चय करें तो उस समय पर बिना किसी घड़ी की सहायता से उठ जाते हैं। हो सकता है कि इस प्रकार का अनुभव तुम्हें न भी हुआ हो लेकिन निश्चय ही हमारे शरीर में एक स्थायी लय (rythm) होती है। उसी से हमें समय का ज्ञान हो जाता है। हम रात्रि में लगभग आठ घंटे सोते हैं। हमारे शरीर का तापमान दिन के समय के अनुसार ऊपर-नीचे होता रहता है। इसी प्रकार दिल की धड़कन का वेग भी बदलता रहता है।

अब प्रश्न उठता है कि शरीर के ये सभी तालमेल क्या इस प्रकार की आन्तरिक घड़ी पर निर्भर करते हैं या दिन और रात के अंधेरे पर निर्भर करते हैं? इस विषय में एक प्रसिद्ध प्रयोग से कुछ तथ्य प्राप्त हुए थे। कई महीनों तक कुछ प्रयोगकर्त्ताओं को एक ऐसी गुफा में बन्द कर दिया गया, जहां दिन का प्रकाश दिखाई ही नहीं देता था। घड़ी न होने से उन्हें समय का भी कोई ज्ञान नहीं हो पाता था। वे इसी स्थिति में कई महीने तक रखे गए। उन्हें गैस हीटर, रोशनी, किताबें और इसी प्रकार की अन्य सुविधाएं दी गईं थी ताकि उनका जीवन उस ठंडी गुफा में भी आनंदमय रह सके। वे अपने बेस कैम्प (Base camp) को अपने जागने, खाने और सोने आदि की सूचनाएं टेलीफोन से देते रहते थे। वे अपने पेशाब की बोतलें भी ऐसी जगह पर रख देते थे, जहां से वैज्ञानिक उन्हें बिना दिखाई दिए इकट्ठी कर लेते थे। एक दूसरे प्रयोग में कुछ लोग जमीन के नीचे विशेष प्रकार से निर्मित मकानों में रखे गए। उन्होंने भी बाहरी वैज्ञानिकों को अपने दैनिक कार्यकलाप के समय की नियमित सूचनाएं दीं।

अधिकतर प्रयोगकर्त्ता नियमित समय से सोए और नियमित समय से जागे। उनमें से कुछ ही ऐसे थे, जो अपने दैनिक कार्यक्रमों में अनियमित पाए गए।

इन सभी प्रयोगों के आधार पर यह माना जा सकता है कि हमारे शरीर के अन्दर अवश्य ही आन्तरिक घड़ियां बनी हुई हैं। वैज्ञानिक इन घड़ियों के अस्तित्व के विषय में जान गए हैं लेकिन वे अभी तक यह नहीं जानते कि ये घड़ियां शरीर में कहां हैं, देखने में कैसी लगती हैं तथा उनके चलने की प्रक्रिया क्या है? इस विषय में शोध जारी है। आशा की जा सकती है कि वैज्ञानिक निकट भविष्य में इन्हें खोज पाने में सफल होंगे।



आंख पर चोट लगने से हमें तारे क्यों दीखने लगते हैं?

यह एक आम अनुभव की बात है कि सिर या आंखों पर चोट लगने से हमारी आंखों के सामने बुलबुले से नाचने लगते हैं। इसी को हम तारे दीखना कहते हैं। वास्तव में ये आकाश में चमकने वाले तारे नहीं होते बल्कि प्रकाश की एक चमक होती है। चोट लगने पर दीखने वाले ये तारे वास्तव में आंखों से आने वाले अव्यवस्थित संदेश होते हैं।

जब एक तंत्रिका (nerve) एक संदेश ले जाती है तो वास्तव में इसमें से एक विद्युत-धारा प्रवाहित होती है। प्रत्येक संदेश विद्युत-धारा के रूप में होता है लेकिन इसका अर्थ इस बात पर निर्भर करता है कि संदेश कहां से आरम्भ हुआ है और कहां पर जा रहा है?

यदि आंख में कोई चोट लगती है तो आंख की पुतली पर होने वाले दाब से वहां की तंत्रिका-कोशिकाएं (optic nerves) अस्त-व्यस्त हो जाती हैं। इन तंत्रिकाओं का संबंध मस्तिष्क के उस हिस्से से होता है, जो आंख से आने वाले संदेशों को प्राप्त करता है। आंख से आने वाले संदेश सामान्यतः प्रकाश के रूप में होते हैं। आंख के दबाने पर जो संदेश पैदा होते हैं, वे दाब से पैदा होते हैं। इनके विषय में मस्तिष्क को कोई जानकारी नहीं होती। इसलिए मस्तिष्क इनकी विवेचना प्रकाश के संदेशों के रूप में करता है और हमें आंखों के सामने प्रकाश की चमक दीखने लगती है।

यदि तुम अपने मस्तिष्क में भ्रम पैदा करना चाहते हो और इस प्रकार के तारे देखना चाहते हो तो तुम अपनी हाथ की उंगली से नाक के पास आंख के कोने को दबाओ। तुम्हें अपनी उंगली की विपरीत दिशा में प्रकाश का एक धब्बा दिखाई देने लगेगा। इस प्रकार आंख की पलक को दबाने से हमें तारे दिखाई देने लगते हैं।

सिर पर चोट लगने पर भी ऐसे ही सन्देश मस्तिष्क में पहुंचते हैं, जो हमारी आंखों में चकाचौंध पैदा कर देते हैं।



दाद (Ring-worm) क्यों हो जाता है?

दाद त्वचा का एक सामान्य रोग है। यह कुछ फंगियों (fungi) द्वारा होता है। चूंकि इसका आकार रिंग जैसा होता है, इसलिए इसे रिंगवॉर्म कहते हैं। इस रोग के फंगी त्वचा के ऊपर रहते हैं और त्वचा के ऊपर ही अपनी संख्या बढ़ाते रहते हैं। ये त्वचा से कैरेटिन (keratin) नामक प्रोटीन का भोजन करते हैं। यह प्रोटीन त्वचा की ऊपरी सतह, नाखूनों और बालों में होती है। ये फंगी त्वचा के ऊपर एक चकत्ता-सा बना देते हैं, जो अक्सर वृत्ताकार होता है। इसी को हम दाद कहते हैं। दाद सूखा भी हो सकता है और इसमें से पानी भी निकल सकता है। दाद के बहुत से चकत्ते एक साथ भी शरीर पर हो सकते हैं।

दाद को टीनिया (tinea) भी कहते हैं। यह नाम यह प्रदर्शित करता है कि दाद शरीर के किस भाग पर है। उदाहरण के लिए खोपड़ी की त्वचा, दाढ़ी और नाखूनों के दादों को क्रमशः हम टीनिया कैपिटिस (tinea capitis), टीनिया बारबाए (tinea barbae) और टीनिया अंगुइअम (tinea unguium) कहते हैं। इसी प्रकार शरीर, पेट और जांघों के बीच के भाग, हाथों और पैर के दादों को हम क्रमशः टीनिया कोरपोरिस (tinea corporis), टीनिया क्रूरिस (tinea cruris), टीनिया मानुम (tinea mannum) और टीनिया पेडिस (tinea pedis) कहते हैं। टीनिया पेडिस को सामान्यतः एथेलिट्स फुट (athlete's foot) कहते हैं। यह दाद सूखा या पानी वाला दोनों ही हो सकता है। पानी वाला दाद पैर के अंगूठे और उंगलियों के बीच में हो सकता है। सूखा दाद आमतौर पर पैर की तली और किनारों पर हो सकता है। सिर का दाद छूत के रूप में बड़ी तेजी के साथ फैलता है। यदि स्कूल में यह किसी एक बच्चे को हो जाए तो दूसरे बच्चों में आसानी से फैल जाता है।

दाद का इलाज फंगी विनाशक औषधियों के प्रयोग द्वारा किया जाता है। दाद से प्रभावित क्षेत्र को गीला होने से बचाना चाहिए तथा उस पर सूखा पाउडर डालते रहना चाहिए। सीमित मात्रा में दाद के क्षेत्र पर पराबैंगनी किरणें (ultra-violet rays) डालने से भी लाभ होता है।

वंशानुगत (Hereditary) रोग क्या है?

बच्चे कुछ रोग अपने मां-बाप से लेकर पैदा होते हैं। ऐसे रोगों को वंशानुगत अर्थात् पीढ़ी-दर-पीढ़ी होने वाले रोग कहते हैं। इन रोगों को आयुर्विज्ञान की भाषा में लिंग-सहलग्नी (sexlinked) रोग भी कहा जाता है। इन रोगों का आधार मां-बाप से प्राप्त जींस (Genes) होते हैं। क्या तुम जानते हो कि वंशानुगत रोग कौन-कौन से हैं?

हम जानते हैं कि शिशु का लड़का या लड़की होना इस बात पर निर्भर करता है कि उसे मां-बाप से प्राप्त होने वाले एक्स (X) और वाई (Y) क्रोमोसोम (chromosome) क्रमशः कितनी संख्या में प्राप्त होते हैं। इनके अलावा, कुछ दूसरे भी जीन्स हैं, जो लैंगिक गुणों से सम्बन्ध रखते हैं। इनको लिंग-सहलग्नी जीन्स कहते हैं।

लिंग-सहलग्नी रोगों में से रंगांधता (colour blindness) एक है। मादा बच्चों में इन जीनों (genes) का प्रभाव नहीं हो पाता है लेकिन नर बच्चों में इनके प्रदर्शित होने की अधिक सम्भावना होती है। इसलिए स्त्रियों की तुलना में पुरुष अधिक रंगांध होते हैं।

हीमोफिलिया (Haemophilia) एक दूसरा रोग है, जो लिंग-सहलग्नी रोग है। इस बीमारी के रोगी का रक्त स्राव नहीं रुक पाता है। यह रोग एक्स (X) क्रोमोसोमों के कुछ गुणों के कारण होता है। यह रोग नर बच्चों को भी मां से प्राप्त होता है। महारानी विक्टोरिया के होने वाले नर बच्चों में यह रोग मां से आया क्योंकि महारानी विक्टोरिया इस रोग की वाहक (carrier) थीं।

बच्चों में शरीर के स्वाभाविक वर्णों के अभाव या विवर्णता (Albinism) का होना भी वंशानुगत रोगों से सम्बन्धित है। इस रोग के जीन्स भी मां-बाप से प्राप्त होते हैं। मधुमेह, कैंसर, आदि कुछ ऐसे रोग हैं, जो यदि बच्चों के मां-बाप को हैं तो बच्चों में उनके होने की सम्भावना काफी अधिक होती है। सिकिल सेल एनिमिया (Sickle cell anemia) भी मां-बाप से प्राप्त होने वाला एक प्रसिद्ध रोग है। यह एक प्रकार की रक्ताल्पता है, जिसमें रक्त की कोशिकाएं दरांती (sickle) के आकार की हो जाती हैं। कभी-कभी क्रोमोसोमों में कुछ असामान्यताएं होती हैं, जिनसे कुछ असामान्य रोग पैदा हो सकते हैं।

कुछ बच्चों का चेहरा छोटा लेकिन सपाट होता है। उनके हाथों की अंगुलियां छोटी, आंखें तिरछी तथा मांसपेशियां काफी कमजोर होती हैं। इनकी उम्र 20–30 वर्ष से अधिक नहीं होती और किसी भी अवस्था में इनका मानसिक विकास चार साल के बच्चे से अधिक नहीं हो पाता। इसका कारण उनके शरीर की कोशिकाओं (cells) में 46 की बजाए 47 क्रोमोसोम होते हैं और उनका संयोजन भी असामान्य होता है। इस रोग को आयुर्विज्ञान की भाषा में मोंगोलिज्म (क्योंकि इस रोग से पीड़ित बच्चे देखने में मंगोल नस्ल के लगते हैं) या इस बीमारी का अध्ययन करने वाले डाक्टर जॉन डॉउन (John Down) के नाम पर Down's Syndrome कहा जाता है।

जाड़ों में हमारे हाथ और ओंठ क्यों फट जाते हैं?

त्वचा हमारे शरीर के आन्तरिक वातावरण को बाहरी वातावरण के प्रभावों से सुरक्षा प्रदान करती है। त्वचा की सबसे ऊपरी सतह को एपीडरमिस (Epidermis) कहते हैं। यद्यपि त्वचा की इस सतह पर मृत कोशिकाएं (cells) होती हैं लेकिन वे त्वचा के नीचे की जीवित कोशिकाओं से निरन्तर जल प्राप्त करती रहती हैं। जब यह पानी त्वचा की ऊपरी सतह पर पहुंचता है तो वाष्पित हो जाता है और त्वचा के ऊपर तेल की एक पतली-सी परत रह जाती है। तेल की यह पतली परत तेल-ग्रन्थियों (Sebacious glands) द्वारा पैदा की जाती है। यही परत त्वचा को सूखने से बचाती है और इसी के कारण त्वचा मुलायम और लचीली बनी रहती है।

तेल-ग्रन्थियां एक प्रकार का चिकना पदार्थ पैदा करती हैं, जिसे सेबम (Sebum) कहते हैं। यह अन्दर की नलिकाओं से बहता हुआ हमारी बाहरी त्वचा तक आ जाता है। यही पदार्थ त्वचा को फटने से बचाता है। यह

पदार्थ जीवाणुओं के हमले से भी हमारी त्वचा को कुछ हद तक सुरक्षा प्रदान करता है। उष्ण प्रदेशों में इस तेलीय पदार्थ का निकलना बहुत उपयोगी है, क्योंकि ऐसे प्रदेशों में हमारी त्वचा निरन्तर सूखती रहती है। इस चिकने पदार्थ के बिना हमारी त्वचा दिन-प्रतिदिन की टूट-फूट को सहन नहीं कर सकती और इसके बिना त्वचा की स्वाभाविक नमी भी समाप्त हो जाती है।

ठण्डे मौसम में वायु की नमी कम हो जाती है और हवा शुष्क हो जाती है। जब ऐसी वायु त्वचा के सम्पर्क में आती है तो त्वचा से नमी का वाष्पन बहुत तेजी से होने लगता है। इसका परिणाम यह होता है कि त्वचा सूख कर फटने लगती है। हमारे ओंठ के नीचे ये तेल-ग्रन्थियां नहीं होतीं। इसलिए ठंड के मौसम में ओंठ ही सबसे पहले फटते हैं।

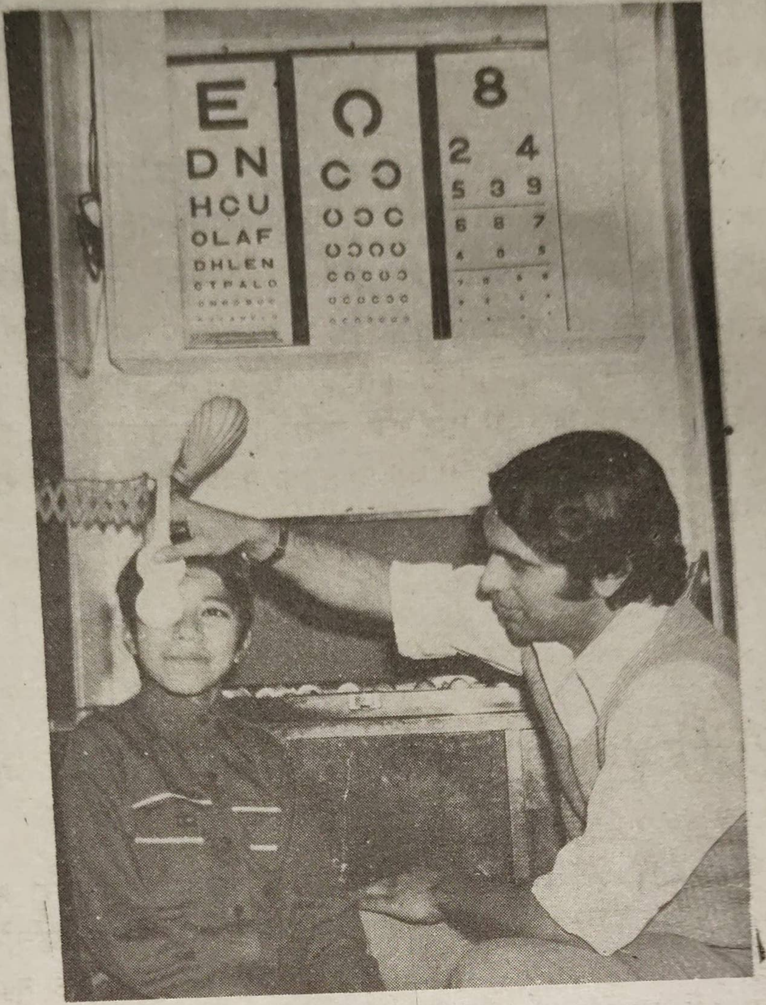
क्रीम या चिकने पदार्थों के प्रयोग से सूखी और फटी त्वचा को राहत मिलती है, क्योंकि त्वचा को जल और तेल दोनों ही मिल जाते हैं। पानी तो त्वचा के द्वारा अवशोषित हो जाता है और तेल की परत इसके ऊपर चढ़ जाती है। जब किसी व्यक्ति के हाथ फट जाएं तो उन्हें कुछ देर तक गर्म पानी में डुबोये रखना चाहिए और फिर पानी में से निकालकर चिकने पदार्थ की पतली-सी परत चढ़ा देनी चाहिए ताकि अवशोषित जल त्वचा के छिद्रों में ही बन्द हो जाए। ऐसा करने से त्वचा को ठण्ड के मौसम में फटने से बचाया जा सकता है।

दृष्टि-परीक्षण (Eye-sight Test) कैसे किया जाता है?

जब हम किसी वस्तु को देखते हैं तो उस वस्तु से आने वाली प्रकाश की किरणें हमारी आंखों की पुतलियों से होती हुई रेटिना (retina) पर उस वस्तु का उलटा प्रतिबिम्ब बना देती हैं। यह प्रतिबिम्ब आंख में स्थित एक लेंस द्वारा निर्मित किया जाता है। यह प्रतिबिम्ब उलटा होता है। इसे सीधा करने का काम प्रकाश-तन्त्रिका (optic nerve) द्वारा किया जाता है। प्रकाश-तन्त्रिका विद्युत संदेशों के रूप में चित्र को मस्तिष्क तक ले जाती है, जहां यह सीधा होकर हमें दिखाई देता है।

हमारी आंख का लेंस बहुत ही कोमल होता है। इसका नियंत्रण एक छोटे आकार की सीलियरी (ciliary) मांसपेशी से होता है। कुछ व्यक्तियों के विषय में ऐसा होता है कि वस्तु का प्रतिबिम्ब या तो रेटिना से पहले बन जाता है या रेटिना के पीछे बनता है। इन दोनों स्थितियों में वस्तु धुंधली दिखाई देने लगती है। ऐसी स्थिति में हम कहते हैं कि आंख में दृष्टिदोष उत्पन्न हो गया है। इस दोष से छुटकारा पाने के लिए आंखों के चश्मे प्रयोग में लाये जाते हैं। ये चश्मे दो प्रकार के होते हैं, पहले प्रकार के चश्मे उनके लिए होते हैं, जिन्हें दूर की वस्तुएं साफ दिखाई नहीं देतीं। ऐसा आमतौर पर विद्यार्थियों के साथ होता है। दूसरे प्रकार के चश्मे उनके लिए हैं, जिन्हें पास की वस्तुएं स्पष्ट दिखाई नहीं देतीं। इन दोनों ही प्रकार के चश्मों के लिए किसी नेत्र-विशेषज्ञ के पास जाना पड़ता है, जो आंखों का परीक्षण करके चश्मे का नम्बर बताता है।

आंखों के परीक्षण के लिए नेत्र-विशेषज्ञ एक चार्ट का प्रयोग करता है, जिस पर विभिन्न आकारों में विभिन्न अक्षर लिखे होते हैं। इन अक्षरों के नीचे 6/36, 6/24, 6/18, 6/12, 6/9, 6/6 तथा 6/5 आदि अंक लिखे होते हैं। डाक्टर रोगी से यह चार्ट पढ़वाता है और रोगी जिस नम्बर तक पढ़ लेता है, उसकी आंख की दृष्टि उसी नम्बर में प्रदर्शित कर दी जाती है। इन सभी अक्षरों में ऊपर की संख्या छह होती है। इसका अर्थ है कि आंख से इस चार्ट की दूरी छह मीटर अर्थात् 20 फुट होनी चाहिए। यदि किसी व्यक्ति की दृष्टि 6/12 है तो इसका अर्थ है कि इस आकार के अक्षर को वह व्यक्ति केवल छह मीटर की दूरी तक ही पढ़ सकता है, जबकि सामान्य दृष्टि वाला व्यक्ति इस



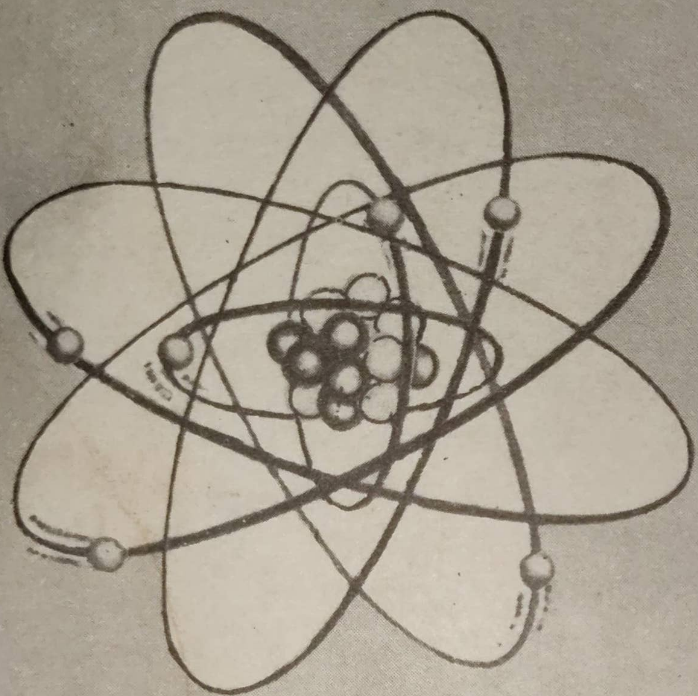
अक्षर को 12 मीटर की दूरी तक पढ़ सकता है। इसी प्रकार 6/36 का अर्थ है कि सामान्य दृष्टि वाला व्यक्ति इस अक्षर को 36 मीटर की दूरी से पढ़ सकता है, जबकि नेत्र-दोष वाला व्यक्ति इसे केवल 6 मीटर की दूरी से ही पढ़ सकता है।

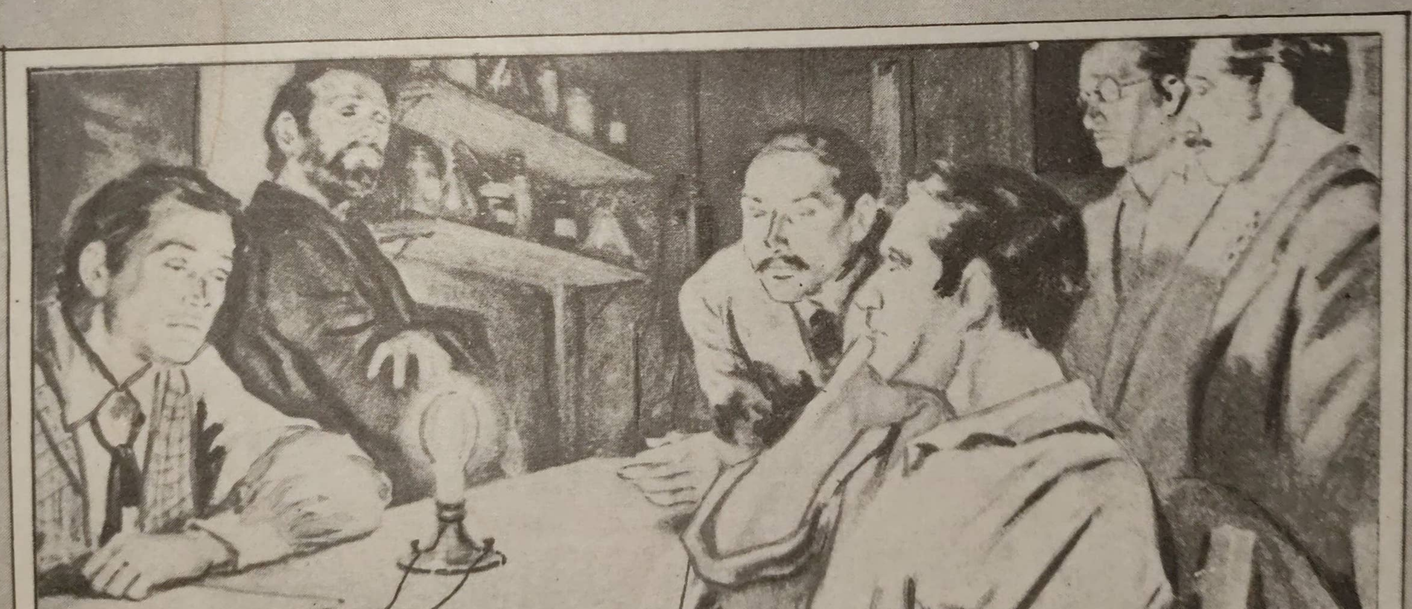
इस प्रकार नेत्र-परीक्षण करके विशेषज्ञ चश्मे का नम्बर देता है। उदाहरण के लिए यदि किसी व्यक्ति के चश्मे का नम्बर-2 डी है तो इसका अर्थ है कि उस व्यक्ति को दूर की वस्तु स्पष्ट दिखाई नहीं देती अर्थात् उसे अवतल (concave) लेंस चाहिए। इसी प्रकार जिस व्यक्ति का नम्बर + में है, उसे पास की वस्तु स्पष्ट दिखाई नहीं देती। उसे उत्तल (convex) लेंस चाहिए। 'डी' अक्षर लेंस की शक्ति को प्रदर्शित करता है। यह अक्षर डाइऑप्टर (dioptre) का संक्षिप्त रूप है जो एक को मीटरों में मापी फोकस दूरी से विभाजित करने पर प्राप्त होता है। दो डाइऑप्टर का अर्थ है-लेंस की फोकस दूरी 50 सेमी. होनी चाहिए। -2 डी का अर्थ है कि उस व्यक्ति को 50 सेमी. फोकस दूरी का अवतल लेंस चाहिए। इसी तरह +2 डाइऑप्टर का अर्थ है कि उस व्यक्ति को 50 सेमी. फोकस दूरी का उत्तल लेंस चाहिए। इसी नम्बर के आधार पर चश्मा-निर्माता सही प्रकार के चश्मों का निर्माण करते हैं।

यदि किसी व्यक्ति को दूर या पास की वस्तु स्पष्ट दिखाई नहीं देती तो उसे आंखों का परीक्षण कराने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए और जल्दी ही सही प्रकार के चश्मे का प्रयोग करना आरम्भ कर देना चाहिए। चश्मे के प्रयोग में विलम्ब करने से दृष्टि और भी कमजोर होती जाती है और चश्मे का नम्बर उत्तरोत्तर बढ़ता ही जाता है।

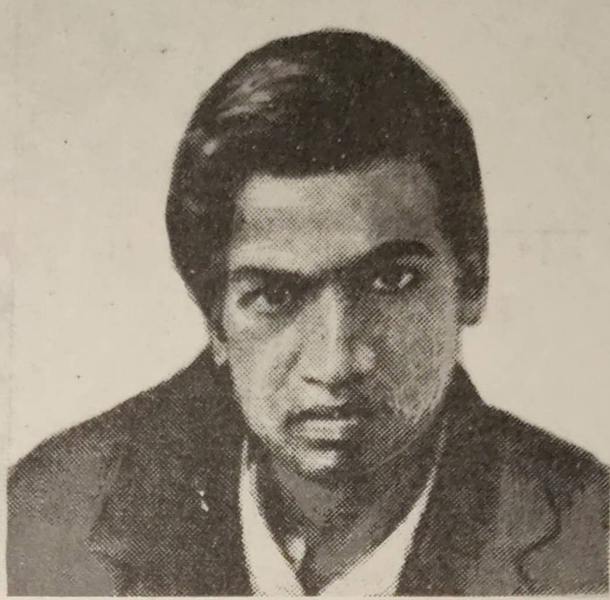
5

आविष्कार और आविष्कारक





श्रीनिवास रामानुजन का गणित में क्या योगदान था?



रामानुजन अपने समय के महान् गणितज्ञों में से एक थे। संख्याओं के सिद्धांत से संबंधित उनके द्वारा दिए गए सिद्धान्त किसी से छिपे नहीं हैं। इस महान् गणितशास्त्री का जन्म दक्षिण भारत के एक गरीब ब्राह्मण परिवार में 22 दिसम्बर, सन् 1887 को हुआ था। उचित शिक्षा की सुविधाएं न होने के कारण इन्हें एक क्लर्क की नौकरी करनी पड़ी। अपने खाली समय में वे गणित की समस्याएं स्वयं ही बनाते थे और स्वयं ही उन्हें हल करते थे।

जब वे मात्र 15 वर्ष के थे तो उन्हें जार्ज शूब्रिज कार द्वारा लिखित एक पुस्तक प्राप्त हुई–Synopsis of Elementary Results in Pure and Applied Mathematics Vol. 2। इस पुस्तक में लगभग छः हजार प्रमेयों (theorems) का संकलन था। उन्होंने इस पुस्तक में दिए प्रमेयों को सिद्ध करके देखा। उन्होंने इस पुस्तक के अतिरिक्त कुछ और प्रमेयें विकसित कीं। सन् 1903 में उन्हें मद्रास विश्वविद्यालय से छात्रवृत्ति प्राप्त हुई लेकिन अगले वर्ष ही छिन भी गई क्योंकि वे दूसरे विषयों के अध्ययन को अधिक समय न दे सके।

रामानुजन ने बिना किसी नौकरी के अपने गणित संबंधी शोध को जारी रखा। सन् 1909 में विवाह करने के बाद उन्होंने एक स्थायी नौकरी की तलाश शुरू की। रामचन्द्र राव नामक एक सरकारी अफसर ने उनके अनुसंधान कार्य में आर्थिक सहायता प्रदान की लेकिन रामानुजन किसी दूसरे की कृपा पर जीवित नहीं रहना चाहते थे। उन्होंने मद्रास पोर्टट्रस्ट में एक क्लर्क की नौकरी कर ली।

सन् 1911 में रामानुजन ने गणित से संबंधित अपने पहले शोध पत्रों को 'जर्नल ऑफ दि इण्डियन मैथेमेटिकल सोसाइटी' में प्रकाशित कराना आरम्भ किया।

धीरे-धीरे उनकी ख्याति फैलती गई और सन् 1913 में उन्होंने ब्रिटेन के गणितशास्त्री गोडफ्रे एच. हार्डी के साथ अपने शोधपत्रों को लिखना आरम्भ किया। इसके परिणामस्वरूप उन्हें मद्रास विश्वविद्यालय और ट्रिनिटी कालेज, कैम्ब्रिज से विशेष छात्रवृत्ति प्रदान की गई। सन् 1914 में रामानुजन इंग्लैंड चले गए, जहां उन्हें प्राइवेट रूप से हार्डी महोदय ने पढ़ाया और उनके साथ अनुसंधान कार्य में योगदान दिया।

अपने कार्यक्षेत्र में रामानुजन की प्रतिभा अपूर्व थी। उन्होंने रीमन सीरीज़ (Riemann series), एलिप्टिकल इंटेग्रल्स (elliptical integrals), हाइपरज्योमेट्रिक सीरीज़ (hypergeometric series), जीटा फंक्शन की फंक्शन इक्वेशन्स (the functional equations of Zeta function), अपनी मौलिक डाइवर्जेन्स सीरीज़ (divergence series) पर अपने सिद्धान्त प्रस्तुत किए। उनका कार्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और आश्चर्यजनक प्रतिभा से युक्त था।

इंग्लैंड में रामानुजन ने और भी कार्य किए, जो संख्याओं के पार्टिशन से संबंधित थे। उनके शोध पत्र इंग्लैण्ड और यूरोप की शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। वह पहले भारतीय थे, जिन्हें सन् 1918 में 'रॉयल सोसाइटी ऑफ लंदन' का सदस्य चुना गया।

सन् 1917 में रामानुजन को क्षय रोग ने ग्रसित कर लिया। इसके बाद वे भारत लौट आए। 26 अप्रैल, सन् 1920 को भारत के इस महान् गणितशास्त्री का मद्रास के चैलपुट नामक स्थान पर देहान्त हो गया।

मारकोनी का विज्ञान में क्या योगदान था?



गुगलीलमो मारकोनी (Guglielmo Marconi) इटली के एक विद्युत इंजीनियर थे। उनका जन्म 26 अप्रैल, सन् 1874 को बोलोग्ना (Bologna) में हुआ था। इन्होंने इटली के लैघोर्न (Leghorn) नामक स्थान पर स्थित तकनीकी स्कूल में भौतिकशास्त्र की शिक्षा प्राप्त की।

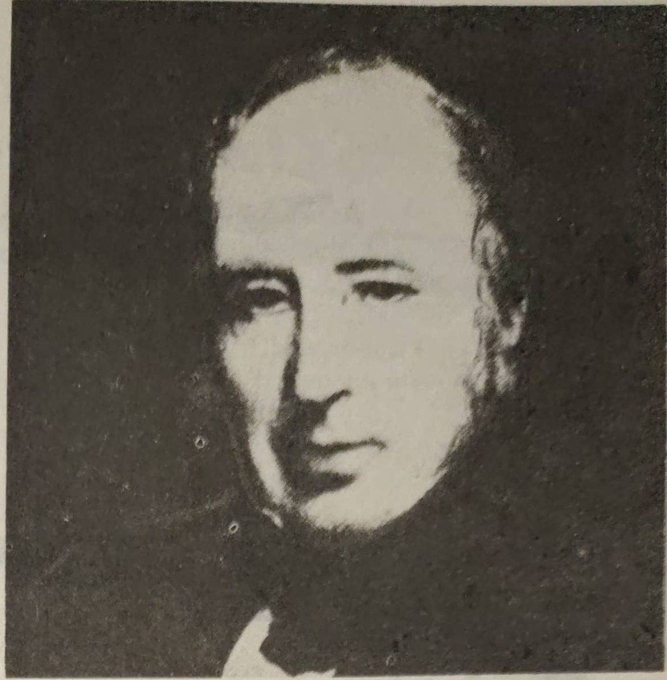
इन्होंने अपने आरम्भ के प्रयोग बोलोग्ना के पास ही आरम्भ किए। इन्होंने हाइनिरिख हट्र्ज द्वारा खोजी गई रेडियो तरंगों के विषय में सुन रखा था। उनका विचार था कि इन तरंगों को संदेश ले जाने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। उस समय संदेशों को तारों की सहायता से मोर्सकोड (Morse code) प्रयोग में लाकर भेजा जाता था। मारकोनी ने इसी दिशा में अनुसंधान कार्य किया और उन्होंने एक ऐसी विद्युत घंटी विकसित की, जो 30 फुट की दूरी तक बिना किसी तार की सहायता से चालू की जा सकती थी। इस विद्युत घंटी को प्रचालित करने के लिए एक विद्युत स्पंद (pulse) प्रयोग की गई थी।

सन् 1895 में मारकोनी ने एक ऐसा उपकरण विकसित किया, जो विद्युत स्पंदों को एक मील की दूरी तक भेज सकता था लेकिन इटली की सरकार ने उनके कार्य में कोई रुचि नहीं ली। उन्होंने अपने भाग्य को आजमाने के लिए लन्दन जाने का फैसला किया और सन् 1896 में लंदन चले गए। सन् 1896 और 1897 के बीच उन्होंने अपने द्वारा निर्मित उपकरण से बेतार के तार (wireless) से संबंधित कई सफल प्रदर्शन किए। सन् 1897 तक वे 12 मील की दूरी तक रेडियो संदेश भेजने में सफल हो गए। इसी वर्ष उन्होंने मारकोनी कम्पनी शुरू कर दी।

दो वर्ष पश्चात् अर्थात् सन् 1899 में वे इंगलिश चैनल के आर-पार लगभग 31 मील की दूरी तक रेडियो संदेश भेजने में सफल हुए। सन् 1899 में ही उन्होंने अमरीका के दो जलयानों पर रेडियो उपकरण लगाए जो नौका-दौड़ (Yacht race) के विषय में समाचार-पत्रों को सूचना दे सकते थे। इसी के फलस्वरूप अमरीकन मारकोनी कम्पनी का जन्म हुआ।

12 दिसम्बर, सन् 1901 को एस (S) अक्षर को मोर्सकोड द्वारा अंधमहासागर के आर-पार भेजने में सफलता प्राप्त की। इससे विश्वभर में सनसनी फैल गई। सन् 1909 में मारकोनी को नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया। इसके पश्चात् मारकोनी लघु तरंग संचार साधनों पर कार्य करते रहे। उनके यही कार्य आज आधुनिक दुनिया के दूरस्थ रेडियो संचारों का आधार हैं। सन् 1930 में उन्हें रायल इटैलियन एकेडेमी का प्रेसिडेण्ट चुना गया। मारकोनी जीवन भर रेडियो संचार व्यवस्थाओं और उनके सुधार पर कार्य करते रहे। विश्व का यह महान् भौतिक-शास्त्री 20 जुलाई, सन् 1937 को भगवान को प्यारा हो गया।

वैमानिकी (Aeronautics) का जन्मदाता कौन था?



वैमानिकी विज्ञान की वह शाखा है, जो वायुयानों के अध्ययन, डिजाइन, निर्माण और चालन सिद्धांतों से संबंध रखती है। आज के युग में यह विज्ञान बहुत विकसित हो गया है। क्या तुम जानते हो कि वैमानिकी का जन्मदाता कौन था?

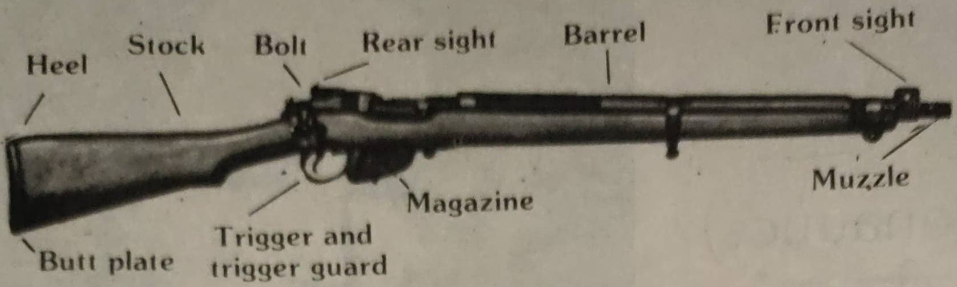
सर जार्ज कैले (Sir George Cayley) को वैमानिकी का जन्मदाता कहते हैं। इस महान् वैज्ञानिक ने उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में यह घोषणा की कि उड़ने योग्य डैनों से युक्त यान अर्थात् आर्निथोप्टरों (ornithopters) का निर्माण लगभग असम्भव-सी बात है। लेकिन अपने एक पुराने अन्वेषण पर दोबारा गौर करते हुए उन्हें महसूस हुआ कि यदि यान को हल्का बनाया जाए तो उसे वायु में उड़ाना सम्भव होगा। बाद में उन्होंने सिद्ध करके दिखाया कि यदि पंखों के साथ हवा का दबाव पैदा कर दिया जाए तो यान वायु में उड़ सकता है।

उन्होंने एक हल्का यान बनाया, जिसमें पंख लगे थे। इसमें ठोस लकड़ी नहीं लगाई गई थी। यान को वायु में गति कराने की समस्या का समाधान एक प्रोपैलर चालित इंजन को प्रयोग में लाकर किया था। उस समय ऐसा शक्तिशाली इंजन उपलब्ध नहीं था। इसलिए कैले ने अपने इंजन को डिजाइन किया। यह एक अन्तर्दहन इंजन था, जो गैसोलिन से चलता था। चूंकि ईंधन बहुत महंगा था, इसलिए कैले को इस इंजन का परित्याग करना पड़ा। इसके लगभग सौ वर्ष बाद ही एक सफल इंजन का निर्माण हो पाया।

इंजन न होने के कारण कैले शक्ति से चलने वाला वायुयान तो बना न सके लेकिन सन् 1804 में उन्होंने एक सफल ग्लाइडर का निर्माण किया। कैले के सिद्धान्तों को प्रयोग में लाकर इंजनयुक्त उड़ान सन् 1842 में सम्भव हो पाई। इस यान का निर्माण ब्रिटेन के विलियम हैन्सन और जान स्ट्रिंगफैलो ने किया था। सन् 1848 में अकेले स्ट्रिंगफैलो ने एक यान का निर्माण किया, जो 40 गज की दूरी तक उड़ान भर सका। इस तरह से इंजनयुक्त उड़ानों की शुरुआत हो गई। इस दिशा में अब तक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं।

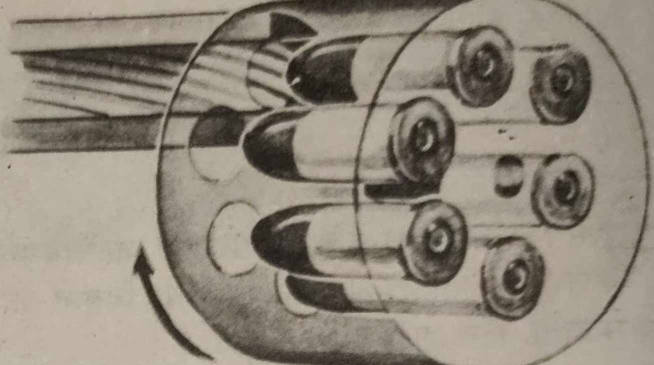
आधुनिक किस्म के विमानों के विकास में कैले द्वारा किए गए कार्यों को भुलाया नहीं जा सकता। उन्होंने आधुनिक प्रकार के विमानों की रूपरेखा तो तैयार की ही, साथ ही साथ उन्होंने यानों की सतह को चिकना बनाने के लाभों का भी अध्ययन किया।

कैले महोदय का योगदान केवल वैमानिकी के क्षेत्र तक ही सीमित नहीं था, बल्कि उन्होंने रिजैंट स्ट्रीट पोलेटेकनिक इंस्टीट्यूशन (लंदन) की भी सन् 1839 में नींव डाली। उन्होंने कैटरपिलर (Caterpillar) ट्रैक्टर पर भी बहुत से अनुसंधान किए। वैज्ञानिक शिक्षा और रेलवे उपकरणों के क्षेत्र में उनके द्वारा किए गए योगदानों को भुलाया नहीं जा सकता।



1902 में सर्वप्रथम ब्रिटिश सिपाहियों द्वारा प्रयुक्त 'ली एनफील्ड' राइफल.





बन्दूकों का निर्माण कब आरम्भ हुआ?

बन्दूक एक ऐसा हथियार है, जो एक नली में से गोली दागता है। बन्दूक की नली में गोली को एक विस्फोटक पदार्थ के सामने रखा जाता है, जब विस्फोटक को जलाया जाता है तो भारी मात्रा में गर्म गैसें पैदा होती हैं। ये गर्म गैसें तेजी के साथ फैलती हैं, जिससे गोली पर बल लगता है। इस बल के कारण गोली तीव्रता के साथ नली में दौड़ती हुई बाहर निकल पड़ती है।

यद्यपि बारूद का आविष्कार चीनियों द्वारा एक हजार वर्ष पूर्व ही हो चुका था लेकिन बन्दूकों का निर्माण 14वीं शताब्दी के आरम्भ में यूरोप में हुआ। आरम्भ की बन्दूकें तोप के आकार की होती थीं। इनमें एक नली होती थी, जिसका एक सिरा खुला तथा दूसरा सिरा बन्द होता था। यह नली एक लकड़ी के आधार पर लगा दी जाती थी। बन्दूक चलाने वाला नली के खुले सिरे पर,जिसे मज़ल (muzzle) कहते हैं, बारूद भरता था। इस बारूद को फिर वह नली के बन्द सिरे की ओर,जिसे ब्रीच (breech) कहते हैं, धकेल देता था। इसके बाद वह तोप का गोला नली में डाल देता था। बन्दूक दागने के लिए वह एक जलती हुई बत्ती ब्रीच में बने छेद में लगाता था। इससे बारूद में आग लग जाती थी, जिससे गोला बाहर निकल पड़ता था। सोलहवीं सदी में पिस्तौल और दूसरे प्रकार की बन्दूकें काफी प्रचलित हो गई थीं लेकिन ये सभी बन्दूकें मज़ल से ही भरी जाती थीं।

19वीं शताब्दी में एक दूसरे प्रकार की बन्दूक का आविष्कार हुआ। इस बन्दूक को पीछे से भरा जाता है। इसमें धातुओं की गोली के स्थान पर कारतूस लगाया जाता है। कारतूस बन्दूक के पिछले भाग में लगाए जाते हैं। कारतूस में धातु या कागज की एक नली होती है, जिसमें गोली रखी रहती है। इसमें कुछ पाउडर भी होता है। यह सब कुछ एक टोपी से बन्द कर दिया जाता है। यह टोपी कारतूस के पिछले भाग पर लगा दी जाती है। इसमें कुछ विस्फोटक पदार्थ भी होता है। यह विस्फोटक पदार्थ बहुत ही संवेदनशील होता है और एक पिन से टकराने पर तुरन्त ही फट जाता है। इसके फटने से गोली को बल मिलता है और वह निकल पड़ती है। 19वीं सदी के दौरान पीछे से लोड (load) होने वाली राइफलें और पिस्तौलें भी सामान्य प्रयोग में आने लगी थीं।

19वीं सदी का एक दूसरा महत्त्वपूर्ण आविष्कार राइफल का था। राइफल की नली में अंदर की ओर एक कमानी की तरह खांचा (groove) काट दिया जाता है। इससे नली के अंदर गोली घूमने लगती है और घूर्णन करती हुई बाहर निकलती है। इस क्रिया के कारण गोली सीधी ही बहुत दूर तक जा सकती है।

सन् 1835 में अमरीका के सैम्यूल कोल्ट (Samuel Colt) ने गोली घुमा कर छोड़ने वाली पिस्तौल का आविष्कार किया। चूंकि इससे गोली घूर्णन करती हुई निकलती थी, इसलिए इसका नाम रिवाल्वर (revolver) रखा गया। इसमें एक कक्ष (chamber) होता है, जिसमें पांच-छः कारतूस आ सकते हैं। जब इस रिवाल्वर का ट्रिगर (trigger) दबाया जाता है तो कारतूसों का कक्ष घूमता है और कारतूस को नली की सीध में समायोजित कर देता है। आधुनिक रिवाल्वरें भी कोल्ट की रिवाल्वरों से काफी मिलती-जुलती हैं।

19वीं सदी के दौरान ऐसी राइफलें बनने लगी थीं, जिनमें कारतूस रखने के लिए मैग्जीन (magazines) प्रयोग की जाती थी। इनमें कारतूस को नली में भेजने के लिए एक तंत्र (bolt) होता है। इन राइफलों का प्रयोग दोनों महायुद्धों में काफी बड़े पैमाने पर हुआ।

प्रथम महायुद्ध के अंत तक मशीनगनों का निर्माण शुरू हो गया था। ये ऐसी गनें हैं, जिनमें गोलियां तब तक चलती रहती हैं जब तक कि ट्रिगर दबा रहता है। इसके पश्चात् फील्डगन नामक भारी गनों का निर्माण हो गया। आधुनिक फील्डगनें चार टन भार तक की होती हैं और इनमें प्रयोग होने वाली शेल (shell) बीस किलोग्राम तक की होती है। ये शेल दस मील से भी अधिक दूरी तक जा सकती हैं। इन गनों की नली बहुत उत्तम इस्पात से बनाई जाती है। ये गनें काफी महंगी होती हैं।

आर्यभट्ट कौन थे?

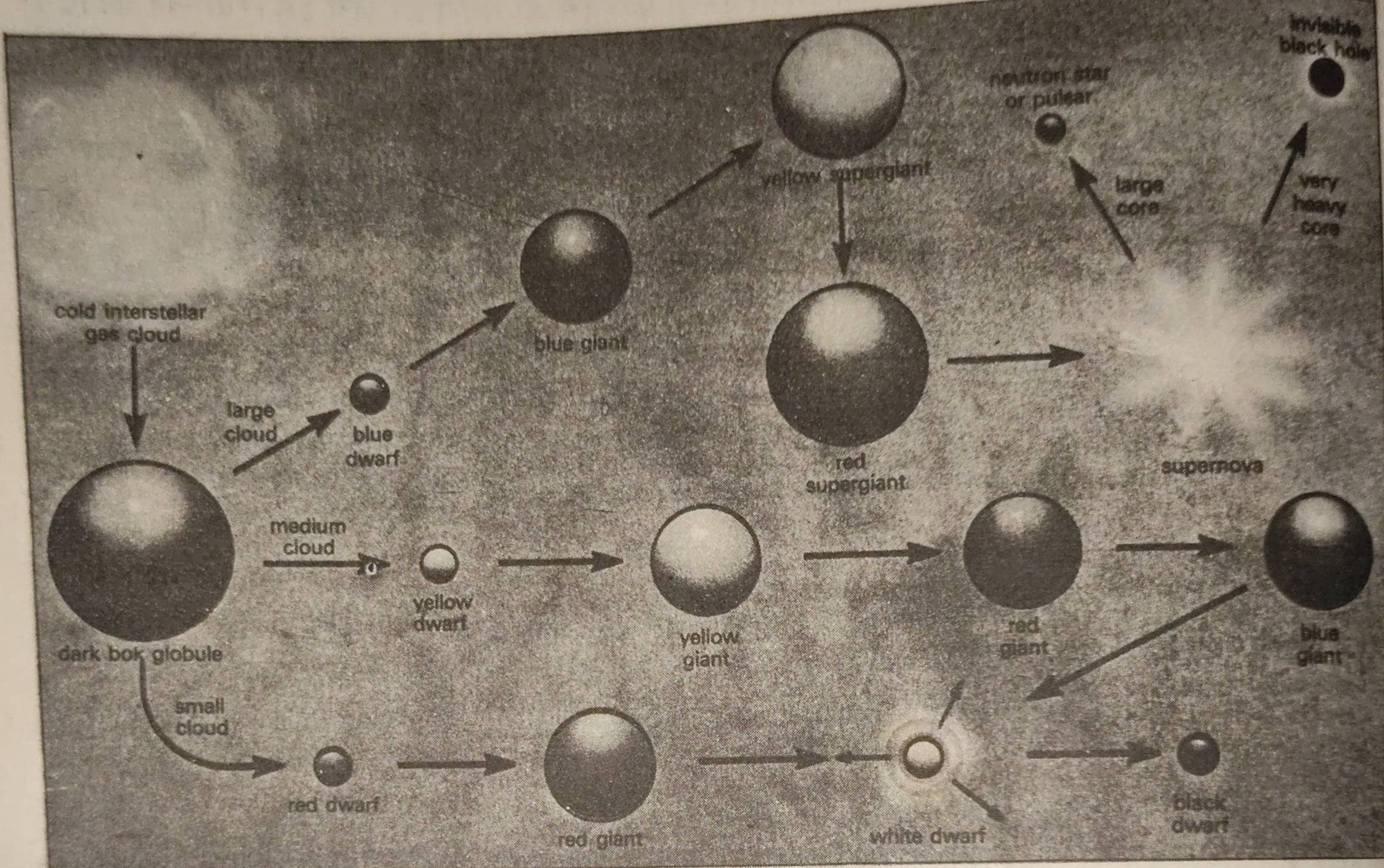
भारत के प्रथम कृत्रिम उपग्रह का नाम आर्यभट्ट रखा गया था। यह नाम हमारे देश के एक प्रसिद्ध खगोल-शास्त्री और गणितज्ञ के नाम पर रखा गया था। 360 किलो का यह उपग्रह अप्रैल, 1975 में छोड़ा गया था। क्या तुम जानते हो कि ये प्राचीन खगोलशास्त्री और गणितज्ञ आर्यभट्ट कौन थे?

आर्यभट्ट का जन्म सन् 476 में भारत के कुसुमपुरा (Kusumapura) नामक स्थान में हुआ था। आर्यभट्ट प्राचीन भारत के प्रसिद्ध खगोलशास्त्री और गणितज्ञ थे। उनके कार्य आज भी विद्वानों को उपलब्ध हैं। वह उन पहले व्यक्तियों में से थे जिन्होंने बीजगणित (Algebra) का प्रयोग किया। उन्होंने सन् 499 में गणित पर लिखी 'आर्यभटिया' नामक पुस्तक को कविता के रूप में लिखा। यह उस समय की बहुचर्चित पुस्तक है। इस पुस्तक का अधिकतर कार्य खगोलशास्त्र और गोलीय त्रिकोणमिति (spherical trigonometry) से सम्बन्ध रखता है। इस पुस्तक में अंकगणित (arithmetic), बीजगणित और त्रिकोणमिति के 33 नियम भी दिए गए हैं।

आर्यभट्ट ने 'पाई' (π) का काफी सही मान 3.1416 निकाला। उन्होंने त्रिकोणमिति में व्युत्क्रम साइन फंक्शन (Inverse sine function) के विषय में बताया। उन्होंने यह भी दिखाया कि खगोलीय पिंडों का आभासी घूर्णन (apparent rotation) पृथ्वी के अक्षीय घूर्णन (axial rotation) के कारण होता है।

आर्यभट्ट ने गणित और खगोलशास्त्र में और भी बहुत से कार्य किए। ये महाराजा चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के दरबार के माने हुए विद्वानों में से एक थे। इस महान पुरुष की मृत्यु सन् 520 में हुई।

डा. सुब्रामनयन चन्द्रशेखर का खगोलशास्त्र में क्या योगदान है?



डा. सुब्रामनयन चन्द्रशेखर खगोलशास्त्री (astrophysicist) हैं। खगोलशास्त्र के क्षेत्र में किए गए कार्यों पर इन्हें सन् 1983 का भौतिकी का नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया। विलियम फाउलर (William Fowler) नामक एक अमरीकी खगोलशास्त्री ने इस नोबल पुरस्कार में इनके साथ साझेदारी की। क्या तुम जानते हो कि डा. चन्द्रशेखर कौन हैं तथा इनका विज्ञान के क्षेत्र में क्या योगदान है?

प्रोफेसर चन्द्रशेखर नोबल पुरस्कार विजेता सर सी. बी. रमन के भतीजे हैं। इनका जन्म 19 अक्तूबर, सन् 1910 में लाहौर में हुआ था। इनकी शिक्षा मद्रास विश्वविद्यालय के प्रेसीडेन्सी कॉलेज में हुई। उन्होंने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के ट्रिनिटी कॉलेज से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। उन्होंने सन् 1933 से सन् 1937 की अवधि में ट्रिनिटी कॉलेज में तारकीय विकास (Steller evolution) पर शोधकार्य किया। इनकी प्रतिभा का इस तथ्य से ही पता चल जाता है कि वे 24 वर्ष की छोटी-सी आयु में ही ट्रिनिटी कॉलेज के फेलो (fellow) बन गए थे। सन् 1935 में ही इन्होंने 'डाइंग स्टार्स' की परिकल्पना प्रस्तुत कर दी थी, जिस पर समस्त विश्व को आश्चर्य हुआ था। सन् 1938 में उन्होंने अमरीका के शिकागो विश्वविद्यालय में असिस्टैण्ट प्रोफेसर का पद संभाला। सन् 1953 में डा. चन्द्रशेखर ने अमरीका की नागरिकता ले ली। उसी वर्ष इन्हें रॉयल एस्ट्रोनोमिकल सोसाइटी का स्वर्ण पदक

प्रदान किया गया। ये इतने प्रतिभाशाली थे कि सन् 1939 में ही उन्होंने 'एन इण्ट्रोडक्शन टू द स्टडी आफ स्टैलर स्ट्रक्चर' (An Introduction to the Study of Steller Structure) लिख दी थी। उनकी यह पुस्तक संपूर्ण विश्व में खगोलशास्त्र के विद्यार्थियों द्वारा एक मानक संदर्भग्रंथ के रूप में पढ़ी जाती है।

सन् 1947 में डा. चन्द्रशेखर शिकागो विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बन गए थे। सन् 1952 में वे खगोलशास्त्र के मोरटन डी. हल डिस्टिंग्विश्ड सर्विस प्रोफेसर (Morten D. Hull Distinguished Service Professor) बन गए थे।

सन् 1973 में वे नोबल पुरस्कार देने वाली स्वीडिश एकेडेमी के सदस्य बन गए थे। डा. चन्द्रशेखर ने व्हाइट ड्वार्फ (White Dwarf) नामक तारों पर विशेष शोध कार्य किया है। उनके नाम से चन्द्रशेखर लिमिट (Chandrasekhar Limit) नामक अनुसंधान विश्वविख्यात है। यह अनुसंधान तारों के सीमान्त द्रव्यमान (Limiting Mass) से संबंधित है। तारों के द्रव्यमान की यह सीमा सूर्य के द्रव्यमान के लगभग 1.44 गुना है। यह ऐसी अधिकतम सीमा है, जो व्हाइट ड्वार्फ तारों के अधिकतम द्रव्यमान को निश्चित करती है।

भास्कर द्वितीय कौन थे?

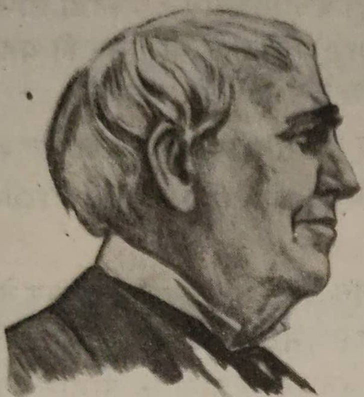
हमारे देश में दो भास्कर पैदा हुए: भास्कर प्रथम और भास्कर द्वितीय। भास्कर प्रथम सातवीं शताब्दी में ब्रह्मगुप्त के समय में हुए थे जो बहुत ही प्रसिद्ध खगोलशास्त्री रहे। इनके नाम पर भारत के द्वितीय कृत्रिम उपग्रह का नाम रखा गया। भास्कर द्वितीय बारहवीं शताब्दी के प्रसिद्ध गणितज्ञ रहे। उनका नाम भी भारत के द्वितीय कृत्रिम उपग्रह से जुड़ा हुआ है।

भास्कर द्वितीय का जन्म भारत के बिदार (Bidar) नामक स्थान पर सन् 1114 में हुआ था। वे 12वीं सदी के महान् गणितज्ञों में से एक थे। उन्होंने दशमलव प्रणाली का पूरी तरह प्रयोग करके पहली पुस्तक लिखी। प्राचीन भारत में उज्जैन की खगोलीय वेधशाला (observatory) गणित का केन्द्र थी। ब्रह्मगुप्त के बाद भास्कर द्वितीय का नाम वहां के जाने-माने पंडितों में से रहा है।

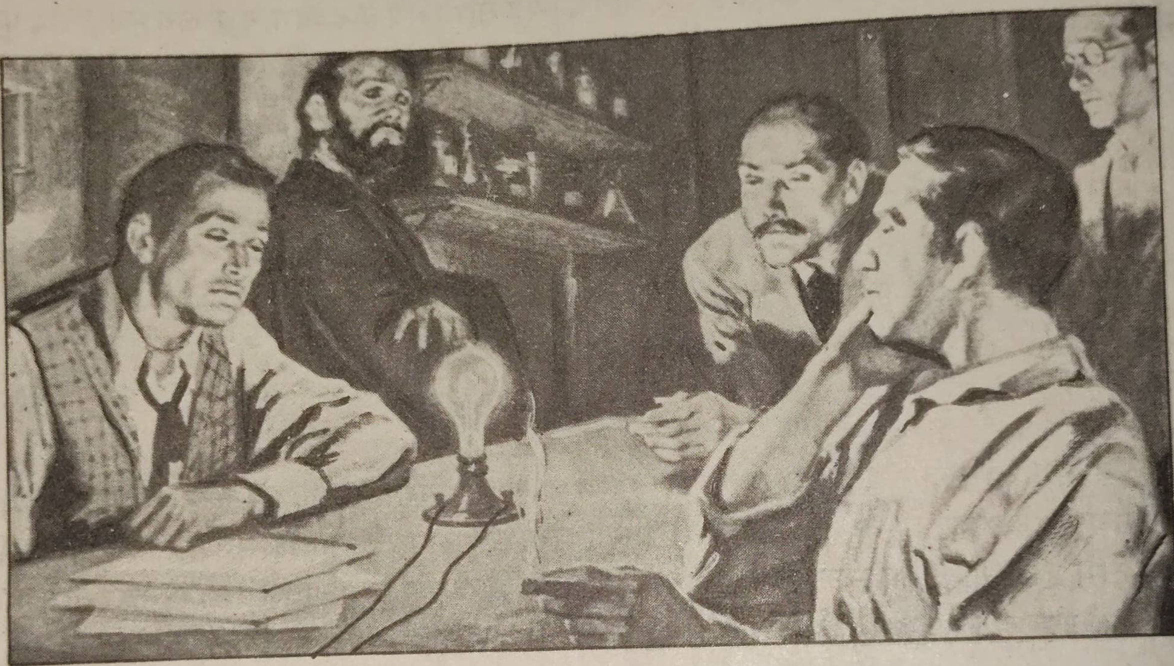
अपनी दो पुस्तकों—लीलावती (Lilavati) और बीजगणित में उन्होंने न केवल दशमलव प्रणाली को आधार बनाया बल्कि ब्रह्मगुप्त और दूसरे लोगों द्वारा अनसुलझे गणितीय समीकरणों को भी पूरा किया। उन्होंने ब्रह्मगुप्त द्वारा अधूरे छोड़े गये कई कार्यों को भी पूरा किया।

भास्कर द्वितीय ने यह बताया कि ऋण और ऋण के चिह्नों का गुणनफल धनात्मक होता है तथा ऋण और धन के चिह्नों का गुणनफल ऋणात्मक होता है। उन्होंने यह भी बताया कि किसी संख्या को शून्य से विभाजित करने पर परिणाम अनन्त होता है।

'सिद्धान्त शिरोमणि' तथा 'करणकुतूहल' (Karanakutuhala) भी उनकी दो प्रसिद्ध पुस्तकें हैं। इनमें से दूसरी पुस्तक खगोलशास्त्र से संबंधित है। वे एक जाने-माने ज्योतिषशास्त्री थे। लीलावती उनकी ऐसी ही पुस्तक है, जिसका नाम उन्होंने अपनी बेटी के नाम पर रखा था। इस महान् गणितज्ञ की मृत्यु उज्जैन में सन 1185 में हुई। आज भी भारत को ऐसे महान् विद्वानों पर अभिमान है।



विज्ञान में ऐडिसन के क्या योगदान थे?



थॉमस एल्वा ऐडिसन (Thomas Alva Edison) विश्व के महानतम् आविष्कारकों में से एक थे। उन्होंने अपने जीवनकाल में लगभग एक हजार पेटेण्ट कराये। वे वास्तव में एक वैज्ञानिक नहीं थे क्योंकि उनके आविष्कारों में किसी सिद्धान्त या गणित के सूत्रों का प्रयोग नहीं हुआ था। उन्होंने जो कुछ भी विकसित किया, उस कार्य को बार-बार करके ही पूरा किया।

ऐडिसन का जन्म 11 फरवरी, 1847 को ओहियो (Ohio) राज्य के मिलान (Milan) नामक स्थान में हुआ था। आरम्भ से ही उनका व्यक्तित्व जटिल था। स्कूल में वे अधिक शिक्षा प्राप्त न कर पाये लेकिन स्कूल से निकलकर उन्होंने विज्ञान की बहुत-सी पुस्तकों का अध्ययन किया। उन्होंने अपने घर पर ही एक रासायनिक प्रयोगशाला बना ली थी, जिसमें वे विज्ञान के प्रयोग करते थे। अपनी इस प्रयोगशाला के लिए सामान जुटाने के वास्ते उन्होंने 12 साल की उम्र में ही ट्रेन में अखबार बेचने का काम कर लिया लेकिन इस कार्य से उन्हें इतना पैसा नहीं मिल पाता था जिससे उनकी प्रयोगशाला की आवश्यकताएं पूरी हो सकतीं। उन्होंने अधिक पैसा कमाने के लिए एक पुराना छापाखाना खरीदा और रेल के डिब्बे में ही एक साप्ताहिक समाचार-पत्र छापना आरम्भ कर दिया। रेलगाड़ी के ही एक डिब्बे में उन्होंने अपनी रासायनिक प्रयोगशाला भी बना ली। एक दिन दुर्भाग्यवश उस प्रयोगशाला में आग लग गयी। इससे रेलवे-अधिकारी नाराज हो गये और उनका सारा सामान बाहर फेंक दिया। एक अन्य अवसर पर रेल-दुर्घटना में उन्हें कानों के बल खींचकर बचाया गया, जिससे वे हमेशा के लिए बहरे हो गये।

सन् 1862 में ऐडिसन ने एक बालक को रेलवे पटरियों के बीच ट्रेन से मरने से बचाया। उसके पिता के पास पैसा तो था नहीं लेकिन उसने ऐडिसन को टेलीग्राफी पढ़ाने का वायदा किया। ऐडिसन ने उनसे टेलीग्राफी सीखी और सन् 1868 में उन्होंने टेलीग्राफ का अपना पहला पेटेण्ट लिया। उसी साल उन्होंने वोट रिकार्ड करने की मशीन का भी आविष्कार किया। उन्होंने टाइपराइटर में भी बहुत-से सुधार किये।

सन् 1876 में ग्राहम बैल द्वारा बनाये गये टेलीफोन में उन्होंने बहुत से सुधार किये। सन् 1877 में ऐडिसन ने अपने जीवन का सबसे महान् आविष्कार किया। यह आविष्कार फोनोग्राफ का था। बाद में उन्होंने इसमें बहुत से सुधार किये।

सन् 1878 में ऐडिसन ने अनगिनत प्रयोगों के बाद विद्युत बल्ब का आविष्कार किया। इसके एक साल बाद नये साल के मौके पर पूरी सड़क को इन्हीं विद्युत बल्बों से सजाया गया, जिसे देखने के लिए विश्वभर के संवाददाता आये। बल्ब के निर्माण के समय ही उन्होंने ऊष्मा द्वारा इलेक्ट्रान उत्सर्जन का आविष्कार किया। इसी के आधार पर इलेक्ट्रॉनिक वाल्वों (valve) का निर्माण संभव हुआ।

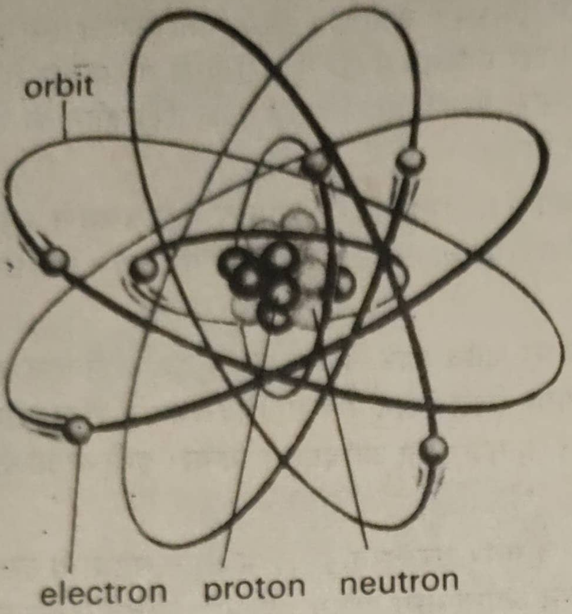
सन् 1887 में वे अपनी वेस्ट ओरेंज स्थित बड़ी प्रयोगशाला में चले गये। उन्हें सन् 1912 में अपने सहयोगी टस्ला (Tesla) के साथ नोबेल पुरस्कार मिल गया होता लेकिन टस्ला ने अपना नाम ऐड़िसन के साथ जोड़ने से इनकार कर दिया। इसलिए दोनों को ही पुरस्कार न मिल पाया।

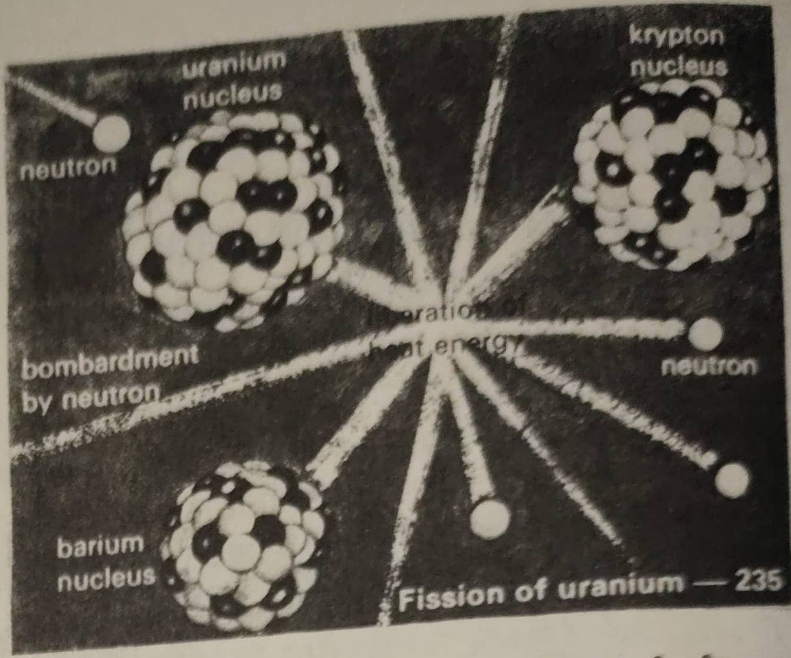
ऐडिसन का पूरा जीवन ही आविष्कार करते बीता। इस प्रकार विज्ञान की सेवा करते हुए 18 अक्तूबर, 1931 को उनकी मृत्यु हो गयी। सन् 1960 में मरणोपरान्त उन्हें महान् अमरीकियों की श्रेणी में लाकर 'मेम्बर ऑफ दि हाल ऑफ फेम' (Member of the hall of fame) घोषित किया गया।

न्यूट्रॉन (Neutron) की खोज किसने की थी?

हम जानते हैं कि किसी पदार्थ के परमाणु में इलेक्ट्रॉन, प्रोटोन और न्यूट्रॉन होते हैं। न्यूट्रॉन और प्रोटोन एक साथ मिलकर परमाणु का नाभिक (nucleus) बनाते हैं, जबकि इलेक्ट्रॉन नाभिक के चारों ओर विभिन्न कक्षाओं में भ्रमण करते रहते हैं। न्यूट्रॉन पदार्थ का एक मूलभूत कण है। न्यूट्रॉनों पर कोई आवेश (charge) नहीं होता। न्यूट्रॉन का द्रव्यमान (mass) प्रोटोन से कुछ अधिक होता है। क्या तुम जानते हो कि न्यूट्रॉन कणों का आविष्कार किसने किया?

न्यूट्रॉन का आविष्कार सन् 1932 में सर जेम्स चैडविक (Sir James Chadwic) नामक ब्रिटिश भौतिकशास्त्री ने किया था। सन् 1900 के आरम्भ में वैज्ञानिकों को इस बात का पता चल गया था कि परमाणु में इलेक्ट्रॉन और प्रोटोन नामक विद्युत आवेशित कण होते हैं। इलेक्ट्रॉनों पर ऋणात्मक (negative) आवेश होता है और प्रोटोनों पर धनात्मक (positive) आवेश होता है। वैज्ञानिकों को सन्देह था कि परमाणु में उदासीन (neutral) कण भी हो सकते हैं। सन् 1932 में चैडविक ने यह प्रदर्शित कर दिखाया कि बैरीलियम नामक तत्त्व पर एल्फा कणों की बौछार करने से जो विकिरण (radiation) निकलते हैं, वे वास्तव में उदासीन कण ही होते हैं। इन्हीं कणों का नाम उन्होंने न्यूट्रॉन रखा। चैडविक ने इन कणों के दूसरे गुणों का भी अध्ययन किया।





Fission of uranium — 235

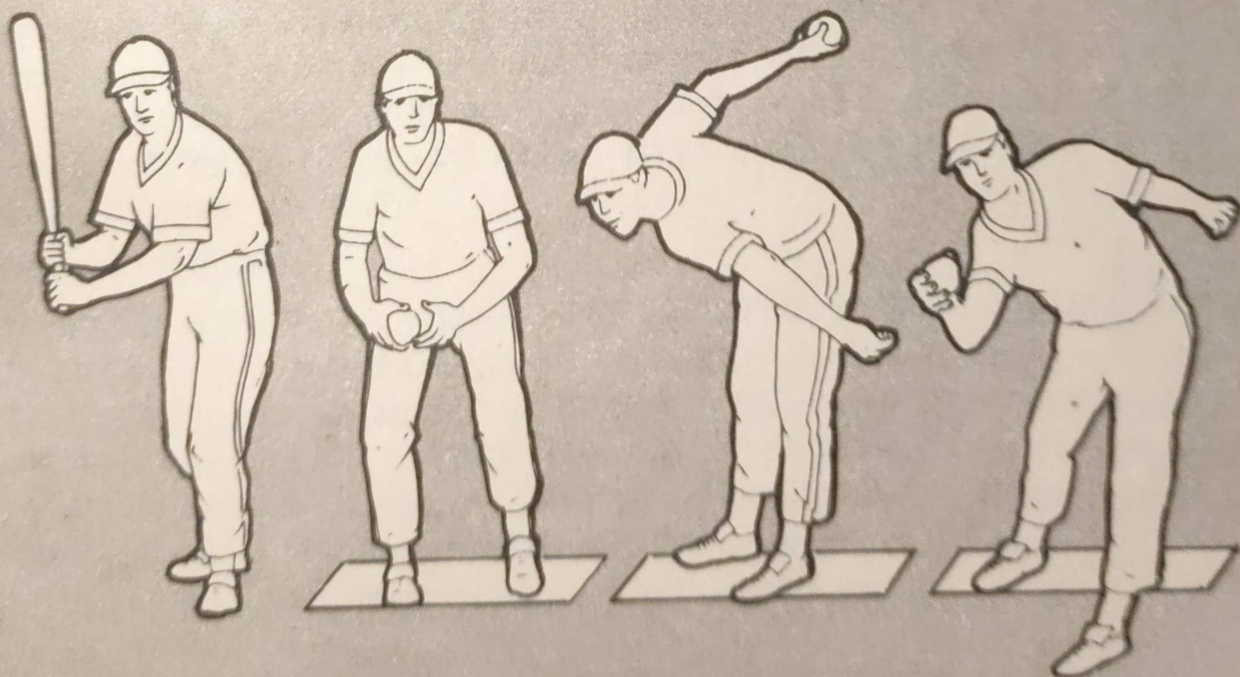
चैडविक ने समस्थानिकों (isotopes) के अस्तित्व की भी विवेचना की। उन्होंने बताया कि जब किसी समान प्रोटोनों की संख्या वाले नाभिकों में न्यूट्रॉनों की असमान संख्या होती है तो ऐसे नाभिकों को उस तत्त्व के समस्थानिक कहते हैं। चैडविक को उनके द्वारा किए गए आविष्कारों पर सन् 1935 का भौतिकी का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया। चैडविक ने शृंखला प्रक्रियाओं पर महान् कार्य किया। उन्होंने द्वितीय महायुद्ध के दौरान विकसित हुए परमाणु बम के विकास में भी पूरा योगदान दिया।

न्यूट्रॉन के गुणों का अध्ययन करने पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि जब यह कण नाभिक के बाहर होता है तो अस्थायी होता है। औसतन इसका 12 मिनट में क्षय (decay) हो जाता है। नाभिक के अन्दर न्यूट्रॉन सामान्यतः स्थायी होते हैं लेकिन यदि नाभिक के अन्दर इनका क्षय होने लगता है तो वह पदार्थ रेडियोधर्मी (radio-active) हो जाता है। न्यूट्रॉनों की किरणें बहुत ही खतरनाक होती हैं। ये आसानी से किसी भी पदार्थ में प्रवेश कर सकती हैं। यही कारण है कि जो वैज्ञानिक नाभिकीय संस्थानों में कार्य करते हैं, उन्हें अपने आपको सुरक्षित रखने के लिए सुरक्षा कवच पहनने पड़ते हैं।

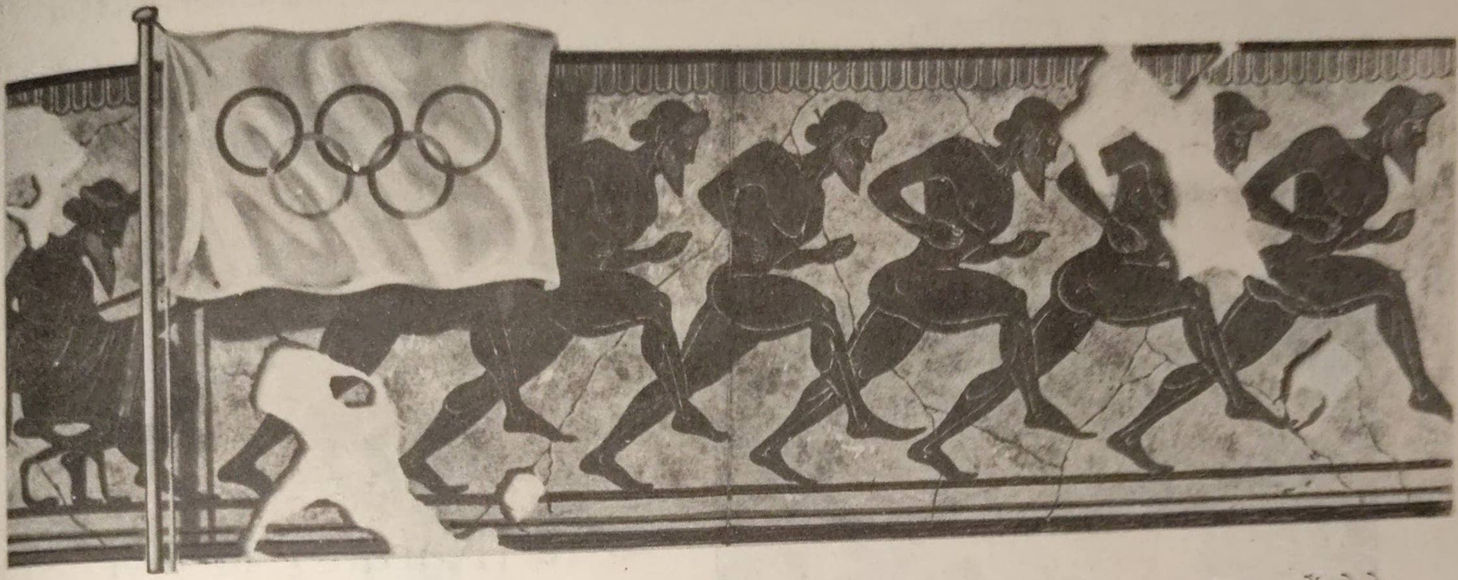


6

खेल-खिलाड़ी



विभिन्न ओलिम्पिक खेल क्या हैं?



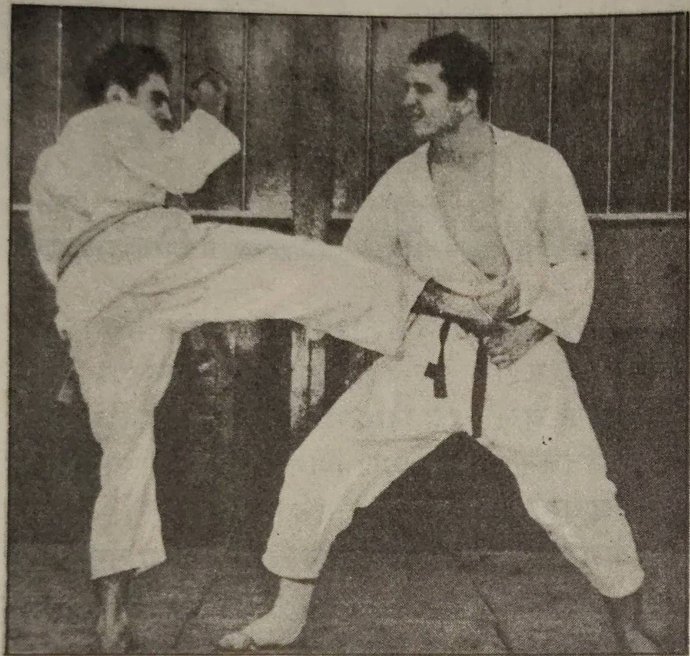
संसार में सबसे पहले ओलिम्पिक खेल ईसा से 776 वर्ष पूर्व यूनान में ओलम्पिया नामक स्थान में खेले गये थे। इसी स्थान के नाम पर इन खेलों का नाम ओलिम्पिक पड़ा। शुरू-शुरू में ये खेल केवल एक दिन के लिए आयोजित होते थे। ये खेल लगभग एक हजार वर्ष तक चलते रहे लेकिन 393 ई. में रोम के राजा थियोडोसिअस ने यूनान पर कब्जा करने के बाद इन खेलों पर प्रतिबन्ध लगा दिया। आधुनिक ओलिम्पिक खेलों की शुरुआत सन् 1896 में हुई। इसके बाद ये खेल हर चार साल बाद खेले जाते हैं। केवल सन् 1916, 1940 और 1944 में इन खेलों का आयोजन प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्धों के कारण नहीं हो सका। इन खेलों के लिए सन् 1894 में अन्तरराष्ट्रीय ओलम्पिक समिति (International Olympic Committee) का गठन किया गया। आज भी जो देश इन खेलों में हिस्सा लेता है, उसमें एक राष्ट्रीय ओलिम्पिक समिति होती है।

सन् 1924 के ओलिम्पिक खेलों में शरद्कालीन खेलों का एक अलग से आयोजन शुरू हुआ। ओलिम्पिक खेलों में हिस्सा लेने के लिए उम्र की कोई सीमा नहीं है। गर्मियों में खेले जाने वाले ग्रीष्मकालीन खेल अधिक से अधिक 15 दिन तक खेले जाते हैं और जाड़ों के ओलिम्पिक खेल 10 दिन तक सीमित रहते हैं। इन खेलों में जीतने वाले प्रथम, द्वितीय और तृतीय विजेताओं को क्रमशः स्वर्ण, रजत और कांस्य पदक प्रदान किए जाते हैं। क्या तुम जानते हो कि विभिन्न ओलम्पिक खेल क्या-क्या हैं?

ओलिम्पिक खेल निम्नलिखित हैं:

पुरुषों के लिए : 1. तीरन्दाजी (Archery), 2. व्यायाम (Athletics), 3. बॉस्केट बॉल (Basket Ball), 4. मुक्केबाजी (Boxing), 5. गोताखोरी (Diving), 6. नाव खेना (Canoeing), 7. साइकिलिंग (Cycling), 8. ईक्वेस्ट्रेन स्पोर्ट (Equestrain sports), 9. तलवारबाजी (Fencing), 10. फुटबाल (Football), 11. जिमनास्टिक (Gymnastic), 12. हैंडबाल (Handball), 13. हाकी (Hockey), 14. जूडो (Judo) 15. आधुनिक पेण्टाथलोन (Pentathlon), 16. नौका दौड़ (Rowing), 17. शूटिंग (Shooting), 18. तैराकी (Swimming), 19. वालीबाल (Volleyball), 20. वाटरपोलो (Waterpolo), 21. भार उत्तोलन (Weight lifting), 22. कुश्ती (Wrestling), 23. केलिपोत (Yachting)।

महिलाओं के लिए : 1. तीरन्दाजी, 2. व्यायाम, 3. बॉस्केट बॉल, 4. नाव खेना, 5. गोताखोरी, 6. ईक्वेस्ट्रेन स्पोर्ट, 7. तलवारबाजी, 8. जिमनास्टिक, 9. हैंडबाल, 10. हाकी, 11. नौका दौड़, 12. लूज (Luge), 13. शूटिंग, 14. बोडी फिगर, 15. स्केटिंग, 16. स्कीइंग, 17. तैराकी, 18. वॉलीबॉल, 19. केलपोत। इन खेलों के अतिरिक्त साहित्य, संगीत, पेण्टिग, शिल्पकारी, फोटोग्राफी, वास्तुकला, आदि कलाओं का प्रदर्शन भी ओलिम्पिक खेलों में सम्मिलित है।



कराटे (Karate) का खेल क्या है?

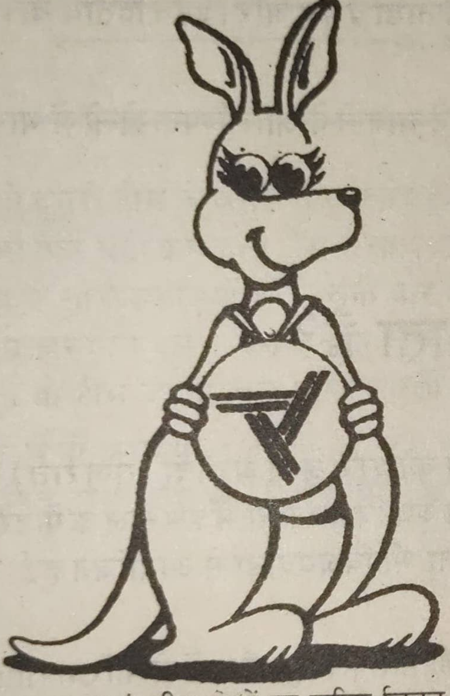
जिस व्यक्ति को कराटे की कला आती है, वह बिना किसी हथियार के अपने दुश्मन को धूल चटा सकता है। वास्तव में कराटे एक ऐसी द्वन्द्व कला (martial art) है जिसमें बिना किसी हथियार के व्यक्ति शत्रु को लात मारकर, उससे टकराकर तथा हाथ-पैरों की विभिन्न क्रियाओं तथा गतियों (movements) द्वारा अपना बचाव कर सकता है। कराटे कला में निपुण व्यक्ति एक ही झटके में अपने विरोधी को पछाड़ सकता है। जूडो में आत्मरक्षा पर जोर दिया जाता है। इसके विपरीत कराटे में दुश्मन पर जमकर वार किये जाते हैं।

कराटा एक जापानी शब्द है, जिसका अर्थ है–'खाली हाथ' (empty hand)। इस कला में व्यक्ति को अपनी समस्त शक्ति को प्रहार बिन्दु (striking point) पर लगाना होता है। इस कला में व्यक्ति हाथों, एड़ियों, पैर, अग्रभुजाओं, घुटनों तथा कुहनियों से विरोधी पर प्रहार करता है। शरीर के इन सभी अंगों को लगातार प्रशिक्षण तथा अभ्यास से सख्त और मजबूत बना लिया जाता है। प्रशिक्षण में प्रहार करने का अभ्यास लकड़ी या पैडयुक्त (paded) तलों (surfaces) पर किया जाता है। कराटे कला में निपुण व्यक्ति कई इंच मोटे लकड़ी के तख्ते या ईंटों को खाली हाथों के प्रहार से तोड़ सकता है। शारीरिक शक्ति के साथ-साथ इस कला में प्रहार करने में लिया गया समय, प्रहार का तरीका आदि भी बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

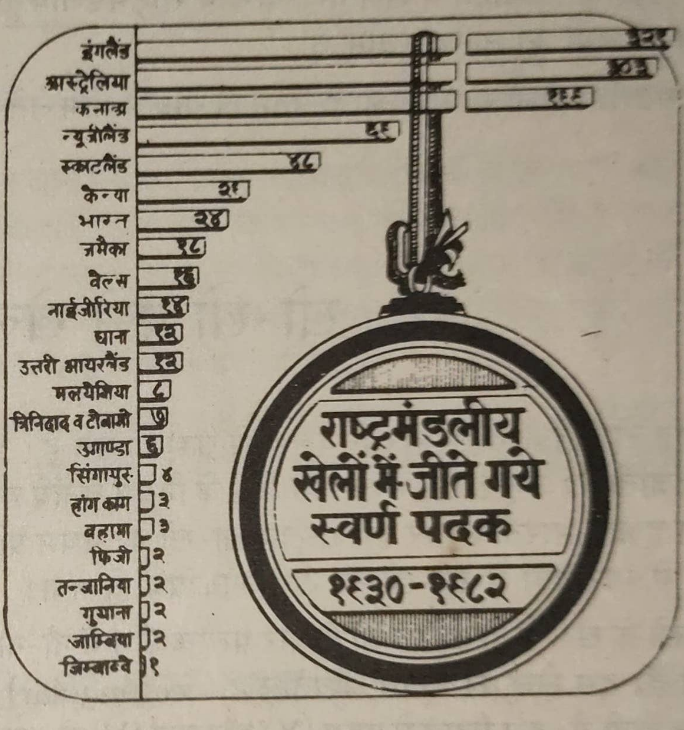
कराटे के खेल (sport) में घूंसों और लातों को विरोधी के शरीर से लगभग एक इंच के फासले पर रोकना पड़ता है। कराटे की प्रतियोगिता केवल 3 मिनट तक चलती है। यदि प्रतियोगिता में खिलाड़ी एक-दूसरे पर स्पष्ट प्रहार नहीं कर पाते तो निर्णायक मंडल प्रहार की गतियों और बचाव के तरीकों के आधार पर अपना निर्णय सुनाते हैं। जिमनास्टिक की भांति इस खेल के लिए भी एक निर्णायक मंडल होता है।

कराटे का विकास कई सदियों में पूर्वी एशिया में हुआ। यह कला एक प्रणाली के रूप में 17वीं शताब्दी में ओकिनावा (Okinawa) में विकसित हुई। यहीं से यह सन् 1920 के लगभग जापान पहुंची। वहां इसकी कई शैलियां विकसित हुईं। आज विश्व में इसके बहुत से प्रशिक्षण संस्थान हैं, जहां अलग-अलग तरीकों से इस कला का अभ्यास कराया जाता है।

राष्ट्रमंडलीय (Common Wealth) खेल क्या हैं?



राष्ट्रमंडलीय खेलों का प्रतीक चिह्न



ओलिम्पिक खेलों की भांति ही राष्ट्रमंडलीय देशों के खेलों का भी आयोजन होता है। इन खेलों का आयोजन भी हर चार साल बाद किया जाता है। लेकिन इनके आयोजन का वर्ष ओलिम्पिक खेलों के बीच में ही होता है। राष्ट्रमंडलीय खेलों की शुरुआत सन् 1930 में हुई थी। सर्वप्रथम इन खेलों का आयोजन हैमिल्टन (Hamilton), कनाडा में किया गया था। उसके बाद से हर चौथे वर्ष ये खेल होते रहे हैं। क्या तुम जानते हो कि राष्ट्रमंडलीय खेलों में कौन-कौन से खेल आते हैं?

राष्ट्रमंडलीय खेलों के अन्तर्गत तीरअंदाजी, पहलवानी, बैडमिंटन, मुक्केबाजी, साइकिल दौड़, निशानेबाजी, तैराकी और गोताखोरी, भार उठाना, कुश्ती और मैदानी गेंद के खेल आते हैं।

सन् 1930 में जब राष्ट्रमंडलीय खेलों का आरम्भ हुआ तो इसमें केवल ग्यारह राष्ट्रों ने भाग लिया था। सन् 1982 में ब्रिसबेन, आस्ट्रेलिया में बारहवें राष्ट्रमंडलीय खेलों में भाग लेने वाले राष्ट्रों की संख्या 45 हो गई थी। शुरू-शुरू

में इन खेलों का नाम ब्रिटिश एम्पायर गेम्स (British Empire Games) था, जो बाद में बदलकर कॉमनवेल्थ गेम्स कर दिया गया। दसवें राष्ट्रमंडलीय खेलों का आयोजन सन् 1974 में क्रिस्टचर्च, न्यूजीलैंड में हुआ था। ग्यारहवें राष्ट्रमंडलीय खेल एडमोंटन, कनाडा में सन् 1978 में खेले गए। बारहवें राष्ट्रमंडलीय खेल सन् 1982 में आस्ट्रेलिया के ब्रिसबेन नामक स्थान पर 30 सितम्बर से 9 अक्तूबर तक खेले गए थे।

तेरहवें राष्ट्रमंडलीय खेलों का आयोजन सन् 1986 में एडिनबर्ग (Edinburgh), स्कॉटलैंड में किया गया।

सन् 1982 में खेले गए राष्ट्रमंडल खेलों में इंग्लैंड और आस्ट्रेलिया ने सबसे अधिक पदक जीते। इंग्लैंड के पदकों की संख्या 108 थी और आस्ट्रेलिया के पदकों की संख्या 107 थी। आस्ट्रेलिया को 39 स्वर्णपदक मिले, जबकि इंग्लैंड को 38 स्वर्ण पदक प्राप्त हुए। पदकों की संख्या के अनुसार कनाडा का तीसरा स्थान था। कनाडा ने कुल 82 पदक प्राप्त किए, जिनमें से 26 स्वर्ण पदक थे।

इन राष्ट्रमंडलीय खेलों में भारत का छठा स्थान था। भारत को पांच स्वर्ण पदक, आठ रजत पदक और तीन कांस्य पदक प्राप्त हुए थे। चौथे और पांचवें स्थान पर क्रमशः स्कॉटलैंड और न्यूजीलैंड थे। इन दोनों ही देशों को 26-26 पदक प्राप्त हुए लेकिन स्कॉटलैंड को आठ स्वर्ण पदक और न्यूजीलैंड को पांच स्वर्ण पदक मिले थे।

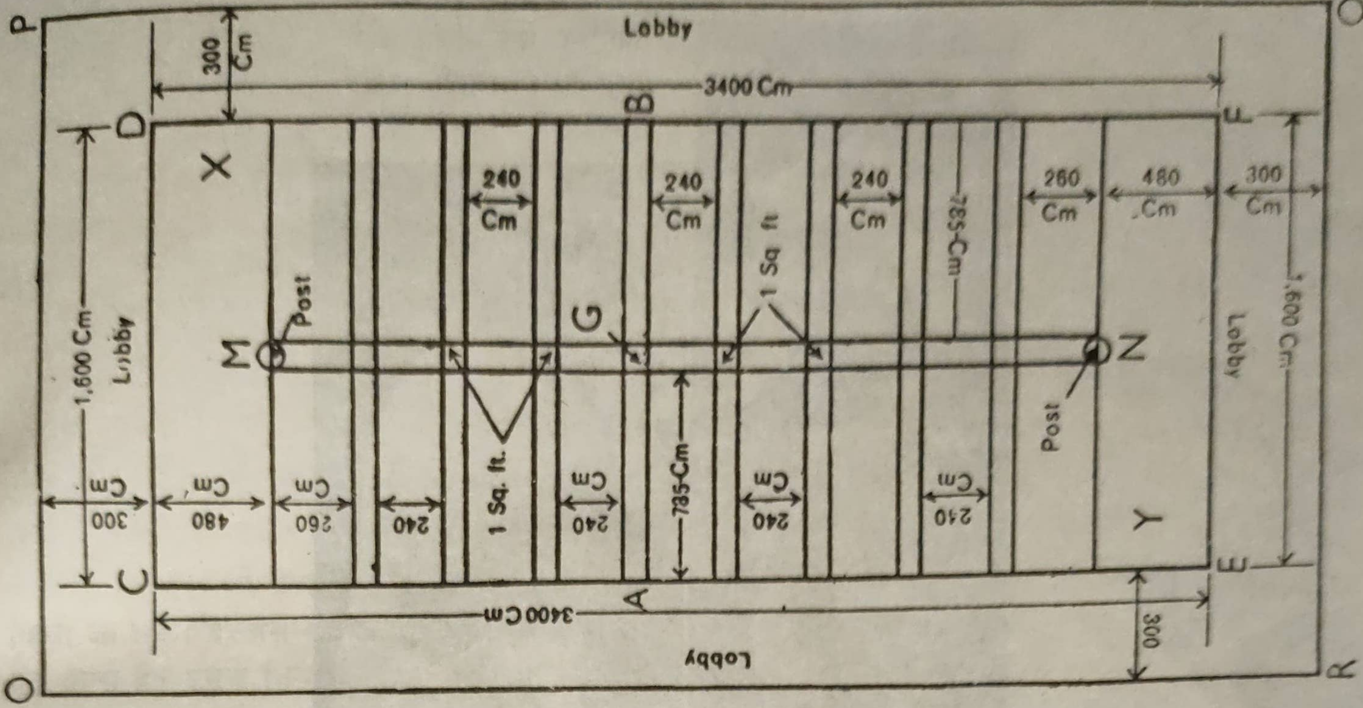
सन् 1978 में एडमोंटन में खेले गए ग्यारहवें राष्ट्रमंडलीय खेलों में कनाडा प्रथम और ब्रिटेन द्वितीय था। इन खेलों में आस्ट्रेलिया का तृतीय स्थान था।

राष्ट्रमंडलीय खेलों में भी खिलाड़ी उतने ही चाव से भाग लेते हैं, जितने चाव से वे ओलिम्पिक खेलों में भाग लेते हैं।

खो-खो कैसे खेला जाता है?

यह खेल तेज गति और नियंत्रण से सम्बन्धित है। इस खेल की शुरुआत बड़ौदा (गुजरात) से मानी जाती है। सन् 1959 में खो-खो खेल के नियम बनाये गये। इसी वर्ष विजयवाड़ा में इस खेल के फेडरेशन का गठन हुआ। भारतीय स्तर पर राष्ट्रीय खो-खो की प्रथम प्रतियोगिता भी विजयवाड़ा में आयोजित हुई। कुछ ही वर्षों में सारे देश में खो-खो का खेल लोकप्रिय हो गया।

खो-खो के खेल में दो टीमें होती हैं और प्रत्येक टीम में नौ-नौ खिलाड़ी होते हैं। एक मैच में दो पारियां (innings) होती हैं। इस खेल का मैदान आयताकार (rectangular) होता है जिसकी लम्बाई 34 मीटर और चौड़ाई 15 मीटर होती है। इस मैदान में एक्स (X) और वाई (Y) दो आयत होते हैं। इस आयत की एक भुजा 16 मीटर होती है जो खेल के मैदान की चौड़ाई भी होती है तथा दूसरी भुजा 4.8 मीटर होती है। एम (M) और एन (N) बिन्दुओं पर लकड़ी के दो दंड (pole) गड़े होते हैं। एम और एन के बीच का क्षेत्र मध्य लेन (Lane) कहलाता है। यह लेन 24.3 मीटर लम्बी और 30 सेमी. चौड़ी होती है। इस लेन में 30 सेमी. भुजा वाले आठ वर्ग (square) होते हैं, जिन पर एक टीम के आठ खिलाड़ी विपरीत दिशाओं में मुख करके बैठते हैं। इसी टीम का नौवां खिलाड़ी दंड के पास खड़ा होता है। दूसरी टीम के तीन खिलाड़ी मैदान में खड़े होते हैं। पोल के पास खड़ा हुआ खिलाड़ी अनुधावक (chaser) कहलाता है। विपक्षी टीम के तीनों खिलाड़ियों को, जिन्हें धावक (runner) कहते हैं, इस टीम द्वारा आउट करना होता है। दंड के पास से खिलाड़ी भागता है और अपनी टीम के बैठे हुए खिलाड़ी की कमर को छूकर 'खो' देता है। 'खो' बोलने का काम और छूने का काम एक साथ होना चाहिये। 'खो' मिलते ही यह खिलाड़ी फौरन उठकर भागता है और दूसरी टीम के किसी खिलाड़ी को छूकर आउट करता है। जब ये तीन खिलाड़ी आउट हो



जाते हैं तो दूसरी टीम के अगले तीन खिलाड़ी मैदान में आते हैं। इस प्रकार जब दूसरी टीम के नौ खिलाड़ी आउट हो जाते हैं तो फिर यही क्रम उसी टीम के साथ दोहराया जाता है। एक पारी का समय सात मिनट होता है। इस समय में एक टीम के नौ खिलाड़ियों को जितनी बार आउट कर दिया जाता है, उतने ही अंक दूसरी टीम को प्राप्त हो जाते हैं। इसी प्रकार फिर दूसरी टीम खेलना शुरू करती है और उसके भी आउट होने वाले खिलाड़ियों के अंक गिन लिये जाते हैं। जो टीम ज्यादा अंक प्राप्त करती है, वही विजयी घोषित की जाती है।

इस खेल में दो अम्पायर (umpire), एक रेफरी (referee) तथा एक टाइमकीपर (time-keeper) होता है। एक व्यक्ति द्वारा अंक भी रिकॉर्ड किये जाते है। प्रत्येक पारी के बीच में पांच मिनट का अवकाश होता है।

गोल्फ (Golf) का खेल क्या है?

गोल्फ का खेल गेंद और आगे से मुड़ी हुई स्टिक (stick) से खेला जाने वाला एक खेल है। यह खेल मैदान में खेला जाता है तथा इस खेल में गेंद को सूराखों की एक शृंखला में डालना होता है। जो खिलाड़ी गेंद को कम से कम बार बल्ला मार कर छेदों में डाल देता है वही खिलाड़ी श्रेष्ठ माना जाता है। गोल्फ के खेल का विकास मूल रूप से 14वीं शताब्दी में स्कॉटलैंड में हुआ था। वहीं से यह देखते-देखते समस्त विश्व में फैल गया।

आधुनिक गोल्फ के खेल में रबर से बना ठोस गेंद प्रयोग में लाया जाता है। अमरीका में गोल्फ के गेंदों का व्यास 1.68 इंच और ब्रिटेन में 1.62 इंच होता है। इन गेंदों का अधिकतम वजन 1.62 औंस होता है। इस खेल को खेलने के लिए जो स्टिक प्रयोग में लायी जाती है, वह आगे से मुड़ी हुई होती है। इसे क्लब (club) कहते हैं। इसके लिए 14 क्लबों का एक सेट (set) होता है, जिन्हें खिलाड़ी खेलते समय प्रयोग में लाता है। एक सेट में कोई भी दो क्लब एक जैसे नहीं होते। इनमें से कुछ क्लब लकड़ी के बने होते हैं तो कुछ लोहे या अन्य किसी धातु के।

1981 में एक ही सत्र में सर्वाधिक धन अर्जित करने वाला गोल्फ खिलाड़ी—बर्नार्ड लैंगर।



खेल आरम्भ करने के लिए गेंद को टीइंग ग्राउंड (teeing ground) से मारना होता है। जिस निशान से गोल्फ के गेंद को मारा जाता है, उसे टी (tee) कहते हैं। गेंद पर पहली बार होने वाले प्रहार को ड्राइव (drive) कहते हैं। कम से कम बार गेंद में क्लब मारकर निश्चित नियमों के अनुसार गेंद को सूराखों में डालना होता है। एक राउण्ड (round) में 18 सूराखों में गेंद को डालना होता है। इस खेल का मैदान 6500 से 7500 गज तक लम्बा होता है। सूराखों के बीच की दूरी 100 से 600 गज के बीच में होती है। कुछ खेल के मैदानों में केवल 9 सूराख ही होते हैं। प्रत्येक सूराख का व्यास 4¼ इंच होता है और गहराई कम से कम 4 इंच।

यह खेल दो प्रकार से खेला जाता है। मैच प्ले (match play) और स्ट्रोक प्ले (stroke play)। मैच प्ले में प्रतिस्पर्द्धी खिलाड़ी एक साथ ही खेलते हैं, जबकि स्ट्रोक प्ले में मुकाबले में भाग लेने वाले प्रत्येक खिलाड़ी को दूसरे सभी खिलाड़ियों के साथ खेलना पड़ता है। इस खेल को पुरुष और महिलाएं, दोनों ही खेल सकते हैं। सन् 1960 के बाद इस खेल में कई देशों ने कुछ परिवर्तन कर लिए हैं।

जूडो (Judo) क्या है?

जूडो (Judo) शब्द की उत्पत्ति जापानी शब्द जुजुत्सु (Jujitsu) से हुई है। जुजुत्सु एक ऐसी जापानी द्वंद्व कला (martial art) है जिसमें हथियार प्रयोग किये बिना ही विरोधी को परास्त किया जाता है। जूडो जुजुत्सु का ही एक परिष्कृत रूप है। इसमें शारीरिक गतियों, संतुलन और भुजा बल द्वारा विरोधी को काबू में किया जाता है। जूडो आज एक जाना-माना खेल (sport) है।



इस खेल की शुरुआत लगभग सन् 700 में हुई थी। इसे पहली बार सन् 1964 में टोकियो में आयोजित ओलिम्पिक खेलों में शामिल किया गया। इस खेल में उन तरीकों को प्रयोग में लाया जाता है, जिनसे विरोधी के बल को अपने लाभ के लिए इस्तेमाल किया जा सके। दरअसल जूडो एक आत्म-रक्षात्मक द्वंद्व कला है। इसके नियमों के अनुसार विरोधी पर आक्रमण करना वर्जित है।

ओलिम्पिक खेलों में एक देश की ओर से अधिक से अधिक 6 प्रतियोगी भाग ले सकते हैं। इस खेल की पांच भार श्रेणियां हैं:

(i) लाइटवेट (light weight)–63 किग्रा. तक भार के प्रतियोगी; (ii) वेल्टर वेट (welter weight) –63 से 70 किग्रा. तक भार वाले प्रतियोगी; (iii) मिडल हेवीवेट (middle heavy weight) –70 से 80 किग्रा. तक भार वाले प्रतियोगी; (iv) लाइट हेवीवेट (light heavy weight)–80 से 93 किग्रा. भार वाले प्रतियोगी; (v) हेवीवेट (heavy weight)–93 किग्रा. से ऊपर के भार वाले। प्रत्येक श्रेणी में प्रत्येक देश का एक-एक प्रतियोगी होता है। छठा वर्ग ओपन कैटेगॉरि (open category) का होता है, जिसमें किसी भी भार का प्रतियोगी भाग ले सकता है। इस वर्ग में भी एक देश से एक खिलाड़ी भाग ले सकता है।

जूडो प्रतियोगिताओं में चार राउण्ड होते हैं: क्वालिफाइंग राउण्ड, रेपचेजेंज राउण्ड, सेमीफाइनल और फाइनल राउण्ड। प्रत्येक खिलाड़ी को ढीली-ढीली सफेद मजबूत कपड़े की जाकिट और पैण्ट पहनने पड़ते हैं। नौसीखिये सफेद और दक्ष खिलाड़ी काली बैल्ट बांधते हैं।

जूडो के मैच एक विशेष प्रकार के गद्दों पर खेले जाते हैं, जो 10 वर्ग मीटर के आकार के होते हैं। पहले दो राउण्ड 6-6 मिनट के, सेमीफाइनल 8 मिनट का तथा फाइनल राउण्ड 10 मिनट का होता है। जो भी प्रतियोगी पहले एक अंक प्राप्त कर लेता है, उसे विजयी घोषित कर दिया जाता है। यह अंक प्रतिद्वंद्वी को उछालने के अच्छे तरीके या उसे ऊपर उठाने या उसे तीस सेकेण्ड तक पकड़ कर रोके रखने के आधार पर दिया जाता है। प्रतियोगी को एक से कम अंक भी दिये जा सकते हैं।

अधिकतर देशों में आज इस खेल से सम्बन्धित संस्थाएं बन गयी हैं, जो अन्तर्राष्ट्रीय जूडो संघ (International Judo Federation) की सदस्य होती हैं। अन्तर्राष्ट्रीय जूडो संघ का मुख्य कार्यालय पेरिस (फ्रांस) में है।



हर्लिंग (Hurling) का खेल क्या है?

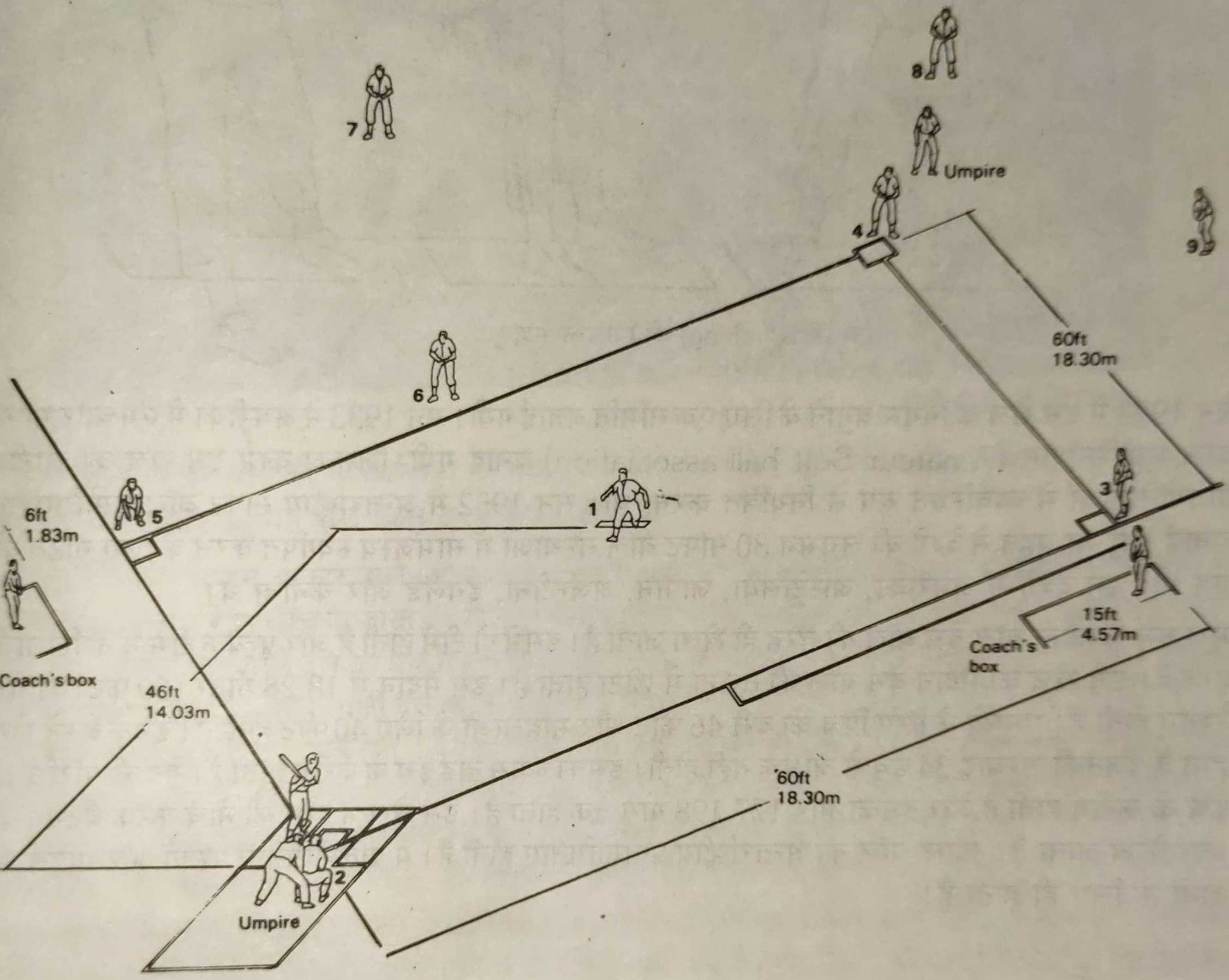
हर्लिंग का खेल मैदान में खेला जाता है। इसे एक विशेष प्रकार की स्टिक (stick) और गेंद से खेलते हैं। इसे खेलने के लिए दो टीमें होती हैं। प्रत्येक टीम में पन्द्रह खिलाड़ी होते हैं। इस खेल को एक लम्बे समय से आयरलैण्ड (Ireland) का राष्ट्रीय खेल होने का गौरव प्राप्त है। आयरलैण्ड के प्राचीन साहित्य (ancient Irish literature) में इस खेल का काफी उल्लेख मिलता है। फिर भी इस खेल की वास्तविक शुरुआत सन् 1879 से ही मानी जाती है। 24 जनवरी, 1879 को आयरिश हर्लिंग यूनियन (Irish Hurling Union) की नींव पड़ी थी। नवम्बर, 1884 में थर्ल्स (Thurles, Ireland) में गेलिक ऐथलीटिक एसोसिएशन (Gaelic Athletic Association) की स्थापना के बाद इस खेल को एक मानक (standard) रूप प्रदान किया गया और इसके अन्तर्राष्ट्रीय नियम-विनियम बनाये गये।

जिस स्टिक से इस खेल को खेला जाता है, उसे हर्ले (hurley) कहते हैं। हर्ले देखने में हाकी स्टिक जैसा होता है लेकिन बनावट में यह ऊपर से छोटा और नीचे से चौड़ा होता है। इसकी लम्बाई 3 फुट (0.9 मीटर) होती है तथा गेंद से टकराने वाला अंडाकार सिरा 3.5 इंच चौडा होता है। इसी चौड़ाई से टकराकर गेंद एक खिलाड़ी से दूसरे खिलाड़ी की ओर जाती है।

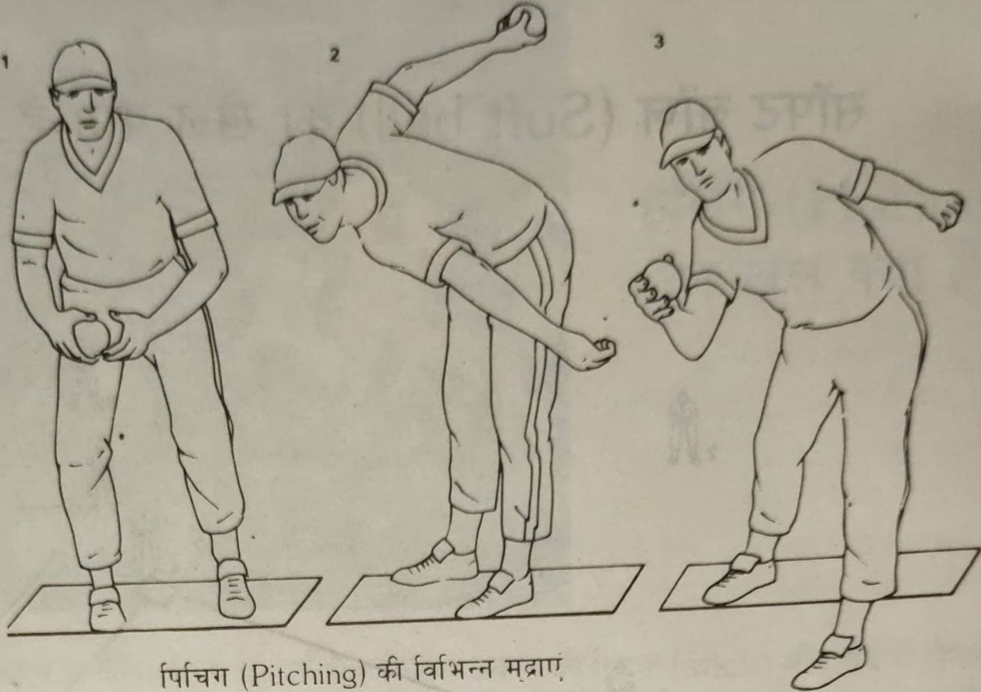
इस खेल का मैदान 137 मीटर लम्बा और 81 मीटर चौड़ा होता है। मैदान के दोनों ओर दो गोल पोस्ट (Goal Post) होते हैं। इनकी ऊंचाई 16 फुट तथा चौड़ाई 21 फुट होती है। इसमें जमीन से 8 फुट ऊपर एक क्रॉस बार (cross bar) होता है। दूसरी टीम का क्रॉस बार से ऊपर गेंद को पार करने पर विपक्षी टीम को एक अंक मिल जाता है। क्रॉस बार के नीचे से गेंद को पार करने पर एक गोल हो जाता है, जो तीन अंकों के बराबर होता है। इस खेल की गेंद कार्क से बनी होती है, जिसके ऊपर ऊन चढ़ा होता है। गेंद में बल्ला मारने से पहले इसे हाथ से पकड़ा जा सकता है। इसे हाथ से बल्ले के ब्लेड (blade) के पास रखा जा सकता है लेकिन गेंद को हाथ से फेंकना मना होता है। गेंद को स्टिक के दायें-बायें, किसी भी भाग से मारा जा सकता है।

यह खेल बड़ा दिलचस्प होता है। हर वर्ष आयरलैण्ड में इसकी प्रतियोगिताएं आयोजित की जाती हैं। इस खेल की लोकप्रियता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि सन् 1954 में इस खेल का फाइनल मैच देखने के लिए डबलिन (Dublin) के क्रोक पार्क (Croke Park) में 84,856 दर्शकों की भीड़ एकत्रित हुई थी, जो अपने आप में एक रिकॉर्ड है।

सॉफ्ट बॉल (Soft ball) का खेल क्या है?



सॉफ्ट बॉल का खेल बेस बॉल से मिलता-जुलता खेल है, जो विश्व के कई देशों में खेला जाता है। अमरीका में यह काफी लोकप्रिय है। इस खेल की शुरुआत कहां हुई, इसके बारे में लोगों के अलग-अलग विचार हैं लेकिन सामान्यत: लोग इस तथ्य को लेकर सहमत हैं कि इस खेल की उत्पत्ति बेस बॉल (base ball) से हुई और सबसे पहले यह खेल सन् 1887 में शिकागो (Chicago) में खेला गया। इस खेल को किटिन बॉल (Kittenball), मश बॉल (Much ball) तथा डायमण्ड बॉल (diamond ball) आदि कई नामों से जाना जाता है।



पिचिग (Pitching) की विभिन्न मुद्राएं

सन् 1923 में इस खेल के नियम बनाने के लिए एक समिति बनाई गयी। सन् 1933 में अमरीका में एमैच्यौर सॉफ्ट बॉल एसोसिएशन (Amateur Soft ball association) बनाई गयी, जिसका काम इस खेल को राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में व्यवस्थित रूप से नियंत्रित करना था। सन् 1952 में अन्तर्राष्ट्रीय सॉफ्ट बॉल एसोसिएशन बनाई गई, जो बहुत से देशों की लगभग 30 सॉफ्ट बॉल संस्थाओं में सामंजस्य स्थापित करने के लिए गठित की गई थी। इन देशों में अमरीका, आस्ट्रेलिया, जापान, अर्जेन्टीना, इंगलैंड और कनाडा थे।

मूल रूप से सॉफ्ट बॉल बेस बॉल की तरह ही खेला जाता है। इसमें दो टीमें होती हैं और प्रत्येक टीम में नौ खिलाड़ी होते हैं। इस खेल का मैदान बेस बॉल की तुलना में छोटा होता है। इस मैदान में 18.28 मीटर (60 फुट) की बेस रेखाएं होती हैं। मनुष्यों के लिए पिच की दूरी 46 फीट और महिलाओं के लिए 40 फीट होती है। इसके बल्ले गोल होते हैं, जिनकी लम्बाई 34 इंच से अधिक नहीं होती। इसका व्यास ढाई इंच के करीब होता है। गेंद की परिधि 12 इंच के करीब होती है और इसका भार 177.198 ग्राम तक होता है। इस खेल में हाथ को नीचे करके बैटमैन की ओर फेंका जाता है। सॉफ्ट बॉल की अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताएं होती हैं। ये प्रतियोगिताएं पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए ही होती हैं।

कबड्डी कैसे खेली जाती है ?

कबड्डी भारत के प्राचीनतम खेलों में एक है। इसे गांवों और नगरों में सभी आयु के लोग अपनी-अपनी उम्र के लोगों की टोलियां बनाकर खेलते हैं। कुछ वर्ष पहले तक यह खेल अधिकतर गांवों में ही खेला जाता था लेकिन अब इसका प्रचार-प्रसार अखिल भारतीय स्तर पर हो चुका है। 1982 में आयोजित एशियाई खेलों में इसे



कबड्डी खेलती लड़कियां

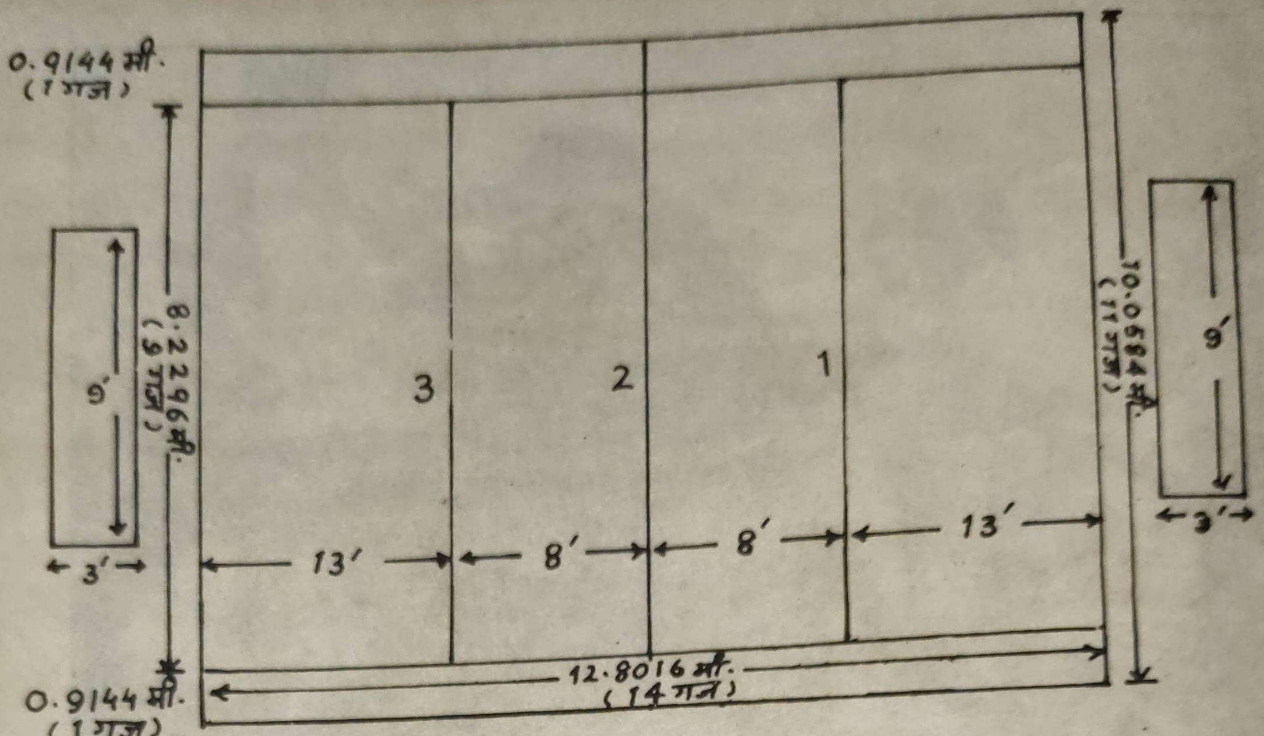
अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लाने की भी कोशिश की गयी। अब एशिया के कई भागों में यह खेल लोकप्रिय होता जा रहा है। क्या तुम जानते हो, यह खेल किस तरह खेला जाता है ?

एक खुले मैदान में समान आकार वाले (आयताकार अथवा वृत्ताकार) दो पाले खींच लिये जाते हैं। दोनों पालों के एकदम बीच में एक रेखा खींच दी जाती है। खेल प्रारम्भ होने से पहले किसी सिक्के को उछालकर 'टॉस' कर लिया जाता है। 'टॉस' जीतने वाले दल का एक खिलाड़ी अपने पाले से 'कबड्डी', 'कबड्डी' बोलता हुआ विपक्षी दल के पाले में प्रवेश करता है। वह विपक्षी दल के अधिकाधिक खिलाड़ियों को छूकर तथा उनकी पकड़ में आने से पूर्व बिना सांस तोड़े 'कबड्डी', 'कबड्डी', कहता मध्य रेखा तक पहुंचने का प्रयास करता है। सफल रहने पर इस खिलाड़ी द्वारा छुए हुए विरोधी दल के खिलाड़ी पाले से बाहर बैठा दिए जाते हैं। इन्हें 'मरे हुए खिलाड़ी' कहा जाता है। यदि मध्य रेखा तक पहुंचने से पहले ही कबड्डी पाने वाले खिलाड़ी की सांस टूट जाये या विरोधी दल के खिलाड़ियों द्वारा वह पकड़ लिया जाये, तो वह 'मर' जाता है। उसे अब खेलने का अधिकार नहीं रहता।

इस तरह यह सिलसिला दोनों दलों के बीच चलता रहता है। कभी-कभी खिलाड़ी विरोधी दल के किसी भी खिलाड़ी को नहीं छू पाता और खाली हाथ पाले में लौट आता है। 'मरने' और 'जीने' की यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती है जब तक एक दल के सभी खिलाड़ी 'मर' कर पाले से बाहर न हो जायें। पराजित दल के ऊपर एक पाला चढ़ जाता है। उसके बाद दोबारा शुरू होने पर 'मरे हुए खिलाड़ी' पुनः खेलते हैं।

कबड्डी में सात-सात खिलाड़ियों के दो दल होते हैं। प्रत्येक पाला 10.0584 मीटर (11 गज) लम्बा और 6.4008 मीटर (7 गज) चौड़ा होता है। चौड़ाई की ओर दोनों पार्श्वों (sides) में 0.9144 मीटर अर्थात् एक-एक गज का स्थान छोड़ दिया जाता है जिसे प्रकोष्ठ (lobby) कहते हैं। महिलाओं और कनिष्ठ खिलाड़ियों (junior players) के लिए पाले छोटे होते हैं।

यह खेल 20 मिनट की अवधि में दो बार खेला जाता है। खेल तथा खिलाड़ियों से सम्बन्धित सभी नियमों का निर्णय अधिनिर्णायक (referee) करता है जो सभी खिलाड़ियों को मान्य होता है। एक खेल के बाद पाले बदल दिये जाते



कबड्डी का पाला

हैं। खेल के अंत में सर्वाधिक अंकों वाले दल को विजयी घोषित किया जाता है। यदि दोनों टीमों के अंक खेल के अन्त में बराबर-बराबर हों तो पांच मिनट का अतिरिक्त समय दिया जाता है। किसी खिलाड़ी को चोट लग जाने की स्थिति में 'खेल स्थगन' (time out) का भी प्रावधान होता है। यह स्थगन दो मिनट से अधिक नहीं होना चाहिए। अधिनिर्णायक की अनुमति से अतिरिक्त खिलाड़ी को भी खिलाया जा सकता है।

कबड्डी में खिलाड़ियों का परिधान बनियान और नेकर होता है। आवश्यकतानुसार खिलाड़ी केनवेस के जूते और साथ में जुराब भी पहन सकते हैं। प्रत्येक खिलाड़ी की बनियान पर उसका नम्बर होता है तथा वह किसी भी तरह की धातु की बनी या चिकनी चीज को धारण नहीं कर सकता। क्रिकेट, फुटबाल तथा हॉकी की तरह यह खेल भी अब अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप धारण करता जा रहा है।

इलेक्ट्रॉनिक्स व कम्प्यूटर के इस युग में अपने बच्चे को विज्ञान की नवीनतम जानकारी से लैस कीजिए— ऐसा न हो कि वह आने वाले कल में पिछड़ जाए।

उसके उज्ज्वल भविष्य के लिए उसे आज ही लाकर दीजिए

जूनियर साइंस एनसाइक्लोपीडिया

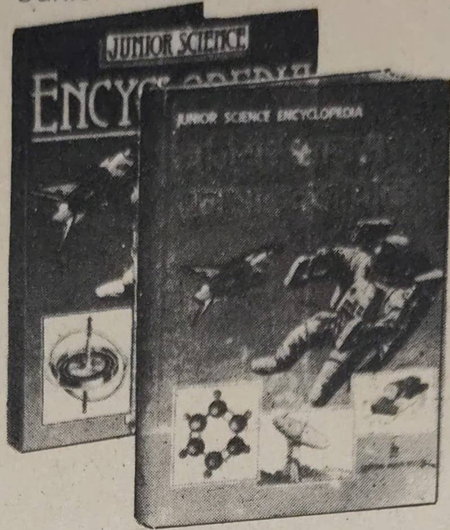
Junior Science Encyclopedia

256 पृष्ठों में 800 से भी अधिक रंगीन चित्रों एवं 80,000 शब्दों की पाठ्य-सामग्री से युक्त प्रस्तुत एनसाइक्लोपीडिया वैज्ञानिक विषयों पर लिखा गया एक अमूल्य संदर्भ-ग्रंथ है। बच्चे की हर 'क्यों', 'कैसे' और 'कहां' का उत्तर देने में सक्षम एक संग्रहणीय ग्रंथ!

एक ऐसा एनसाक्लोपीडिया जिसमें ये भी हैं

- खेलने के लिए साइंस के खेल....
- करने के लिए साइंस के प्रयोग....
- मनोरंजन के लिए साइंस के मॉडल एवं खिलौने बनाना....

इसे इंग्लैंड के विशेषज्ञ लेखकों की एक टीम ने विशेषरूप से बच्चों के लिए लिखा है। इसमें रंगीन चित्रों की सहायता से कठिन विषयों को इस प्रकार सरल तथा सुबोध भाषा में समझाया गया है कि विज्ञान जैसा नीरस माना जाने वाला विषय भी रोचक हो उठा है।



Published in India in collaboration with Hamlyn Publishing, LONDON

पांच खंडों में विभाजित इस महाग्रंथ में आपके बच्चे की विज्ञान संबंधी हजारों जिज्ञासाओं के उत्तर हैं—

1. पृथ्वी एवं ब्रह्मांड (The Earth & the Universe)
2. नाप, गति एवं ऊर्जा (Measurement, Speed & Energy)
3. प्रकाश, दृष्टि तथा ध्वनि (Light, Sight & Sound)
4. इलेक्ट्रॉनों की उपयोगिता (Electrons at Work)
5. खोज एवं आविष्कार (Discoveries and Inventions)

मूल्य: 300/-
डाकखर्च : 8/-

Supplementary Books for Science Students of classes (10 + 2) Higher Secondary

Know Science

Know Science offers pupils in the 10-13 age-range 1000 questions in the general field of science. The main objective of the handbook is to provide a comprehensive, rapid revision 'tool' but it also provides resources for consolidation, examination preparation, simple research, discussion and quizzes. The questions are arranged in 100 separately-titled sets and answers are provided at the back of the book.

Price: Rs. 15/- Postage: 5/-

General Science

Vol. I, II, III, IV & V

- This series provides wide ranging help and guidance on all the major branches of science—Physics, Chemistry, Biology, Astronomy, Geology etc.
- There are over 193 topics covered. The layout is a page of text by a page of illustrations providing sound ground work for those who will take advance courses in technology later on.

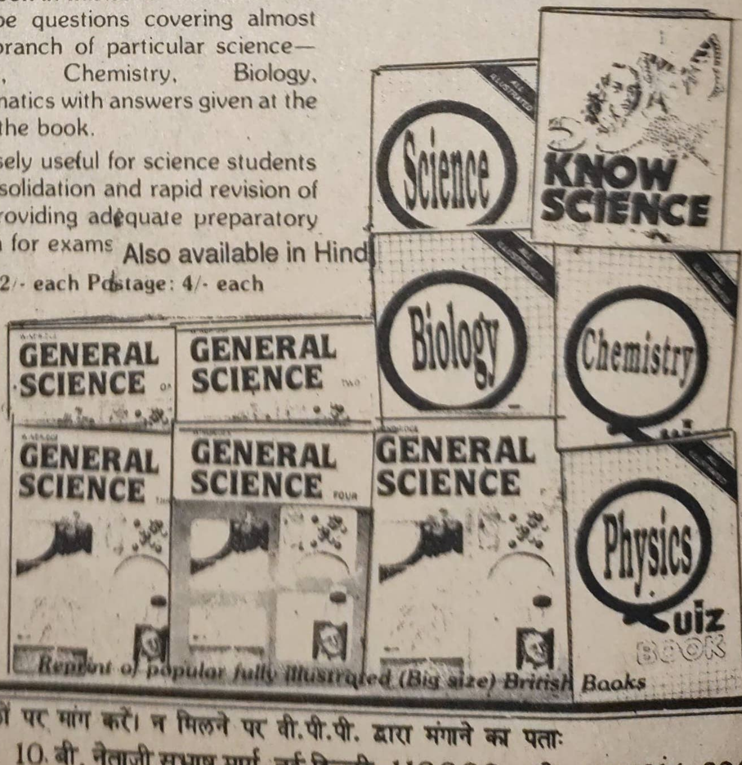
Price: 15/- each Postage: 4/- each

Quiz Series

- Each book in this series contains 1000 quiz-type questions covering almost every branch of particular science—Physics, Chemistry, Biology, Mathematics with answers given at the end of the book.
- Immensely useful for science students for consolidation and rapid revision of facts providing adequate preparatory revision for exams

Also available in Hindi

Price: 12/- each Postage: 4/- each



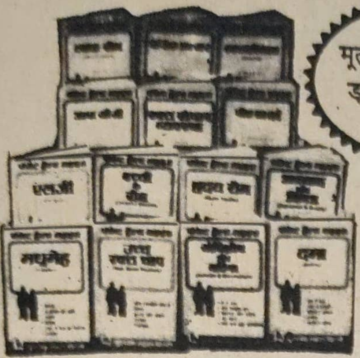
Reprint of popular fully illustrated (Big size) British Books

---

अपने निकट के या रेलवे तथा बस-अड्डों पर स्थित बुक-स्टालों पर मांग करें। न मिलने पर वी.पी.पी. द्वारा मंगाने का पता:

पुस्तक महल खारी बावली, दिल्ली-110006. 10-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002. फोन: 239314, 3268292

मधुमेह, हृदयरोग, एलर्जी या अल्सर जैसे भयानक रोगों से निबटने में डॉक्टर से भी ज्यादा आपकी अपनी भूमिका आवश्यक है



मूल्यः 8/- प्रत्येक
डाकखर्च : 4/- प्रत्येक

अपने रोग का आधा इलाज आपके हाथ में है, बशर्ते--- इसके कारणों, लक्षणों, जटिलताओं, सावधानियों और रोकथाम के बारे में आपको जानकारी हो...

इंग्लैंड के प्रसिद्ध डाक्टरों एवं विशेषज्ञों द्वारा लिखित लाखों की संख्या में बिकने वाली प्रसिद्ध ब्रिटिश

पॉकेट हैल्थ गाइड्स

(अब हिन्दी में भी उपलब्ध)

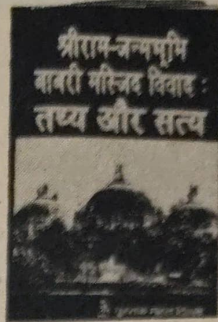
- पाकेट हैल्थ गाइड्स इन बीमारियों के कारणों, जटिलताओं, सावधानियों तथा रोकथाम के उपायों के बारे में आपका ज्ञानवर्द्धन करेंगी।
- चित्रों और तालिकाओं के माध्यम से दी गई तकनीकी जानकारी को सरल व सुबोध भाषा द्वारा आसानी से समझने योग्य बनाया गया है।

'इनमें से किसी भी रोग से ग्रस्त रोगी को मैं निस्संकोच संबंधित पुस्तक पढ़ने की सलाह दूंगा।'।—BRITISH MEDICAL JOURNAL

हिन्दी में 16 तथा अंग्रेज़ी में 18 पॉकेट हैल्थ गाइड्स

- एलर्जी *(Allergies)*
- रक्तक्षीणता *(Anaemia)*
- संधिशोथ एवं गठिया *(Arthritis & Rheumatism)*
- दमा *(Asthma)*
- पीठ का दर्द *(Back Pain)*
- बच्चों के रोग *(Children's Illnesses)*
- रक्त-संचार की समस्याएं *(Circulation Problems)*
- अवसाद और चिंता *(Depression & Anxiety)*
- मधुमेह *(Diabetes)*
- उच्च रक्तचाप *(High Blood Pressure)*
- हृदय रोग *(Heart Trouble)*
- रजोनिवृत्ति *(The Menopause)*
- आधासीसी का दर्द *(Migraine)*
- पैप्टिक अल्सर *(Peptic Ulcers)*
- रजोपूर्व तनाव *(Pre-Menstrual Tension)*
- त्वचा-रोग *(Skin Troubles)*
- *Cystitis* • *Hysterectomy*

श्रीराम-जन्मभूमि बाबरी मस्जिद विवादः तथ्य एवं सत्य



करीब 450 साल पुराने श्रीराम-जन्मभूमि बाबरी मस्जिद विवाद का कोई हल अभी तक नहीं निकल सका है। क्यों?

दुर्लभ चित्रों एवं दस्तावेजों से परिपूर्ण एक रोचक पुस्तक।

डिमाई आकार
पृः 120
मूल्यः 20/-
डाकखर्चः 5/-

क्विज़ टाइम

—आइवर यूशिएल

जन-सामान्य तथा विद्यार्थियों के लिए समान रूप से उपयोगी प्रश्नोत्तर शैली में लिखी प्रस्तुत पुस्तक विज्ञान, इतिहास, भूगोल, साहित्य, खेलकूद तथा फिल्म जगत से जुड़े आधारभूत 1001 प्रश्नों के सचित्र उत्तर प्रस्तुत करती है।



Available in English

मूल्यः 24/-
डाकखर्च : 6/-

योगाभ्यास द्वारा किसी भी रोग से छुटकारा पाइये!

योगासन एवं साधना

- आसनों का सुबोध-सचित्र विवरण
- प्राणायाम विधि • चक्षु-व्यायाम
- पौष्टिक भोजन • योगासनों द्वारा रोग निदान।

योगासन की सैकड़ों शाखाओं में प्रतिदिन हजारों साधक योगाभ्यास द्वारा रोगों से छुटकारा पा कर जीवन का आनंद ले रहे हैं।



डिमाई साइज पृष्ठ-120, मूल्यः 20/- डाकखर्चः 5/-
Also available in English

अपने लाड़लों के लिए कोई भी मनपसन्द नाम चुनिए...

बच्चों के 2001 नाम



मूल्यः 10
डाकखर्च :
(In Two C

अपने निकट के या रेलवे तथा बस-अड्डों पर स्थित बुक-स्टॉलों पर मांग करें। न मिलने पर वी.पी.पी. द्वारा मंगाने का पताः
पुस्तक महल खारी बावली, दिल्ली-110006. 10 बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002. फोनः 239314, 326829



बड़े साइज के
108 पृष्ठ
मूल्यः 20/-
डाकखर्च : 5/-

विश्व के विचित्र इंसान

कुछ शीर्षकों की झलकः

- शरीर से जुड़े हुए स्यामी भाई चांग और इंग कब और कहां पैदा हुए ?
- कमर से जुड़ी हुई बहनें कलाकार कैसे बनीं ?
- दो सिर वाला अजूबा बच्चा कैसा था ?
- कितने अजीब होते हैं दैत्याकार इंसान ?
- बौने कब, कहां पैदा हुए और कैसा होता है इनका संसार ?
- तीन टांगों वाला व्यक्ति कैसे चलता था ?
- क्या कोई व्यक्ति आधे टन का था ?
- कैसे थे जीवित इंसानी कंकाल ?

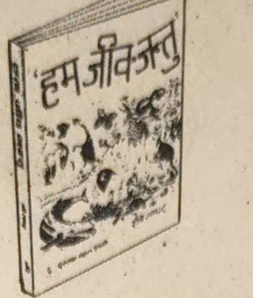
उपर्युक्त तथा अन्यान्य विचित्र इंसानों के बारे में मनोरंजक जानकारी, लगभग सभी की जीवनी चित्रों सहित।

हम जीव-जन्तु

जीव-जंतुओं की कहानी, उनकी अपनी जबानी

जीव-जन्तुओं के बारे में अन्यान्य जानकारियों के लिए प्रस्तुत है—जीव-जन्तुओं की कहानी उनकी अपनी जबानी...। जीव-जंतुओं के विशाल संसार के 50 सदस्यों की ज्ञानवर्धक आत्मकथाएं....

लेखकः रवि लायटू भूमिकाः रमेश बेदी



बड़े साइज के
116 पृष्ठ

मूल्यः 20/-
डाकखर्च : 5/-

ज्ञान-विज्ञान का खजाना

प्रस्तुत पुस्तक में ज्ञान-विज्ञान को चित्रमय कॉमिक शैली में इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है कि जटिल से जटिल विषय भी सहज ग्राह्य हो जायें। सामान्य फूहड़ कॉमिकों से अलग अपने ही प्रकार की एक अनूठी पुस्तक....।



मूल्यः 15/-
डाकखर्च : 5/-

जूडो कराटे
(जुजुत्सु एवं बॉक्सिंग सहित)



डिमाई साइज के
128 पृष्ठ
सैकड़ों चित्र
मूल्य : 20/-
डाकखर्च : 6/-

(Also available in English)

गुण्डों से अपना बचाव और बिना हथियार मारधाड़ की जापानी कलाएं

हिन्दी में पहली बार प्रकाशित 300 से अधिक दांव-पेंचों का सचित्र कोर्स। इसकी मदद से आप चाकू, लाठी, भाला आदि के वार से अपना बचाव करके अपने से चार गुना ताकतवर हमलावर को चुटकियों में धराशायी कर सकते हैं।

अपना कद बढ़ाइये



Also available in English
डिमाई साइज़ पृष्ठ : 96
मूल्य : 20/- डाकखर्च : 5/-

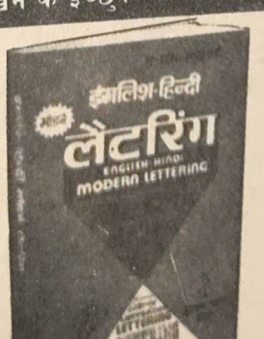
लड़कियों की पसन्द लम्बा कद, पुलिस मिलिट्री व बड़ी कम्पनियों में प्राथमिकता भी लम्बे कद वालों को, लड़की पसन्द करते समय भी लम्बा कद—अर्थात् ठिगने स्त्री-पुरुष हर दौड़ में पीछे रह जाते हैं। प्रस्तुत है कद लम्बा करने का आजमाया हुआ वैज्ञानिक अनुसंधान! इसमें यूरोप और अमरीका में टेस्ट किया हुआ ऐसा सचित्र कोर्स दिया गया है, जिसकी मदद से आप **केवल 15 मिनट प्रतिदिन अभ्यास द्वारा कुछ ही हफ्तों में अपनी हाइट 10 सेमी. तक तो निश्चित रूप से बढ़ा ही सकते हैं।**

डिजाइनर्स, ग्राफिक-आर्टिस्ट, ड्राफ्ट्समैन, टाइपोग्राफर्स, चित्रकला-विद्यार्थियों, पेण्टर्स और लैटरिंग की आकर्षक विधियां सीखने के इच्छुक लोगों के लिए

इंगलिश-हिन्दी मॉडर्न लैटरिंग

लेखक : ए. एच. हाशमी

- अक्षरों की बनावट का वर्गीकरण तथा बेसिक बनावट, स्ट्रॉक्स लगाने के तरीके, पैन, स्टील तथा फ्लैट ब्रुश द्वारा लैटरिंग करना।
- अक्षरांकन के मूल सिद्धान्त। सभी तरह की अंग्रेजी-हिन्दी लैटरिंग करने की विधियां तथा सैकड़ों आकर्षक नमूने।
- अंग्रेजी-हिन्दी के मोनोग्राम तथा बोलते-शब्दों के ढेर सारे नमूने।



बड़े साइज के 172 पृष्ठ
मूल्य 48/- डाकखर्च : 6/-

अपने निकट के या रेलवे तथा बस-अड्डों पर स्थित बुकस्टॉलों पर मांग करें। न मिलने पर वी.पी.पी. द्वारा मंगाने का पताः
पुस्तक महल खारी बावली, दिल्ली-110006. 10 बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002. फोनः 239314, 326829

Please affix
60 Paisa
Postal Stamps
before posting

To,

PUSTAK MAHAL
(Incorporating Hind Pustak Bhandar)
10-B, Netaji Subhash Marg,
New Delhi-110 002.

THE HITAVADA

सन्मार्ग

Science Reporter

THE SUNDAY TRIBUNE

बाल भारती

chronicle

News

नव भारत

"...हर तरह संचित है। प्लास्टिक कोटेड बहुरंगी आवरण के इस ग्रंथ की फोटोटाइप सेटिंग की आधुनिक पद्धति से छापा गया है जिससे यह और भी आकर्षक बन गया है। प्रत्येक शिक्षित परिवार में इस "चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक" की पूरी जिल्दें रहने पर उस घर के बच्चे बाकई समझदार निकलेंगे—ऐसा हमें विश्वास है।" —नवभारत, नागपुर

"...इस ग्रंथमाला की विशेषता है विषयों में सर्वांगपूर्णता तथा तथ्यों की प्रामाणिकता। साज-सज्जा के आकर्षक चित्र तथा तथ्यों की प्रामाणिकता। इस माला में अलावा शैली तो आकर्षक और रोचक है ही। ज्ञान-विज्ञान की नई और पुरानी महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों को प्रस्तुत किया गया है। सैकड़ों सवालों का विश्वसनीय जवाब देने वाली ग्रंथमाला के प्रत्येक भाग का मूल्य उपयुक्त है।" —हिन्दुस्तान, नई दिल्ली

"...The six volume CHILDREN'S KNOWLEDGE BANK deserves to be treasured. The motivation for this rather comprehensive endeavour stems from an urge to provide substantial and yet easily understood answers to the myriad questions ever present in the curious minds of children who are discovering the big exploding world around them."—Patriot, New Delhi

—Sakal (Marathi Daily), Poona

"The volumes, written in simple and lucid language, provide entertainment with information to the children."—Nev Hind (Gujrati Daily), Ahemdabad

"...A commendable attempt on the whole. —Writer and Illustrator, New Delhi

"PUSTAK MAHAL of Delhi has brought out CHILDREN'S KNOWLEDGE BANK in English, Hindi and other Indian languages. These volumes are very attractive to the children because of their interesting articles, quality printing and good paper."—Enadu (Telugu Daily), Hyderabad

"...कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि "चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक" जैसी उपयोगी ज्ञानवर्धक और सुरुचिपूर्ण पुस्तकमाला प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक-गण बधाई के पात्र हैं।" —दैनिक जागरण, कानपुर

"...बच्चों के सामान्य ज्ञान की सामग्री एक जगह संकलित करने का यह प्रयास, सत्प्रयासों में गिना जाना चाहिए।" —पाटलिपुत्र टाइम्स, —पटना

"...हिन्दी में न केवल अच्छी और आकर्षक बालोपयोगी पुस्तकों का अभाव है, ऐसी संदर्भ सामग्री भी सुव्यवस्थित रूप से सुलभ नहीं है जिसकी सहायता से माता-पिता और प्राथमिक शालाओं के अध्यापक बच्चों के मन में रोज-रोज उठने वाले "क्यों और कैसे" किस्म के प्रश्नों के ठीक-ठीक उत्तर उन्हें समझा सकें। उनके दोहरे उद्देश्यों की पूर्ति इस पुस्तकमाला से हो सकती है। वे बच्चों की जिज्ञासाएं शांत करने के साथ-साथ अपने संचित ज्ञान का पुनरावलोकन भी प्रस्तुत पुस्तकमाला के विभिन्न भागों से कर सकते हैं।" —राष्ट्रदूत, नागपुर

"...Today's children want everything about everything—and right away too... Keeping this in mind, PUSTAK MAHAL of Delhi has brought out the CHILDREN'S KNOWLEDGE BANK in six volumes... The question and answer format with an illustration is one of the best ways to give young children basic information on various subjects and thus develop a healthy interest in book and reading."—Pioneer, Lucknow

"The publishers have planned this project of CHILDREN'S KNOWLEDGE BANK with a view to bringing out a series of books of encyclopaedic importance. They provide answers in simple, easy to understand language to 'what' 'why' and 'how' that engage a child's inquisitive mind."—Hindustan Times (Evening News), New Delhi

"...A treasury of information that school-going children must have in their home for everyday use."—National Herald, Lucknow

"...इस ग्रंथमाला के माध्यम से बच्चों को सरल और सुबोध भाषा में सामान्य ज्ञान, आधुनिक विज्ञान, मानव-शरीर, खेल-खिलाड़ी, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु आदि तथा इतिहास, भूगोल, जैसे विषयों की जानकारियां उपलब्ध कराई गई हैं।" —ट्रिब्यून, चंडीगढ़

CHILDREN'S world

The Pioneer

स्वतंत्र भारत

हिन्दुस्तान

रविवार सकाळ

पंजाब केसरी

दैनिक जागरण

ఈనాడు

दैनिक भास्कर

राष्ट्रदूत